ASPECTS OF THE THEORY OF SYNTAX

नोअम चोम्स्की

• अनुवादक
रमानाथ सहाय

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर-4

वाक्यविन्यास का सैद्धान्तिक पक्ष

(Aspects of the Theory of Syntax)

○

नोअम चॉम्स्की

○

अनुवादक
रमानाथ सहाय

○

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
जयपुर

शिक्षा तथा समाज-कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ-निर्माण योजना के अन्तर्गत राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित

This book is the Hindi translation of the Ist edition of the original English book entitled, 'Aspects of the theory of Synta' by N. Chomsky and published by M. I. T. Press of U. S. A. The translation rights were obtained by the Commission for Scientific & Technical Terminology. It has been brought out under the scheme of production of university level books sponsored by Government of India, Ministry of Education & Social welfare.

प्रथम अनूदित संस्करण : 1975

सामान्य संस्करण : 10.00
पुस्तकालय संस्करण : 14.00

प्रकाशक :
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
ए-26/2, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर,
जयपुर–302004

मुद्रक :
वैशाली प्रिंटिंग प्रेस
घीवालों का रास्ता, जौहरी बाजार,
जयपुर–302003

प्रस्तावना

भारत की स्वतन्त्रता के बाद इसकी राष्ट्रभाषा को विश्वविद्यालय शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रश्न राष्ट्र के सम्मुख था। किन्तु हिन्दी में इस प्रयोजन के लिए अपेक्षित उपयुक्त पाठ्य-पुस्तकें उपलब्ध नहीं होने से यह माध्यम-परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। परिणामतः भारत सरकार ने इस न्यूनता के निवारण के लिए 'वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली आयोग' की स्थापना की थी। इसी योजना के अन्तर्गत 1969 में पाँच हिन्दी भाषी प्रदेशों में ग्रन्थ अकादमियों की स्थापना की गयी।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी हिन्दी में विश्वविद्यालय स्तर के उत्कृष्ट ग्रन्थ-निर्माण में राजस्थान के प्रतिष्ठित विद्वानों तथा अध्यापकों का सहयोग प्राप्त कर रही है और मानविकी तथा विज्ञान के प्रायः सभी क्षेत्रों में उत्कृष्ट पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण करवा रही है।

प्रस्तुत पुस्तक इसी क्रम में तैयार करवाई गई है। हमें आशा है कि यह अपने विषय में उत्कृष्ट योगदान करेगी। इस पुस्तक की परिवीक्षा के लिए अकादमी डॉ० आर० एन० श्रीवास्तव केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली के प्रति आभारी है।

(खेतसिंह राठोड़)
शिक्षा मंत्री, राजस्थान सरकार, एवं
अध्यक्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

(शिवनाथ सिंह)
निदेशक

प्राक्कथन

* यह विचार कि भाषा अपने अपरिमिततया अनेक वाक्यों के निर्वचन को निर्धारित करने वाले नियमों की व्यवस्था पर आधारित है किसी भी प्रकार से बिल्कुल नया विचार नहीं है। एक शताब्दी से कहीं पहले विल्हेल्म व्रान हम्बोल्ट ने अपनी प्रसिद्ध, किन्तु विरलतया अर्थात्, सामान्य भाषाविज्ञान पर लिखी कृति (हम्बोल्ट, 1836) में समुचित स्पष्टता के साथ यह विचार प्रकट किया था। इसके अतिरिक्त उनका यह दृष्टिकोण कि भाषा "परिमित साधनों का अपरिमित प्रयोग करती है" और इसके व्याकरण को इसे सम्भव करने वाली प्रक्रियाओं का अवश्यमेव वर्णन करना चाहिए, भाषा-प्रयोग के इस "सर्जनात्मक" पक्ष के प्रति, भाषा और मन के तर्कवादी दर्शन की परिधि में, निरन्तर चिन्तन का परिणाम है (विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की 1964–1966)। इससे भी अधिक यह प्रतीत होता है कि पाणिनि के व्याकरण की, तत्त्वतः इस पद के समकालीन अर्थ में, "प्रजनक व्याकरण" का एक खण्डीय निदर्शन के रूप में निर्वचन किया जा सकता है।

* फिर भी, आधुनिक भाषाविज्ञान में, मुख्यतया पिछले कुछ सालों में विशिष्ट भाषाओं के स्फुट प्रजनक व्याकरण रचित करने और उनके परिणामों को खोजने के पर्याप्ततया सारपूर्ण प्रयत्न किये गये हैं। अतएव इस पर कोई आश्चर्य-चकित होने की बात नहीं है कि प्रजनक व्याकरण के सिद्धांत के समुचित व्यवस्थापन और सर्वाधिक गहनतया अधीन भाषाओं के सही वर्णन से संबद्ध व्यापक विवेचन और वाद-विवाद हुए हैं। भाषाई सिद्धान्त, अथवा, उसी दृष्टि से अंग्रेजी व्याकरण के संबंध में प्रस्तुत निष्कर्षों की परीक्षणात्मक प्रकृति इस क्षेत्र में कार्य करने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए सहज रूप में स्पष्ट होनी चाहिए। (यहां भाषाई घटनाचक्र के उस विशाल परास पर विचार करना पर्याप्त है जो किन्हीं भी पदों में अन्तर्दृष्टिपूर्ण व्यवस्थापन का प्रतिरोध करता आया है)। फिर भी, ऐसा लगता है कि कुछ पर्याप्ततया सारपूर्ण निष्कर्ष निकल रहे हैं और वे निरन्तर संवर्धमान समर्थन पा रहे हैं। विशिष्टतया, किसी भी वर्णनात्मक दृष्टि से पर्याप्त प्रजनक व्याकरण में व्याकरणिक रचनांतरणों की केन्द्रीय भूमिका मेरी दृष्टि में यथेष्ट दृढ़ता से स्थापित हो चुकी है, यद्यपि रचनांतरण व्याकरण के सिद्धान्त के उपयुक्त रूप के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न शेष रह जाते हैं।

* यह कृति रचनांतरण व्याकरण पर, जिसे विवेचन के सामान्य ढांचे में पूर्वानुमानित माना गया है, किये गये कार्यों की अवधि में उठी विविध समस्याओं का

अन्वेषणात्मक अध्ययन है। विवेच्य प्रश्न यथार्थतः यह है कि यह सिद्धान्त कैसे व्यवस्थापित किया जाए। अतएव यह अध्ययन रचनांतरण व्याकरण के अनुसंधान में सीमान्त पर स्थित प्रश्नों पर विचार कर रहा है। कुछ प्रश्नों के लिए निश्चित उत्तर प्रस्तुत किये जाएंगे। किन्तु अधिकतर विवेचन में विवेच्य प्रश्न केवल उठाए जाएंगे और बिना किसी निश्चित निष्कर्ष के सम्भव उपागमों पर विचार किया जाएगा। अध्याय 3 में उसकी संक्षिप्त रूपरेखा मैं प्रस्तुत करूंगा जो इस विवेचन के प्रकाश में मुझे प्रजनक व्याकरण के सिद्धांत की सर्वाधिक आशाजनक दिशा लगती है। किन्तु मैं इसे फिर से कहना चाहूँगा कि यह केवल अत्यधिक परीक्षणार्थ प्रस्तुत प्रस्ताव मात्र है।

* यह पुस्तक इस प्रकार संगठित की गई है। अध्याय 1 में पृष्ठभूमीय अभिग्रहों की रूपरेखा दी गई है। इसमें कदाचित ही कुछ नया हो किन्तु इसका उद्देश्य केवल सारांश देना और कुछ बिन्दुओं का स्पष्टीकरण करना है जोकि तात्त्विक हैं और जिनको कुछ स्थितियों में बार-बार गलत समझा जा रहा है। अध्याय 2 और 3 में रचनांतरण व्याकरण के सिद्धान्त के पूर्वतर रूपान्तरणों के विविध दोषों पर विचार किया गया है। विवेच्य स्थिति वह है जो चॉम्स्की (1957), लीज़ (1960 a), और अन्य में है। ये लेखक रचनांतर—व्याकरण के वाक्यविन्यासीय घटक के अन्तर्गत आधार रूप में पदबंध संरचना व्याकरण को स्वीकार करते हैं और आधार द्वारा प्रजनित संरचनाओं को वास्तविक वाक्यों में प्रतिचित्रित करने वाली रचनांतरण-व्यवस्था को मानते हैं। यह स्थिति अध्याय 3 के प्रारम्भ में संक्षिप्त रूप से पुनः कथित की गई है। अध्याय 2 में आधार के वाक्यविन्यासीय घटक की, और इस अभिग्रह से कि वह, यथार्थतः एक पदबंध संरचना व्याकरण है, उठने वाली कठिनाईयों की चर्चा की गई है। अध्याय 3 में रचनांतरण घटक के और उसके आधार संरचनाओं के संबंध में संशोधन का सुझाव दिया गया है। "व्याकरणिक रचनांतरण" की धारणा स्वयं बिना परिवर्तन (यद्यपि कुछ विनिर्देशनों के साथ) स्वीकार की गई है। अध्याय 4 में अनेक अवशिष्ट समस्याएँ उठाई गईं हैं और संक्षेप में और पर्याप्त अनिर्णीत रूप में विवेचित की गई हैं।

* मैं अनेक मित्रों और सहयोगियों के अत्यंत सहायतापूर्ण टिप्पणों का कृतज्ञतापूर्वक आभार स्वीकार करना चाहूँगा जिन्होंने इस पांडुलिपि के पूर्वतद् रूपांतरणों को पढ़ने का कष्ट उठाया। विशेषकर मैं मारिस हाले और पॉल पोस्टल का ऋणी हूँ जिन्होंने अनेक बहुमूल्य सुधारों का सुझाव दिया है, और इसी प्रकार मैं जेरोल्ड केट्स, जेम्स मैकाले, जार्ज मिलर और जी० एच० मैथ्यूस का ऋणी हूँ। मैं उन अनेक छात्रों का आभारी हूँ जिन्होंने यह सामग्री प्रस्तुत करते समय अपनी

प्रतिक्रियाएँ और विचार प्रकट किये थे और जिनके आधार पर बड़ी मात्रा में आपरिवर्तन किये गये हैं।

* इस पुस्तक का लेखन, तब पूरा हुआ था जब मैं हार्वर्ड यूनीवर्सिटी के प्रज्ञानात्मक अध्ययनों के केन्द्र में था। इसे अंशतः नेशनल इंस्टीट्यूटस् आफ हैल्थ द्वारा हार्वर्ड विश्वविद्यालय को दिये अनुदान नं० M. H. O. 5120–04 और –05 द्वारा, और अंशतः अमेरिकन काउन्सिल आफ लर्नेड सोसायिटीस् के फेलोशिप द्वारा सहायता मिली है।

कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट
अक्टूबर, 1964

नोअम चॉम्स्की

अनुक्रम

● ● ●

1

प्रणालीगत प्रारम्भिकी

§1. भाषा-सामर्थ्य के सिद्धान्तों के रूप में प्रजनक-व्याकरण

इस पुस्तक में वाक्यीय सिद्धान्त और अंग्रेजी वाक्यविन्यास के विविध विचार्य विषयों का अध्ययन किया जा रहा है। इनमें कुछ का विस्तार के साथ और अनेक का अत्यन्त सतही तौर पर विवेचन है। किन्तु कोई भी विवेचन सर्वतः पूर्ण नहीं है। अध्ययन का सीधा सम्बन्ध प्रजनक-व्याकरण के वाक्यीय घटक से है अर्थात् उन नियमों से है जो वाक्यीय दृष्टि से प्रकार्यकारी न्यूनतम एककों (रचनांगों) की सुरचित श्रृङ्खलाओं को विनिर्दिष्ट करते हैं और जो इन श्रृङ्खलाओं में और किसी भी दृष्टि से सुरचितता से विचलित अन्य श्रृङ्खलाओं में नाना प्रकार की संरचनात्मक सूचनाएँ समनुदेशित करते हैं।

उस सामान्य ढांचे का वर्णन, जिसमें यह गवेषणा की जा रही है, अनेक स्थानों पर किया जा चुका है और हम यह मानकर चल रहे हैं कि पाठक को पुस्तक के अन्त में दी ग्रन्थसूची में प्रस्तुत सैद्धान्तिक एवं वर्णनात्मक अध्ययनों से कुछ पूर्व-परिचय है। इस अध्याय में मैं कुछ प्रमुख पृष्ठभूमीय अभिग्रहों का संक्षेप में परिचय दूंगा और औचित्य-सिद्धि का कोई गंभीर प्रयास न करते हुए केवल उन्हें स्पष्टतया अंकित करूंगा।

भाषाई सिद्धान्त का सम्बन्ध मुख्यतया एक आदर्श वक्ता-श्रोता से है जो एक पूर्णतया समांगी भाषा-भाषी जनसमुदाय का सदस्य है, जो अपनी भाषा को सम्यक् जानता है और जो अपने भाषाज्ञान को वास्तविक निष्पादन में प्रयुक्त करने में स्मृति-परिसीमाओं, विकर्षणों, अवधान एवं अभिरुचि के अपसरणों और (यादृच्छिक अथवा विशिष्ट) त्रुटियों जैसे व्याकरण की दृष्टि से अप्रासंगिक निर्धारकों से अप्रभावित रहता है। मेरी दृष्टि से आधुनिक सामान्य भाषाविज्ञान के संस्थापकों की यही मान्यता थी और इसको परिवर्तित करने का कोई अकाट्य तर्क अब तक प्रस्तुत नहीं किया गया है। वास्तविक भाषाई निष्पादन के अध्ययन के लिए हमें कई प्रकार के

घटकों की अन्योन्यक्रिया पर विचार करना चाहिए जिनमें वक्ता-श्रोता का आधारभूत सामर्थ्य केवल एक घटक है। इस दिशा में, भाषा का अध्ययन अन्य जटिल घटना-चक्रों के अनुभवाश्रित गवेषणा से भिन्न नहीं है।

इस प्रकार हम सामर्थ्य (वक्ता-श्रोता के अपनी भाषा के ज्ञान) और निष्पादन (यथार्थ स्थितियों में भाषा के वास्तविक प्रयोग) में मौलिक अन्तर करते हैं। केवल पूर्ववर्ती अनुच्छेद में वर्णित आदर्श स्थिति में ही निष्पादन सामर्थ्य का प्रत्यक्ष प्रतिफलन है। यथार्थ स्थिति में स्पष्टतः ऐसा सम्भव नहीं है। स्वाभाविक भाषण का कोई भी आलेख कु-प्रारम्भ, नियमच्युति, मध्य में योजना-परिवर्तन, आदि अनेक दोषों को प्रदर्शित करता है। भाषाविज्ञानी की और मातृभाषा सीखने वाले बच्चे की समस्या निष्पादन द्वारा दी सामग्री से उस आधारभूत नियम व्यवस्था का निर्धारण करना है जिस पर वक्ता-श्रोता को पूरा अधिकार है और जिसका प्रयोग वह वास्तविक निष्पादन में करता है। अतएव, तकनीकी अर्थ में भाषाई सिद्धान्त मानसवादपरक है क्योंकि वह वास्तविक व्यवहार के आधार में स्थित मानसिक यथार्थ का उद्‌घाटन करना चाहता है।[1] भाषा के पर्यवेक्षण-प्राप्त प्रयोग अथवा अनुक्रिया करने की प्राक्कल्पित पूर्वप्रवणता, अभ्यस्तता आदि इस मानसिक यथार्थ की प्रकृति के साक्ष्य उपस्थित कर सकते हैं, किन्तु निश्चयतः भाषाविज्ञान की,—यदि उसे एक गम्भीर शास्त्र बनना है—वास्तविक विवेच्य सामग्री नहीं बन सकते हैं। मैं यहाँ उस अन्तर की ओर ध्यान दिला रहा हूँ जो सासूर (Saussure) के लांग्वे-पैरोल (भाषा–वाक्) अन्तर से सम्बद्ध है। किन्तु यह आवश्यक हो गया है कि केवल एकांशों की सुव्यवस्थित सूची के रूप में प्रस्तुत लांग्वे (भाषा) की संकल्पना को अस्वीकार किया जाए और हम्बोल्ट की उस संकल्पना को अपनाया जाए जिसके अनुसार अन्तर्निहित सामर्थ्य प्रजनक प्रक्रमों की एक व्यवस्था है। विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की (1964)।

किसी भाषा के व्याकरण का अर्थ आदर्श वक्ता–श्रोता के अन्तर्निष्ठ सामर्थ्य का वर्णन है। यदि यह व्याकरण और भी अधिक पूर्णतया सुस्पष्ट है—दूसरे शब्दों में, यदि वह समझने वाले पाठक की बुद्धिमत्ता पर आश्रित नहीं है प्रत्युत उसके योगदान का सुस्पष्ट विश्लेषण प्रस्तुत करता है—हम उसे (कुछ-कुछ समाधिकता के साथ) प्रजनक-व्याकरण कहते हैं।

एक पूर्णतः पर्याप्त व्याकरण वाक्यों के अनन्त परास के प्रत्येक वाक्य का रचनात्मक वर्णन देता है और यह प्रदर्शित करता है कि यह वाक्य किस प्रकार आदर्श श्रोता-वक्ता द्वारा समझा जाता है। यह वर्णनात्मक व्याकरण की पारम्परिक समस्या है, और पारम्परिक व्याकरण वाक्यों के संरचनात्मक वर्णनों की प्रचुर सूचनाएं देते हैं। यद्यपि पारम्परिक व्याकरणों का स्पष्टतया बड़ा मूल्य है, तथापि

उनमें यह बड़ी कमी हैं कि वे वर्ण्य भाषा की अनेक आधारभूत नियमितताओं को बिना बताए छोड़ देते हैं। यह तथ्य विशेषतया वाक्यरचना स्तर पर स्पष्ट है जहाँ कोई भी पारम्परिक व्याकरण अथवा संरचनात्मक व्याकरण विशिष्ट उदाहरणों के वर्गीकरण के आगे किसी महत्वपूर्ण पैमाने पर प्रजनक-नियमों के व्यवस्थापन के सोपान पर नहीं पहुँचे हैं। किसी भी उपलब्ध सर्वोत्तम व्याकरण का विश्लेषण यह तुरन्त प्रकट कर देगा कि यह एक सिद्धान्त का दोष है, न कि तार्किक याथातथ्य अथवा अनुभवाश्रित विस्तार की बात है। फिर भी, यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है इस प्राय: अनधीत क्षेत्र के अध्ययन के प्रयास में सर्वाधिक सफलता तब मिलेगी जब हम पारम्परिक व्याकरणों में प्रस्तुत संरचनात्मक वर्णनों का तथा इन व्याकरणों में प्रदर्शित भाषा-प्रक्रमों का, चाहे कितने ही अरूपात्मक रूप से, अध्ययन करें।[2]

पारम्परिक और संरचनात्मक व्याकरणों की परिसीमाओं का हमें सुस्पष्ट बोध होना चाहिए। यद्यपि ऐसे व्याकरणों में अपवादों और अनियमितताओं की पूर्ण तथा स्पष्ट सूचियाँ हो सकती हैं, तथापि ये व्याकरण नियमित एवं उत्पादक वाक्यविन्यासीय प्रक्रमों के प्रति कुछ संकेत तथा उदाहरण मात्र देते हैं। पारम्परिक भाषाई सिद्धान्त इस तथ्य से अपरिचित नहीं थे। उदाहरणार्थ, जेम्स बिएटी (1788) ने इसका उल्लेख किया है कि :

"अतएव, भाषाएँ इस स्थिति में मनुष्यों से मिलती हैं कि यद्यपि प्रत्येक में अपनी विचित्रताएँ हैं जिनसे वे एक–दूसरे से भेदीकृत होती हैं, तथापि सबमें कुछ गुण सामान्यरूपेण उपलब्ध हैं। प्रत्येक भाषा की विचित्रताओं की व्याख्या उनके अपने व्याकरणों और शब्दकोशों से होती है। उन वस्तुओं का विवरण, जो सभी भाषाओं में विद्यमान हैं अथवा जो प्रत्येक भाषा के लिए आवश्यक हैं, उस विज्ञान में दिया जाता है जिसे कुछ लोग **सर्वभाषा-व्याकरण** अथवा **दार्शनिक व्याकरण** कहते हैं।"
इससे कुछ पूर्व डू मर्सिया ने सर्वभाषा व्याकरण और विशिष्ट भाषा व्याकरण की निम्न प्रकार से परिभाषा दी है (1729; सेहलिन द्वारा 1928, द्रष्टव्य आगे) :

व्याकरण में ऐसे प्रेक्षण होते हैं जो सभी भाषाओं के लिए उपयुक्त होते हैं; ये प्रेक्षण सामान्य अथवा सार्वभाषिक व्याकरण निर्मित करते हैं। ये प्रेक्षण उच्चरित स्वनों, इन स्वनों के लिए प्रयुक्त लिपि चिह्नों, शब्दों की प्रकृति और अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त पद विन्यास की विभिन्न रीतियों से सम्बद्ध होते हैं। इन सामान्य प्रेक्षणों के अतिरिक्त कुछ प्रेक्षण ऐसे होते हैं जो भाषा विशेष में मिलते हैं और प्रत्येक भाषा का निजी व्याकरण निर्मित करते हैं।

इसके अतिरिक्त, पारम्परिक भाषाई सिद्धान्त के अन्तर्गत यह स्पष्टतया समझा जाता था कि सभी भाषाओं में सर्वनिष्ठ गुणों में से एक गुण 'सर्जनात्मक' पक्ष है। अतएव भाषा का यह एक अनिवार्य गुणधर्म है कि वह अनिश्चित रूप से अनेक

विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए तथा नयी परिस्थितियों के निश्चित परास में समुचित प्रतिक्रिया करने के लिए साधनों को जुटाती है (संदर्भ के लिए देखिए चॉम्स्की,1964,1966) इस प्रकार विशिष्ट भाषा-व्याकरण सर्वभाषा-व्याकरण द्वारा परिपूरित होता है, क्योंकि सर्वभाषा-व्याकरण उन गहनतया स्थित नियमितताओं को अभिव्यक्त करता है और भाषा-प्रयोग के उन सर्जनात्मक पक्ष को समंजित करता है जिन्हें सार्वभौम होने के कारण विशिष्ट भाषा व्याकरण छोड़ देता है। अतएव यह सर्वथा उचित है कि व्याकरण केवल अपवादों और अनियमितताओं का विस्तार के साथ विवेचन करे। किन्तु व्याकरण तभी श्रोता-वक्ता के सामर्थ्य का पूर्ण वर्णन देने में समर्थ होता है जब वह सर्वभाषा-व्याकरण से परिपूरित हो।

किन्तु वर्णनात्मक पर्याप्तता पाने के लिए 'विशिष्ट-भाषा व्याकरण' सर्वभाषा व्याकरण से परिपूरित हो इस आवश्यकता को आधुनिक भाषाविज्ञान ने स्पष्टतया मान्यता नहीं दी है। वस्तुतः उसने सर्वभाषा-व्याकरण को अध्ययन का कुमार्गदर्शक मानते हुए विशेष रूप से अस्वीकृत किया है, और जैसाकि पहले कहा जा चुका है उसने भाषा प्रयोग के सर्जनात्मक पक्ष को वर्णित करने का कोई प्रयास नहीं किया है। इस प्रकार, आधुनिक भाषाविज्ञान ने संरचनात्मक व्याकरणों की आधारभूत वर्णनात्मक-अपर्याप्तता को दूर करने का कोई उपाय प्रस्तुत नहीं किया है।

वाक्य-रचना और वाक्य-निर्वचन के नियमित प्रक्रमों के सुनिश्चित कथन के प्रयास में पारम्परिक विशिष्ट-भाषा व्याकरणों अथवा सर्वभाषा-व्याकरणों की असफलता का अन्य कारण बहुधा स्वीकृत यह विश्वास है कि शब्दों के क्रम से 'विचारों का स्वाभाविक क्रम' प्रतिबिंबित होता है। अतएव वाक्यरचना के नियम वस्तुतः व्याकरण के अंग न होकर किसी अन्य विषय के, जिसमें 'विचार क्रम' का अध्ययन है, अंग बन जाते हैं। इस प्रकार 'सामान्य तथा तार्किक व्याकरण' (लेंसलो तथा अन्य, 1960) में यह अभिकथित है कि अलंकार-प्रधान अभिव्यक्ति के अतिरिक्त शब्द-अनुक्रम एक स्वाभाविक-क्रम का अनुवर्तन करता है जो कि 'हमारे विचारों की स्वाभाविक अभिव्यक्तियों के अनुरूप होते हैं।' फलतः, भाषा के आलंकारिक-प्रयोग के निर्धारण में प्रयुक्त अध्याहार,विपर्यय आदि नियमों के अतिरिक्त अन्य व्याकरणिक नियमों को व्यवस्थापित करने की आवश्यकता नहीं है। यही दृष्टिकोण अनेक रूपों और रूपान्तरों में प्रकट होता है। केवल एक अन्य उदाहरण का उल्लेख किया जा रहा है। सहकालिक और आनुक्रमिक विचार-शृंखला किस प्रकार शब्दक्रम में प्रतिफलित होती है, इस प्रश्न से मुख्यतया संबद्ध एक रोचक निबन्ध में (दिदेरो, 1751) इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अन्य भाषाओं के बीच में (फ्रांसीसी भाषा इस मात्रा में अनन्य) है कि इसमें शब्दक्रम विचारों और चिन्तनों के स्वाभाविक क्रम के अनुरूप है। इस प्रकार 'प्राचीन अथवा आधुनिक भाषाओं में पदों का चाहे कोई

भी क्रम हो, लेखक का मन फ्रेन्च वाक्यविन्यास के शिक्षात्मक क्रम से प्रभावित रहता ही है' (पृ० 390), 'हम चाहे जिस भाषा में लिखें, हमारा मस्तिष्क उसी प्रकार अभिव्यक्ति करता है जिस प्रकार फ्रेन्च भाषा में होता है' (पृ० 371)। और प्रशंसनीय संगति के साथ वे इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि 'हमारी भाषा में अन्य सभी से बढ़कर यह लाभ है कि वह मनोरम होने के साथ-साथ उपयोगी भी है'पृ० 372)। इस प्रकार फ्रेन्च विज्ञान के लिए उपयुक्त है जबकि ग्रीक, लैटिन, इतालवी और अंग्रेजी 'साहित्य के लिए अधिक उपयोगी है'। इसके अतिरिक्त

'व्यावहारिक ज्ञान ने फ्रेन्च भाषा को चुना है किन्तु......कल्पना और मनोवेगों ने प्राचीन भाषाओं और हमारे पड़ौसियों की भाषाओं को चुना है।.........यह कहा जा सकता है कि फ्रेन्च समाज में और दर्शनशास्त्र के सम्प्रदायों में है, जबकि ग्रीक, लैटिन और अंग्रेजी रंगमंच और भाषणपीठ पर है।.........हमारी भाषा सत्य से सम्बद्ध है और तथ्यों पर आश्रित है।.........जबकि ग्रीक, लैटिन और अन्य भाषाएँ कल्पित कथाओं और मिथ्या तर्कों की भाषा है। फ्रेन्च निदेश देने के लिए, जागरित करने के लिए और प्रतीति कराने के लिए विकसित है, जबकि ग्रीक, लैटिन, इतालवी और अंग्रेजी की क्षमता प्रवर्तित, उत्तेजित और खोज करने के लिए है। ग्रीक, लैटिन और इतालवी को जनता के सम्मुख बोलिए, किन्तु विद्वानों के सम्मुख फ्रेन्च ही प्रयुक्त कीजिए (पृ० 371–72)।

जहाँ तक शब्दक्रम भाषानिरपेक्ष कारकों से निर्धारित होता है, किसी भी हालत में, विशिष्ट-भाषा व्याकरण अथवा सर्वभाषा व्याकरण में शब्दक्रम का वर्णन करना आवश्यक नहीं है, और इस प्रकार वाक्यविन्यासीय प्रक्रमों के सुस्पष्ट व्यवस्थापन को व्याकरण से बहिर्गत करने का सैद्धान्तिक आधार मिल गया। यह उल्लेखनीय है कि भाषा संरचना का यह सीधा-सादा दृष्टिकोण आधुनिक काल तक विभिन्न रूपों में चला आ रहा है, उदाहरणार्थ, सासूर की यह संकल्पना कि धारणाओं के अनियमित अनुक्रम अभिव्यक्तियों के अनुक्रम के अनुरूप होते हैं, अथवा कुछ लोगों का यह निरूपित करना कि सामान्यतया भाषा शब्दों और पदबंधों का प्रयोग मात्र है (उदाहरणार्थ, राइल, 1953)।

किन्तु पारम्परिक व्याकरणों की इस अपर्याप्तता का आधारभूत कारण इससे अधिक प्राविधिक है। यद्यपि यह भलीभाँति समझा जाता रहा है कि भाषाई प्रक्रम किसी अर्थ में 'सर्जनात्मक' है, तथापि पुनरावर्ती प्रक्रमों की व्यवस्था को अभिव्यक्त करने की प्राविधिक युक्तियाँ अभी हाल तक उपलब्ध नहीं हो पाई थीं। वस्तुतः भाषा किस प्रकार (हम्बोल्ट के शब्दों में) 'सीमित साधनों का असीमित प्रयोग' कर सकती है, इसका विकास पिछले तीस वर्षों में ही हुआ जिसे गणित के मुख्याधारों

की गवेषणा के प्रसंग में माना जा सकता है अब, जब ये अन्तर्दृष्टियां सहज उपलब्ध हो गई हैं, उन समस्याओं पर पुनर्विचार किया जा सकता है जो पारम्परिक भाषाई सिद्धान्त में उठाई गई थीं किन्तु जिनका समाधान नहीं निकल पाया था, और अब भाषा के सर्जनात्मक प्रक्रमों के सम्पूर्णता के स्पष्ट निरूपण का प्रयास भी किया जा सकता है। संक्षेप में प्रजनक-व्याकरणों के साथ अध्ययन के लिए अब कोई तकनीकी अवरोध नहीं रह गया है।

मुख्य विवेचन पर पुनः विचार करते हुए, प्रजनक-व्याकरण से हमारा तात्पर्य उन नियमों की व्यवस्था मात्र से है जो कि किसी सुस्पष्ट और सुपरिभाषित रीति से संरचनात्मक वर्णनों को वाक्यों में समनुदेशित करते हैं। स्पष्टतया, भाषा के प्रत्येक वक्ता ने एक ऐसे प्रजनक-व्याकरण पर अधिकार प्राप्त कर लिया है और उसे अन्तःकृत कर लिया है जो उस वक्ता के भाषाज्ञान को प्रकट करता है इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वह व्याकरण के नियमों को जानता है अथवा जान भी सकता है, अथवा भाषा के अन्तः प्रज्ञात्मक ज्ञान के विषय में उसके कथन अवश्यतः यथार्थ हैं। कोई भी रोचक प्रजनक-व्याकरण, अधिकांशत, उन मानसिक प्रक्रमों का विवेचन करेगा जो कि वास्तविक अथवा संभावी चेतना के भी परे हैं। इसके अतिरिक्त यह नितांत स्पष्ट है कि अपने व्यवहार और सामर्थ्य के सम्बन्ध में बताए वक्ता के विवरण और दृष्टिकोण त्रुटिपूर्ण भी हो सकते हैं। इस प्रकार एक प्रजनक व्याकरण उसको व्यक्त करने का प्रयास करता है जो कि वक्ता वास्तव में जानता है, न कि वह जो कि वह अपने ज्ञान के सम्बन्ध में बताता है। इसी प्रकार, चाक्षुष प्रत्यक्षण का सिद्धान्त यह बताने का प्रयास करेगा कि द्रष्टा क्या देखता है और वह कौन-सी यांत्रिकी है जो दृष्टि को निर्धारित करती है, न कि उसके उन कथनों को जो बताते हैं कि वह क्या देखता है और क्यों देखता है, यद्यपि ये कथन भी वस्तुतः ऐसे असिद्धांत के लिए उपयोगी और सबल हो सकते हैं।

निरन्तर चली आ रही भ्रान्तधारणा के परिहारार्थ यह पुनः कथन कदाचित् समुपयुक्त होगा कि प्रजनक-व्याकरण वक्ता अथवा श्रोता के लिए प्रतिमान (माडेल) नहीं है। वह (व्याकरण) सर्वाधिक संभव पक्षपातविहीन पदों में भाषाज्ञान को लक्षित करने का प्रयास करता है जो कि वक्ता-श्रोता की भाषा के वास्तविक प्रयोग का आधार प्रदान करता है। जब इस व्याकरण के लिए यह कहते हैं कि वाक्य को विशेष संरचनात्मक वर्णन के साथ प्रजनित करता है, तो हमारा तात्पर्य केवल यह होता है कि व्याकरण वाक्य में सम्बद्ध संरचनात्मक वर्णन समनुदेशित करता है। जब हम कहते हैं कि इस विशिष्ट प्रजनक-व्याकरण के अनुसार वाक्य का विशिष्ट व्युत्पादन है तब हम यह नहीं बताते हैं कि वक्ता या श्रोता ऐसा व्युत्पादन रचित करने के लिए, किसी व्यावहारिक और प्रभावकारी रीति से, किस प्रकार कार्यारम्भ करे।

ये प्रश्न भाषा-प्रयोग के सिद्धान्त-निष्पादन के सिद्धान्त के हैं। निस्संदेह, भाषाप्रयोग के युक्तिसंगत प्रतिमान के भीतर, एक आधारभूत घटक के रूप में, वह प्रजनक-व्याकरण समाविष्ट होगा जो भाषा के वक्ता-श्रोता ज्ञान को अभिव्यक्त करता है : किन्तु यह प्रजनक-व्याकरण, स्वयं में, प्रात्यक्षिक प्रतिमाप अथवा भाषा-उत्पादन के प्रतिमान के स्वरूप अथवा क्रियाविधि को निश्चित नहीं करता है। इस बिन्दु को स्पष्ट करने के लिए किए विविध प्रयत्नों के लिए देखिए—चॉम्स्की (1957), ग्लीसन (1961), मिलर और चॉम्स्की (1963) और अन्य अनेक प्रकाशन।

इस विषय में विद्यमान भ्रांति लगातार सुझाव देती चली आ रही है कि पदावली विषयक परिवर्तन कदाचित् ठीक होगा। फिर भी, मैं सोचता हूँ कि पद, "प्रजनक-व्याकरण" पूर्णतया उपयुक्त है और इसलिए मैं प्रयोग में लाता रहा हूँ। पद "प्रजनन करना" का जिस अर्थ में यहाँ प्रयोग किया है, वह प्रयोग तर्कशास्त्र में, विशेषतः संयोजनात्मक व्यवस्थाओं के पोस्ट के सिद्धान्त में, पहले से होता आया है। पुनश्च; 'प्रजनन करना' (generate) हम्बोल्ट के पद 'प्रजनन करना' (erzeugen) का, जिसका उन्होंने ऐसा लगता है तत्वतः इसी अर्थ में प्रयोग किया है, सर्वाधिक उपयुक्त अनुवाद लगता है। चूँकि "प्रजनन" का यह प्रयोग तर्कशास्त्र और भाषाई सिद्धान्त की परम्परा में सुप्रतिष्ठित है, मैं कोई कारण नहीं देखता हूँ कि पदावली में परिवर्तन किया जाए।

§2. निष्पादन सिद्धान्त की दिशा में

इस पारम्परिक दृष्टिकोण के प्रति आपत्ति उठाने में कोई तर्क प्रतीत नहीं होता है कि निष्पादन-सिद्धान्त की अन्वेषणा उसी सीमा तक पहुँच सकती है जहाँ तक अन्तर्निहित सामर्थ्य के बोध के द्वारा संभव है। इसके अतिरिक्त निष्पादन पर हुए हाल के कार्यों से इस अभिग्रह को नया समर्थन मिला प्रतीत होता है। जहाँ तक मैं जानता हूँ, स्वनविज्ञान के बाहर, निष्पादन-सिद्धान्त से सम्बद्ध जो कुछ स्थूल परिणाम उपलब्ध हुए हैं तथा जो कुछ स्पष्ट सुझाव प्रस्तुत हुए हैं, वे निष्पादन प्रतिमानों के उन अध्ययनों से प्राप्त हुए हैं जिन्होंने विशिष्ट प्रकार के प्रजनक-व्याकरणों को सन्निविष्ट किया है—अर्थात्, उन अध्ययनों से प्राप्त हुए हैं जिनके आधार में अन्तर्निहित सामर्थ्य के अभिग्रह हैं।[3] विशेष रूप से, स्मृति-सीमा तथा स्मृति-संगठन द्वारा निष्पादन पर अध्यारोपित परिसीमाओं से सम्बद्ध और विभिन्न प्रकार के विच्युत वाक्यों के संरचन में व्याकरणिक युक्तियों के संप्रयोग से सम्बद्ध प्रश्नों पर सुझावभरे प्रत्यवेक्षण हैं। परवर्ती प्रश्न पर हम पुनः अध्याय 2 और 4 में विचार करेंगे। सामर्थ्य और निष्पादन के अन्तर को स्पष्ट करने के लिए यह उपयोगी होगा कि हम स्मृति, समय और पहुंच की सीमाओं के सम्बन्ध में निष्पादन प्रतिमानों के पिछले कुछ वर्षों में हुए अध्ययन से उपलब्ध कुछ सुझावों और परिणामों के सारांश को संक्षेप में प्रस्तुत करें।

इस विवेचन में 'स्वीकार्य' पद का प्रयोग हम उन उक्तियों के लिए करेंगे जो पूर्णरूपेण स्वाभाविक हैं, कागज़-पेंसिल विश्लेषण के बिना ही, तुरन्त समझ में आ सकते हैं और किसी भी प्रकार विलक्षण एवं शिष्टेतर नहीं हैं। स्पष्टतः स्वीकार्यता विविध आयामों में, एक मात्रा की वस्तु है। अतएव इसकी धारणा को और अधिक सूक्ष्मतया स्पष्ट करने के लिए हम एक के बाद एक त्रिविध संक्रियात्मक परीक्षण (उदाहरण के लिए, द्रुतता, शुद्धता, पुनः स्मरण और प्रत्यभिज्ञान की एकरूपता, अनुतान की प्रसामान्यता) प्रस्तुत कर सकते हैं।[4] वर्तमान विवेचन के लिए, इसे और अधिक सावधानी के साथ सीमाओं में बांधना अनावश्यक है। उदाहरणार्थ, (1) के वाक्य (2) के वाक्यों की तुलना में अभिप्रेत अर्थ में कुछ अधिक स्वीकार्य हैं :

(1) (i) I called up the man who wrote the book that you told me about (मैंने उस आदमी को बुलाया जिसके सम्बन्ध में आपने कहा था कि उसने पुस्तक लिखी।)

(ii) quite a few of the students who come from New York are friends of mine (अधिकांश छात्र जो न्यूयार्क निवासी हैं, मेरे मित्र हैं।)

(iii) John, Bill, Tom, and several of their friends visited us last night (जॉन, बिल, टोम और उनके अनेक मित्र हमसे पिछली रात मिलने आए।)

(2) (i) I called the man who worte the book that you told me about up (मैंने उस आदमी को पुकारा जिसके सम्बन्ध में आपने ऊपर बताया था कि उसने पुस्तक लिखी।)

(ii) the man who the boy who the students recognized pointed out is a friend of mine (जिस आदमी को लड़के ने इंगित किया तथा जिसे छात्रों ने पहचाना, मेरा मित्र है।)

अधिक स्वीकार्य वाक्य वे हैं जिनके उत्पादन की संभावना अधिक है, जो अधिक स्वाभाविक हैं।[5] वास्तविक संभाषणों में, जहाँ भी संभव होगा, वक्ता अस्वीकार्य वाक्यों को प्रयोग में नहीं लाएगा और उनके स्थान पर अधिक स्वीकार्य वाक्यान्तरों को प्रयुक्त करेगा।

'स्वीकार्य' की धारणा को 'व्याकरण संमत' की धारणा से सम्भ्रमित नहीं करना चाहिए। स्वीकार्यता की धारणा का सम्बन्ध निष्पादन के अध्ययन से है जबकि व्याकरण-संमतता का सम्बन्ध सामर्थ्य के अध्ययन से है। (2) के वाक्य स्वीकार्यता की मापनी में बहुत नीचे पर हैं किन्तु व्याकरण-संमतता (इस पद के

तकनीकी अर्थ में) की मापनी में ऊँचे पर हैं। अर्थात्, भाषा के प्रजनक-नियम उनका ठीक उसी प्रकार निर्वचन करते हैं जिस प्रकार (1) के अधिक स्वीकार्य वाक्यों का। निस्सन्देह स्वीकार्यता के समान व्याकरण-संमतता भी एक मात्रापरक धारणा है (देखिए, चॉम्स्की 1955,1957, 1961), किन्तु व्याकरण-संमतता तथा स्वीकार्यता की मापनियाँ संपाती नहीं हैं। व्याकरण-संमतता स्वीकार्यता के निर्धारण में सहायक अनेक घटकों में से केवल एक घटक है। तदनुसार, कोई चाहे स्वीकार्यता के कितने ही विविध संक्रियात्मक परीक्षण प्रस्तुत करे इसकी संभावना कम रहेगी कि व्याकरण-संमतता की कहीं अधिक अमूर्त और कहीं अधिक महत्वपूर्ण धारणा के लिए वह एक आवश्यक और पर्याप्त कसौटी ढूँढ पाए। व्याकरण-संमत किन्तु अस्वीकार्य वाक्य प्राय: व्याकरण से सम्बद्ध कारणों से प्रयोग-बाह्य नहीं होते हैं बल्कि प्रयोग-बाह्यता के कारण हैं स्मृति-परिसीमाएँ, अनुतानात्मक एवं शैलीपरक घटक, वाक्य-बंध के 'मूर्तिमत्तात्मक' तत्व आदि (उदाहरणार्थ, अंग्रेजी की यह प्रकृति कि तार्किक कर्त्ता और कर्म पहले रखा जाए न कि बाद में; देखिए, अध्याय 2 की टिप्पणी 32 और अध्याय 3 की टिप्पणी 9)। यह उल्लेखनीय है कि यह नितान्त असंभव है कि अस्वीकार्य वाक्यों को व्याकरणिक पदों में लक्षित कर सकें। उदाहरणार्थ,व्याकरणिक के विशिष्ट नियमों को हम इस प्रकार व्यवस्थापित नहीं कर सकते हैं कि सभी अस्वीकार्य वाक्य उनसे बहिर्गत हो जाएं। स्पष्टतया, वाक्य-प्रजनन में व्याकरण-नियमों के पुन: प्रयोगों की संख्या सीमित करने से भी ये बहिर्गत नहीं होते हैं क्योंकि अस्वीकार्यता ऐसे भेदक नियमों के प्रयोग मात्र से भी उत्पन्न हो सकती हैं जिनमें से प्रत्येक केवल एक बार प्रयुक्त हो रहा है। वस्तुत: यह स्पष्ट है कि अस्वीकार्य वाक्यों को हम व्युत्पादन के किसी सार्वभौमिक गुणधर्म तथा उससे परिभाषित संरचनाओं द्वारा ही अभिलक्षित कर सकते हैं। इस गुणधर्म को किसी विशिष्ट नियम द्वारा उद्भूत नहीं माना जा सकता है बल्कि उस रीति द्वारा उद्भूत माना जा सकता है जिसमें वे नियम व्युत्पादन में परस्पर-सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

इस पर्यवेक्षण से यह सुझाव मिलता है कि निष्पादन के अध्ययन में लाभदायक होगा यदि हम अपना प्रारम्भ व्याकरण-संमत वाक्यों में विद्यमान सरलतम रूपीय संरचनाओं की स्वीकार्यता की खोज से करें। उक्तियों का सर्वाधिक स्पष्ट गुणधर्म उनका विविध प्ररूपों के घटकों में कोष्ठन है, अर्थात्, उनसे सम्बद्ध 'वृक्ष-संरचना' है। ऐसी संरचनाओं में हम विभिन्न भेदों को पहिचान सकते हैं—उदाहरणार्थ, वे जिन्हें इस विवेचन के लिए निम्नलिखित रूढ़ तकनीकी नाम देते हैं :—

(3) (i) नीड़ित रचनाएँ

(ii) आत्म-आधायित रचनाएँ

(iii) बहु-प्रशाखी रचनाएँ

(iv) वाम-प्रशाखी रचनाएँ

(v) दक्षिण-प्रशाखी रचनाएँ

(i) पदबन्ध A(अ) और B(ब) नीड़ित रचना में हैं यदि A(अ) संपूर्णतया B(ब) के भीतर आता है और B(ब) के भीतर उसके बाएँ भी और दाहिने भी कोई अशून्य तत्व है । इस प्रकार (2 i) में पदबन्ध "the man who wrote the book that you told me about (जिस व्यक्ति के सम्बन्ध में आपने बताया था कि उसने पुस्तक लिखी)" पदबन्ध "called the man who wrote the book that you told me about up" ('व्यक्ति को पुकारा जिसके सम्बन्ध में आपने ऊपर बताया था कि उसने पुस्तक लिखी') में नीड़ित है । (ii) पदबन्ध A(अ) पदबन्ध B(ब) में आत्म-आधायित है । यदि पदबन्ध A (अ) पदबन्ध B (ब) में नीड़ित है, और इसके अतिरिक्त A (अ) उसी प्ररूप का है जिसका B(ब) है । इस प्रकार (2ii) में, चूँकि दोनों पदबन्ध संबंधवाचक उपवाक्य हैं, पदबन्ध "who the students recognized" (जिसे छात्रों ने पहचाना) पदबंध "who the boy who the students recognised pointed out" (जिसे लड़के ने इंगित किया तथा जिसे छात्रों ने पहचाना)" में आत्म-आधायित है । इस प्रकार नीड़न का सम्बन्ध कोष्ठन से है और आत्म-आधायन का साथ ही साथ कोष्ठों के नामांकन से भी है । (iii) बहुप्रशाखी रचना में कोई आंतरिक संरचना नहीं होती है । (1iii) में कर्तृ-संज्ञापदबंध एक बहुप्रशाखी संरचना है, क्योंकि "John" Bill "Tom" (जॉन, बिल, टोम) और "several of their friends" (उनके अनेक मित्र) उसके सन्निहित-अवयव है और उनका कोई और पारस्परिक साहचर्य नहीं है । कोष्ठन के पदों में एक बहुप्रशाखी रचना रूप [[A] [B]... [M]] होता है । (iv) : एक वामप्रशाखी संरचना का रूप [[[.....]...].....] होता है । अंग्रेजी में इसके उदाहरण हैं—[[[[John]'s brother]'s father]'s uncle],[[[[जॉन] के भाई] के पिता]के चाचा] या [[[the man who you met] from Boston] who was on the train] (बोस्टन निवासी व्यक्ति जो आपसे मिला था, वह रेलगाड़ी में था) जहाँ अनिश्चिततया पुनरावर्ती संरचनाएँ हैं; अथवा (1ii) जिसमें कई प्रकार के वाम-प्रशाखन हैं । (v) : दक्षिण प्रशाखी संरचनाओं में इसके विपरीत गुणधर्म हैं—जैसे, (1i) का मुख्यकर्म अथवा [this is [the cat that caught [the rat that stole the cheese]]] (इस बिल्ली ने उस चूहे को पकड़ा जिसने चीज चुराई थी) वाम-प्रशाखन के उदाहरण हैं ।

प्रजनक-व्याकरण पर हाल के कार्यों के प्रारम्भ मात्र से, वाक्य-संरचना के इन सतही पक्षों का निष्पादन पर पड़ा प्रभाव अध्ययन का विषय रहा है, और स्वीकार्यता निर्धारण में (अर्थात्, निष्पादन को सीमाबद्ध करने में) उनकी भूमिका के सम्बन्ध में

कुछ संसूचक प्रेक्षण हैं। इस कार्य का संक्षेप में सारांश देते हुए निम्नलिखित पर्यवेक्षण विश्वास्य प्रतीत होते हैं :

(4) (i) पुनरावृत नीड़न से अस्वीकार्यता बढ़ती है

(ii) आत्म-आधायन से अस्वीकार्यता मूलतः और भी बढ़ जाती है

(iii) बहुप्रशाखी रचनाएँ स्वीकार्यता मे इष्टतम हैं

(iv) बड़े और संमिश्र तत्व के नीड़न से स्वीकार्यता घट जाती है

(v) केवल वाम-प्रशाखन अथवा केवल दक्षिण-प्रशाखन से घटित अस्वीकार्यता के स्पष्ट उदाहरण नहीं मिलते हैं यद्यपि ये रचनाएं अन्य रीति से अस्वाभाविक हैं—उदाहरणार्थ, दक्षिणप्रशाखी रचना "this is cat that caught the rat that stole the cheese" (इस बिल्ली ने उस चूहे को पकड़ा जिसने चीज चुराई थी) को पढ़ते समय अनुतान-यतियाँ सामान्यतया गलत स्थानों पर अन्त:प्रविष्ट होती हैं [अर्थात् cat (बिल्ली) और rat (चूहा) के पश्चात् होती हैं, न कि मुख्य कोष्ठनों के स्थान पर]।

कुछ मात्रा तक ये घटनाक्रम सरलता से व्याख्यात हैं। इस प्रकार यह ज्ञात है (देखिए, चॉम्स्की, 1959 a; और विवेचना के लिए, चॉम्स्की, 1961, और मिलर तथा चॉम्स्की, 1963) की इष्टतम प्रात्यक्षिक युक्ति, चाहे सीमाबद्ध स्मृति के साथ, सीमाहीन वाम-प्रशाखी और दक्षिण-प्रशाखी संरचनाओं को स्वीकार कर सकती है, यद्यपि नीड़ित (अतएव अन्ततः आत्म-आधायित) संरचनाएँ उसकी स्मृति-क्षमता से परे है। इस प्रकार (4i) केवल स्मृति की सीमाबद्धता का परिणाम है और (2ii) के जैसे उदाहरणों की अस्वीकार्यता कोई समस्या खड़ी नहीं करती है।

यदि (4ii) सही है[6] तो हमारे पास स्मृनि-संगठन सम्बन्धी निष्कर्ष के लिए ऐसा साक्ष्य है जो कि इस तुच्छ तथ्य से परे जाता है कि वह आकार में अवश्य सीमित हो। चॉम्स्की (1959 a) में विवेचित इस प्रकार की इष्टतम सीमित प्रात्यक्षिक युक्ति को आत्म-आधायन में, अन्य प्रकार के नीड़न की तुलना में, कोई अधिक कठिनाई नहीं पड़ेगी (देखिए बार-हिलेल, कशेर और शेमीर, 1963 जहाँ इस बिन्दु पर विवेचन हुआ है)। आत्म-आधायन और भी अधिक अस्वीकार्य होता है (यह मानकर कि यह एक तथ्य है), इसके कारण बताने के लिए हमें प्रात्यक्षिक युक्ति पर स्मृति सीमा से कहीं अधिक प्रतिबन्ध लगाने होंगे। उदाहरणतः हम यह मानकर चल सकते हैं कि प्रात्यक्षिक युक्ति के पास प्रत्येक प्रकार के पदबन्ध के पृथक्-पृथक् विश्लेषणात्मक प्रक्रियाओं का एक समूह उपलब्ध है और यह इस प्रकार संगठित है कि वह एक प्रक्रिया ψ को प्रयुक्त करने में असमर्थ है (अथवा उसे इसमें कठिनाई होती है) जबकि वह ψ को कार्यान्वित कर रहा है। यह एक प्रात्यक्षिक प्रतिमान का आवश्यक

अभिलक्षण नहीं है, किन्तु यह विश्वास्य है और इससे (4ii) की व्याख्या हो जाती है। इस सम्बन्ध में देखिए, मिलर और इसर्ड (1964)।

(4iii) में प्रदर्शित बहुप्रशाखन की उच्च स्वीकार्यता इस विश्वास्य अभिग्रह पर सरलता से व्याख्यात हो जाती है कि पदबन्ध-संख्या और रचनांग-संख्या का अनुपात (एक वाक्य के वृक्ष-आरेख में पर्व-अन्त्यपर्व-अनुपात) विश्लेषण में की जाने वाली संगणना की मात्रा का एक स्थूल माप है। एक विश्लेषण-युक्ति के लिए यह बहु-समानाधिकरण एक सरलतम प्रकार की रचना होगी—यह स्मृति पर कम से कम खिचाव डालेगी।[7] विवेचन के लिए देखिए, मिलर चॉम्स्की (1963)।

(4iv) कदाचित् स्मृति-हानि का संसूचक है किन्तु कुछ ऐसे प्रश्नों को उठाता है जिनका समाधान नहीं हुआ है। (देखिए, चॉम्स्की 1961 टिप्पणी 19)।

(4v) इष्टतम प्रात्यक्षिक प्रतिमानों के सम्बन्ध में पूर्व उल्लिखित परिणाम से उद्भूत है। किन्तु यह अस्पष्ट है कि वाम और दक्षिण प्रशाखी संरचनाएं एक विशिष्ट बिन्दु के आगे क्यों अस्वाभाविक बन जाते हैं, यदि वे वास्तव में ऐसा करते हैं।[8]

कोई यह पूछ सकता है कि व्याकरणिक संरचनाओं के (3) से कम सतही पक्षों पर ध्यान देने से क्या निष्पादन प्रतिमान के सम्बन्ध में कुछ गहरे निष्कर्ष निकल सकते हैं। यह पूर्णतया सम्भव है। उदाहरणार्थ, मिलर और चॉम्स्की (1963) में प्रात्यक्षिक युक्ति के किंचित् अधिक विस्तृत संगठन के प्रति कुछ वाक्यविन्यासीय और प्रात्यक्षिक विचारणाएँ एक सुझाव के (जो कि निस्सदेह बहुत ही अधिक ऊहापोहात्मक है,) समर्थन में प्रस्तुत किए गए हैं। सामान्यतया यह प्रतीत होता है कि प्रजनक-व्याकरणों को समाविष्ट करने वाले निष्पादन-प्रतिमानों का अध्ययन एक सफल अध्ययन हो सकता है, इसके अतिरिक्त, किसी अन्य ऐसे आधार की कल्पना करना भी कठिन है जिससे कोई निष्पादन सिद्धान्त विकसित हो सके।

प्रजनक-व्याकरण के कार्य की इन आधारों पर पर्याप्त आलोचना होती रही है कि आधारभूत सामर्थ्य के अध्ययन पर अधिक बल देने के कारण वह निष्पादन के अध्ययन की उपेक्षा करता है। किन्तु तथ्य ये प्रतीत होते हैं कि, ध्वनिविज्ञान के बाहर (देखिए, टिप्पणी 3), जो कुछ भी निष्पादन के अध्ययन हुए हैं वे प्रजनक-व्याकरण में हुए कार्य के गौण-उत्पादन के रूप में हुए हैं। विशेष रूप से, अभी सारांश रूप में दिए स्मृति परिसीमाओं के अध्ययन और शैलीपरक युक्ति के रूप में नियमों में विचलनों के अध्ययन (जिन पर हम फिर अध्याय 2 और 4 में विचार करेंगे) इस दिशा में विकसित हुए हैं। इसके अतिरिक्त, ऐसा प्रतीत होता है कि अन्वेषण की यह कार्यपद्धति निष्पादन में कुछ अन्तर्दृष्टि दे सकेगी। परिणामतः,

यह आलोचना अकारण है और साथ ही साथ पूर्णतया कुलक्षित है। सामग्री के वर्गीकरण और संगठन में, प्रेक्षित वाक् के नमूनों से 'प्रतिदर्श निष्कर्षण' में 'वाक्-अभ्यस्तता' अथवा 'अभ्यस्तता संरचनाओं के वर्णन, जहाँ तक ये हो सकते हैं, आदि में, यह वर्णनवादियों की सिद्धान्तजन्य परिसीमाएँ हैं जो कि वास्तविक निष्पादन के विकास का प्रतिवारण करती हैं।

§3. प्रजनक-व्याकरण का संगठन

सामर्थ्य के प्रश्न पर और सामर्थ्य के वर्णन को उद्देश्य में रखने वाले प्रजनक-व्याकरणों पर पुनर्विचार करते हुए, हम फिर से इस बात पर बल दे रहे हैं कि भाषाज्ञान का तात्पर्य अनिश्चित अनेकानेक वाक्यों को समझने की अन्तर्निहित योग्यता है।[9] अतएव, प्रजनक-व्याकरण-अवश्यमेव ऐसे नियमों की व्यवस्था है जो अनिश्चित बड़ी संख्या की संरचनाओं को प्रजनित करने के लिए पुनरावृत्ति ले सकते हैं। नियमों की यह पद्धति प्रजनक-व्याकरण के तीन प्रमुख घटकों में विश्लेषित की जा सकती है : वाक्यविन्यासीय, स्वनप्रक्रियात्मक और आर्थी घटक।[10]

वाक्यविन्यासीय घटक अमूर्त रूपीय पदार्थों के एक अनंत समुच्चय को विनिर्दिष्ट करता है जिसका प्रत्येक पदार्थ विशिष्ट वाक्य के एकल निर्वचन से सम्बद्ध सभी सूचनाएँ समाविष्ट करता है।[11] चूँकि यहाँ केवल वाक्यविन्यासीय घटक से हमारा सम्बन्ध है, अतएव 'वाक्य' शब्द का प्रयोग हम रचनांगों की शृंखला के लिए, न कि स्वनों की शृंखला के लिए, कर रहे हैं। यह पुनः स्मरणीय है कि रचनाओं की शृंखला अनन्यता से (कुछ मुक्त परिवर्तन तक) स्वनों की शृंखला को विनिर्दिष्ट करती है, किन्तु इसके विपरीत नहीं।

व्याकरण का स्वनप्रक्रियात्मक घटक वाक्यविन्यास नियमों से प्रजनित वाक्य के स्वनात्म रूप को निर्धारित करता है। अर्थात्, वह वाक्यविन्यासीय घटक से प्रजनित संरचना को स्वनात्म रूप से निरूपित संकेत से संबद्ध करता है। आर्थी घटक वाक्य के आर्थी निर्वचन को निर्धारित करता है। अर्थात्, वाक्यविन्यासीय घटक से प्रजनित संरचना को विशिष्ट आर्थी निरूपण से संबद्ध करता है। अतएव स्वनप्रक्रियात्मक और आर्थी, दोनों घटक शुद्धरूपेण निर्वचनात्मक हैं। इनमें से प्रत्येक एक दिए हुए वाक्य के रचनांगों, उनके अन्तर्निष्ठ गुणधर्मों और उनके अन्तः सम्बन्धों के विषय में वाक्यविन्यासीय घटक द्वारा दी सूचनाओं को उपयोग में लाता है। फलस्वरूप, व्याकरण के वाक्यविन्यासीय घटक को प्रत्येक वाक्य के लिए दो वस्तुओं का विनिर्देशन अवश्य करना चाहिए—एक **गहनस्तरीय संरचना** जो आर्थी निर्वचन निर्धारित करती है और एक **बहिस्तलीय संरचना** जो स्वनात्म निर्वचन निर्धारित करती है। इनमें से प्रथम का निर्वचन आर्थी घटक से और द्वितीय का निर्वचन स्वनप्रक्रियात्मक घटक से होता है।[12]

कोई यह मान सकता है कि बहिस्तलीय संरचना और गहनस्तरीय संरचना सदैव सर्वांगसम होंगी। वस्तुतः उन वाक्यविन्यासीय सिद्धान्तों को संक्षेप में लक्षित किया जा सकता है जो गहनस्तरीय और बहिस्तलीय संचरनाएँ मूलतः एक ही हैं इस अभिग्रह पर आधारित होकर आधुनिक संरचनात्मक (वर्गीकरणात्मक) भाषाविज्ञान में उत्पन्न हुए हैं (देखिए-पोस्टल, 1964 a, चॉम्स्की, 1964)। रचनांतरण व्याकरण का केन्द्रिक भाव यह है कि वे, सामान्यतया प्रभिन्न हैं, और अधिक प्रारम्भिक प्ररूप के पदार्थों पर कुछ रूपीय संक्रियाओं के, जिन्हें 'व्याकरणिक रचनांतरण' कहते हैं, पुनरावर्तक प्रयोग से बहिस्तलीय संरचना निर्धारित होती है। यदि यह यथार्थ है (जैसा कि अब से हम मान कर चल रहे हैं) तो वाक्यविन्यासीय घटक प्रत्येक वाक्य के लिए गहन और बहिस्तलीय संरचनाएँ प्रजनित करेगा और उन्हें परस्पर संबद्ध करेगा। यह विचार हाल की कृति में, बाद में प्रदर्शित रीतियों से, पर्याप्त स्पष्टीकृत किया गया है। अध्याय 3 में, मैं विशिष्ट और अंशतः नवीन प्रस्ताव प्रस्तुत करूँगा कि किस प्रकार यह सूक्ष्मतया प्रतिपादित किया जाए। वर्तमान विवेचन के लिए इतना पर्यवेक्षित करना पर्याप्त है कि यद्यपि रचनांगों की किसी शृंखला का संनिहित-अवयव विश्लेषण (नामांकित-कोष्ठन) उसके बहिस्तलीय संरचना के वर्णन में सफल हो सकता है तथापि निश्चयतः वह गहनस्तरीय संरचना को उद्घाटित करने में समर्थ नहीं है। इस पुस्तक में प्रथमतः गहनस्तरीय-संरचना और विशेषतः उसके संरचक प्राथमिक तत्व मेरे विवेच्य हैं।

विवेचना को स्पष्ट करने के लिए, विवेचन की प्रगति के साथ-साथ कभी-कभी परिवर्तन करते हुए निम्नलिखित पदावली का प्रयोग करूँगा।

वाक्यविन्यासीय घटक का **आधार** उन नियमों का तंत्र है जो **आधार-शृंखला** के अत्यन्त नियन्त्रित (कदाचित् परिमित) समुच्चय को प्रजनित करते हैं, और प्रत्येक का एक अपना संरचनात्मक वर्णन है जिसे **आधार पदबन्ध-चिह्नक** कहा गया है। ये आधार पदबन्धचिह्नक के प्राथमिक एकक हैं जिनसे गहनस्तरीय संरचनाएँ बनी हैं। मैं यह मानता हूँ कि आधार के नियमों में कोई भी संदिग्धता (अनेकार्थता) नहीं रहती है। यह अभिग्रह मुझे सही लगता है किन्तु आने वाले विवेचन के लिए यह कोई महत्वपूर्ण परिणाम नहीं है, यह केवल विवेचना को सरल कर देता है। भाषा के प्रत्येक वाक्य के आधार में आधार-पदबन्धचिह्नकों का अनुक्रम रहता है और प्रत्येक पदबन्धचिह्नक वाक्यविन्यासीय घटक के आधार से प्रजनित होता है। मैं इस अनुक्रम को उस वाक्य का आधार कह कर उल्लिखित करूँगा जिसका यह आधार है।

'आधार' के अतिरिक्त, प्रजनक-व्याकरण के वाक्यविन्यासीय घटक के अन्तर्गत

'रचनांतरणात्मक' उपघटक आता है। इसका सम्बन्ध वाक्य को, अपने आधार से, बहिस्तलीय संरचना मे प्रजनित करना है। रचनांतरण-नियमों की संक्रियाओं और प्रभावों से पाठक, किंचित् परिचित है, यह अब से मान लिया गया है।

चूँकि 'आधार' केवल पदबन्धचिह्नकों के सीमित समुच्चय को प्रजनित करता है, अधिकांश वाक्यों में अन्तर्भूत आधार के रूप में ऐसे तत्वों का अनुक्रम मिलेगा। एकल आधार-पदबन्धचिह्नक को आधार में रखने वाले वाक्यों का एक सीमित उपसमुच्चय "बीजवाक्य" माना गया है। ये विशिष्टतया सरल प्ररूप के वाक्य हैं जिनके प्रजनन में रचनांतरण-उपकरण का न्यूनतम प्रयोग हुआ है। मैं सोचता हूँ कि 'बीजवाक्य' धारणा की महत्वपूर्ण अन्तःप्रज्ञात्मक महत्ता है, किन्तु चूँकि बीज-वाक्य की वाक्यों के प्रजनन और व्याख्या में कोई शेष भूमिका नहीं है, मैं उनके सम्बन्ध में कुछ अधिक नहीं कहूँगा। प्रत्येक को इस ओर से सावधान रहना चाहिए कि बीजवाक्यों और उनके अन्तर्गत आधार-शृंखलाओं के बीच कोई भ्रांति न हो। ऐसा लगता है कि आधारभूत शृंखला और आधार-पदबंधचिह्नकों की भाषा प्रयोग में प्रभिन्न और निर्णयकारी भूमिका है।

चूँकि यहाँ रचनांतरणों का विस्तार के साथ विचार नहीं होना है, ऐसे वाक्य के सम्बन्ध में जिसके आधार में एक एकल तत्व है, स्वयं वाक्य और वाक्य के अन्तर्भूत आधार-शृंखला के बीच कोई विशेष अन्तर नहीं रखा गया है। दूसरे शब्दों में, विवेचना के अनेक बिन्दुओं पर मैं स्पष्टतया सरलीकृत (यथार्थ से प्रतिकूल) अभिग्रह प्रस्तुत करूँगा कि इस स्थिति में अन्तर्भूत आधार-शृंखला ही वाक्य है और आधार-पदबंधचिह्नक बहिस्तलीय और गहनस्तरीय संरचना दोनों है। मैं ऐसे उदाहरणों का चयन करूँगा कि भ्रांति की संभावना सबसे कम रहे किन्तु ध्यान में यह निरंतर रहना चाहिए कि यह सरलीकृत अभिग्रह है।

§4. व्याकरणों का औचित्य

प्रजनक-व्याकरण के वाक्यविन्यासीय घटक की प्रत्यक्ष गवेषणा करने के पूर्व औचित्य और पर्याप्तता के अनेक प्रणालीतंत्रीय प्रश्नों पर कुछ विचार करना वांछनीय है।

सबसे पहले प्रश्न यह है कि वक्ता-श्रोता के सामर्थ्य अर्थात् भाषाज्ञान के सम्बन्ध में सूचना कोई किस प्रकार पा सकता है। अभिरुचि और महत्ता के अधिकांश तथ्यों के समान यह न तो प्रत्यक्षतः प्रेक्षणीय है और न किसी ज्ञात आगमनात्मक प्रक्रियाओं द्वारा दत्तसामग्री से प्राप्य है। स्पष्टतया, भाषानिष्पादन की वास्तविक दत्तसामग्री तथा (नैसर्गिक वक्ता द्वारा अथवा वर्ण्य भाषा सीखे भाषाशास्त्री द्वारा प्राप्त) अन्तर्निरीक्षणात्मक विवरण आधारभूत भाषा-संरचना से सम्बद्ध प्राक्कल्पनाओं की शुद्धता निर्धारित करने के लिए बहुत कुछ साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। व्यवहार में यह

सर्वत्र-स्वीकृत स्थिति है, यद्यपि कुछ प्रणालीतंत्रीय विवेचन ऐसे हैं जो किसी आधार-भूत वास्तविकता के लिए साक्ष्य के रूप में प्रेक्षित निष्पादन अथवा अन्तर्निरीक्षणात्मक विवरणों को प्रयुक्त करने में अनिच्छा प्रकट करते दिखाई पड़ते हैं।

संक्षेप में, यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि भाषा-संरचना के तथ्यों के सम्बन्ध में विश्वसीय सूचना पाने के लिए कोई पर्याप्त निरूपीय प्रविधि हमें विदित नहीं है (और इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है)। दूसरे शब्दों में, नैसर्गिक वक्ता की भाषाई अन्तःप्रज्ञा के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सूचना पाने के लिए बहुत ही कम विश्वसनीय प्रयोगात्मक अथवा सामग्री-प्रक्रमनात्मक प्रक्रियाएँ उपलब्ध हैं यह ध्यातव्य है कि जब किसी संक्रियात्मक प्रक्रिया का सुझाव रखा जाता है, तब पर्याप्तता के लिए उसको उस उपलक्षित ज्ञान द्वारा प्रस्तुत मानक से नाप कर परीक्षित कर लेना चाहिए जिसका वह विनिर्देशन एवं वर्णन करने जा रहा है (यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार भाषाई अन्तःप्रज्ञा का सिद्धान्त व्याकरण-पर्याप्तता के लिए परीक्षित किया जाता है)। इस प्रकार, उदाहरणतः शब्दों में विखण्डित करने के लिए प्रस्तावित संक्रियात्मक परीक्षण के लिए यह आवश्यक है कि वह इन तत्वों से संबद्ध नैसर्गिक वक्ता के भाषाई अन्तः प्रज्ञा से, अनेक निर्णायक अथवा स्पष्ट स्थितियों के समूह में, संवादित्व के अनुभवाश्रित निर्धारक की कसौटी पर खरा उतरे। अन्यथा उसका कोई मूल्य नहीं है। स्पष्टतया यही बात किसी भी प्रस्तावित संक्रियात्मक प्रक्रिया अथवा किसी भी प्रस्तावित व्याकरणिक वर्णन के लिए सत्य है। यदि इस परीक्षण पर खरी उतरने वाली संक्रियात्मक प्रक्रियाएँ उपलब्ध होतीं तो अस्पष्ट एवं कठिन स्थितियों में उनके परिणामों पर विश्वास करने में हमारे लिए औचित्य होता, किन्तु यह भविष्य की अभिलाषा मात्र है, न कि वर्तमान की वास्तविकता। यह वर्तमान भाषावैज्ञानिक कार्य की वस्तुनिष्ठ परिस्थिति है। तथाकथित सुविज्ञात "निष्कर्षण-प्रक्रियाओं" अथवा 'वस्तुनिष्ठ पद्धतियों' के इंगित केवल उस वास्तविक परिस्थिति को धूमिल कर देते हैं जिसमें वर्तमान स्थिति में भाषावैज्ञानिक कार्य चलाया जाए। इसके अतिरिक्त, कोई कारण नहीं है कि हम आशा करें कि भाषाविज्ञान की गहनतर तथा अधिक महत्वपूर्ण ('व्याकरणिकता' और 'कथनांतरण' जैसी) सैद्धान्तिक धारणाओं के लिए कोई विश्वसनीय संक्रियात्मक कसौटी कभी सामने आएगी।

यद्यपि विश्वसनीय संक्रियात्मक प्रक्रियाएँ विरलतया विकसित हुई हैं, तथापि नैसर्गिक वक्ता के ज्ञान की सैद्धान्तिक (जैसे, व्याकरणिक) गवेषणा सम्यक् प्रकार से चालू रखी जा सकती है। आजकल व्याकरणिक सिद्धांत की क्रांतिक समस्या साक्ष्यों की कमी नहीं है बल्कि विद्यमान भाषा-सिद्धान्तों द्वारा ऐसे साक्ष्यों के समूहों की व्याख्या करने में अपर्याप्तता है जिनसे कोई भी गम्भीर प्रश्न जुड़ा हुआ नहीं है।

वैयाकरण के समक्ष समस्या यह है कि उसे नैसर्गिक वक्ता (प्रायः स्वयं) की भाषाई अन्तःप्रज्ञा से सम्बद्ध निस्संदिग्ध दत्तसामग्री के विपुल समूह का वर्णन और, जहाँ संभव हो सके, व्याख्या देना है : संक्रियात्मक प्रक्रियाओं की गवेषणा करने वालों के समक्ष समस्या यह है कि उन्हें ऐसे परीक्षण विकसित करने हैं जो सदैव शुद्ध परिणाम दें तथा सम्बद्ध भेदक-लक्षणों को स्पष्ट करें। वर्तमान में न तो व्याकरण के अध्ययन में और न उपयोगी परीक्षणों को विकसित करने के प्रयासों में कोई इस बात की बाधा है कि उनके समक्ष परिणामों को जाँचने के लिए साक्ष्यों का अभाव है। हम यह आशा करते हैं कि ये प्रयत्न एकोन्मुखी होंगे किन्तु यदि उन्हें किसी महत्व का होना है तो उन्हें स्पष्टतया नैसर्गिक वक्ता के उपलक्षित ज्ञान पर एकोन्मुख होना होगा।

यहाँ यह कोई पूछ सकता है कि क्या अन्तर्निरीक्षणात्मक साक्ष्यों एवं नैसर्गिक वक्ता की भाषाई अन्तःप्रज्ञा को प्राथमिकता देने के कारण वर्तमान भाषाविज्ञान को विज्ञान के क्षेत्र से बहिर्गत कर दिया जाएगा। इस अनिवार्यतः पदावली विषयक प्रश्न के उत्तर का किसी भी गंभीर विचार्य विषय पर थोड़ा-सा भी प्रभाव नहीं पड़ता है। यह अधिक से अधिक, यह निर्धारित करता है कि हम अपने प्रविधि और बोध की वर्तमान स्थिति में प्रभावपूर्ण रीति से सम्पादित शोध को किस प्रकार द्योतित करें। फिर भी, यह पदावली विषयक प्रश्न वस्तुतः एक अन्य किंचित् रुचिकर विचार्य प्रश्न से सम्बद्ध है जो यह है कि सफलताप्राप्त विज्ञानों का महत्वपूर्ण अभिलक्षण उनकी अन्तर्दृष्टि की गवेषणा रहा है अथवा वस्तुनिष्ठता की संपृक्ति। सामाजिक एवं व्यवहारात्मक विज्ञान इस बात के प्रचुर साक्ष्य उपस्थित करते हैं कि वस्तुनिष्ठता का अनुशीलन परिणामतः किसी अन्तर्दृष्टि तथा बोध की प्राप्ति नहीं करता है। इसके विपरीत, इस दृष्टिकोण के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है कि प्राकृतिक विज्ञान, यदि पूर्णरूप से विचार किया जाए, वस्तुनिष्ठता को उसी सीमा तक प्राप्त करना चाहते हैं जहाँ तक वह अन्तर्दृष्टि पाने का साधन है (अर्थात् उन घटनाचक्रों को पाने का साधन है जो गहनतर व्याख्यात्मक प्राक्कल्पनाओं का सुझाव दे सकते हैं अथवा परीक्षण कर सकते हैं)।

किसी भी स्थिति में, गवेषणा की प्रदत्त विकासबिंदु में, एक व्यक्ति जिसका विवेच्य अन्तर्दृष्टि और प्रतिपत्ति है (न कि लक्ष्यमात्र के रूप में वस्तुनिष्ठता), यह अवश्य पूछेगा कि घटनाचक्र का विस्तृततर परास में यथार्थतर वर्णन किस रूप में अथवा किस सीमा तक समाधेय समस्या के समाधान में प्रासंगिक है। मेरे विचार से भाषाविज्ञान में अधिक वस्तुनिष्ठ परीक्षणों से सामग्री को संमार्जित करना समाधान के लिए उठाई समस्याओं के लिए नगण्य महत्ता की है। भाषाविज्ञान की वर्तमान परिस्थिति के इस आकलन से मतभेद रखने वाला व्यक्ति अधिक वस्तुनिष्ठ संक्रियात्मक

परीक्षण की वर्तमान महत्ता से अपने विश्वास की औचित्य सिद्धि यह प्रदर्शित करके कर सकता है कि वे परीक्षण किस प्रकार भाषाई संरचना के नवीन और गहनतर प्रतिपत्ति की ओर ले जाते हैं। कदाचित् एक दिन आएगा जबकि विभिन्न प्रकार की सामग्रियाँ जो कि प्रचुरता में आजकल उपलब्ध हैं, भाषा-संरचना के गहनतर प्रश्नों के उत्तर देने में अपर्याप्त हो जाएंगी। फिर भी, बहुत से प्रश्न जो यथार्थ और महत्वपूर्ण रूप से आज निरूपित होते हैं, इस प्रकार का साक्ष्य नहीं चाहते जो कि प्रायोगिक प्रविधि की वस्तुनिष्ठता में बिना महत्वपूर्ण सुधार किए अप्राप्य अथवा अलभ्य हों।

यद्यपि इस पारम्परिक अभिग्रह के परिहार का कोई उपाय नहीं है कि किसी भी प्रस्तावित व्याकरण भाषाई सिद्धान्त एवं संक्रियात्मक परीक्षण की यथार्थता के निर्धारण में श्रोता-वक्ता की भाषाई अन्तःप्रज्ञा ही अन्तिम मानक है, तथापि इस पर पुनः महत्व देना चाहिए कि यह उपलक्षित ज्ञान भाषा के प्रयोक्ता को तुरन्त उपलब्ध भी न होता होगा। इस कथन में जो विरोधाभास प्रतीत होता है उसे दूर करने के लिए कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं।

यदि "flying planes can be dangerous" '(उड़ने वाले जहाज घातक हो सकते हैं)' जैसा वाक्य समुचित रचित प्रसंग में प्रस्तुत किया जाता है तो श्रोता उसका तुरंत एक अनन्य रूप में निर्वचन कर लेगा और संदिग्धता की ओर उसका ध्यान तक नहीं जाएगा। वस्तुतः यदि इस वाक्य का दूसरा अर्थ उसे बताया भी जाए तो भी वह उसे जबर्दस्ती का अथवा अस्वाभाविक कह कर अस्वीकृत कर देगा (चाहे दोनों अर्थों में से उसमें प्रसंग के बल से कोई एक निर्धारित कर लिया हो)। फिर भी, भाषा का उसका अन्तः प्रज्ञात्मक ज्ञान स्पष्टतया ऐसा है कि किसी रूप में अन्तःकृत व्याकरण के द्वारा वाक्यों के दोनों ["flying planes are dangerous"] '(उड़ने वाले जहाज घातक होते हैं)' के अनुरूप अथवा "flying planes is dangerous" '(उड़ने वाला जहाज घातक होता है।)' के अनुरूप अर्थ वह जानता है।

अभी उल्लिखित उदाहरण में **नैकार्थता** बहुत कुछ स्पष्ट है। किन्तु निम्न वाक्य पर विचार कीजिए :

(5) I had a book stolen (मेरे पास एक पुस्तक थी, चुरा ली गई) कदाचित् ही कोई श्रोता इस तथ्य से परिचित होगा कि उनका **अन्तरीकृत** व्याकरण वस्तुतः इस वाक्य के कम से कम तीन संरचनात्मक वर्णन प्रस्तुत करता है। फिर भी, वाक्य (5) के किंचित् विस्तार से यह तथ्य चेतना में आ सकता है, उदाहरणार्थ :

(i) "I had a book stolen from my car when I stupidly left the window open", '(जब कार की खिड़की खुली रह गई, मेरी

पुस्तक चुरा ली गई)' अर्थात् "Someone stole a book from my car"; '(किसी ने मेरी कार से पुस्तक चुरा ली)।'

(ii) "I had a book stolen from his library by a professional thief who I hired to do the job", '(किराए पर लिए गए व्यावसायिक चोर द्वारा मैंने उसके पुस्तकालय से पुस्तक चुरवाई)' अर्थात् "I had someone steal a book"; (पुस्तक चुराने के लिए मेरे पास कोई था)।

(iii) "I almost had a book stolen, but they caught me leaving the library with it",'(मैं पुस्तक लगभग चुरा चुका था किन्तु उन्होंने पुस्तकालय छोड़ते समय उसके साथ पकड़ लिया)' अर्थात्"I had almost succeeded in stealing the book" (मैं पुस्तक चुराने में प्राय: सफल हो चुका था)

इस प्रकार वाक्य (5) की त्रिविध नैकार्थता को चेतना में लाते हुए, हम न तो श्रोता के लिए कोई नयी सूचना देते हैं और न उसकी भाषा के विषय में कोई नयी बात सिखाते हैं, हम केवल तथ्यों का इस प्रकार विन्यास करते हैं कि उसकी भाषाई अन्त:प्रज्ञा, जो पहले धूमिल थी, अब उसे सुस्पष्ट हो जाती है।

अन्तिम उदाहरण के रूप में, निम्नलिखित वाक्यों पर विचार कीजिए :

(6) I persuaded John to leave '(मैंने जॉन को छोड़ने के लिए समझाया)'।

(7) I expected John to leave '(मैंने जॉन से छोड़ने की अपेक्षा की)'।

श्रोता पर पहला प्रभाव यह हो सकता है कि इन वाक्यों का एक-सा संरचनात्मक विश्लेषण है। पर्याप्त सावधानी से विचार करने पर भी यह प्रकट नहीं होता है कि उसका अन्तरीकृत व्याकरण इन वाक्यों को नितान्त भिन्न-भिन्न संरचनात्मक वर्णन देता है। वस्तुतः जहाँ तक मुझे पता लगा है, इन दो रचनाओं के आधारभूत अन्तर की ओर किसी भी व्याकरण ने उल्लेख नहीं किया है (विशेषत: मेरे स्वयं के अंग्रेजी की व्याकरणिक रूपरेखाओं में भी चॉम्स्की 1955, 1962 (a) इस ओर ध्यान नहीं गया है)। किन्तु, यह स्पष्ट है कि वाक्य (6) और (7) संरचना में समानान्तर नहीं हैं। निम्नलिखित वाक्यों पर विचार करने से अन्तर स्पष्ट किया जा सकता है।

(8) (i) I persuaded a specialist to examine John (मैंने जॉन का परीक्षण करने के लिए एक विशेषज्ञ को समझाया)।

(ii) I persuaded John to be examined by a specialist (मैंने जॉन को एक विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण के लिए समझाया)।

(9) (i) I expected a specialist to examine John (मैंने जॉन के परीक्षण के लिए विशेषज्ञ से अपेक्षा की)।

(ii) I expected John to be examined by a specialist. (मैंने विशेषज्ञ द्वारा जॉन के परीक्षण की अपेक्षा की)।

वाक्य (9i) और (9ii) "संज्ञानात्मकतः पर्याय" हैं : एक तभी सत्य है जबकि दूसरा सत्य है। किन्तु (8i) और (8ii) के बीच कोई हल्का सा भी कथनांतरणात्मक सम्बन्ध नहीं मिलता है। इस प्रकार (8i) वाक्य (8ii) की सत्यता अथवा असत्यता की किंचित् अपेक्षा न करता हुआ सत्य अथवा असत्य हो सकता है। (9i) और (9ii) के बीच गुणार्थ अथवा वर्ण्य अथवा बलात्मकता का अन्तर मिलता है वह वही अन्तर जो कर्तृवाच्यीय वाक्य "a specialist will examine John" '(विशेषज्ञ जॉन का परीक्षण करेगा)' और उसके कर्मवाच्य रूप "John will be examined by a specialist" (जॉन का परीक्षण एक विशेषज्ञ द्वारा किया जाएगा) के बीच मिलता है। किन्तु यह स्थिति (8) के साथ नहीं है वस्तुतः (6) और (8ii) की आधारभूत गहन संरचना यह प्रदर्शित करेगी कि "John" '(जॉन)' क्रिया-पदबन्ध का मुख्यकर्म है और साथ ही साथ आधायित वाक्य का व्याकरणिक कर्ता है। इसके अतिरिक्त, (8ii) में "John" '(जॉन)' आधायित वाक्य का तार्किक मुख्यकर्म है, जबकि (8i) में पदबन्ध 'a specialist' (एक विशेषज्ञ) क्रिया-पदबन्ध का मुख्यकर्म और आधायित वाक्य का तार्किक कर्ता है। किन्तु (7) में तथा (9i) और (9ii) में पदबन्ध "John", "a specialist" (जॉन, एक विशेषज्ञ) और "John" (जॉन) का क्रमशः कोई व्याकरणिक प्रकार्य नहीं है, सिवाय उसके जो आधायित वाक्य में आन्तरिक है, विशेषतः, वाक्य (9) में "John" (जॉन) तार्किक मुख्यकर्म है और "a specialist" (एक विशेषज्ञ) आधायित वाक्यों का तार्किक कर्ता है। इस प्रकार (8i), (8ii), (9i) और (9ii) की आधारभूत गहन संरचनाएँ क्रमशः इस प्रकार हैं :

	संज्ञा-पदबंध	क्रिया-पदबंध	संज्ञा-पदबंध	वाक्य
(10) (i)	(I)—	persuaded—	a specialist—	a specialist will examine John.)
	(मैं)—	(समझाया)	(एक विशेषज्ञ)	(एक विशेषज्ञ जॉन का परीक्षण करेगा)
(ii)	(I)—	persuaded—	John	,,
	(मैं)	(समझाया)	(जॉन)	,,
(11) (i)	(I)—	expected—	—	,,
	(मैं)	(अपेक्षा की)	—	,,
(ii)	(I)—	expected—	—	,,
	(मैं)	(अपेक्षा की)	—	,,

(10ii) ग्रौर (11ii) की स्थितियों में कर्मवाच्यीय-रचनांतरण आधायित वाक्य में प्रयुक्त होता है और अन्य चार स्थितियों में अन्य संक्रियाएँ वाक्य (8) ग्रौर (9) के अन्तिम बहिस्तलीय रूपों को देंगे। वर्तमान विवेचन में महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह है कि (8i), (8ii) से अन्तर्निहित संरचना में भिन्न है यद्यपि (9i) और (9ii) अन्तर्निहित संरचना में तत्त्वतः एक हैं। इसी के कारण अर्थभेद है। विश्लेषण में इस अन्तर की पुष्टि के लिए यह देखें कि "I persuaded John that (of the fact that) Sentence", [मैंने जॉन को वह (तथ्यपूर्ण) वाक्य समझाया] बन सकता है किन्तु "I expected John that (of the fact that) Sentence", [मैंने जॉन से उस (तथ्यपूर्ण) वाक्य की अपेक्षा की] नहीं बन सकता है।

उदाहरण वाक्य (6)–(7) दो महत्वपूर्ण बिन्दुग्रों को उदाहृत करते हैं। प्रथमतः, बहिस्तलीय संरचना अन्तर्निहित गहन संरचना को अभिव्यक्त करने में कितनी असमर्थ है। इस प्रकार (6) ग्रौर (7) बहिस्तलीय संरचना में एक हैं, किन्तु आर्थी निर्वचन को निर्धारित करने वाली अन्तर्निहित गहन संरचना में वे नितान्त भिन्न हैं। द्वितीयतः, वक्ता का अव्यक्तज्ञान कितना भ्रान्तिजनक है, यह भी इससे स्पष्ट होता है। जबतक कि (8) ग्रौर (9) जैसे वाक्य नहीं प्रस्तुत किए गए थे तबतक अंग्रेजी के वक्ता को यह किंचित् मात्र स्पष्ट नहीं था कि उसका अन्तरीकृत व्याकरण वस्तुतः बहिस्तलतः सदृश वाक्यों (6) और (7) का नितान्त भिन्न वाक्यीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

संक्षेप में, हमें इस तथ्य को नहीं भूल जाना चाहिए कि बहिस्तलीय सादृश्य मौलिक-प्रकृति के अन्तर्निहित अन्तरों को छिपा सकते है ग्रौर वक्ता के भाषाई अथवा अन्य प्रकार के ज्ञान के वास्तविक स्वरूप को निर्धारित करने के पूर्व यह आवश्यक हो सकता है कि वक्ता की अन्तःप्रज्ञा को कदाचित् पर्याप्त सूक्ष्म विधियों से निर्देशित ग्रौर बहिर्गत करें। इन दोनों में से कोई भी बिन्दु नया नहीं है (प्रथम पारम्परिक भाषाई सिद्धान्त ग्रौर विश्लेषणात्मक दर्शन का एक सामान्य प्रकरण है, द्वितीय प्लेटो के 'मेनो' तक में वर्णित है), किन्तु दोनों पर अधिकतर ध्यान नहीं जाता है।

व्याकरण को भाषाई सिद्धान्त भी माना जा सकता है; वह उस सीमा तक वर्णनात्म-दृष्टि से (वर्णनात्मतया) पर्याप्त है कि वह आदर्शीकृत मातृभाषा भाषी वक्ता की अन्तर्निष्ठ सामर्थ्य को सही-सही वर्णित करता है। व्याकरण द्वारा वाक्यों को दिए गए संरचनात्मक वर्णन तथा सुरचित एवं रचना-च्युत में विद्यमान अन्तर आदि, वर्णनात्मक पर्याप्तता के लिए, दुरूह उदाहरणों के तात्विक एवं महत्वपूर्ण वर्ग में नैसर्गिक वक्ता की भाषाई अन्तःप्रज्ञा (चाहे वह तुरन्त उससे परिचित हो या न हो), के अनुरूप होने चाहिए।

भाषाई सिद्धान्त में "व्याकरण" की परिभाषा होनी चाहिए, अर्थात् संभावी व्याकरणों के वर्ग का स्पष्ट विनिर्देश होना चाहिए। इसी के अनुरूप हम कह सकते हैं कि एक भाषाई सिद्धान्त में वर्णनात्मक-पर्याप्तता है यदि वह प्रत्येक स्वाभाविक भाषा के लिए वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण बना सकता है।

यद्यपि बड़े पैमाने पर वर्णनात्मक पर्याप्तता भी सुलभ नहीं है, तथापि भाषाई सिद्धान्त के उत्पादक विकास के लिए यह महत्वपूर्ण है कि इससे अधिक उच्च लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाए। गहनतर प्रश्नों के स्पष्ट निरूपण को सुगम करने के लिए यह लाभदायक होगा कि भाषा के लिए एक 'उपार्जन प्रतिमान' बनाने की अमूर्त समस्या पर विचार करें, अर्थात्, व्याकरण-रचना अथवा भाषा-अधिगम के सिद्धान्त पर विचार करें। स्पष्टतया, एक बच्चे ने, जिसने भाषा सीख ली है, किस प्रकार वाक्य बनते हैं, प्रयुक्त होते हैं, और समझे जाते हैं—इनके निर्धारक-नियमों की व्यवस्था का आन्तरिक निरूपण विकसित कर लिया है। सुव्यवस्थित सदिग्धता के साथ यदि हम 'व्याकरण' शब्द का प्रयोग करें (पहले व्याकरण का व्यवहार नैसर्गिक वक्ता द्वारा आन्तरिक रूप से निरूपित 'उसकी भाषा का सिद्धान्त' के लिए करें, और फिर इसका भाषाविज्ञानी द्वारा वर्णन के लिए करें), तो हम कह सकते हैं कि बच्चे ने उपरिलिखित अर्थ में, एक प्रजनक-व्याकरण को विकसित और आन्तरिक रूप से निरूपित कर लिया है। उसने ऐसा उसके आधार पर किया है जिसे हम **प्राथमिक भाषाई विवेच्य सामग्री** कह सकते हैं। इसके अन्तर्गत भाषाई निष्पादन के वे उदाहरण भी आने चाहिए जिन्हें हम सुरचित वाक्य कहते हैं, और वे उदाहरण भी आने चाहिए जिन्हें हम अ-वाक्य कहते हैं। अन्य प्रकार की सूचनाएँ भी, जो कि भाषा-अधिगम में आवश्यक हैं, चाहे किसी भी प्रकार की हों (देखिए पृ० 28-29) इसी के अन्तर्गत आनी चाहिए। ऐसी सामग्री के आधार पर बच्चा व्याकरण की रचना करता है, अर्थात् एक ऐसे भाषाई सामग्री के सुरचित वाक्य केवल एक थोड़े से नमूने हैं [14]। अतएव, भाषा सीखने के लिए बच्चे के पास, प्राथमिक भाषाई सामग्री मिलने पर, समुचित व्याकरण बनाने की कोई विधि अवश्य होती होगी। भाषा-अधिगम के पूर्व-निर्धारक के रूप में उसके पास प्रथमतः एक भाषा-सिद्धान्त होता होगा जो संभाव्य मानव-भाषा के व्याकरण के रूप को विनिर्दिष्ट करता है, और, द्वितीयतः प्राथमिक भाषा-सामग्री से संगत व्याकरण के समुचित रूप को चुनने की कोई पद्धति होगी। हम भाषा-अधिगम के आधार को प्रस्तुत करने वाले इस अन्तर्जात भाषा-सिद्धान्त के वर्णन के विकास की समस्या को सामान्य भाषाविज्ञान के एक दीर्घ-परासी कार्य के रूप में उठा सकते हैं। (यहाँ ध्यातव्य है कि हम फिर 'सिद्धान्त' शब्द का प्रयोग— 'विशिष्ट भाषा के सिद्धान्त' के लिए न करके 'भाषा सिद्धान्त' के लिए—कर रहे हैं और यहाँ भी एक सुव्यवस्थित संदिग्धता है; अर्थात्

हम सिद्धान्त शब्द, एक विशिष्ट प्ररूप की भाषा के अधिगम के लिए बच्चे की अन्तर्जात पूर्वप्रवणता तथा भाषाविज्ञानी द्वारा इसके वर्णन, दोनों के लिए प्रयुक्त कर रहे हैं।)

प्राथमिक भाषा-सामग्री के आधार पर वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण चुनने में जिस सीमा तक भाषा-सिद्धान्त सफल होता है, उस सीमा तक हम कह सकते हैं कि वह (भाषा सिद्धान्त) **व्याख्यात्मक पर्याप्तता** के निर्धारक को पूरा करता है। अर्थात् इस सीमा तक वह अपने संमुख प्रस्तुत साक्ष्यों के साथ व्यवहार करने योग्य एक विशेष प्रकार के सिद्धान्त को विकसित करने की बच्चे में अन्तर्जात पूर्वप्रवणता से संबद्ध अनुभवाश्रित प्राक्कल्पना के आधार पर और नैसर्गिक वक्ता की अन्त:प्रज्ञा के लिए एक व्याख्या प्रस्तुत करता है। कोई भी ऐसी प्राक्कल्पना (वस्तुत:बहुत सरलता से) यह दिखाकर मिथ्या सिद्ध की जा सकती है कि वह किसी अन्य भाषा से ली प्राथमिक भाषासामग्री के लिए वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण देने में असफल है—स्पष्टतया बच्चे में इस भाषा को न सीख कर दूसरी भाषा सीखने की ऐसी पूर्वप्रवणता नहीं होती है। इसको समर्थन भी मिलता है जब वह भाषा संरचना के किसी पक्ष के लिए पर्याप्त व्याख्या, ऐसा ज्ञान किस प्रकार मिला होगा इसका वर्णन, प्रस्तुत करता है।

स्पष्टतया, भाषाविज्ञान की वर्तमान स्थिति में एक बड़े पैमाने पर व्याख्यात्मक पर्याप्तता पाने की आशा करना कल्पना-मात्र है। फिर भी, व्याख्यात्मक पर्याप्तता की विचारणाएँ भाषा-सिद्धान्त स्थापित करने में प्राय: समालोचनात्मक हैं। बहुत बड़ी मात्रा की सामग्री का स्थूल समावेशन प्राय: संघर्षी सिद्धान्तों से उपलब्ध होता है; केवल इसी कारण यह कोई अपने में किसी विशिष्ट सैद्धान्तिक अभिरुचि और महत्ता की उपलब्धि नहीं है। दूसरे क्षेत्रों के समान, भाषाविज्ञान में महत्वपूर्ण समस्या सामग्री समूह ढूँढना है जो भाषा संरचना के विभिन्न प्रतिस्पर्धी संप्रत्ययों के बीच ऐसा अंतर दिखा सकता है कि इन प्रतिस्पर्धी सिद्धान्तों में एक इस सामग्री को तदर्थ रूप में ही वर्णित कर सकता है जबकि दूसरा भाषारूप से संबद्ध किसी अनुभवाश्रित अभिग्रह के आधार पर सामग्री की व्याख्या कर सकता है। व्याख्यात्मक पर्याप्तता के ऐसे छोटे पैमाने के अध्ययनों ने नि:संदेह ऐसे सर्वाधिक साक्ष्य उपस्थित किए हैं जिनका भाषा संरचना के स्वरूप पर गंभीर प्रभाव है। इस प्रकार चाहे हम मूलत: भिन्न व्याकरण सिद्धान्तों की तुलना कर रहे हों, चाहे किसी एक सिद्धान्त के किसी पक्ष विशेष की शुद्धता-निर्धारण का प्रयास कर रहे हों, व्याख्यात्मक-पर्याप्तता के प्रश्नों को ही, प्राय:, औचित्यसिद्धि करने का भार मिलता है। यह टिप्पण इस तथ्य के साथ किसी भी प्रकार असंगत नहीं है कि व्याख्यात्मक पर्याप्तता बड़े पैमाने

पर दुर्लभ है, कम से कम वर्तमान परिस्थिति में। यह केवल भाषा-संरचना के विषय में किसी अनुभवाश्रित दावे को औचित्ययुक्त सिद्ध करने के किसी प्रयत्न के अत्यंत अस्थायी स्वरूप को प्रकट करता है।

संक्षेप में, "प्रजनक-व्याकरण के औचित्य" को सिद्ध करने के संबंध में दो दृष्टि से कहा जा सकता है। एक स्तर पर, (वर्णनात्मक पर्याप्तता के स्तर पर) यह व्याकरण उस सीमा तक औचित्यपूर्ण है जिस सीमा तक यह अपने विवेच्य को, अर्थात् नैसर्गिक वक्ता की भाषाई अन्तःप्रज्ञः अन्तर्भूत सामर्थ्य -को सही सही वर्णित करता है। इस अर्थ में, व्याकरण बाह्य आधारों पर औचित्यपूर्ण है और ये आधार भाषाई तथ्य की समनुरूपता पर आश्रित हैं। इससे कहीं अधिक गहन और इस कारण कठिनाई से उपलब्ध स्तर (व्याख्यात्मक पर्याप्तता के स्तर) पर एक व्याकरण उस सीमा तक औचित्यपूर्ण है, जिस सीमा तक वह सिद्धान्ततः वर्णनात्मतया पर्याप्त व्यवस्था है और तब तत्संबद्ध भाषावैज्ञानिक सिद्धान्त इस व्याकरण को अन्य की अपेक्षा स्वीकार करता है यदि प्राथमिक भाषा सामग्री से सभी व्याकरण अनुरूप हों। इस अर्थ में, व्याकरण आन्तरिक आधारों पर औचित्यपूर्ण है और ये आधार उस भाषासिद्धान्त से संबद्ध हैं जो भाषारूप के यथार्थ की व्याख्यात्मक प्राक्कल्पना निर्मित करता है। आंतरिक औचित्य की—व्याख्यात्मक पर्याप्तता की—समस्या भाषा-उपार्जन के सिद्धान्त की रचना करने की ही समस्या है अर्थात् इस उपलब्धि को संभव बनाने वाली विशिष्ट अन्तर्जात योग्यताओं के वर्णन की समस्या है।

§5. रूपात्मक और सत्तात्मक सार्वभौम-नियम

भाषाई संरचना का वह सिद्धान्त जो व्याख्यात्मक पर्याप्तता को अपना लक्ष्य मानता है अपने में भाषाई सार्वभौम-नियमों का विवरण समाविष्ट करता है, और यह मानता है कि बच्चे में इन सार्वभौम-नियमों का अन्तर्निहित ज्ञान है। तब, वह यह प्रस्ताव करता है कि बच्चा दत्तसामग्री को इस परिकल्पना के साथ ग्रहण करता है कि वह किसी पूर्वतः सुपरिभाषित प्ररूप की भाषा से ली गई है, और बच्चे की समस्या केवल यह निर्धारित करना है कि उसकी अपने समुदाय की भाषा मानवों के लिए संभाव्य अनेक भाषाओं में से कौन-सी है। यदि ऐसी स्थिति न होती तो भाषा-अधिगम असंभव हो जाता। महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है : भाषा की प्रकृति के विषय में वे कौन-से प्रारंभिक अभिग्रह हैं जो बच्चा भाषा-अधिगम में काम लाता है, और वह अन्तर्जात समाकृति ('व्याकरण' की सामान्य परिभाषा) कितनी विस्तृत और विशिष्ट है जो क्रमशः बच्चे के भाषा सीखने के साथ-साथ अधिक सुस्पष्ट और विभेदीकृत होती जाती है? अभी तक हम अन्तर्जात समाकृति-नियमों के प्रति ऐसी

प्राक्कल्पना बनाने की स्थिति में पहुंच ही नहीं पाए हैं जो इतनी समृद्ध, विस्तृत और विशिष्ट हो कि भाषोपार्जन के तथ्यों का समुचित वर्णन कर सके। फलस्वरूप, भाषाई सिद्धान्त का मुख्य कार्य, भाषाई सार्वभौम नियमों का ऐसा वर्णन विकसित करना होगा जो एक ओर भाषाओं की वास्तविक विविधता द्वारा मिथ्या न सिद्ध हो और दूसरी ओर इतना पर्याप्त समृद्ध और स्पष्ट हो कि भाषा-अधिगम की शीघ्रता और एकरूपता का तथा भाषा-अधिगम के उत्पाद-रूप प्रजनक-व्याकरणों की उल्लेखनीय जटिलता और परास का कारण बता सके।

भाषाई सार्वभौम-नियमों का अध्ययन वास्तव में प्राकृतिक भाषा के लिए बने किसी प्रजनक-व्याकरण के गुणधर्मों का अध्ययन है। भाषाई सार्वभौम नियम-सबंधी विशिष्ट अभिग्रह या तो वाक्यविन्यासीय, आर्थी अथवा स्वनप्रक्रियात्मक घटक से या इन तीनों के पारस्परिक संबंधों से संबद्ध होते हैं।

भाषाई सार्वभौमों को 'रूपात्मक' अथवा 'सत्तात्मक' में वर्गीकृत करना उपयोगी रहता है। सत्तात्मक सार्वभौमों का सिद्धान्त यह दावा करता है किसी भी भाषा के विशिष्ट भांति के एकांशों को एकांशों के एक स्थिर वर्ग से लिया जाना चाहिए। उदाहरणार्थ, याकोब्सन के परिच्छेदक अभिलक्षणों के सिद्धान्त की यह व्याख्या की जा सकती है कि वह प्रजनक-व्याकरण के स्वनप्रक्रियात्मक घटक के विषय में सत्तात्मक सार्वभौमों के प्रति आग्रहपूर्वक कहता है। उसके अभिकथन के अनुसार इस घटक का प्रत्येक निर्गम उन तत्वों से निर्मित होता है जो कुछ अल्पसंख्यक (कदाचित् 15–20) स्थिर सार्वभौम स्वनात्म अभिलक्षणों के शब्दों में लक्षित होते हैं और प्रत्येक अभिलक्षण भाषाविशेष से निरपेक्ष सत्तात्मक ध्वनिक-औच्चारणिक लक्षण से युक्त है। इस वर्ष में, परम्परागत सार्वभौम व्याकरण भी सत्तात्मक सार्वभौमों का सिद्धान्त है। वह सार्वभौम स्वनशास्त्र की प्रकृति के विषय में न केवल रोचक दृष्टिकोणों को प्रस्तुत करता था, अपितु यह भी मानता था कि किसी भी भाषा के वाक्यों के वाक्यविन्यासीय निरूपणों में कुछ स्थिर वाक्यविन्यासीय कोटियाँ (संज्ञा, क्रिया आदि) मिलती हैं और ये प्रत्येक भाषा के सामान्य आधारभूत वाक्य-विन्यासीय, संरचना को निर्मित करती हैं। इसी प्रकार, सत्तात्मक आर्थी-सार्वभौमों का सिद्धान्त यह प्रतिपादित करता था कि प्रत्येक भाषा में कुछ अभिधापरक प्रकार्य एक विशिष्ट रीति से प्रयुक्त होने चाहिए। इस प्रकार उसका अभिकथन है कि प्रत्येक भाषा में ऐसे शब्द होंगे जो व्यक्तियों को अभिहित करते हैं, अथवा ऐसे कोशीय एकांश होते हैं जो कुछ विशिष्ट भांति के पदार्थों, अनुभूतियों, आचरणों आदि को विनिर्दिष्ट करते हैं।

फिर भी, इससे अधिक अमूर्त भांति के सार्वभौम गुणधर्मों का ढूँढना सम्भव है। इस दावे पर ध्यान दीजिए कि प्रत्येक भाषा के व्याकरण को कुछ विशिष्ट रूपीय

निर्धारकों में बँधना होता है। इस प्राक्कल्पना की सत्यता से अपने आप यह नहीं ध्वनित होता है कि कोई विशिष्ट नियम सभी या किन्हीं दो व्याकरणों में अवश्य ही मिलेगा। व्याकरण का यह गुणधर्म कि वह किसी अमूर्त निर्धारक से प्रतिबद्ध हो, **रूपात्मक** भाषाई सार्वभौम कहा जा सकता है, यदि वह प्राकृतिक भाषाओं का सामान्य गुणधर्म सिद्ध हो सके। प्रजनक-व्याकरण के अमूर्त निर्धारकों को विनिर्दिष्ट करने के अभी हाल के प्रयास ने इस अर्थ में रूपात्मक सार्वभौमों के विषय में नानाविध प्रस्ताव प्रस्तुत किए हैं। उदाहरण के लिए, इस प्रस्ताव पर विचार कीजिए कि व्याकरण के वाक्यविन्यासीय घटक के अन्तर्गत रचनांतरण नियम (ये अत्यधिक विशेष प्रकार की संक्रिया है) आते हैं, जो आर्थी दृष्टि से व्याख्यात गहन संरचनाओं को स्वनप्रक्रियात्म दृष्टि से निर्वचन प्राप्त बहिस्तलीय संरचनाओं में प्रतिचित्रित करते हैं, अथवा इस प्रस्ताव पर विचार कीजिए कि व्याकरण के स्वनप्रक्रियात्मक घटक के अन्तर्गत नियमों का अनुक्रम आता है जिसका एक उप-समुच्चय बहिस्तलीय संरचना के क्रमशः अधिक आधिकारिक संरचकों में चक्रीय विधि से प्रयुक्त होता है (अभी हाल के स्वनप्रक्रिया-परक कार्यों के संदर्भ में रचनांतरण-चक्र देखिए)। इन प्रस्तावों के दावे उस दावे से नितांत भिन्न प्रकार के हैं, जिसके अनुसार कुछ सत्तात्मक स्वनात्म-तत्व सभी भाषाओं में स्वनात्म-निरूपण के लिए उपलब्ध हैं, अथवा कुछ विशिष्ट कोटियाँ सभी भाषाओं के वाक्यविन्यास के केन्द्र में होनी चाहिए, अथवा कुछ आर्थी अभिलक्षण अथवा कोटियाँ आर्थी वर्णन के लिए सार्वभौमिक ढाँचा निर्मित करती हैं। इस प्रकार के सत्तात्मक सार्वभौमों का सम्बन्ध भाषावर्णन की पदावली से है, रूपात्मक सार्वभौम, इसके विपरीत, व्याकरणों में उपलब्ध नियमों की प्रकृति से और ये नियम किन प्रकारों से परस्पर-सम्बद्ध हैं इससे अधिक सम्बद्ध होते हैं।

आर्थी स्तर पर भी तत्वतः उपरिनिर्दिष्ट अर्थ में तथाकथित रूपात्मक सार्वभौम ढूँढना सम्भव है। उदाहरणार्थ, इस अभिग्रह पर विचार करें कि किसी भाषा में व्यक्ति-वाचक अभिधान दिक्काल संनिधि के निर्धारक को पूरा करने वाले पदार्थों को अभिहित करते हैं।[15] और यही बात अन्य पदार्थों के अभिधानों पर लागू है, अथवा इस निर्धारक पर विचार करें कि किसी भी भाषा के रंगवाचक शब्द वर्ण-स्पेक्ट्रम को संतत-खण्डों में उप-विभाजित करते हैं, अथवा शिल्प-उपकरण केवल भौतिक गुणों के स्थान पर कुछ मानवीय ध्येयों, आवश्यकताओं और प्रकार्यों के शब्दों में परिभाषित होते हैं।[16] संप्रत्ययों की व्यवस्था पर इस प्रकार के रूपात्मक नियामक, प्राथमिक भाषाई दत्तसामग्री पर बने वर्णनात्मक व्याकरण के (बच्चे अथवा भाषाविद् द्वारा) विकल्पों को कठोरता से सीमित कर देते हैं।

उपरिवर्णित उदाहरणों द्वारा संसूचित अर्थ में सुमूलबद्ध के रूपात्मक सार्वभौमों का अस्तित्व यह ध्वनित करता है कि सभी भाषाएँ एक ही अभिरचना की हैं किन्तु

इससे यह अर्थ नहीं निकलता है कि विशिष्ट भाषाओं के बीच कोई बिन्दुश: संगतता है। उदाहरण के लिए इससे यह नहीं ध्वनित होता है कि भाषाओं के बीच अनुवाद करने की कोई समुचित प्रक्रिया अवश्य होनी चाहिए।[17]

सामान्यतया, इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मानवों की अन्तर्जात 'भाषा-रचना सामर्थ्य' के विषय में प्राक्कल्पना के रूप में भाषा के सिद्धान्त का सम्बन्ध सत्तात्मक और रूपात्मक दोनों प्रकार के सार्वभौमों से होना चाहिए। किन्तु जबकि सत्तात्मक सार्वभौम सामान्य भाषाई सिद्धान्त के परम्परागत विषय रहे हैं, उन अमूर्त निर्धारकों की गवेषणा, जिनकी पूर्ति किसी भी प्रजनक-व्याकरण के लिए अनिवार्य है, केवल अभी हाल में प्रारम्भ की गई है। उनके द्वारा व्याकरण के सभी पक्षों के अध्ययन के लिए अत्यधिक समृद्ध और नानाविध सम्भावनाएँ प्रस्तुत की हुई सी लगती हैं।

§6. वर्णनात्मक और व्याख्यात्मक सिद्धान्तों पर कुछ और टिप्पणियाँ

अब हम कुछ और अधिक सावधानी से यह विचार करें कि भाषा के 'उपार्जन प्रतिमान' की रचना में वास्तव में क्या-क्या अन्तर्ग्रस्त होता है। भाषा-अधिगम के लिए समर्थ बच्चे के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ आवश्यक हैं :—

(12) (i) निवेशी संकेतों को निरूपित करने की प्रविधि,

(ii) इन संकेतों के विषय में संरचनात्मक सूचना निरूपित करने की विधि,

(iii) भाषा संरचना विषयक संभाव्य प्राक्कल्पनाओं के वर्ग के कुछ प्रारम्भिक सीमाबन्ध,

(iv) प्रत्येक ऐसी प्राक्कल्पना प्रत्येक वाक्य के सम्बन्ध में क्या ध्वनित करती है इसकी निर्धारण पद्धति,

(v) उन (सम्भवत: असीमित) प्राक्कल्पनाओं में से एक के चयन की पद्धति, जो (iii) द्वारा स्वीकृत हैं और जो दत्त प्राथमिक भाषाई सामग्री से संगत हैं।

तदनुरूप, व्याख्यात्मक पर्याप्तता को ध्येय में रखने वाले भाषा संरचना-सिद्धान्त के अन्तर्गत निम्नलिखित अवश्य होने चाहिए :

(13) (i) एक सार्वभौम स्वनात्म सिद्धान्त जो 'संभाव्य वाक्य' की धारणा को परिभाषित करता है

(ii) 'संरचनात्मक वर्णन' की परिभाषा

(iii) 'प्रजनक व्याकरण' की परिभाषा

(iv) दिए हुए व्याकरण के अनुसार वाक्य के संरचनात्मक वर्णन की निर्धारण-पद्धति

(v) वैकल्पिक प्रस्तावित व्याकरणों की मूल्यांकन रीति

इन्हीं अपेक्षाओं को किंचित् भिन्न शब्दों में रखें तो हमें ऐसा भाषाई सिद्धान्त ढूँढ़ना होगा जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित तत्व अवश्यमेव आएँ।

(14) (i) सम्भव वाक्यों के वर्ग S_1, S_2 (वा$_1$, वा$_2$)....का गणन

(ii) सम्भव संरचना-वर्णनों के वर्ग SD_1, SD_2 (संव$_1$, संव$_2$)....का गणन

(iii) सम्भव प्रजनक-व्याकरणों के वर्ग G_1, G_2 (प्र$_1$, प्र$_2$)....का गणन

(iv) फलक f का इस प्रकार विनिर्देशन कि SD_f (ij) [संवफ (ij)] यादृच्छिक i, j के लिए व्याकरण G_j द्वारा वाक्य S_i के लिए विनिर्दिष्ट संरचना-वर्णन हो,[18]

(v) फलक का इस प्रकार विशेषीकरण कि m(i) एक पूर्णांक है जो व्याकरण G_i से उसके मूल्य के रूप में सहचरित हो (हम कह सकते हैं कि निम्न मूल्य उच्चतर संख्या से द्योतित है)

कम से कम इस प्रकार के शक्तिशाली निर्धारक व्याख्यात्मक पर्याप्तता को ध्येय में रखने वाले निर्णय में समाविष्ट रहते हैं।

इस निर्धारकों को पूरा करने वाला सिद्धान्त भाषा-अधिगम को स्पष्ट करने का प्रयास करता है। पहले प्राथमिक भाषाई दत्त सामग्री की प्रकृति पर विचार कीजिए। इसमें सीमित मात्रा में वाक्यों के सम्बन्ध में सूचना होती है, और वह भी प्रभावकारी समय-सीमाओं को देखते हुए क्षेत्र में संकुचित हो जाती है। और गुणता (देखिए टिप्पणी 14) की दृष्टि से पर्याप्त अपकृष्ट हो जाती है। उदाहरणार्थ, कुछ संकेत तो समुचिततया रचित वाक्य स्वीकार कर लिए जाते हैं, जबकि अन्य अ-वाक्य में रखे जाते हैं क्योंकि भाषाई समुदाय सीखने वाले के तत्सम्बद्ध प्रयासों को शुद्ध करता रहता है। इसके अतिरिक्त, प्रयोग की परिस्थितियाँ यह अपेक्षा रखती हैं कि संरचना-वर्णन इनसे विशेष रीतियों से संलग्न रहें। परवर्ती भाषा-उपार्जन के लिए होने की वास्तविक परिस्थिति से यह निर्धारित करने में समर्थ हो जाता है कि इस संकेत के उपयुक्त कौन-से संरचना-वर्णन होंगे और इस संकेत की भाषाई संरचना के किसी अभिग्रह के पूर्व ही अंशतः वह ऐसा करने में समर्थ रहता है। यह कहना कि अंतर्जात क्षमता के विषय में अभिग्रह अत्यधिक प्रबल है, निस्संदेह यह नहीं सिद्ध करता है कि वह मिथ्या है। हर स्थिति में अन्वीक्षा रूप से हम यह मानलें कि प्राथमिक भाषाई सामग्री में वाक्यों और अ-वाक्यों में वर्गीकृत संकेत होते हैं और संरचना-वर्णनों के साथ संकेतों का आंशिक और अन्वीक्षात्मक युग्मन होता है।

निर्धारक (i)–(iv) को पूरा करने वाली भाषा-उपार्जन विधि प्राथमिक भाषाई सामग्री को भाषा-अधिगम के लिए अनुभवाश्रित आधार के रूप में प्रयुक्त करने में समर्थ होती है। इस विधि को निर्धारक (iii) के कारण उपलब्ध संभव प्राक्कल्पनाओं

$G_1 G_2$ ($प्र_1 प्र_2$) के समुच्चय के भीतर ढूँढ़ना चाहिए और (i) और(ii) की पदावली में निरूपित और प्राथमिक भाषाई सामग्री से संगत व्याकरणों को चुनना चाहिए। संगतता का परीक्षण इस बात से संभव है कि युक्ति प्रतिबंध (iv) को पूरा करती है। फिर (v) द्वारा प्रतिपादित मूल्यांकन माप द्वारा इन संभावी व्याकरणों में से एक का चयन यह युक्ति कर देगी।[19] अब चयन प्राप्त व्याकरण इस युक्ति को (ii) और (iv) के कारण यादृच्छिक वाक्य का निर्वचन करने वाली युक्ति प्रदान करेगा। दूसरे शब्दों में, अब युक्ति ने एक भाषा-सिद्धान्त स्थापित कर दिया है जिसकी कि प्राथमिक भाषाई सामग्री एक नमूना है। युक्ति के द्वारा चयन किया और आन्तरिक रूप से निरूपित किया सिद्धान्त उसके अन्तर्हित सामर्थ्य और उसके भाषा-ज्ञान का निश्चित रूप से उल्लेख करता है। इस प्रकार से भाषा-उपार्जन करने वाला बच्चा निस्संदेह उससे कहीं अधिक जानता है जो उसने 'सीखा' है। उसका भाषा-ज्ञान, चूँकि यह उसके अन्तःस्वीकृत व्याकरण द्वारा निर्धारित होता है, प्रस्तुत प्राथमिक भाषाई सामाग्री से कहीं परे जाता है और किसी भी भांति वह इस सामग्री से उद्भूत 'आगमनात्मक सामान्यीकरण' नहीं है।

स्पष्टतः भाषा-अधिगम का यह विवरण किस प्रकार एक भाषाविज्ञानी, जिसका कार्य निर्धारक (i)–(v) को पूरा करने वाले भाषा सिद्धान्त से मार्गदर्शित है, दी हुई प्राथमिक भाषाई सामग्री के आधार पर रचित भाषा-व्याकरण का औचित्य सिद्ध करता है, सीधे तौर से इसका केवल दूसरे शब्दों में वर्णन है।[20]

प्रसंगवश यह ध्यातव्य है कि भाषा-अधिगम के लिए प्राथमिक भाषाई सामग्री के उपयोग की अनेक विभिन्न विधियों को हमें सावधानी से अलग रखना अपेक्षित है। अंशतः ऐसी सामग्री यह निर्धारित करती है कि संभाव्य भाषाओं में से (अर्थात् प्रागनुभूत नियामक (iii) के अनुसार बने व्याकरणों से युक्त भाषाओं में से) किस भाषा के बीच सीखने वाला रह रहा है और प्राथमिक भाषाई सामग्री एक नितांत भिन्न कार्य भी कर सकती है, अर्थात् कुछ विशेष प्रकार की सामग्री और अनुभूतियाँ भाषा-उपार्जन विधियों को चालू करने के लिए आवश्यक हो सकती हैं यद्यपि वे उनकी कार्यशीलता को थोड़ा-सा भी प्रभावित नहीं करती हैं। इस प्रकार यह पता लगता है कि आर्थी निर्देश वाक्यविन्यास-अधिगम के प्रयोग के निष्पादन को बड़ी मात्रा में सुसाध्य बनाता है, यद्यपि वह वाक्य-विन्यास का उपार्जन किस प्रकार बढ़ता है इसकी रीति को प्रकटतया प्रभावित नहीं करता है, अर्थात् सीखने वाले से कौन-सी प्राक्कल्पना स्वीकार की जाती है इसके निर्धारण में वह कोई कार्य नहीं करता है (मिलर और नार्मन, 1964)। इसी प्रकार, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि सामान्य भाषा-अधिगम किसी-न-किसी रूप में भाषा के वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में प्रयोग की अपेक्षा करता है। किन्तु, यदि यह सत्य है तो

भी इससे यह सिद्ध नहीं हो पाता है कि परिस्थितीय प्रसंग का (विशेषत: संरचना-वर्णन के साथ संकेतों का युग्मन, जो कि वाक्यविन्यासीय, संरचना के अभिग्रहों से कम-से-कम अंशतः पूर्ववर्ती है) भाषा किस प्रकार उपार्जित की जाती है इसके निर्धारण में कोई योगदान है, यदि एक बार यांत्रिकी चालू हो जाए और बच्चा भाषा सीखना प्रारंभ कर दे। यह अंतर भाषा-उपार्जन के क्षेत्र के बाहर भी सुपरिज्ञात है। उदाहरण के लिए, रिचर्ड हेल्ड ने अनेक प्रयोगों से यह प्रदर्शित किया है कि कुछ परिस्थितियों में प्रत्याभिवाही उद्दीपन (अर्थात् ऐच्छिक क्रियाशीलता से जनित उद्दीपन) दृष्टिदृक् संप्रत्यय के विकास की पूर्वापेक्षा है यद्यपि वह इस संप्रत्यय के स्वरूप को निर्धारित नहीं करता है (तुलना कीजिए, हैल्ड और हैन, 1963, हैल्ड और फ्रेडमैन 1963, और तत्रोल्लिखित निर्देश)। अथवा, पशु द्वारा अधिगम के अध्ययनों से असंख्य उदाहरणों में से एक लें, यह देखा गया है (लैम्मन और पैटर्सन, 1964) कि मेमनों में गहन-प्रात्यक्ष नव प्रसूता-माता के संस्पर्श से पर्याप्त सुसाध्य हो जाता है, यद्यपि यह मानने में कोई तर्क नहीं है कि मेमने का 'दृष्टि-दृक् का सिद्धान्त' इस संस्पर्श पर निर्भर है।

अधिगम के वास्तविक स्वरूप के अध्ययन में, चाहे भाषाई चाहे अन्यथा, यह निस्संदेह आवश्यक है कि बाह्य सामग्री के इन दो प्रकार्यों में सावधानी से अन्तर रखा जाए। ये दो प्रकार्य हैं—(1) अन्तर्जात यांत्रिकी की संक्रिया को चालू करना अथवा सुसाध्य करना और (2) अंशतः उस दिशा का निर्धारण करना जिधर अधिगम बढ़ेगा।[21]

मुख्य चर्चा-विषय पर अब विचार करें, तो निर्धारक (i)–(v) को पूरा करने वाले भाषा-संरचना के सिद्धान्त को **व्याख्यात्मक सिद्धान्त** और निर्धारक (i)–(iv) को पूरा करने वाले भाषा-संरचना के सिद्धान्त को **वर्णनात्मक सिद्धान्त** कहेंगे। वस्तुतः, केवल वर्णनात्मक पर्याप्तता से प्रबंध रखने वाला भाषा-सिद्धान्त अपना ध्यान (i)-(iv) पर सीमित रखता है। दूसरे शब्दों में, ऐसा सिद्धान्त प्रजनक-व्याकरणों का एक वर्ग अवश्यमेव प्रस्तुत करता है, और प्रत्येक व्याकरण उस भाषा-विशेष की दृष्टि से वर्णनात्मक रूप से पर्याप्त व्याकरण होता है अर्थात् नैसर्गिक वक्ता के भाषा-सामर्थ्य के अनुसार वाक्यों को संरचना वर्णनों से [(iv) के द्वारा] विनिर्दिष्ट करता है। एक भाषा-सिद्धान्त उसी सीमा तक अनुभवाश्रित रूप से महत्वपूर्ण होता है जिस सीमा तक वह निर्धारक (i)-(iv) को पूरा करता है। व्याख्यात्मक पर्याप्तता का आगामी प्रश्न केवल उसी सिद्धान्त के सम्बन्ध में उठता है जो कि निर्धारक (v) को भी पूरा करता है (किन्तु देखिए पृ० 32)। दूसरे शब्दों में वह केवल उसी सीमा तक उठता है जिस सीमा तक वह सिद्धान्त प्राथमिक भाषाई सामग्री के आधार पर

सुपरिभाषित मूल्यांकन उपायों द्वारा वर्णनात्मक रूप से पर्याप्त व्याकरण को चुनने का सिद्धान्त-युक्त आधार प्रस्तुत करता है ।

यह वर्णन एक महत्वपूर्ण विषय में भ्रामक है । इससे यह सुझाव मिलता है कि वर्णनात्मतया पर्याप्त सिद्धान्त को व्याख्यात्मक पर्याप्तता के स्तर तक उठाने के लिए एक समुचित मूल्यांकन उपाय को परिभाषित करने की ही आवश्यकता है । किन्तु, यह सत्य नहीं है । अभी दी परिभाषा के अनुसार एक सिद्धान्त वर्णनात्मदृष्टि से पर्याप्त होते हुए भी संभावी व्याकरणों का एक इतना विस्तृत परास प्रस्तुत कर सकता है कि कोई भी ऐसे रूपीय गुणधर्म को खोज निकालने की संभावना नहीं है जो सामान्यतया वर्णनात्मदृष्टि से पर्याप्त व्याकरणों को, जो भी सामग्री मिली उससे बने व्याकरणों के झुँड से, पृथक् कर सके । वस्तुतः वास्तविक समस्या प्रायः सदैव यह रही है कि किस प्रकार 'प्रजनक-व्याकरण' की धारणा को अतिरिक्त संरचना देकर संभाव्य प्राक्कल्पनाओं के परास को सीमित किया जाए । युक्तिसिद्ध उपार्जन प्रतिमान की रचना के लिए यह आवश्यक है कि दी हुई प्राथमिक भाषाई सामग्री के उपयुक्त लभ्य व्याकरणों के वर्ग को[22] उस बिन्दु तक संकुचित किया जाए जहाँ उनमें से एक का चयन किसी रूपीय मूल्यांकन-माप द्वारा हो जाए । यह 'प्रजनक-व्याकरण' की धारणा के यथार्थ और सूक्ष्म सीमांकन की अपेक्षा करता है—उन सार्वभौम गुणधर्मों से सम्बद्ध नियामक और समृद्ध प्राक्कल्पना जो भाषा के रूप को, इस पद के पारंपरिक अर्थ में, निर्धारित करते हैं ।

यही तथ्य किंचित् भिन्न रूप में रखा जा सकता है । प्राकृतिक भाषाओं के लिए नानाविध वर्णनात्मदृष्टि से पर्याप्त व्याकरणों की उपस्थिति में, हमारी रुचि यह निर्धारित करने में है कि किस सीमा तक वे अनन्य हैं और किस सीमा तक उनके बीच गहन अंतर्निहित साम्य है जिन्हें वस्तुतः भाषा के रूप से अध्यासित किया जा सकता है । भाषाविज्ञान की वास्तविक प्रगति इस खोज में है कि दो भाषाओं के कुछ अभिलक्षण भाषा के सार्वभौम गुणधर्मों में परिणत किए जा सकते हैं और भाषाई रूप के गहनतर पक्षों द्वारा परिभाषित हो सकते हैं । इस प्रकार, भाषाविज्ञानी का मुख्य प्रयास यह होना चाहिए कि वह भाषाई रूप के सिद्धान्त को 'प्रजनक-व्याकरण' की धारणा पर अधिक विशिष्ट नियामकों और निर्धारकों द्वारा समृद्ध करे । जहाँ ऐसा किया जा सकता है, वहाँ व्याकरण विशेषों को व्याकरण के सामान्य सिद्धान्त (देखिए § 5) से निष्पन्न वर्णनात्मक कथनों से निरस्त कर सरलीकृत किया जा सकता है । उदाहरण के लिए, यदि हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि रचनांतरण-चक्र[23] स्वनप्रक्रियात्मक घटक का सार्वभौम अभिलक्षण है तो अंग्रेजी व्याकरण में वाक्यविन्यासीय संरचना से सम्बद्ध इन स्वनप्रक्रियात्मक नियमों की कार्य-रीति वर्णित करना अनावश्यक है । यह वर्णन अब अंग्रेजी व्याकरण से उत्कर्षित करके, प्रजनक

व्याकरण के सिद्धान्त के एक अंश में रूपात्मक भाषाई सार्वभौम के रूप में वर्णित हो चुका होगा। स्पष्टतया यह निष्कर्ष, यदि औचित्यपूर्ण है तो, भाषा सिद्धान्त में एक महत्वपूर्ण प्रगति-चरण समझा जाएगा क्योंकि तब यह प्रदर्शित होगा कि जो अंग्रेजी का एक वैचित्र्य समझा जा रहा था, वह वस्तुतः भाषा की प्रकृति के विषय में एक सामान्य और गहन अनुभवाश्रित अभिग्रह के शब्दों में व्याख्येय है, और यह ऐसा अभिग्रह है जो, यदि असत्य है तो, अन्य भाषाओं के वर्णनात्मदृष्टि से पर्याप्त व्याकरणों के अध्ययन से ही खण्डित किया जा सकता है।

सक्षेप में, व्याख्यात्मक पर्याप्तता प्राप्त करने के प्रयास में सर्वाधिक गम्भीर समस्या 'प्रजनक-व्याकरण' की धारणा को पर्याप्त समृद्ध विस्तृत और सुसरचित रीति से लक्षित करने की समस्या है। कोई व्याकरण-सिद्धान्त वर्णनात्मदृष्टि से पर्याप्त हो सकता है फिर भी उन मुख्य अभिलक्षणों को अनभिव्यक्त छोड़ सकता है जो प्राकृतिक भाषा के परिभाषाकारी गुणधर्म हैं और जो प्राकृतिक भाषाओं को यादृच्छिक प्रतीकात्मक व्यवस्थाओं से प्रभिन्न करते हैं। केवल इसी कारण व्याख्यात्मक पर्याप्तता प्राप्त करने के प्रयत्न-भाषाई सार्वभौमों की खोज निकालने के प्रयत्न-भाषा-संरचना की बोधि के प्रत्येक चरण पर इतने अधिक निर्णायक हैं, यद्यपि वर्णनात्मक पर्याप्तता स्वयं बृहत् पैमाने पर अनुपलब्ध लक्ष्य मात्र बनी रहती है। अतएव व्याख्यात्मक पर्याप्तता के प्रश्न उठाने के पूर्व वर्णनात्मतया पर्याप्तता पाना आवश्यक नहीं है। इसके विपरीत, निर्णायक प्रश्न—वे प्रश्न जिनका हमारे भाषा के संप्रत्यय से और वर्णनात्मक व्यवहार से भी सर्वाधिक सम्बन्ध है—प्रायः सदैव वे रहे हैं जिनका सम्बन्ध भाषा-संरचना के विशेष पक्षों से सम्बद्ध व्याख्यात्मक पर्याप्तता से रहा है।

भाषा-उपार्जन के लिए बच्चे को प्रस्तुत सामग्री के अनुरूप प्राक्कल्पना अवश्य निर्मित करनी पड़ती है अर्थात् उसे संभावी व्याकरणों के भंडार से एक विशिष्ट व्याकरण का चयन करना होता है जो कि उस उपलब्ध सामग्री से सर्वाधिक उपयुक्त हो। यह तार्किक दृष्टि से संभव है कि सामग्री पर्याप्त समृद्ध हो और संभावी व्याकरणों का वर्ग पर्याप्त सीमित हो, और फलस्वरूप हमारे आदर्शीकृत 'तात्कालिक' प्रतिमान में सफल भाषा-उपार्जन के समय उपलब्ध सामग्री के अनुरूप केवल एक ही स्वीकृत व्याकरण हो (देखिए टिप्पणी 19 और 22)। इस स्थिति में, भाषासिद्धांत के अंग के रूप में अर्थात्, जीवी के एक अन्तर्जात गुणधर्म अथवा भाषा-उपार्जन में समर्थ युक्ति के रूप में, कोई भी मूल्यांकन प्रक्रिया आवश्यक नहीं होगी। यह कल्पना करना काफी कठिन है कि किस प्रकार यह तार्किक संभावना विस्तार से निष्पादित की जाए और अनुभवाश्रिततया पर्याप्त भाषा-सिद्धान्त निरूपित करने के सभी स्थूल प्रयत्न, निश्चयतः किसी भी कल्पनीय भांति की प्राथमिक सामग्री से अनुरूप अनेक परस्पर असंगत व्याकरणों के लिए, काफी स्थान छोड़ देते हैं।

अतएव, यदि भाषा-उपार्जन का कारण स्पष्ट करना है और विशिष्ट व्याकरणों के चयन को युक्ति-युक्त सिद्ध करना है तो ऐसे सभी सिद्धान्तों को मूल्यांकन माप द्वारा अपने को परिपूरित करना होगा, और मैं, जैसा अब तक करता आया हूँ, परिवीक्षा रूप से मानकर चलता रहूँगा कि यह अन्तर्जात मानवीय भाषाशक्ति के विषय में और फलस्वरूप सामान्य भाषा-सिद्धान्त के विषय में भी एक अनुभवाश्रित तथ्य है।

§ 7. मूल्यांकन-प्रक्रिया

व्याकरणों के लिए मूल्यांकन प्रक्रिया की प्रास्थिति (देखिए (12)–(14) का निर्धारक (v)) के सम्बन्ध में प्रायः भ्रांति मिलती है। मन में यह सर्वप्रथम स्पष्ट रखना चाहिए कि ऐसा माप किसी भांति प्राक्-अनुभव द्वारा नहीं दिया जाता है। बल्कि, ऐसे माप से सम्बद्ध कोई भी प्रस्ताव भाषा की प्रकृति के विषय में एक अनुभवाश्रित प्राक्कल्पना है। यह पूर्ववर्ती विवेचन सुस्पष्ट है। मान लीजिए हमारा कोई वर्णनात्मक सिद्धान्त किसी स्थिर रीति से (12)–(14) के निर्धारक (i)–(iv) को पूरा करता है। यदि कोई प्राथमिक भाषा-सामग्री D दी हुई है तो मूल्यांकन माप के विभिन्न विकल्प, जिस भाषा का D एक नमूना है, तत्सम्बद्ध विविध प्राक्कल्पनाओं (विविध व्याकरणों) को पर्याप्त भिन्न कोटि-स्थानों में रखेंगे, और फलस्वरूप D के आधार पर भाषा सीखने वाला D में अनुपलब्ध नए वाक्यों का निर्वचन किस प्रकार करेगा इस ओर नितांत भिन्न पूर्वकथन प्रस्तुत करेंगे। परिणामतः, मूल्यांकन माप का विकल्प एक अनुभवाश्रित विषय है और प्रस्ताव-विशेष या तो सही होते हैं या गलत।

कदाचित् इस भ्रांति के मूल में किसी विशेष प्रस्तावित मूल्यांकन मापों के लिए 'सरलता माप' शब्द का प्रयोग है, और यह प्रयोग यह मानकर चलता है कि 'सरलता' एक सामान्य धारणा है जो भाषा-सिद्धान्त के बाहर पहले से ही समझी जा सकती है। किन्तु यह एक मिथ्या धारणा है। इस विवेचन के संदर्भ में, 'सरलता' (अर्थात् (v) का मूल्यांकन माप m) ऐसी धारणा है जिसकी 'व्याकरण' 'स्वनिम' आदि के साथ कोई परिभाषा भाषाई सिद्धान्त के अन्तर्गत ही दी जा सकती है। सरलता माप का चयन भौतिक अचलांकों के मूल्य के समान निर्धारित करना पड़ता है। हमें, अंशतः विशेष प्रकार की प्राथमिक भाषा-सामग्री का विशेष प्रकार के व्याकरणों से, जो वस्तुतः लोगों से उस सामग्री के आधार पर रचित किए गए हैं, एक अनुभवाश्रित युग्मन दिया जाता है। कोई प्रस्तावित सरलता माप इसी साहचर्य के यथार्थ निर्धारण के प्रयत्न का एक अंग है। यदि (i)–(iv) का कोई विशेष व्यवस्थापन मान लिया जाए और प्राथमिक भाषा-सामग्री और वर्णनात्मदृष्टि से पर्याप्त व्याकरणों के युग्म (D_1, G_1), $(D_2, G_2,)$..........दिए हों, तो, 'सरलता' की

परिभाषा करने की समस्या केवल यह खोज निकालने की समस्या है कि प्रत्येक i के लिए D_i के द्वारा किस प्रकार G_i निर्धारित होता है। दूसरे शब्दों में, मान लीजिए, भाषा के उपार्जन-प्रतिमान को एक ऐसी निवेश-निर्गम युक्ति के रूप में मानते हैं जो निवेश रूप किसी प्राथमिक भाषा-सामग्री के अनुरूप निर्गम रूप एक विशेष प्रजनक-व्याकरण को निर्धारित करती है। (i)–(iv) के उल्लेखन के साथ-साथ प्रस्तावित सरलता-माप, ऐसी विधि की प्रकृति से सम्बद्ध प्राक्कल्पना रचित करता है। अतएव सरलता-माप का चयन अनुभवाश्रित परिणामों के साथ एक अनुभवाश्रित विषय है।

यह सब पहले भी कहा जा चुका है। मैं इसे विस्तार से इसलिए फिर कह रहा हूँ क्योंकि यह अत्यधिक गलत समझा गया है।

यह भी स्पष्ट है कि उस प्रकार के मूल्यांकन माप, जिनका विवेचन प्रजनक-व्याकरण के साहित्य में होता रहा है, विभिन्न, भाषा-सिद्धान्तों की तुलना में नहीं प्रयुक्त किए जा सकते हैं; ऐसे माप से किसी एक वर्ग के प्रस्तावित व्याकरणों से चुने एक व्याकरण की तुलना किसी दूसरे वर्ग के प्रस्तावित व्याकरणों से चुने व्याकरण के साथ करना, पूर्णतया अर्थहीन होगा बल्कि, इस प्रकार का मूल्यांकन-माप व्याख्यात्मक पर्याप्तता को लक्ष्य में रखने वाले विशेष भाषा-सिद्धान्त का अनिवार्य अंग है। यह सत्य है कि इसमें कुछ अर्थ है जिसमें भाषा-सिद्धान्तों के (अथवा दूसरे क्षेत्र के सिद्धान्तों के) विकल्प सरलता और सुष्ठुता की दृष्टि से तुलना किये जा सकते हैं। फिर भी, जिसका हम यहाँ विवेचन कर रहे हैं वह यह सामान्य प्रश्न नहीं है, बल्कि भाषा के दो सिद्धान्तों की—इस भाषा के दो व्याकरणों की—सामान्य भाषा-सिद्धान्त विशेष के शब्दों में तुलना करने की समस्या है। तब यह भाषा के व्याख्यात्मक सिद्धान्त को व्यवस्थापित करने की समस्या है, इसे भाषा के प्रतियोगी सिद्धान्तों के बीच चयन करने की समस्या से संभ्रमित नहीं करना चाहिए। भाषा के प्रतियोगी सिद्धान्तों में चयन करना निस्संदेह एक आधारभूत प्रश्न है और इसे यथासंभव वर्णनात्मक और व्याख्यात्मक पर्याप्तता के अनुभवाश्रित कारणों पर निश्चित करना चाहिए। किन्तु यह व्याख्यात्मक पर्याप्तता प्राप्त करने के प्रयत्न में मूल्यांकन माप के प्रयोग से सम्बद्ध प्रश्न नहीं है।

स्थूल उदाहरण के रूप में इस प्रश्न पर विचार करें कि व्याकरण के नियम क्रमहीन (मान लीजिए यह भाषा-सिद्धान्त T_u है) रहें या किसी विशिष्ट रीति से क्रमबद्ध (मान लीजिए यह भाषा-सिद्धान्त T_o है) रहें। अनुभव-पूर्व इन दोनों में से कौन सही है इसे निश्चित करने की कोई रीति नहीं है। भाषा-सिद्धान्त अथवा सामान्य ज्ञानमीमांसा के अन्तर्गत 'सरलता' अथवा 'सुष्ठुता' का कोई निरपेक्ष ज्ञान अर्थ नहीं विकसित हुआ है जिसके द्वारा T_u और T_o की तुलना की जा सके।

अतएव यह मानना नितांत अर्थहीन है कि किसी निरपेक्ष अर्थ में Tu 'सरलतर' है या To सरलतर है। कोई 'सरलता' का एक सामान्य संप्रत्यय सरलता से प्रस्तुत कर सकता है जिससे Tu को To से अथवा To को Tu से उत्तम माना जा सकता है, और किसी भी स्थिति में इस संप्रत्यय का कोई ज्ञात औचित्य नहीं पाएगा। मूल्यांकन के कुछ माप प्रस्तावित हो चुके हैं और भाषा विज्ञान के अन्तर्गत अंशतः अनुभवाश्रित रूप से युक्तियुक्त सिद्ध हो चुके हैं—उदाहरणार्थ, अभिलक्षण विनिर्देशन का न्यूनतमीकरण (जैसा कि हाले, 1959a,1961,1962a, 1964 में विवेचित है) अथवा संक्षिप्ति-अंकनों पर आधारित माप(पृष्ठ 37 और आगे विवेचित) ये माप प्रयोजनीय नहीं हैं क्योंकि ये विशिष्ट भाषा-सिद्धान्त के अन्तर्गत हैं और उनका अनुभवाश्रित औचित्य अनिवार्यतः इसी तथ्य पर निर्भर है। Tu अथवा To में से किसे चुना जाए, इसके लिए हमें नितांत भिन्न रीति से कार्य करना होगा। हमें यह पूछना चाहिए कि Tu अथवा To प्राकृतिक भाषाओं के लिए वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरणों को दे सकता है अथवा व्याख्यात्मक पर्याप्तता की ओर ले जा सकता है। यदि विवेच्य सिद्धान्त पर्याप्त सावधानी के साथ प्रस्तुत किये जाएँ तो यह एक पूर्णतया सार्थक अनुभवाश्रित प्रश्न है। उदाहरण के लिए, यदि Tu^s पदबंध-संरचना व्याकरण का परिचित सिद्धान्त है, और To^s केवल इस अतिरिक्त निर्धारक के साथ वही सिद्धान्त है कि नियम शृंखलारूप से क्रमबद्ध हैं और चक्रीय रूप से ऐसे प्रयुक्त होंगे कि कम-से-कम एक नियम $A \rightarrow K$ प्रत्येक कोटि A के लिए अनिवार्य हो। (ताकि प्रत्येक चक्र अवश्यमेव अशून्य रहे), तो यह प्रदर्शित किया जा सकता है कि वर्णनात्मक शक्ति की दृष्टि से Tu^s और To^s अतुलनीय हैं ('प्रबल प्रजनक क्षमता' के लिए देखिए 9; देखिए चॉम्स्की, 1955, अध्याय 6 और 7, और चॉम्स्की 1956 ऐसी व्यवस्थाओं के कुछ विवेचनों के लिए)। परिणामतः हम यह पूछ सकते हैं कि क्या प्राकृतिक भाषाएँ वस्तुतः अ-समान और अनुभवाश्रित रूप से पृथक् सिद्धान्त Tu^s अथवा To^s के अन्तर्गत आती हैं। अथवा यह मानिए कि Tu^p और To^p स्वनप्रक्रियात्मक घटक के सिद्धान्त हैं(जहाँ To^p के स्वनप्रक्रियात्मक नियम क्रमहीन हैं और To^p के नियम अंशतः क्रमबद्ध हैं), तो प्राक्कल्पित 'भाषाएँ' सरलतया आविष्कृत की सकती हैं जिसके लिए महत्वपूर्ण सामान्यीकरण To^p के, न कि Tu^p (अथवा इसके विपरीत) के शब्दों में अभिव्यक्त किए जा सकते हैं। अतएव हम यह निर्धारित करने का प्रयत्न कर सकते हैं कि क्या कोई महत्वपूर्ण सामान्यीकरण हैं जो अनुभवाश्रित रूप से दो भाषाओं के सम्बन्ध में किसी एक सिद्धान्त के शब्दों में तो अभिव्यक्ति-योग्य हैं किन्तु दूसरे सिद्धान्त के शब्दों में अभिव्यक्ति-योग्य नहीं है। सिद्धान्ततः कोई भी परिणाम संभव है किन्तु प्राकृतिक भाषाओं के सम्बन्ध में यह पूर्णतया तथ्यात्मक प्रश्न है। हम बाद में देखेंगे कि आधार के सिद्धान्त के रूप में

To^s पर्याप्त अभिप्रेरणात्मक है, और प्रबल तर्क इस बात के दिए जाते हैं कि स्वनप्रक्रियात्मक प्रक्रियाओं के सिद्धान्त के रूप में To^s सही है और Tu^p गलत (देखिए, चॉम्स्की 1951, 1964; हाले: 1959 a, 199 b, 1962 ए, 1964)। दोनों स्थितियों में किसी एक या अन्य सिद्धान्त के शब्दों में भाषाई दृष्टि से महत्वपूर्ण सामान्यीकरणों की अभिव्यंजनीयता के ताथ्यिक प्रश्न की ओर तर्क मुड़ जाता है न कि 'सरलता' के किसी पूर्वत: मान्य निरपेक्ष अर्थ की ओर जो Tu और To की एक दूसरे की तुलना में कोटि-स्थान स्थिर करे। इस तथ्य को न पहिचानने के कारण बहुत बड़ी मात्रा में शून्य और दिशाहीन वाद-विवाद होता रहा है।

इन प्रश्नों के सम्बन्ध में इस तथ्य से भी कदाचित् भ्रांति उत्पन्न हुई है कि पृष्ठ 24-25 में प्रदर्शित अनेक विभिन्न अर्थों में व्याकरण के 'औचित्यीकरण' पर बात कही जाती है। मुख्य बिन्दु को फिर से दोहराएँ : एक ओर, वर्णनात्मक पर्याप्तता के बाह्य आधारों पर व्याकरण का औचित्य सिद्ध किया जाता है—हम यह पूछ सकते हैं कि क्या वह भाषा के सम्बन्ध में सही तथ्य वर्णित करता है, क्या वह सही-सही इसका पूर्वकथन कर सकता है कि किस प्रकार एक आदर्श नैसर्गिक वक्ता यादृच्छिक वाक्यों को समझता है, और क्या वह इस उपलब्धि के आधार का सही-सही विवरण देता है; दूसरी ओर, व्याकरण का औचित्य आंतरिक आधारों पर सिद्ध हो सकता है, यदि किसी व्याख्यात्मक भाषा सिद्धान्त दिए जाने पर यह प्रदर्शित किया जा सके कि यह व्याकरण सिद्धान्त-सम्मत, सर्वाधिक-मान्य और दी हुई प्राथमिक भाषा-सामग्री से संगत व्याकरण है। पश्चवर्ती स्थिति में, इस व्याकरण की रचना के लिए सिद्धान्तपूर्ण आधार प्रस्तुत किया जाता है, और इस कारण अधिक गहनतर अनुभवाश्रित आधारों पर वह औचित्यपूर्ण है। निस्संदेह दोनों प्रकार के औचित्य आवश्यक हैं—फिर भी दोनों में संभ्रमन उत्पन्न करना महत्वपूर्ण है। केवल वर्णनात्मक भाषाई सिद्धान्त में केवल एक ही प्रकार का औचित्य दिया जाता है—अर्थात्, हम यह दिखा सकते हैं कि उससे संमत व्याकरण वर्णनात्मक पर्याप्तता के बाह्य निर्धारकों को पूरा करते हैं।[24] किन्तु जब (12)–(14) के सभी प्रतिबन्ध (i)–(v) पूरे होते हैं तभी आन्तरिक औचित्य के गहनतर प्रश्न उठ सकते हैं।

यह भी स्पष्ट है कि एक मूल्यांकन-माप भाषासिद्धान्त का आवश्यक अंग है या नहीं, यह विवेचन नितांत निस्सार है (फिर भी देखिए, पृ० 32-33)। यदि भाषाविज्ञानी बिना औचित्य का ध्यान किए किसी न किसी प्रकार वर्णनों को व्यवस्थापित करने से संतुष्ट हो जाता है और यदि उसका उद्देश्य विशिष्ट भाषाओं के तथ्यों के अध्ययन द्वारा तद्वत् प्राकृतिक भाषाओं के लक्षणीय गुणधर्मों की गवेषणा करना नहीं है, तो मूल्यांकन प्रक्रिया की रचना और व्याख्यात्मक पर्याप्तता से सम्बद्ध विचार्य-विषयों से उसे कोई प्रयोजन नहीं है। इस स्थिति में चूँकि औचित्य

के प्रति अभिरुचि छोड़ दी गई है, न किसी साक्ष्य की ओर न किसी दलील (सिवाय संगति की न्यूनतम अपेक्षाओं) की कोई महत्ता भाषाविज्ञानी द्वारा प्रस्तुत भाषा-वर्णन के लिए है। इसके विपरीत, यदि वह भाषा-संरचना के अपने वर्णन में वर्णनात्मक पर्याप्तता लाना चाहता है, तो उसे अवश्यमेव व्याकरण-रूप के एक व्याख्यात्मक सिद्धान्त विकसित करने की समस्या पर विचार करना होगा, क्योंकि वह किसी भाषा-विशेष के वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण पर पहुँचने के मुख्य साधनों में से एक को प्रस्तुत करता है। दूसरे शब्दों में, केवल L से ली सामग्री के आधार पर एक भाषा-विशेष L के लिए व्याकरण का चुनाव सदैव अत्यधिक न्यूनतः निर्धारित रहेगा। इसके अतिरिक्त, अन्य प्रासंगिक सामग्री (जैसे, अन्य भाषाओं के सफल व्याकरण अथवा L के अन्य उपांगों के सफल खंड व्याकरण) तभी भाषाविज्ञान को उपलब्ध होगी, जब उसके पास एक व्याख्यात्मक सिद्धान्त होगा। ऐसा सिद्धान्त व्याकरण के चयन-क्षेत्र को दो प्रकार से सीमित करता है - व्याकरण पर रूपीय निर्धारक लगाकर और विवेच्य भाषा के लिए प्रयोज्य मूल्यांकन प्रक्रिया देकर। रूपीय प्रतिबन्ध और मूल्यांकन-प्रक्रिया ये दोनों, अन्य स्थितियों में प्राप्त सफलता द्वारा अनुभवाश्रित रूप से युक्तियुक्त सिद्ध किए जा सकते हैं। अतएव, वर्णनात्मक पर्याप्तता का कोई भी दूरव्यापी चिन्तन अवश्यमेव एक व्याख्यात्मक सिद्धान्त के विकास के प्रयत्न की ओर ले जाता है जो सिद्धान्त द्विधा प्रकार्य करता है और इसी प्रकार व्याख्यात्मक पर्याप्तता का चिन्तन निश्चयतः मूल्यांकन प्रक्रियाओं की गवेषणा की अपेक्षा करता है।

व्याकरणों के लिए मूल्यांकन माप रचित करने की मुख्य समस्या यह निर्धारण करने की समस्या है कि भाषा के विषय में कौन-सा सामान्यीकरण महत्वपूर्ण है; मूल्यांकन माप का चयन ऐसा करना चाहिए कि वह इनका समर्थन करे। हमें सामान्यीकरण तब मिलता है जब पृथक् एकांशों पर प्रयुक्त नियम-समुच्चय के स्थान पर पूरे समुच्चय पर प्रयुक्त एक अकेले नियम (अथवा, अधिक सामान्यतया, अंशतः सर्वांगसम नियमों) को हम स्थानापन्न कर सकते हैं, अथवा जब हम यह दिखा सकते हैं कि एकांशों के 'प्राकृतिक वर्ग' एक विशेष प्रक्रिया अथवा समान प्रक्रियाओं का समुच्चय भोगते हैं। इस प्रकार मूल्यांकन-माप का चयन 'समान प्रक्रियाएँ' और 'प्राकृतिक वर्ग'—संक्षेप में, महत्वपूर्ण सामान्यीकरण—क्या हैं, इसके निर्धारण पर निर्भर है। समस्या एक ऐसी प्रक्रिया प्रस्तुत करता है जो किसी व्याकरण के लिए, उस व्याकरण द्वारा उपलब्ध भाषाई महत्वपूर्ण सामान्यीकरण की मात्रा के शब्दों में, मूल्यांकन का सांख्यिक माप दे। व्याकरण पर प्रयोज्य सुस्पष्ट सांख्यिक माप प्रतीकों की संख्या पर निर्भर दीर्घता है। किन्तु यदि इसे सार्थक माप होना है तो यह आवश्यक है कि अंकन बनाए जाएँ और नियमों के रूप को इस प्रकार नियंत्रित किया जाए कि जटिलता और सामान्यता की महत्वपूर्ण विचारणाएँ दीर्घता की

विचारणाओं में परिवर्तित हो जाएँ, ताकि वास्तविक सामान्यीकरण व्याकरण को संक्षिप्त बनाएँ और मिथ्या सामान्यीकरण ऐसा न कर सकें। अतएव, यदि दीर्घता को मूल्यांकन-माप माना गया है तो व्याकरण को प्रस्तुत करने में प्रयुक्त आंकनिक रूढ़ियाँ 'महत्वपूर्ण सामान्यीकरण' को परिभाषित करती हैं।

वस्तुतः, सुस्पष्ट (अर्थात् प्रजनक) व्याकरणों में प्रयुक्त नानाविध कोष्ठकों के प्रयोग की रूढ़ियों के पीछे यही तर्क का आधार है। इनके विस्तृत विवेचनों के लिए इनको देखिए—चॉम्स्की (1951, 1955) पोस्टल (1962 a), मैथ्यूस (1964)। केवल एक उदाहरण के रूप में अंग्रेजी की सहायक क्रियाओं को लें। तथ्य ऐसे हैं कि ऐसे पदबन्ध में एक 'काल' (जो कि 'वर्तमान' या 'भूत' है) अवश्य होता है, उसके बाद कोई एक 'प्रकारतावाचक' हो सकता है, और उसके बाद एक या दोनों 'पक्ष' –घटित और घटमान– आ सकते हैं और ये इसी क्रम में आते हैं। परिचित आंकनिक रूढ़ियों को प्रयोग में लाते हुए, हम इस नियम को निम्नलिखित रूप में लिख सकते हैं :—

(15) Aux → Tense (Modal) (Perfect) (Progressive)

[सहायक → काल (प्रकारता)(घटित)(घटमान)] (यहां अनावश्यक विवरण नहीं दिया है)। नियम (15) आठ नियमों का सक्षेपण है जो कि सहायक क्रिया तत्व को आठ संभव रूपों में विश्लेषित करता है। यदि पूरा विस्तार दिया जाए तो इन आठ नियमों में बीस प्रतीक आएँगे जबकि नियम (15) में केवल चार (दोनों स्थितियों में 'सहायक' प्रतीक नहीं गिना गया है) प्रतीक आते हैं। कोष्ठक अंकन का इस उदाहरण में निम्नलिखित अर्थ है। वह यह स्थापित करता है कि चार और बीस प्रतीकों का अन्तर उस भाषा में उपलब्ध भाषाई महत्वपूर्ण सामान्यीकरण की मात्रा का माप है जिसमें सहायक क्रिया पदबन्ध के लिए सूची (16) में दिए गए रूप हैं जबकि दूसरी भाषा में, उदाहरण के लिए सहायक क्रिया पदबध के अन्तर्गत सूची (17) में दिए रूप मिलते हैं।

(16) काल, काल⁀प्रकारता, काल⁀घटित, काल⁀घटमान, काल⁀प्रकारता⁀घटित, काल⁀प्रकारता⁀घटमान, काल⁀घटित⁀घटमान, काल⁀प्रकारता⁀घटित⁀घटमान

(17) काल⁀प्रकारता⁀घटित⁀घटमान, प्रकारता⁀घटित⁀घटमान⁀काल, घटित⁀घटमान⁀काल⁀प्रकारता, घटमान⁀काल⁀प्रकारता⁀घटित⁀प्रकारता⁀पूर्ण, काल⁀घटित, प्रकारता⁀घटमान।

(16) और (17) दोनों सूचियों में बीस प्रतीक हैं। सूची (16) आंकनिक रूढ़ियों द्वारा नियम (15) में संक्षिप्त हो जाती है, किन्तु सूची (17) इस रूढ़ि द्वारा

संक्षेपित नहीं हो सकती है। अतएव, कोष्ठक-प्रयोग से संबद्ध परिचित आंकनिक रूढ़ियों के ग्रहण का यह तात्पर्य होता है कि यह दावा किया जा रहा है कि सूची (16) में दिए रूप-समुच्चय के अंतर्निहित एक भाषाई महत्त्वपूर्ण सामान्यीकरण है जबकि सूची (17) के रूप-समुच्चय के साथ ऐसा नहीं है। यह इस अनुभवाश्रित प्राक्कल्पना के समान है कि (16) में उदाहृत प्ररूप की नियमितताएँ वे हैं जो प्राकृतिक भाषाओं में मिलती हैं और उस प्ररूप की हैं जिसका एक भाषा सीखने वाला बच्चा आशा करता है, जबकि (17) में उदाहृतप्ररूप की चक्रीय नियमितताएँ, यद्यपि सूक्ष्मतः पूर्णतया अकृत्रिम हैं, न तो प्राकृतिक भाषा के लक्षण हैं, और न ही ऐसे प्ररूप की हैं जिसे बच्चे अन्तःप्रज्ञा से भाषा-सामग्रियों में ढूँढ़ें, और बिखरी हुई सामग्री के आधार पर भाषा सीखने वाले से इनकी रचना करना अथवा प्रयोग करना कहीं अधिक कठिन है। अतएव जो दावा किया जा रहा है वह यह है कि (16) जैसे प्राप्त बिखरे उदाहरणों से भाषा सीखने वाला नियम (15) रचित कर लेता है जो पूरे समुच्चय को उसकी आर्थी व्याख्या के साथ प्रजनित करता है, जबकि चक्रीय नियम से संबद्ध बिखरे हुए उदाहरणों से वह अपने व्याकरण में इस 'सामान्यीकरण' को नहीं स्थापित कर पाएगा उदाहरण के लिए, 'मोहन कल आएगा' 'कल मोहन आएगा' से यह निष्कर्ष नहीं निकलेगा कि एक तीसरा रूप 'आएगा मोहन कल' है अथवा 'मोहन यहाँ है' 'यहाँ मोहन है' से यह नहीं निकलेगा कि 'मोहन है यहाँ' एक रूप है। कोई सरलतया एक ऐसी भिन्न रूढ़ि का प्रस्ताव दे सकता है जो (17) की सूची को (16) की सूची से उपलब्ध नियम से भी छोटे नियम में संक्षेपित कर सके और इस प्रकार भाषाई महत्वपूर्ण सामान्यीकरण क्या है इसके विषय में एक भिन्न अनुभवाश्रित अभिग्रह बना सके। किन्तु सामान्य रूढ़ि को प्राथमिकता देने का कोई प्रागनुभव तर्क नहीं है; यह केवल प्राकृतिक भाषा की संरचना और प्राकृतिक भाषा में नियमितता के कुछ प्रकारों को ढूँढने की बच्चे की पूर्वप्रवणता के संबंध में तथ्यात्मक दावे को स्थापित करता है।

पूर्ववर्ती अनुच्छेद के उदाहरणों को कुछ सावधानी के साथ देखना चाहिए। यह आंकनिक रूढ़ियों का पूरा समुच्चय है जो पूर्ववर्णित रीति से मूल्यांकन प्रक्रिया का निर्माण करता है। व्याख्यात्मक सिद्धान्त का तथ्यात्मक आशय इस दावे में है कि दी हुई सामग्री के आधार पर स्वीकृतरूप सर्वाधिक मानयुक्त व्याकरण का चयन किया जाएगा। अतएव, व्याकरण की विशिष्ट उपव्यवस्थाओं के वर्णनों का मूल्यांकन उनके द्वारा नियमों के समग्र व्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभाव के पदों में करना चाहिए। व्याकरण के विशिष्ट भाग किस सीमा तक अन्य की अपेक्षा किए बिना स्वतंत्रतापूर्वक चुने जा सकते हैं, यह एक अनुभवाश्रित विषय है और उसके संबंध में वर्तमान में बहुत ही कम पता है। यद्यपि विकल्पों को स्पष्टतया व्यवस्थापित किया

जा सकता है तथापि विशेष भाषाओं के, जो आज उपलब्ध हैं, उससे अधिक गहन अध्ययन उन प्रश्नों का हल करने में आवश्यक है जो इन अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्नों के उठने पर तुरंत उठते हैं। मेरी जानकारी में, व्याकरण की पर्याप्त पूर्ण और जटिल उपव्यवस्था को मूल्यांकित करने का अकेला प्रयास चॉम्स्की (1951) में है, किन्तु वहां भी यही दिखाया गया है कि व्यवस्था का मूल्य एक 'स्थानीय महत्तम' इस अर्थ में है कि आसन्न नियमों का विनिमय मूल्य को कम करता है। बड़े पैमाने पर आपरिवर्तनों के प्रभाव की खोज नहीं की गई है। सामान्य प्रश्न के कुछ पक्षों का, जिनका सबंध कोशीय और स्वनप्रक्रियात्मक संरचनाओं से है, विवेचन हाले और चॉम्स्की (1968) में दिया है।

मूल्यांकन के इस सामान्य उपागम की एक विशेष स्थिति, जिसका विस्तार एक विशेष विश्वासोत्पादक रीति से हुआ है, व्याकरण के स्वनप्रक्रियात्मक घटक में परिच्छेदक अभिलक्षण विनिर्देशनों के न्यूनतमीकरण का निर्धारक है। एक प्रविश्वास्य तर्क इस संबध में यह दिया जा सकता है कि यह रूढ़ि "स्वाभाविक वर्ग" और "सार्थक सामान्यीकरण" की उन धारणाओं को परिभाषित करती है जिन पर वर्णनात्मक और तुलनात्मक-ऐतिहासिक स्वनप्रक्रियात्मक गवेषणाओं में स्वयं से विश्वास किया जाता है और जो "स्वनप्रक्रियात्मक दृष्टि से संभव" और "स्वन-प्रक्रियात्मक दृष्टि से असंभव" निरर्थक रूपों के बीच अन्त:प्रज्ञात्मक रीति से दिए अन्तर को निर्धारित करती है विवेचन के लिए, देखिए हाले (1959a, 1959b, 1961, 1962a, 1964), हॉले और चॉम्स्की (1968)। यह पर्यवेक्षण करना महत्वपूर्ण है कि इस विशेष मूल्यांकन मापन की प्रभाविता व्याकरण के रूप में संबद्ध सबल अभिग्रह पर पूर्णतया निर्भर है। वह अभिग्रह यह है कि केवल अभिलक्षण अंकन स्वीकृत होते हैं। यदि अभिलक्षण अंकन के साथ स्वनिमीय अंकन जोड़ दिए जाएँ तो मापन अनर्गल परिणामों को, जैसाकि हाले ने दिखाया है, देने लगता है।

अब यह स्पष्ट है कि अंकनों और अन्य रूढ़ियों का चुनना यदि दीर्घता को व्याकरण के मूल्यांकन का एक मापन माना जाए कोई याहच्छिक अथवा "केवल तकनीकी" बात नहीं है। बल्कि यह एक ऐसी बात है जिसका तुरंत के और कदाचित् पर्याप्त महत्वपूर्ण अनुभवाश्रित परिणाम निकलेंगे। जब किसी भाषाई सिद्धान्त में, जैसाकि हम विचार कर रहे हैं, विशिष्ट आंकनिक युक्तियों का समावेश किया जाता है तो प्राकृतिक भाषा से सम्बद्ध कोई अनुभवाश्रित दावा, अन्तर्निहित रूप से ही, किया जाता है। यह ध्वनित है कि भाषा सीखने वाला व्यक्ति उन सामान्यीकरणों को व्यवस्थापित करने का प्रयत्न करेगा जो इस सिद्धान्त में उपलब्ध अंकनों के शब्दों में आसानी से (अर्थात् बहुत कम प्रतीकों द्वारा) व्यक्त किये जा सकते हैं, और

वह उन व्याकरणों को, जिनमें ये सामान्यीकरण हैं, उन अन्य व्याकरणों की तुलना में चुनेगा जो कि दी हुई सामग्री पर तो बने हैं किन्तु जिनमें अन्य प्रकार के सामान्यीकरण, अन्य प्रकार की "स्वाभाविक वर्ग" की धारणाएँ आदि हैं। ये अत्यधिक सबल दावे हो सकते हैं और यह आवश्यक नहीं है कि किसी भी प्रागनुभव आधार पर सही निकलें।

इस विषय में अन्य संभव दीर्घव्यापी भ्रांति को दूर करने के लिए, मैं फिर दोहराना चाहूँगा कि नियमों, प्राक्कल्पनाओं आदि के व्यवस्थापन के शब्दों में भाषा-अधिगम का यह विवेचन इनके संचेतन व्यवस्थापन और अभिव्यक्ति की ओर संकेत नहीं करता है बल्कि प्रजनक व्यवस्था के आंतरिक निरूपण पर पहुँचने की प्रक्रिया की ओर, जिसका उपयुक्त रूप से इन शब्दों में वर्णन किया जा सकता है, संकेत करता है।

संक्षेप में, यह स्पष्ट है कि भाषा का कोई भी विद्यमान सिद्धान्त अत्यधिक सीमित क्षेत्र के बाहर व्याख्यात्मक पर्याप्तता प्राप्त करने की आशा नहीं करता है। दूसरे शब्दों में, हम रूपात्मक और सत्तात्मक भाषाई सार्वभौमों की ऐसी व्यवस्था प्रस्तुत करने में सफलता से बहुत दूर हैं जो भाषा-अधिगम के तथ्यों की व्याख्या करने योग्य पर्याप्त समृद्ध और विस्तृत हो। व्याख्यात्मक पर्याप्तता की दिशा में भाषा-सिद्धान्त स्थापित करने के लिए हम व्याकरणों के मूल्यांकन-मापनों को परिष्कृत करने और व्याकरणों के रूपीय नियामकों को दृढ़ करने के कुछ प्रयास कर सकते हैं और इस कारण प्राथमिक भाषाई सामग्री से संगत कोई अन्य अधिक मूल्य वाली प्राक्कल्पना पाना अधिक कठिन हो जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि व्याकरण के विद्यमान सिद्धान्त इन दोनों रीतियों से अपरिवर्तन की अपेक्षा करते हैं और दोनों रीतियों में दूसरी रीति से सामान्यतया अधिक आशा की जा सकती है। इस प्रकार भाषाई सिद्धान्त की सर्वाधिक निश्चायक समस्या यह लगती है कि वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण विशेष से किस प्रकार अमूर्त कथन और सामान्यीकरण निकाले जाएँ और जहाँ संभव हो उन्हें भाषाई संरचना के सामान्य सिद्धान्तों में स्थापित किया जाए और इस प्रकार इस सिद्धान्त को समृद्ध किया जाए और व्याकरणिक वर्णन की समाकृति पर अधिक संरचना अध्यारोपित की जाए। जहाँ यह किया जाता है वहाँ भाषाविशेष-विषयक दावा भाषा सामान्य के उस अनुरूप दावे से विस्थापित किया जाता है जिससे भाषा विशेष विषयक दावा निकला है। यदि गहनतर प्राक्कल्पना का यह व्यवस्थापन गलत है तो यह तथ्य तब स्पष्ट हो जाएगा जब भाषा के अन्य पक्षों के वर्णन पर अथवा अन्य भाषाओं के वर्णन पर उसके पड़े प्रभाव का निश्चय किया जाएगा। संक्षेप में, मैं इस स्वयं स्पष्ट कथन को कह रहा हूँ कि, यथासंभव भाषा की प्रकृति विषयक अभिग्रहों को पहले व्यवस्थापित करना चाहिए और उसमें

भाषाविशेषों के व्याकरणों के अभिलक्षण विशेष निगमन द्वारा निकलते हैं। इस प्रकार, भाषासिद्धान्त व्याख्यात्मक पर्याप्तता की ओर बढ़ता है और मानवीय मानसिक प्रक्रियाओं तथा बौद्धिक क्षमता के अध्ययन में और विशेषतया उन योग्यताओं के निर्धारण में योगदान देता है जो समय और सामग्री की दी हुई परिसीमाओं के भीतर अनुभवाश्रित रीति से भाषा-अधिगम को सम्भव बनाता है।

§8. भाषाई सिद्धान्त और भाषा-अधिगम

पूर्ववर्ती विवेचन में, भाषाई सिद्धान्त की कुछ समस्याओं को प्राक्कलिपत भाषा-अर्जन युक्ति के रचना-विषयक प्रश्नों के रूप में व्यवस्थापित किया गया है। यह एक उपयोगी और सुझाव भरा ढाँचा लग रहा है जिसके भीतर इन समस्याओं को स्थापित किया जा सकता है और तदनंतर उन पर विचार किया जा सकता है। हम उस सिद्धान्तविद् की कल्पना कर सकते हैं जिसके पास प्राथमिक भाषाई सामग्री के संकलन हैं और ऐसी सामग्री के आधार पर युक्ति से रचित व्याकरण है और वह दोनों का अनुभवाश्रित रीति से युग्मन करता है। निवेश रूप प्राथमिक सामग्री और ऐसी युक्ति के निर्गम रूप व्याकरण-दोनों के संबंध में बहुत सूचना मिल सकती है और सिद्धान्तविद् के सामने यह समस्या है कि इस निवेश-निर्गम संबंध को सहयोजित करने में समर्थ युक्ति के अन्तर्निष्ठ गुणधर्मों को कैसे निर्धारित करे।

यह कुछ रोचक होगा यदि इस विवेचन को कुछ अधिक सामान्य और पारंपरिक ढाँचे में प्रारम्भ किया जाए। ऐतिहासिक दृष्टि से, ज्ञानार्जन की समस्या के, जिसकी भाषोपार्जन की समस्या एक विशेष और विशिष्टतया सूचनात्मक स्थिति है, दो सामान्य उपागमों में हमें भेद रखना चाहिए। अनुभववादी उपागम यह मानता है कि अर्जन-युक्ति की संरचना कुछ मूलतात्विक "परिधीय प्रक्रियात्मक यांत्रिकी" में सीमित है। वे इन परिधीय प्रक्रियात्मक यांत्रिकी के उदाहरण हो सकते हैं—अन्तर्जात "गुण-आकाश" और उस पर परिभाषित अन्तर्जात "दूरता" (अपने नवीनतम रूपों में) (क्यूने, 1960, पृष्ठ 83 और बाद में)[25]; आदिम अननुबंधित परिवर्त (हल, 1943); अथवा, भाषा के सम्बन्ध में, पूर्ण "श्रावणिक प्रभाव" के सभी "श्रवणगोचर भेदनीय घटकों" का समुच्चय (ब्लाक, 1950)। इससे परे, वह यह मानता है कि युक्ति में कुछ विश्लेषणात्मक सामग्री-प्रक्रमकारी यांत्रिकी है अथवा बहुत ही तात्विक प्रकार के आगमनात्मक सिद्धान्त हैं, जैसेकि, साहचर्य के कुछ सिद्धान्त, दिए गुण-आकाश के आयामों के साथ के प्रावण्यों से सम्बद्ध "सामान्यीकरण" के सिद्धान्त, अथवा भाषा के सम्बन्ध में विखण्डन और वर्गीकरण के वर्गीकरणात्मक सिद्धान्त जो कि आधुनिक भाषाविज्ञान में कुछ सावधानी के साथ, ऐसे सिद्धान्तों के मौलिक स्वरूप पर सासूर द्वारा दिए विशेष बल के अनुसार, विकसित हुए हैं। यह तब माना

जाता है कि अनुभव का एक प्रारंभिक विश्लेषण परिधीय प्रक्रमकारी यांत्रिकी द्वारा दिया जाता है और व्यक्ति की इनसे परे की धारणाएँ और ज्ञान इस आरम्भिक विश्लेषित अनुभव पर उपलब्ध आगमनात्मक सिद्धान्तों के अनुप्रयोग से प्राप्त होते हैं।[26] ऐसा दृष्टिकोण स्पष्टतया इस रीति से अथवा अन्यथा मन की प्रकृति विषयक प्राक्कल्पनाओं द्वारा व्यवस्थापित होता है।

ज्ञान-अर्जन की समस्या का पर्याप्त भिन्न उपागम मानसिक प्रक्रमों के विषय में तर्कबुद्धिवादी ऊहापोह की विशेषता है। तर्कबुद्धिवादी उपागम यह मानता है कि परिधीय प्रक्रमकारी यान्त्रिकी से परे, विविध प्रकार के अन्तर्जात विचार और सिद्धान्त हैं जो अर्जित ज्ञान के रूप को एक प्रतिबन्धित और अत्यधिक संगठित रीति से निर्धारित करते हैं। अन्तर्जात यांत्रिकी सक्रिय हो इसकी शर्त यह है कि उपयुक्त उद्दीपन प्रस्तुत किया जाए। इस प्रकार डेकार्टे (1647) के अनुसार, अन्तर्जात विचार विचारशक्ति से उत्पन्न होते हैं, न कि बाह्य पदार्थों से "..........हमारे मन तक बाह्य पदार्थों से ज्ञानेन्द्रियों द्वारा कुछ शारीरिक संचलनों के अतिरिक्त नहीं पहुँचता है..........किन्तु ये संचलन और उनसे उत्पन्न होने वाली आकृतियाँ भी ज्ञानेन्द्रियों में धारण किए आकार में हमारे द्वारा नहीं ग्रहण की जाती हैं..........अतएव निष्कर्ष यह निकलता है कि संचलनों के विचार और आकृतियाँ स्वयं हममें अन्तर्जात हैं। पीड़ा, रंग, ध्वनि आदि के विचारों को तो इतना अन्तर्जात होना होता है कि हमारा मन कुछ शारीरिक संचलनों के अवसर पर इन विचारों को देखने लगता है क्योंकि शारीरिक संचलनों से उनका कोई सादृश्य नहीं होता है..........[(पृष्ठ 443)]"

इसी प्रकार ये धारणाएँ कि किसी एक वस्तु से समान वस्तुएँ आपस में बराबर होती हैं अन्तर्जात हैं क्योंकि वे "विशेष संचलनों" से आवश्यक सिद्धान्तों के रूप में नहीं उठती हैं। सामान्यतया,

"दृष्टि..........चित्रों के परे कुछ प्रस्तुत नहीं करती है, और श्रवणेन्द्रिय ध्वनियों के परे कुछ प्रस्तुत नहीं करती। फलस्वरूप जिन-जिन चीजों को हम सोचते हैं, इन ध्वनियों और चित्रों के जो इनसे प्रतीकीकृत होते हैं, वे-वे हमारे सामने विचारों द्वारा, जो हमारी चिन्तनशक्ति के अतिरिक्त कहीं और से नहीं जाते हैं और जो तदनुसार चिन्तनशक्ति के साथ-साथ अन्तर्जात हैं, अर्थात्, वे संभावी-रूप से सदैव हममें हैं; क्योंकि किसी भी ज्ञानेन्द्रिय में अस्तित्व वास्तविक नहीं है बल्कि केवल संभावी है चूँकि 'ज्ञानशक्ति' शब्दमात्र का अभिहितत्व संभाविता से न कम है और न अधिक ....[इस प्रकार विचार इस अर्थ में अन्तर्जात है कि] कुछ परिवारों में उदारता अन्तर्जात है, दूसरों में गठिया आदि कोई रोग वंशानुक्रम से चला आता है, और इसका कारण यह नहीं है कि उस परिवार के बच्चे माँ के पेट में ही इन रोगों से

वस्तुतः प्रभावित होते हैं बल्कि इस कारण कि उन बच्चों के इन रोगों से आक्रांत होने की पूर्वप्रवणता और संभावना की अधिकता होती है ''''''[पृ० 442]

इससे भी पहले, लार्ड हर्बर्ट (1624) यह मानते थे कि अन्तर्जात विचार और सिद्धान्त "तब प्रच्छन्न रहते हैं जब उनके तदनुरूप पदार्थ सम्मुख विद्यमान नहीं होते हैं अथवा लुप्त हो जाते हैं और उनके अस्तित्व का कोई अवशेष भी नहीं रहता। उन्हें "उतना अनुभव का परिणाम नहीं समझना चाहिए जितना कि सिद्धान्त जिनके बिना हमें कोई भी अनुभव नहीं हो सकता''''''[पृ० 132)"। इन सिद्धान्तों के बिना "हमें कोई अनुभव हो ही नहीं सकता और न हम पर्यवेक्षण करने के योग्य बन सकते हैं"; "हम न तो पदार्थों के अन्तर को पहिचानने में समर्थ हो सकते और न किसी सामान्य स्वरूप अथवा प्रकृति को ग्रहण कर पाते''''''[पृष्ठ 105]"। ये धारणाएँ सत्रहवीं सदी के तर्कवादी दर्शन में निरंतर विस्तार से विकसित होती रही हैं। एक और उदाहरण यदि लें तो कडवर्थ (1731) अपने इस दृष्टिकोण के समर्थन में एक व्यापक तर्क देते हैं कि "मन में ऐसे अनेक विचार होते हैं, जिनके चिन्तन प्रायः संचलन से प्रारम्भ होते हैं अथवा बाह्यतः इन्द्रियगोचर पदार्थों का संनिकर्ष हमारे शरीरों पर होता है; फिर भी उनसे स्वयं विचार आत्मा पर संभवतः नहीं अंकित अथवा चिह्नित होते हैं क्योंकि इन्द्रियाँ इन ऐहिक पदार्थों में ऐसी वस्तुओं की सत्ता स्वीकार नहीं करती हैं और इसलिए वे अन्तर्जात शक्तिशालिता और स्वयं मन की गतिविधि से अवश्यमेव उठते हैं''''''(बुक IV)"। लॉक में भी तत्वतः यही संकल्पना मिलती है जैसाकि लिब्नीत्स और अन्य टीकाकारों ने बताया है।

पोर्ट-रायल 'लाज़िक' में (आर्नाल्ड, 1662) यही दृष्टिकोण निम्नलिखित रीति से अभिव्यक्त किया गया है :

"अतएव यह मानना मिथ्या है कि हमारे सभी विचार ज्ञानेन्द्रियों द्वारा आते हैं। इसके विपरीत, यह पक्के तौर से कहा जा सकता है कि कोई भी विचार जो हमारे मन में है ज्ञानेन्द्रिय से उत्पन्न हुआ है, सिवाय उन संचलनों के अवसर पर जो मस्तिष्क में ज्ञानेन्द्रिय द्वारा होते हैं, ज्ञानेन्द्रिय से प्राप्त स्पंदन मन को विभिन्न विचार, जो बिना उसके बना नहीं सकता था, बनाने देते हैं, यद्यपि ये विचार अत्यधिक विरलतया ज्ञानेन्द्रिय और मस्तिष्क में हो रहे घटनाओं से मिलते हैं; और कम से कम बहुत बड़ी संख्या में विचार हैं जो किसी मूर्त प्रतिबिंब से सम्बद्ध न होने के कारण, बिना अभिव्यक्त बेतुकेपन के, ज्ञानेन्द्रिय के प्रति निर्दिष्ट हो सकते हैं''''''[अध्याय 1]"

इसी प्रकार, लिब्नीत्स अन्तर्जात और उपार्जितज्ञान के तीव्र अन्तर को मानने से इन्कार करते हैं :

"मैं यह मानता हूँ कि उनके स्रोत को ध्यान में रखने से अथवा उन्हें अनुभव द्वारा सत्यापित करने से विचारों और अन्तर्जात सत्यताओं को सीखते हैं''''''। और

मैं इस कथन को स्वीकार नहीं कर सकता कि **वह सब जो व्यक्ति सीखता है अन्तर्जात नहीं होता है।** संख्याओं की सत्यताएँ हम में हैं, तथापि प्रत्येक उसे सीखता है[28], और यह सीखना या तो उनके स्रोत से प्राप्त करने के द्वारा होता है जब हम प्रदर्शनकारी प्रमाण (जो यह दिखाता है कि वे अन्तर्जात हैं) द्वारा उन्हें सीखते हैं, या उदाहरणों में सत्यापित करने के द्वारा होता है, जैसे, जब हम साधारण गणितज्ञ की तरह करते हैं……[न्यू एसेस, पृ० 75]। [इस प्रकार] सभी अंकगणित और सभी ज्यामिति वस्तुतः हममें है और इस कारण यदि हम ध्यानपूर्वक देखें तो उन्हें वहाँ पा सकते हैं और जो मन में पहले से ही था उसे क्रमबद्ध कर सकते हैं……[पृष्ठ 78]। [सामान्यतया,] हममें विशाल मात्रा में ज्ञान रहता है जिसके हम सदैव जानकर नहीं होते हैं और आवश्यकता पड़ने पर भी नहीं जान पाते हैं कि वह हमीं में है [पृष्ठ 77]। ज्ञानेन्द्रिय, यद्यपि हमारे वास्तविक ज्ञान के लिए आवश्यक हैं, हमें सब कुछ देने में पर्याप्त नहीं हैं क्योंकि ज्ञानेन्द्रिय हमें उदाहरणों के अतिरिक्त, अर्थात् विशिष्ट और एकल सत्यताओं के अतिरिक्त, कुछ और नहीं देती हैं। अब वे सब उदाहरण जो सामान्य सत्यता को पक्का करते हैं, चाहे उनकी संख्या कितनी भी हो, उसी सत्यता की सार्वभौमिक आवश्यकता को स्थापित करने में पर्याप्त नहीं हैं……[पृष्ठ 42–43]। आवश्यक सत्यताओं के पास ऐसे सिद्धान्त होने चाहिए जिनका प्रमाण उदाहरणों पर निर्भर न हो और न फलतः ज्ञानेन्द्रिय के साक्ष्य पर निर्भर हो यद्यपि बिना ज्ञानेन्द्रियों में उनके सम्बन्ध में सोचने तक का अवसर नहीं मिलता……। यह सत्य है कि हम यह कल्पना न करें कि तर्क के ये शाश्वत नियम आत्मा में खुली पुस्तक के भांति पढ़े जा सकते हैं……किन्तु यह पर्याप्त है कि थोड़ा सा भी ध्यान देने पर वे अपने भीतर पाए जा सकते हैं और इसके लिए ज्ञानेन्द्रिय अवसर देती हैं और सफल अनुभव तर्क को पुष्ट करता है…… [पृष्ठ 44]। [अन्तर्जात सामान्य सिद्धान्त है जो] हमारे चिन्तनों में भीतर आते हैं और उनसे आत्मा और सम्बन्ध बनते हैं वे उसी प्रकार आवश्यक हैं जिस प्रकार चलने में शरीर की अनेक मांसपेशियाँ और तन्तु आदि, यद्यपि हम उनके सम्बन्ध में सोचते तक नहीं हैं। मन इन सिद्धान्तों पर प्रतिक्षण निर्भर रहता है, किन्तु उनमे अन्तर करना और उन्हें प्रभिन्नतया और पृथक्तया निरूपित करना इतना सरल नहीं है क्योंकि उसके लिए उसके कृत्यों पर दिए अत्यधिक ध्यान की आवश्यकता है……। इस प्रकार यह ऐसा है कि मनुष्य में अनेक ऐसी वस्तुएँ (शक्तियाँ) हैं जिनके सम्बन्ध में वह नहीं जानता……[पृष्ठ 74]"

(उदाहरणार्थ, चीनी में उच्चरित ध्वनियाँ हैं और इस कारण वर्णाक्षरिक लेखन का आधार उनके पास है, यद्यपि उन्होंने इसे अविष्कृत नहीं किया है)

प्रसंगवश यह ध्यातव्य है कि विचार-रचना में ज्ञानेन्द्रिय और मन के पारस्परिक

योगदान के क्लासिकी विवेचनों में निरन्तर प्रत्यक्षण और उपार्जन में स्पष्ट अन्तर नहीं स्थापित किया गया है, यद्यपि यह मानना असंगत नहीं होगा कि गुप्त अन्तर्जात मानसिक संरचनाएँ, एक बार सक्रिय होने पर, ज्ञानेन्द्रिय की सामग्री के अभूतपूर्व रीति से निर्वचन के लिए, उपलब्ध हैं।

इस तर्कवादी दृष्टिकोण को भाषा-अधिगम की विशिष्ट स्थिति में प्रयुक्त करते हुए, हम्बोल्ट (1836) इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि कोई वास्तव में भाषा सिखा नहीं सकता, केवल उन परिस्थितियों को बना सकता है जिसमें वह मन में अपनी रीति से स्वयमेव विकसित कर सके। इस प्रकार किसी भाषा का स्वरूप, उसके व्याकरण की समाकृति, बड़ी सीमा तक दिया होता है यद्यपि वह भाषा-निर्माणकारी प्रक्रमों को संक्रिया में लाने के उपयुक्त अनुभव के बिना प्रयोगार्थ उपलब्ध नहीं होता है। लिब्नीत्स के समान, वे प्लेटो के इस दृष्टिकोण को दुहराते हैं कि व्यक्ति के लिए अधिगम मुख्यतया पुनः प्रजनन (widererzeugung) की, अर्थात् मन में अन्तर्जात रूप से विद्यमान को बाहर निकालने की बात है।[29]

यह दृष्टिकोण अनुभववादियों के इस संप्रत्यय (वर्तमान व्यापक दृष्टिकोण) से तीक्ष्णता से वैषम्य में है कि भाषा तत्वतः एक आकस्मिक रचना है, वह "अनु-बन्धन" द्वारा (जैसाकि उदाहरणार्थ स्किनर अथवा क्यूने मानते हैं) अथवा ड्रिल और सुस्पष्ट व्याख्या द्वारा (जैसाकि विटगेन्स्टीन का दावा है) सिखायी जाती है अथवा आरंभिक "सामग्री-प्रक्रमनात्मक" प्रक्रियाओं द्वारा (जैसाकि आधुनिक भाषाविज्ञान प्रकारात्मक रूप से मानता है) बनती है, किन्तु प्रत्येक दशा में, किन्हीं भी अन्तर्जात मानसिक शक्तियों से अपनी संरचना में अपेक्षाकृत स्वतंत्र है।

संक्षेप मे, अनुभववादी ऊहापोह लक्षणतया यह मानता है कि केवल ज्ञानार्जन की प्रक्रियाएँ और यांत्रिकी मन के अन्तर्जात गुणधर्म बनाते हैं। इस प्रकार, ह्यूम की दृष्टि से, "प्रयोगात्मक तर्कणा" की विधि पशुओं और मनुष्यों में मौलिक सहजाप्रवृत्ति है और वह उस सहजा प्रवृत्ति के समतुल्य है "जो पक्षी को इतनी यथार्थता के अंडों का सेना और बच्चे पालने की पूरी व्यवस्था और क्रमबद्धता को सिखाती है"— वह "प्रकृति के मौलिक हाथों से" व्युत्पन्न है (ह्यूम, 1748, § IX)। किन्तु ज्ञान का स्वरूप अन्यथा मुक्तप्राय है। इसके विपरीत, तर्कवादी ऊहापोह यह मानता है कि ज्ञान की व्यवस्था का सामान्य रूप पहले से ही मन की पूर्वप्रवणता के रूप में स्थिर है, और अनुभव का प्रकार्य इस सामान्य समाकृतिपूर्ण संरचना को रूपबद्ध कराता है और अधिक पूर्णतया भेदीकृत करता है) लिब्नीत्स के रोचक सादृश्य के अनुसार, हम कह सकते हैं :

"........धारीदार संगमर्मर की पट्टी की तुलना में, न कि पूर्णतया एक-सम अथवा दार्शनिकों में अभिहित "चिकना पत्थर" की तुलना में.... । यदि आत्मा इन

खाली पत्थर की पट्टियों के समान होती, तो सत्यता उस प्रकार होती जैसेकि संगमर्मर में हरक्यूलीज की आकृति जबकि पत्थर इस या अन्य आकृति को ग्रहण करने में उदासीन है। किन्तु यदि पत्थर में धारियाँ आदि होतीं जो हरक्यूलीज की आकृति को तो स्पष्ट करती हैं न कि अन्य आकृतियों को, तो पत्थर की पट्टी उसके लिए निर्धारक होती और हरक्यूलीज किसी अर्थ में अन्तर्जात होता, यद्यपि इन धारियों का पता लगाने का श्रम फलदायक होता अर्थात् उस पर पालिश करके आकृति को और स्पष्ट किया जा सकता अथवा बीच के व्यवधान को काटकर स्पष्ट किया जा सकता। इस प्रकार विचार और सत्यताएँ हमारे लिए उसी प्रकार अन्तर्जात हैं जिस प्रकार प्रवृत्तियाँ, पूर्वप्रवणताएँ आदतें अथवा स्वाभाविक प्रच्छन्न शक्तियाँ, न कि कर्म; यद्यपि ये प्रच्छन्न सामर्थ्य सदैव तदनुरूप प्रायः अप्रत्यक्ष कर्म से सहचरित होते हैं। (लिब्नीत्स, न्यू एसेस्, पृष्ठ 45-46)

निस्संदेह यह मानना-आवश्यक नहीं है कि अनुभववादी और तर्कवादी दृष्टिकोण सदैव प्रभिन्न किए जा सकते हैं और ये धाराएँ एक दूसरे के ऊपर से नहीं बह सकतीं। फिर भी, यह ऐतिहासिक और अन्वेषणात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि ज्ञानोपार्जन की समस्या के इन दो अत्यधिक विभिन्न उपागमों में भेद रखा जाए। विशिष्ट अनुभववादी और तर्कवादी दृष्टिकोण पर्याप्त यथार्थ बनाए जा सकते हैं और ज्ञानोपार्जन के विषय में, और विशिष्टतया भाषोपार्जन युक्ति की अन्तर्जात संरचना के विषय में, सुस्पष्ट प्राक्कल्पनाओं को स्थापित कर सकते हैं। वस्तुतः आधुनिक भाषाविज्ञान के वर्गीकरणात्मक सामग्री-प्रक्रमनात्मक उपागम को अनुभववादी दृष्टिकोण के रूप में, जो रचनांतरण व्याकरण के अभी हाल के सिद्धान्तों में प्रस्तावित तत्वतः तर्कवादी विकल्प से नितांत भिन्न है, वर्णित करना गलत न होगा। वर्गीकरणात्मक भाषाविज्ञान अपने इस अभिग्रह में अनुभववादी है कि सामान्य भाषाई सिद्धान्त के अन्तर्गत भाषासामग्री से भाषा के व्याकरण को निर्धारित करने वाली प्रक्रियाओं का समूह मात्र आता है और भाषा का रूप अविनिर्दिष्ट रहता है सिवाय इसके कि संभव व्याकरण के प्रतिबंध प्रक्रियाओं के इस समुच्चय से निर्धारित होते हैं। यदि हम वर्गीकरणात्मक भाषाविज्ञान को एक अनुभवाश्रित दावा प्रस्तुत करता हुआ मान लें[30] तो दावा यह होगा कि सामग्री के पर्याप्त समृद्ध चयन पर अभ्युपगमित प्रक्रियाओं के अनुप्रयोग से जनित व्याकरण वर्णनात्मतया पर्याप्त होगा—दूसरे शब्दों में, प्रक्रिया के समुच्चय को अन्तर्जात भाषोपार्जन व्यवस्था विषयक प्राक्कल्पना से युक्त माना जा सकता है। वैषम्य में, पूर्ववर्ती अनुभागों में भाषोपार्जन का विवेचन अपने इस अभिग्रह में तर्कवादी था कि विविध रूपात्मक और सत्तात्मक सार्वभौम भाषोपार्जन व्यवस्था के अन्तर्निष्ठ गुणधर्म हैं और ये ऐसी समाकृति प्रस्तुत करते हैं जो सामग्री पर प्रयुक्त होती है और उपयुक्त सामग्री के

प्रस्तुतीकरण से उत्पन्न व्याकरण के सामान्य रूप को और, अंशत, सत्तात्मक अभि-लक्षणों तक को अत्यधिक सीमित रीति से निर्धारित करती है। स्थूलतः पूर्वतर वर्णित और अधिक विस्तार के साथ बाद के अध्यायों और रचनांतरण व्याकरण के अन्य अध्ययनों में विस्तरित प्रकार का सामान्य भाषाई सिद्धान्त मानसिक संरचनाओं और प्रक्रियाओं की प्रकृति के संबंध में, तत्वतः तर्कवादी प्रकार की, विशि ट प्राक्कल्पना माना जा सकता है। देखिए चॉम्स्की (1959b, 1962b 1964) और केट्स (प्रकाश्य) इस बिंदु के कुछ अतिरिक्त विवेचन के लिए।

जब इस प्रकार के विरोधी दृष्टिकोण स्पष्टतया व्यवस्थापित किए जाते हैं तो एक अनुभवाश्रित प्रश्न के रूप में हम पूछ सकते हैं कि कौन (यदि कोई भी सही है) सही है। इस प्रश्न को हल करने की कोई प्रागनुभव रीति नहीं है। जहाँ अनुभव-वादियों और तर्कवादियों के दृष्टिकोण पर्याप्त सावधानी के साथ प्रस्तुत भी किए गए हैं ताकि कौन सही है इस प्रश्न को गंभीरतया उठाया जा सके, यह उदाहरणार्थ नहीं माना जा सकता है किसी विशेष स्पष्ट अर्थ में सम्भव भौतिक रूपबंधन [31] के शब्दों में एक दूसरे से अधिक "सरल" है और यदि यह एक या दूसरे के पक्ष में प्रदर्शित भी कर दिया जाता तो भी उसका महत्व पूर्णतया तथ्यात्मक समस्या के लिए कुछ भी न होता। यह तथ्यात्मक प्रश्न अनेक रीतियों से सुलझाया जा सकता है। विशिष्टतया, अपने को भाषोपार्जन के प्रश्न में इस समय सीमित करते हुए, हमें सदा इसका ध्यान रखना चाहिए कि कोई भी मूर्त अनुभववादी प्रस्ताव व्याकरणों के उस रूप पर कुछ निर्धारकों को अध्यारोपित करता है जो प्राथमिक सामग्री पर उसके आगमनात्मक सिद्धान्तों के अनुप्रयोग से जनित है। अतएव हम यह पूछ सकते हैं कि क्या इन सिद्धान्तों से प्राप्त व्याकरण सिद्धान्ततः उन व्याकरणों के समीप है जो वस्तुतः तब आविर्भूत होते हैं जब हम वास्तविक भाषाओं पर खोज करते हैं। यही प्रश्न मूर्त तर्कवादी प्रस्ताव के संबंध में पूछा जा सकता है। अतीत में यह एक उपयोगी विधि सिद्ध हुई थी कि ऐसी प्राक्कल्पनाओं को किसी प्रकार के अनुभवाश्रित परीक्षण के भीतर रखा जाए।

यदि सिद्धान्त–में–पर्याप्तता के इस प्रश्न का उत्तर किसी भी पक्ष के लिए सकारात्मक है तो हम शक्यता के प्रश्न को उठा सकते हैं: क्या (अनुभववादी स्थिति में) आगमनात्मक प्रक्रियाएँ, अथवा (तर्कवादी स्थिति में) वितरण की यांत्रिकी और अन्तर्जात समाकृतियों का रूपायन, समय और उपलब्धि के दिए नियामकों के भीतर और निर्गम की पर्यवेक्षित एकरूपता के परास के भीतर, व्याकरणों को उत्पन्न करने में सफल होंगे? वस्तुतः दूसरा प्रश्न कदाचित् ही अनुभववादी दृष्टिकोणों के संबंध में किसी गंभीरता से उठाया गया है (किन्तु देखिए, मिलर, गैलंटर (Galanter) और प्रिबरम (Pribram) 1960, पृष्ठ 145-148, और, मिलर

ग्रौर चॉम्स्की, 1963, पृ० 430 कुछ टिप्पणों के लिए)। क्योंकि प्रथम प्रश्न का अध्ययन भाषोपार्जन के ग्राधुनिक विवेचनों में तत्वत: अनुभववादी प्रकृति के जो कुछ सुस्पष्ट प्रस्ताव निकल सकते हैं, उन्हें व्यर्थ कर देता है। गंभीर अध्ययन के समर्थन में पर्याप्त सुस्पष्ट इने-गिने प्रस्ताव वे हैं जो वर्गीकरणात्मक भाषाविज्ञान के भीतर विकसित हुए हैं। यह लगभग संदेह से परे दिखाया जा चुका है कि शक्यता के किसी प्रश्न के ग्रतिरिक्त भी, वर्गीकरणात्मक भाषाविज्ञान में अधीत विधियाँ उस व्याकरणिक ज्ञान की व्यवस्थाग्रों को प्राप्त करने में अन्तर्निष्ठतया असमर्थ रही हैं जो भाषा के वक्ता के पास है (देखिए चॉम्स्की, 1956, 1957, 1964; पोटल 1962b, 1964a, 1964c; केट्स ग्रौर पोस्टल, 1964, § 5. 5, ग्रौर इन प्रश्नों के विवेचन के लिए अन्य अनेक प्रकाशन जो निरूत्तरणीय लगते हैं ग्रौर इस समय जिन्हें चुनौती नहीं दी गई है)। तो सामान्यतया मुझे यह कहना ठीक लगता है कि भाषोपार्जन के अनुभववादी सिद्धान्त, जहाँ कहीं वे स्पष्ट हैं, खंडन किए जा सकते हैं ग्रौर ग्रागे के अनुभववादी ऊहापोह पर्याप्त खोखले ग्रौर सूचनाहीन हैं। इसके विपरीत रचनांतरण व्याकरण के सिद्धान्त में हुए हाल के कार्यों से उदाहृत तर्कवादी उपागम पर्याप्त फलोत्पादक सिद्ध हुग्रा है, ग्रौर भाषा के संबंध में जो उपलब्ध जानकारी है उससे संगत है, ग्रौर भाषोपार्जन व्यवस्था की अन्तर्निष्ठ संरचना के विषय में ऐसी प्राक्कल्पना प्रदान करने की कम से कम कुछ ग्राशा देता है जो सिद्धान्त में पर्याप्तता के निर्धारक को पूरा करती है ग्रौर ऐसी रोचक एवं पर्याप्त मात्रा में संकुचित रीति से करती है कि शक्यता का प्रश्न, पहली बार, गंभीरता से उठाया जाता है।

भाषोपार्जन युक्ति के विषय में विशिष्ट प्राक्कल्पनाग्रों को परीक्षित करने के अन्य ढंग भी ढूँढे जा सकते हैं। वह सिद्धान्त जो भाषोपार्जन व्यवस्था में कुछ भाषाई सार्वभौमों की उपस्थिति को उपयुक्त बाह्य निर्धारकों के भीतर रूपबद्ध होने योग्य गुणधर्म मानता है यह अभिव्यंजना करता है कि इस युक्ति द्वारा केवल विशेष प्रकार की प्रतीकात्मक व्यवस्थाएँ भाषाग्रों के रूप में प्राप्त ग्रौर प्रयुक्त की जा सकती हैं। अन्य भाषोपार्जन क्षमता के परे हैं। ऐसी व्यवस्थाएँ भी निश्चयत: ग्राविष्कृत की जा सकती हैं जो उन रूपात्मक ग्रौर सत्तात्मक निर्धारकों को पूरा नहीं करती हैं जो उदाहरणार्थ याकोब्सन के परिच्छेदक-अभिलक्षण सिद्धान्त अथवा रचनांतरण-व्याकरण के सिद्धान्त में परीक्षणात्मक भाषा-सार्वभौम के रूप में प्रस्तावित किए गए हैं। सिद्धान्तत: कोई यह निर्धारित करने का प्रयत्न कर सकता है कि क्या इन निर्धारकों को पूरा न करने वाली आविष्कृत व्यवस्थाएँ भाषा-अधिगम के लिए अत्यधिक कठिन समस्याएँ प्रकट करती हैं और उस क्षेत्र के बाहर चली जाती हैं जिसमें भाषोपार्जन व्यवस्था अभिकल्पित की गई है। मूर्त उदाहरण के रूप में इस तथ्य पर

विचार करें कि रचनांतरण-व्याकरण के सिद्धान्त के अनुसार शृंखलाओं पर केवल कुछ प्रकार की ही रूपात्मक संक्रियाएँ व्याकरण में प्रकट हो सकती हैं—ये ऐसी संक्रियाएँ हैं जिनका आगे चलकर कोई प्रागनुभव औचित्य नहीं है। उदाहरण के लिए, स्वीकृत संक्रियाएँ किसी भी दृष्टि से सभी आविष्कृत संक्रियाओं में "सरल" और "आरंभिक" हैं, यह नहीं दिखाया जा सकता है। वस्तुतः जो सामान्यतया शृंखलाओं की "आरंभिक संक्रियाएँ" मानी गई हैं व्याकरणिक रचनांतरण बनने योग्य ही नहीं हैं, जबकि अनेक संक्रियाएँ जो इस योग्य हैं किसी भी सामान्य अर्थ में आरंभिक से बहुत दूर हैं। विनिर्दिष्टतया, व्याकरणिक रचनांतरण अवश्यतः इस अर्थ में "संरचना-सापेक्ष" हैं कि वे उपशृंखलाओं पर, कोटियों में उनके समनुदेशनों के शब्दों में ही, कार्य करते हैं। इस प्रकार एक ऐसा रचनांतरण व्यवस्थापित करना संभव है जो पूरी अथवा आंशिक सहायक क्रिया को अपने पूर्ववर्ती-संज्ञा-पदबंध के बायें अन्तः प्रविष्ट कर दें चाहे इन कोटियों की अधीन शृंखलाओं की लंबाई और आंतरिक जटिलता कैसी भी हो। फिर भी, यादृच्छिक शृंखला का प्रतिफलन (अर्थात् किसी भी शृंखला $a_i....a_n$ का जहाँ a_i एक एकल प्रतीक है, $a_n ... a_i$ द्वारा विस्थापन) अथवा यादृच्छिक लंबाई की शृंखला में सर्वत्र (2_{n-1}) के शब्द का 2_n वें शब्द द्वारा विनिमय, अथवा सम-लंबाई की शृंखला के बीच में प्रतीक का अन्तः प्रवेश जैसी सरल संक्रिया को रचनांतरण के रूप में व्यवस्थापित करना असंभव है। इसी प्रकार, यदि रचनांतरणों की परिभाषा देने वाला संरचनात्मक विश्लेषण, जैसा बाद में सुझाव दिया है, **विश्लेषणीयता** के बूलीय (Boolean) निर्धारकों तक सीमित है, तो अनेक "संरचना-सापेक्ष" संक्रियाओं को रचनांतरणों के रूप में व्यवस्थापित करना असम्भव होगा. जैसे, वह संक्रिया जो कोटि के सबसे बायें के सदस्य-प्रतीक को दोहराना (असम्भव, संरचनात्मक विश्लेषण में व्याकरण की सभी कोटियों को सूचीबद्ध करने की कमी), अथवा वह संक्रिया जो उस प्रतीक को जो, उतनी ही दाहिने की कोटियों का सदस्य है जितनी बायें ओर की कोटियों का, दोहराती है। अतएव इस सिद्धान्त के प्रतिपादक को यह पूर्व-कथित करना होगा कि यद्यपि एक भाषा प्रश्नवाचक को, उदाहरणार्थ, कुछ कोटियों के क्रम के विनियम से रचित कर सकती है (जैसे अंग्रेजी) वह प्रश्नवाचकों की रचना प्रतिफलन, सम तथा विषम-शब्दों के विनिमय अथवा वाक्य के मध्य में एक चिह्नक के अन्तःप्रवेश द्वारा नहीं कर सकती है। अनेक ऐसे अन्य पूर्वकथन, जिनमें से कोई भी, किसी भी प्रागनुभव अर्थ में स्पष्ट नहीं है, भाषा-सार्वभौमों के किसी पर्याप्त मात्रा में सुस्पष्ट सिद्धान्त द्वारा, जो भाषोपार्जन युक्ति में एक अन्तर्निष्ठ गुणधर्म के रूप में स्वीकार किया गया है, निगमन पद्धति द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों के अन्वेषण की अत्यधिक कठिन किन्तु झूठी आशाएँ देने वाली समस्या के कुछ

आरंभिक उपागमों के लिए देखिए मिलर और स्टेन (1963) मिलर और नार्मन (1964)।

यह द्रष्टव्य है कि जब हम यह स्वीकार करते हैं कि कोई व्यवस्था मानवीय क्षमताओं को प्रतिबिंबित करने वाली भाषोपार्जन युक्ति द्वारा सीखने योग्य नहीं है तो हमारा यह तात्पर्य नहीं होता है कि मानव के द्वारा यह व्यवस्था किसी अन्य रीति से, यदि उसे पहेली अथवा बौद्धिक अभ्यास के रूप में स्वीकार किया जाए, नहीं सीखी जा सकती है। समस्या-समाधान और धारणा-निर्माण पर प्रयोज्य बौद्धिक संरचनाओं की समग्र व्यवस्था का भाषोपार्जन-युक्ति केवल एक घटक है; दूसरे शब्दों में, भाषा-सामर्थ्य मन के अनेक सामर्थ्यों (facultede langage) में से एक है। किन्तु यह आशा की जाती है कि भाषासदृश व्यवस्थाओं और अन्य उपार्जन व्यवस्थाओं के साथ प्रकार्यात्मक भाषोपार्जन व्यवस्था रखने वाले मानव का उपागम और विवेचन गुणात्मक रूप से भिन्न होगा।

जीवी की अन्तर्निष्ठ प्रज्ञानात्मक क्षमताओं को प्रतिचित्रित करने और विश्वास-व्यवस्था को प्रत्यभिज्ञान करने की समस्या को और सहज प्राप्य व्यवहार के संगठन की समस्या को प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का केन्द्रीय बिन्दु बनना चाहिए। किन्तु यह क्षेत्र इस दिशा में विकसित नहीं हुआ है। अधिगम सिद्धान्त अधिकांश उस पर संकेंद्रित रहा है जो सीमांत-स्थित विषय अधिक लगता है, अर्थात् प्रयोग द्वारा परिवर्तनीय निर्धारकों के भीतर "व्यवहार-समूह" के एकांशों के उपार्जन में उपजाति निरपेक्ष नियमितताओं का प्रश्न। परिणामतः इसने आवश्यक रूप से अपना ध्यान उन कार्यों पर लगाया जो जीवी की प्रज्ञानात्मक क्षमताओं के बहिर्निष्ठ हैं—वे कार्य जो भ्रांत अप्रत्यक्ष, और खण्डशः रीति से किए जाने चाहिए। इस कार्य की अवधि में कुछ प्रसंगवश प्राप्त सूचनाएँ अन्तर्निष्ठ प्रज्ञानात्मक संरचना के प्रभाव और सीखे हुए पर व्यवहार के अन्तर्निष्ठ संगठन के विषय में प्राप्त हो गई हैं, किन्तु यह कदाचित् ही (आचारविज्ञान के बाहर) गंभीर ध्यान का केन्द्र रहा हो। इस पर्यवेक्षण के छुटपुट अपवाद (देखिए, उदाहरणार्थ, ब्रिलैंड और ब्रिलैंड, 1961 में "सहज प्रवृत्ति से संबद्ध विचलन" पर विवेचन) और इसी प्रकार छोटे जीवों पर किए आचार विज्ञानात्मक अध्ययन पर्याप्त सुझाव वाले हैं। सामान्य प्रश्न और उसके अनेक विस्तार, फिर भी, आदिम स्थिति में हैं।

संक्षेप में, यह स्पष्ट लगता है कि भाषा-अधिगम के अध्ययन विषयक वर्तमान स्थिति तत्वतः इस प्रकार है। हमारे पास प्रजनक-व्याकरणों के, जिन्हें भाषा के उपार्जन प्रतिमान का निर्गम अवश्य होना चाहिए, स्वभाव के सम्बन्ध में कुछ मात्रा में साक्ष्य है। यह साक्ष्य स्पष्टतया दिखाता है कि भाषाई संरचना के वर्गीकरणात्मक दृष्टिकोण अपर्याप्त हैं और भाषाविज्ञान, मनोविज्ञान और दर्शनशास्त्र में अभी तक

विकसित किसी प्रकार के सोपान आगमनात्मक संक्रियाओं (विखंडन वर्गीकरण, स्थानापत्ति प्रक्रियाएँ, ढाँचे में रिक्त स्थानों की पूर्ति, साहचर्य आदि) के अनुप्रयोग द्वारा व्याकरणिक संरचना का ज्ञान नहीं मिलता है। अतिरिक्त अनुभववादी ऊहापोह उस ओर किञ्चिन्मात्र योगदान नहीं देते हैं जो अभी तक प्रस्तावित और विस्तरित विधियों की अन्तर्निष्ठ परिसीमाओं को पार करने की विधि दिखा सके। विशेषतः, ऐसे ऊहापोहों ने कोई विधि नहीं दी है अथवा भाषा के प्रसामान्य प्रयोग के विषय में भी कोई आधारभूत तथ्य अभिव्यक्त नहीं किया है। यह तथ्य है—वक्ता में तुरन्त नये वाक्यों को जो किसी भी भौतिकतया परिभाषित अर्थ में अथवा तत्वों के वर्गों अथवा सांचों के संप्रत्ययों के शब्दों में पहले सुने गए वाक्यों के सदृश नहीं हैं, बोलने और समझने की योग्यता। ये नये वाक्य पहले सुने वाक्यों से प्रतिबन्धन द्वारा भी सहचरित नहीं हैं और न मनोविज्ञान और दर्शन में विदित किसी "सामान्यीकरण" से प्राप्य हैं। यह स्पष्ट लगता है कि भाषोपार्जन बच्चे के उस खोज पर आधारित है जो रूपात्मक दृष्टिकोण से एक गहन और अमूर्त सिद्धान्त है–अपनी भाषा का प्रजनक-व्याकरण–जिसके अनेक संप्रत्यय और सिद्धान्त अचेतन व अर्ध-अनुमानजन्य सोपानों की लम्बी और जटिल श्रृंखलाओं द्वारा अनुभव से केवल बहुत दूरी से संबद्ध हैं। उपार्जित व्याकरण की प्रकृति की विचारणा, उपलब्ध सामग्री की गिरी हुई गुणता और संकुचिततया सीमित सीमा, तज्जन्य व्याकरणों की उल्लेखनीय एकरूपता और परिवर्तनों के बड़े परास में बुद्धि, अभिप्रेरण और संवेगात्मक अवस्था से उनका स्वातन्त्र्य—इन सबसे इसकी कोई आशा नहीं रहती कि भाषा की संरचना का अधिकांश ऐसे प्राणी द्वारा सीखा जा सकता है जो प्रारम्भतः उसकी सामान्य प्रकृति से अपरिचित है।

वर्तमान में आरम्भिक अन्तर्जात संरचना के सम्बन्ध में ऐसा अभिग्रह व्यवस्थापित करना असंभव है जो इस तथ्य को, कि व्याकरणिक ज्ञान सीखने वाले को उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर प्राप्त होता है, व्याख्यात करने के लिए पर्याप्त समृद्ध हो। परिणामतः, अनुभववादियों का यह दिखाने का प्रयत्न कि भाषोपार्जन युक्ति के विषय में किस प्रकार अभिग्रह **धारणात्मक न्यूनतम**[33] में न्यूनीकृत हो जाते हैं, बिलकुल व्यर्थ का है। वास्तविक समस्या आरम्भिक संरचना के विषय में ऐसी प्राक्कल्पना विकसित करने की है जो भाषा के उपार्जन को व्याख्यात करने में पर्याप्त समृद्ध हो। किन्तु इतनी समृद्ध न हो कि भाषा की विदित विविधता से असंगत हो जाए। यह कोई चिन्ता का विषय नहीं है और केवल ऐतिहासिक रुचि का है कि ऐसी प्राक्कल्पना स्पष्टतया सदियों के अनुभववादियों के सिद्धान्त से प्राप्त अधिगम विषयक पूर्वधारणाओं को सतुष्ट नहीं कर सकती। ये पूर्वधारणाएँ प्रथमतः न केवल बिलकुल अविश्वास्य हैं बल्कि बिना तथ्यात्मक पुष्टि के हैं और उससे कदाचित् ही संगत हैं जो थोड़ा

बहुत हमें मालूम है कि पशु और मानव किस प्रकार "बाह्य संसार का सिद्धान्त" बनाते हैं।

यह स्पष्ट है कि यह दृष्टिकोण कि सभी ज्ञान एक मात्र ज्ञानेन्द्रियों द्वारा साहचर्य और "सामान्यीकरण" की आरम्भिक संक्रियाओं द्वारा प्राप्त होता है, वैज्ञानिक प्रकृतिवाद के लिए किए अठारहवीं सदी के संघर्षों के प्रसंग में अत्यधिक लोकप्रिय रहा है। किन्तु, आज इस स्थिति को गंभीरतया स्वीकार करने का निश्चयत: कोई कारण नहीं है। यह स्थिति जटिल मानवीय उपलब्धि को पूर्णतया महीनों (अथवा बहुत हुआ तो वर्षों) के अनुभव की देन मानता है, न कि उद्‌विकास के सहस्रों वर्षों की, अथवा स्नायुपरक संगठन के सिद्धान्तों को जो कि भौतिक नियमों में और अधिक गहराई से जमे हुए हैं। इसके अतिरिक्त यह स्थिति इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि मनुष्य प्रकटतया अन्य प्राणियों से इस अर्थ में अनन्य है कि वह ज्ञान का उपार्जन करता है। यह स्थिति विशिष्टतया भाषा के साथ अविश्वास्य है जो कि बच्चे के संसार का मानव सृजित पक्ष है और स्वाभाविकतया उससे यह आशा की जाती है कि वह अपने आंतरिक संगठन में अन्तर्निष्ठ मानव क्षमता को प्रतिफलित करता है।

संक्षेप में, विशिष्ट भाषाओं की संरचना उन कारकों द्वारा अधिकतया अच्छी तरह निर्धारित की जा सकती है जिस पर एकाकी व्यक्ति का कोई सचेतन नियन्त्रण नहीं है और जिसके सम्बन्ध में, समाज को कदाचित् ही चयन-विकल्प और स्वतन्त्रता है। इस समय उपलब्ध सर्वश्रेष्ठ सूचना के आधार पर यह तर्कसंगत लगता है कि बच्चे को अपने सामने प्रस्तुत सामग्री को स्पष्ट करने के लिए प्रजनक-व्याकरण का कोई विशेष रूप रचित करना होता है, और यह उसी प्रकार है जिस प्रकार वह ठोस पदार्थों के प्रत्यक्षण और रेखाओं एवं कोणों के प्रति ध्यान को नियन्त्रित नहीं कर सकता। इस प्रकार वह ठीक ही होगा कि भाषा संरचना के सामान्य अभिलक्षण अपने अनुभवों की क्रियाविधि को उतना प्रतिफलित नहीं करे जितना ज्ञानोपार्जन की निजी क्षमता के सामान्य स्वरूप को। यह मुझे लगता है कि इस विवादास्पद प्रश्न को स्पष्ट करने और उसको अनेक पक्षों को समझने की समस्या वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरणों के अध्ययन के लिए और इससे आगे, व्याख्यात्मक पर्याप्तता के निर्धारक को पूर्ण करने वाले सामान्य भाषाई सिद्धान्त के व्यवस्थापन और औचित्य के लिए सर्वाधिक रोचक और महत्वपूर्ण कारण प्रदान करती है। इस गवेषणा को बढ़ाने की हम इस पारस्परिक विश्वास को कुछ वास्तविक सारसत्व देने की आशा कर सकते हैं कि व्याकरण के सिद्धान्त मानव-मन में सम्बद्ध दर्शन का एक महत्वपूर्ण और अत्यन्त कुतूहलजनक भाग है"। (विएटी, 1788)

§9. प्रजनक क्षमता और उसका भाषाई प्रसंगौचित्य

पिछले कुछ अनुभागों में चर्चित विषयों के सम्बन्ध में एक अतिरिक्त प्रणालीगत पर्यवेक्षण करना लाभदायक होगा। भाषाई संरचना के एक वर्णनात्मक सिद्धान्त देने पर[34] हम **दुर्बल प्रजनक क्षमता** को **सबल प्रजनक क्षमता** से निम्नलिखित रीति से प्रभिन्न कर सकते हैं। हम कह सकते हैं कि एक व्याकरण वाक्यों को दुर्बलतया और संरचनात्मक वर्णनों के समुच्चय (यह ध्यातव्य है कि प्रत्येक संरचनात्मक वर्णन अनन्यतया वाक्य को विनिर्दिष्ट करता है, किन्तु विपरीत आवश्यक नहीं है) को सबलतया प्रजनित करता है जहाँ दुर्बल और सबल दोनों प्रजनन (12 iv) = (13 iv) = (14 iv) की प्रक्रिया f द्वारा निर्धारित होता है। मान लीजिए भाषाई सिद्धान्त T व्याकरणों G_1 G_2...... के वर्ग को देता है जहाँ G_i भाषा L_i को दुर्बलतया प्रजनित करता है और संरचनात्मक वर्णन Σ_i को सबलतया प्रजनित करता है। तब वर्ग $\{L_1 \ L_2 \cdots\}$ सिद्धान्त की **दुर्बल प्रजनक क्षमता** को संविहित करता है और वर्ग $\{\Sigma_1, \Sigma_2 \cdots\cdots\}$ सिद्धान्त T की सबल प्रजनक क्षमता को सविहित करता है।[35]

सबल प्रजनक क्षमता का अध्ययन, परिभाषित अर्थ में, वर्णनात्मक पर्याप्तता के अध्ययन से सम्बद्ध है। व्याकरण वर्णनात्मक रूप से पर्याप्त है यदि वह संरचनात्मक वर्णनों के सही समुच्चय को सबलतया प्रजनित करता है। सिद्धान्त वर्णनात्मक रूप से तब पर्याप्त होता है जब उसकी सबल प्रजनन क्षमता के भीतर प्रत्येक स्वाभाविक भाषा के लिए संरचनात्मक वर्णनों की व्यवस्था आती है, अन्यथा, वह वर्णनात्मक रूप से अपर्याप्त है। सबल प्रजनक क्षमता की अपर्याप्तता अनुभवाश्रित आधारों पर यह प्रदर्शित करती है कि भाषाई सिद्धान्त में कोई गंभीर दोष है। किन्तु जैसा हमने पर्यवेक्षण किया है कि भाषाई सिद्धान्त, जो सबल प्रजनक क्षमता की दृष्टि से अनुभवाश्रित रूप से पर्याप्त दिखाई पड़ता है, किसी विशेष सैद्धान्तिक रुचि का हो ऐसा आवश्यक नहीं है क्योंकि व्याख्यात्मक पर्याप्तता का महत्वपूर्ण प्रश्न प्रजनक क्षमता की किसी भी विचारणा से परे है।

दुर्बल प्रजनक क्षमता का अध्ययन सीमान्तवर्ती भाषाई रुचि का है। यह केवल उन्हीं स्थितियों में महत्वपूर्ण है जहाँ प्रस्तावित सिद्धान्त दुर्बल प्रजनक क्षमता में भी असफल हो रहा हो—अर्थात् जहाँ कोई ऐसी स्वभाविक भाषा हो जिसके वाक्य भी इस सिद्धान्त द्वारा स्वीकृत किसी व्याकरण से गणनीय न हो सके। वस्तुत: यह दिखाया जा चुका है कि कुछ पर्याप्त आरम्भिक सिद्धान्तों मे भी (विशेषतया, प्रसंग-निरपेक्ष पदबन्ध-संरचना व्याकरण का सिद्धान्त और दुर्बल परिमिति-स्थिति-व्याकरण का सिद्धान्त) स्वाभाविक भाषा के वर्णन के लिए अपेक्षित दुर्बल प्रजनक क्षमता नहीं मिलती और इस प्रकार विशिष्टतया आश्चर्यजनक रीति से[36] पर्याप्तता के अनुभवाश्रित परीक्षण भी असफल हो जाएँगे। इस पर्यवेक्षण से हमें यह निष्कर्ष अवश्य

निकालना चाहिए कि जैसे-जैसे भाषाई सिद्धान्त व्याकरणिक संरचना के पर्याप्त संप्रत्यय की ओर बढ़ते हैं, वैसे-वैसे उसे उन दुर्बल प्रजनक क्षमता वाली युक्तियों को स्वीकार करना होगा जो किन्हीं दृष्टियों में उन गंभीर तथा दोषपूर्ण व्यवस्थाओं की तत्सम क्षमता से भिन्न है।

किन्तु यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि इन व्यवस्थाओं का आधारभूत दोष दुर्बल प्रजनक क्षमता में उनकी परिबद्धता नहीं है बल्कि सबल प्रजनक क्षमता की अनेक अपर्याप्तताएँ हैं। पोस्टल के इस प्रदर्शन के पूर्व, कि प्रसंग निरपेक्ष व्याकरण (सामान्य पदबन्ध सरचना व्याकरण) दुर्बल प्रजनक क्षमता में असफल होता है, इस सिद्धान्त की सबल प्रजनक क्षमता के विषय में आधे दर्जन से अधिक वर्षों के विवेचन थे, जिन्होंने निष्कर्ष रूपेण यह दिखा दिया कि यह सिद्धान्त वर्णनात्मक पर्याप्तता नहीं पा सकता है। इसके अतिरिक्त, सबल प्रजनक क्षमता की ये परिसीमाएँ प्रसंगसापेक्ष पदबन्ध व्याकरण के सिद्धान्त तक पहुँच जाती हैं जो कि कदाचित् दुर्बल प्रजनक क्षमता में असफल नहीं हैं। संभवतः,दुर्बल प्रजनक क्षमता का विवेचन प्रजनक-व्याकरण के अध्ययन की अत्यधिक प्रारम्भिक और आदिम चरण को ही चिह्नित करता है। वास्तविक भाषाई रुचि के प्रश्न तभी उठते हैं जब सबल प्रजनक क्षमता (वर्णनात्मक पर्याप्तता), और अधिक महत्व के साथ, व्याख्यात्मक पर्याप्तता विवेचन का केन्द्र बनता है।

जैसा पहले देखा था, पूर्णतया पर्याप्त सिद्धान्त के विकास में एक निर्णायक कारक संभव व्याकरणों के वर्ग की परिसीमा है। स्पष्टतया इस परिसीमा को ऐसा होना चाहिए कि वह सबल (और प्रबलता युक्ति से दुर्बल) प्रजनक क्षमता के अनुभवाश्रित निर्धारकों को पूरा कर सके और इसके अतिरिक्त,उपर्युक्त मूल्यांकन माप के विकसित होने पर व्याख्यात्मक पर्याप्तता के निर्धारक को पूरा होने दे। किन्तु इसके आगे, समस्या इस समाकृति पर पर्याप्त संरचना अध्यारोपित करने की है जो "प्रजनक-व्याकरण" को परिभाषित करती है, ताकि प्राथमिक भाषाई सामग्री मिलने पर मूल्यांकन माप द्वारा अपेक्षाकृत कुछ प्राक्कलनाएं परीक्षित हो सकें। हम ऐसी प्राक्कलनाएँ पसंद करेंगे जो मूल्य में "प्रकीर्ण" स्थिर सामग्री से सगत हों ताकि उनमें अपेक्षाकृत सरलता से चयन किया जा सके। किसी सिद्धान्त पर, वर्णनात्मक और व्याख्यात्मक पर्याप्तता के निर्धारकों के पूरे हो जाने पर, प्रमुख अनुभवाश्रित नियामक "शक्यता" की अपेक्षा है। गणितीय प्रश्नों के रूप में जब दुर्बल और सबल प्रजनक क्षमताओं के सिद्धान्तों का अध्ययन किया जाए तब व्याख्यात्मक पर्याप्तता और "शक्यता" की अपेक्षाओं को ध्यान में रखना चाहिए। इस प्रकार दुर्बल और सबल प्रजनक क्षमता के शब्दों में व्याकरणिक सिद्धान्तों के सोपान-क्रम रचित किए जा सकते हैं किन्तु यह ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि ये सोपान क्रम

अवश्यत: उसके अनुरूप नहीं होते हैं जो कदाचित् भाषाई सिद्धान्त की वर्धमान शक्ति का अनुभवाश्रित रूप से सर्वाधिक महत्वपूर्ण आयाम है। इस आयाम को संभवत:, स्थिर सामग्री से संगत व्याकरणों के मूल्य में "प्रकीर्णता" के शब्दों में परिभाषित करना चाहिए। इस अनुभवाश्रित महत्वपूर्ण आयाम में हम सबसे कम "शक्ति शाली" सिद्धान्त को स्वीकार करना चाहेंगे जो अनुभवाश्रित रूप से पर्याप्त हो।

संभवत: यह बाद में निकल आ सकता है कि यह सिद्धान्त दुर्बल प्रजनक क्षमता के आयाम में और सबल प्रजनक क्षमता के आयाम में भी अत्यधिक "शक्तिशाली" हो (कदाचित् सार्वत्रिक भी हो, अर्थात् ट्यूरिंग मशीनों के सिद्धान्त[37] से प्रजनक क्षमता में समतुल्य हो) इससे यह अवश्यत: निष्कर्ष नहीं निकालता कि वह उस आयाम में सर्वाधिक शक्तिशाली (और इस कारण कम करने योग्य) है जो अन्ततः वास्तविक अनुभवाश्रित महत्ता का है।

संक्षेप में, व्याकरणों के रूपात्मक गुणधर्मों का गणितीय अध्ययन बहुत संभावना के साथ भाषाविज्ञान का अधिक संभाविता वाला क्षेत्र है। इससे अनुभवाश्रित-रुचि के प्रश्नों को कुछ अन्तर्दृष्टि भी मिल चुकी है और कदाचित् भविष्य में यह अधिक गहन अन्तर्दृष्टियों को देगा। किन्तु यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस समय अधीयमान प्रश्न मुख्यत: गणितीय अध्ययन की संभावना से निर्धारित होते हैं और यह भी महत्वपूर्ण है कि इसको अनुभवाश्रित रूप से सार्थकता के प्रश्न के साथ संभ्रमित न करें।

2

वाक्यविन्यासीय सिद्धान्तों में कोटियाँ ग्रौर संबंध

§ 1. आधार का क्षेत्र

एक प्रजनक-व्याकरण किस प्रकार संगठित होता है इसका संकेत अध्याय 1 § 3 में दिया गया था। अब हम उसे विस्तृत और परिष्कृत करने की समस्या पर विचार करेंगे। व्याकरणिक रचनांतरणों के पूर्वतर वर्णनों में कितनी पर्याप्तता थी इस प्रश्न को अगले अध्याय के लिए स्थगित करते हुए, यहाँ हम वाक्यविन्यासीय घटक के आधार के रूपीय गुणधर्मों पर ही विचार करेंगे। अतएव, हमारा मुख्य सम्बन्ध अत्यन्त सरल वाक्यों से है।

यह उपयुक्त होगा यदि प्रजनक-व्याकरण की गवेषणा का प्रारम्भ हम पारम्परिक व्याकरण में किन प्रकारों की सूचनाएँ दी गई हैं इसके सावधानी से किए विश्लेषण द्वारा करें। इसे एक अन्वेषणात्मक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करते हुए, निम्नलिखित जैसे सरल अंग्रेजी वाक्य के सम्बन्ध में पारम्परिक व्याकरण क्या कहता है, इस पर विचार करेंगे :

(1) Sincerity may frighten the boy
(ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है)
इस वाक्य के सम्बन्ध में पारम्परिक व्याकरण निम्न प्रकार की सूचना देगा :

(2) (i) श्रृंखला (1) एक वाक्य (S वा.) है : frighten the boy (लड़के को भयभीत करना) एक क्रिया-पदबन्ध (VP क्रि. प.) है जिसके घटक क्रिया (V क्रि.) frighten (भयभीत करना) और संज्ञा पदबन्ध (N. P. सं. प.) the boy (लड़का) है; sincerity (ईमानदारी) भी एक (N.P. सं. प.) है; संज्ञापदबन्ध the boy (लड़का) के घटक निर्धारक (Det नि.) the और पश्चवर्ती संज्ञा (N. सं.) boy (लड़का) है; संज्ञापदबन्ध

sincerity (ईमानदारी) में केवल एक N (सं.) है; पुनश्च the एक 'आर्टिकिल' (Art आ.) है; may (सकना) एक क्रिया-सहायक (Aux सहा.) है और एक प्रकारक (modal) (M प्र.) भी है।

(ii) (NP सं. प.) sincerity (ईमानदारी) (वाक्य (1) का उद्देश्य है, जबकि (VP क्रि.प.) frighten the boy (लड़के को भयभीत करना) इस वाक्य का विधेय है, (NP सं. प.) the boy, (लड़का) (VP क्रि. प.) का कर्म है और (क्रि. V) frighten (भयभीत करना) उसकी मुख्य क्रिया है, व्याकरणिक सम्बन्ध उद्देश्य-क्रिया युग्म (sincerity, frighten ईमानदारी, भयभीत करना) को बाँधता है और व्याकरणिक सम्बन्ध क्रिया-कर्म युग्म (frighten, the boy भयभीत करना, लड़का) को बाँधता है।[1]

(iii) N (सं.) boy (लड़का) एक गणनीय संज्ञा (राशि संज्ञा butter (मक्खन) और भाववाची संज्ञा (sincerity ईमानदारी) से प्रभिन्न) और एक जातिवाचक संज्ञा (व्यक्तिवाचक संज्ञा John (जॉन) और सर्वनाम it (यह) से प्रभिन्न) है; पुनश्च यह एक चेतन संज्ञा (अचेतन book (पुस्तक) से प्रभिन्न) और एक मानव-संज्ञा (मानवेतर bee (मधु मक्खी) से प्रभिन्न) है; frighten (भयभीत करना) एक सकर्मक क्रिया (अकर्मक occur (घटित होना) से प्रभिन्न) है और ऐसी क्रिया है जिसके कर्म का प्राय: लोपन नहीं होता है (read, eat पढ़ना, खाना) आदि से प्रभिन्न); और यह स्वतन्त्रता से घटमान पक्ष (know, own) (जानना, स्वामित्व रखना) से प्रभिन्न) लेती है और भाववाची कर्ताओं (eat, admire खाना, प्रशंसा करना) से प्रभिन्न) तथा मानव कर्मों को (read, wear पढ़ना, पहनना से प्रभिन्न) लेती है।

मुझे ऐसा लगता है कि (2) में प्रस्तुत सूचना निस्सन्देह तत्वत: सही है और भाषा किस प्रकार प्रयुक्त की जाती है अथवा अर्जित की जाती है इसके किसी भी वर्णन के लिए अनिवार्य है। मेरा मुख्य विचारणीय विषय यह है कि एक संरचनात्मक वर्णन में उपर्युक्त प्रकार की सूचना किस प्रकार रूपीय दृष्टि से प्रस्तुत की जा सकती है और किस प्रकार सुव्यक्त नियमों की व्यवस्था से ऐसा संरचनात्मक वर्णन प्रजनित हो सकता है। अगले तीन उपविभागों में (§§ 2.1, 2.2, 2.3 में) क्रमश: 2 (i), 2(ii), और 2(iii) से संबद्ध इन प्रश्नों का विवेचन है।

§ 2. गहन संरचना के पक्ष

§ 2.1 कोटिकरण

2(i) में दिए टिप्पणों का सम्बन्ध श्रृंखला (1) की उन अविच्छिन्न उपश्रृंखलाओं

के उपविभाजन से है जिनमें से प्रत्येक एक विशिष्ट कोटि द्वारा समनुदेशित की जाती हैं। इस भाँति की सूचना (1) के एक नामांकित कोष्ठन द्वारा निरूपित की जा सकती है, अथवा समतुल्यतया (3) से प्रदर्शित एक वृक्ष-आरेख द्वारा निरूपित की जा सकती है। ऐसे आरेख का निर्वचन स्पष्ट है, और प्रायः अन्यत्र विवेचित हो चुकी है। यदि कोई मानकर चलता है
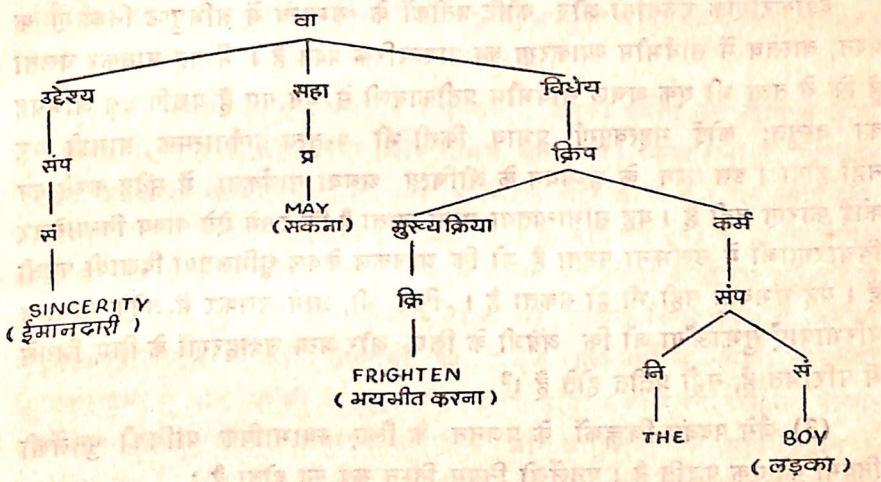
कि (1) एक आधारभूतश्रृंखला है तो (3) से निरूपित संरचना उसके (आधार) पदबंध-चिह्नक का प्रथम सन्निकटन माना जा सकता है।

एक व्याकरण जो कि (3) के समान सरल पदबंध-चिह्नकों को प्रजनित करता है प्रतीकों की एक शब्दावली पर आधारित होता है। शब्दावली के अन्तर्गत रचनांग (the, boy आदि) और कोटि-प्रतीक (S, N, P, V (वा. सं. प. क्रि.) आदि) दोनों आते हैं। पुनश्च रचनांग के दो उपविभाजन हो सकते हैं—कोशीय एकांश (Sincerity, boy ईमानदारी, लड़का आदि) और व्याकरणिक एकांश (घटित, संबंधक, आदि) (उक्त सरलीकृत उदाहरण में कदाचित् the को छोड़कर कोई भी व्याकरणिक एकांश निरूपित नहीं हुआ है)।

एक प्रश्न तुरन्त उठता है कि पदबंध-चिह्नकों के प्रतीकों के चयन का क्या आधार है। अर्थात् प्रष्टव्य यह है कि पदबंध-चिह्नकों में प्रयुक्त रचनांग और कोटि-प्रतीक क्या भाषा विशेष से निरपेक्ष हैं या विशिष्ट व्याकरण से परिबद्ध केवल सुविधाजनक स्मरणोपयोगी संकेत हैं।

कोशीय रचनांगों के सम्बन्ध में, स्वनात्मक परिच्छेदक अभिलक्षणों के सिद्धान्त को यदि स्वनप्रक्रियात्मक निरूपण की स्थितियों के पूरे समुच्चय के साथ देखा जाए तो प्रतीकों के चयन को वस्तुतः भाषा-निरपेक्ष महत्ता मिलती है, यद्यपि इस तथ्य को

स्थापित करना (अथवा अभिपुष्ट स्वनात्म लक्षणों के उपयुक्त सार्वभौम समुच्चयों का चयन) किसी भी भाँति एक तुच्छ समस्या नहीं है। आगे की चर्चा के लिए यह मैं मानकर चलूँगा कि इस प्रकार का एक उपयुक्त स्वन-प्रक्रियात्मक सिद्धान्त स्थापित हो चुका है और फलतः कोशीय रचनांग एक अचल सार्वभौम समुच्चय से सुपरिभाषित विधि द्वारा चुने गए हैं।

व्याकरणिक रचनांगों और कोटि-प्रतीकों के सम्बन्ध में अभिपुष्ट निरूपण क प्रश्न, वास्तव में सार्वभौम व्याकरण का पारम्परिक प्रश्न है। मैं यह मानकर चलता हूँ कि ये तत्व भी एक अचल सार्वभौम प्रतीकावली से चुने गए हैं यद्यपि इस अभिग्रह का वस्तुतः कोई महत्वपूर्ण प्रभाव किसी भी प्रस्तुत्य वर्णनात्मक सामग्री पर नहीं होगा। इस प्रश्न के अध्ययन के औचित्य अथवा सार्थकता में संदेह करने का कोई कारण नहीं है। यह सामान्यतया माना जाता है कि इसमें ऐसे वाक्य विन्यासेतर विचारणाओं में उलझना पड़ता है जो कि आजकल केवल धूमिलतया दिखायी पड़ती हैं। यह संभवतः सही भी हो सकता है। फिर भी, आगे चलकर मैं अनेक सामान्य परिभाषाएँ सुझाऊँगा जो कि अंग्रेजी के लिए और अन्य उदाहरणों के लिए जिससे मैं परिचित हूँ, सही प्रतीत होते हैं।[2]

(3) जैसे पदबंध-चिह्नकों के प्रजनन के लिए स्वाभाविक यांत्रिकी पुनर्लेखी नियमों की एक पद्धति है। पुनर्लेखी नियम निम्न रूप का होता है :

(4) $A \rightarrow Z/X-Y$

जहाँ X और Y (संभवतः शून्य) प्रतीक शृंखला है, A एक एकल कोटि-प्रतीक है, और Z एक शून्येतर प्रतीक शृंखला है। इस नियम का निर्वचन इस प्रकार होता है कि कोटि A शृंखला Z में रूपित होती है, जब वह एक ऐसे परिवेश में है कि उसके बाएँ X और दाहिने Y है। एक शृंखला····XAY····पर पुनर्लेखी नियम लगाने से····XZY····शृंखला प्रतिरूपित होती है। यदि एक व्याकरण दिया जाए तो हम यह कहेंगे कि शृंखलाओं का एक अनुक्रम, V का W व्युत्पादन है, यदि अनुक्रम में W पहले और V अन्तिम शृंखला है और अनुक्रम की प्रत्येक शृंखला अपने पूर्ववर्ती से पुनर्लेखी नियमों में से किसी एक से व्युत्पन्न होती है (क्रमीय निर्धारक बाद में जोड़ा जाएगा)। जहाँ V रचनांगों की एक शृंखला है वहाँ हम कहते हैं कि V का W व्युत्पादन अन्तिम है। हम V को अन्तिम शृंखला कहते हैं यदि#V#का एक#S#व्युत्पादन है, जहाँ कि S को व्याकरण का आद्य प्रतीक लक्षित किया जाता है (S कोटि वाक्य को निरूपित करता है) और#एक सीमा प्रतीक (जो कि एक व्याकरणिक प्रतीक माना जाता है) लक्षित किया जाता है। इस प्रकार #शृंखला से प्रारम्भ कर व्याकरण के पुनर्लेखी नियमों को एक के बाद एक प्रयुक्त

करते हुए हम अंतिम शृंखला का व्युत्पादन तबतक सिद्ध करते हैं जबतक कि व्युत्पादन की अंतिम शृंखला में केवल रचनांग न रह जाएँ और उसके आगे कोई पुनर्लेखी नियम लगना असंभव न हो जाए। यदि पुनर्लेखी नियमों की पद्धति पर अनेक अन्य निर्धारक लगाए जाते हैं[3] तो, व्युत्पादन देने पर, अंतिम शृंखला के लिए अनन्य और उपयुक्त पदबंध-चिह्नक समनुदेशित करने की एक सरल विधि मिल जाती है। इस प्रकार पुनर्लेखी नियमों की पद्धति, उपयुक्त प्रतिबंधों के साथ, प्रजनक-व्याकरण के एक अंग के रूप में काम कर सकती है।

पुनर्लेखी नियमों का एक क्रमहीन समुच्चय, जिसका प्रयोग उस रीति से होता है जिसका वर्णन यहाँ शिथिलतया (और अन्यत्र सूक्ष्मतया) किया गया है, अवयव-संरचना व्याकरण अथवा पदबंध-संरचना व्याकरण कहा जाता है। यह व्याकरण, तत्पश्चात, प्रसंग निरपेक्ष अथवा सरल कहा जाता है, यदि रूप (4) के प्रत्येक नियम में X और Y शून्य हैं, और फलतः ये नियम प्रसंग की उपेक्षा करते हुए प्रयुक्त होते हैं। जैसाकि पहले (पृ. 55 और पश्चात्, 208 में) उल्लेख किया गया है, अवयव संरचना व्याकरणों के रूपीय गुणधर्मों का पिछले कुछ वर्षों में पर्याप्त सघनतया अध्ययन हुआ है और यह भी दिखाया गया है कि प्रायः सभी रचनांतरणेतर वाक्य-विन्यास-सिद्धान्त, जो कि आधुनिक सैद्धांतिक और आनुप्रायोगिक भाषाविज्ञान में विकसित हुए हैं, इसी ढाँचे में आते हैं। वस्तुतः, ऐसी व्यवस्था प्रकटतया वही है जो कि आधुनिक वर्गीकरणात्मक (संरचनावादी) व्याकरणों में अन्तर्निहित है, बशर्ते ये व्याकरण व्याकरणिक सूचना देने के लिए सुव्यक्त पद्धतियों के रूप में पुनर्निरूपित होते हैं (किन्तु देखिए, टिप्पणी 30, अध्याय 1)। प्राकृतिक भाषाओं के लिए व्याकरणों के रूप में ऐसी पद्धतियों की अपर्याप्तता, मुझे लगता है, एक सीमा तक यथोचित संशय से परे स्थापित हो चुकी है[4], और उस प्रश्न का विवेचन हम यहाँ नहीं करेंगे।

यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि कुछ प्रकार की सूचनाएँ पुनर्लेखी नियमों की पद्धति द्वारा सर्वाधिक स्वाभाविक रीति से प्रस्तुत होती हैं, और इस कारण हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि पुनर्लेखी नियम वाक्यविन्यासीय घटक के आधार के अंग बनते हैं। इसके अतिरिक्त हम यह मानकर चलेंगे कि ये नियम रेखीय अनुक्रम में क्रमबद्ध होते हैं और आनुक्रमिक व्युत्पादन की इस प्रकार परिभाषा देंगे कि वह ऐसा व्युत्पादन है जो इस क्रमबंध को बनाए रखने वाले नियम प्रयोगों की श्रेणी से निर्मितहोते हैं। इस प्रकार मान लिजिए कि व्याकरण के अन्तर्गत नियमों का अनुक्रम $R_1; R_2, R_n$ है और अनुक्रम $\#S\#, \#X_1\#, \#X_2\#, \#X_m$ अत्यंत शृंखला X_m का व्युत्पादन है। यदि यह आनुक्रमिक व्युत्पादन है तो यदि नियम R_i अपनी

पूर्ववर्ती पंक्ति #Xj# बनाने में प्रयुक्त हुआ है, तो कोई भी नियम R_k (जहाँ $K>i$), पंक्ति #Xl# (जहाँ $l<j$) के बनाने में जो, पंक्ति #Xl_{-1}# से बनी है, काम में नहीं आया होगा। हम अनुबंध लगाते हैं कि आधार के इस अंग में प्रयुक्त नियमों के अनुक्रम द्वारा केवल आनुक्रमिक व्युत्पादन प्रजनित होते हैं।[5]

(3) के समान पदबंध-चिह्नक को प्रस्तुत करने के लिए आधार घटक के अंतर्गत निम्नलिखित पुनर्लेखी नियमों का अनुक्रम हो सकता है :

5 (1) S→ NP⁀AuX⁀VP (वा→ संप.⁀सहा.⁀क्रिप.)
VP→ V⁀NP (क्रिप→ क्रि.⁀संप.)
NP→ Det⁀N (संप→ नि.⁀सं.)
NP→ N (संप→ सं.)
Det→ *the* (नि.→ *the*)
Aux→ M (सहा.→ प्र.)

(II) M (प्र.)→ may (सकना)
N (सं.)→ sincerity (ईमानदारी)
N (सं.)→boy (लड़का)
V (क्रि.)→frighten (भयभीत करना)

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि नियम (5), यद्यपि वे (3) को प्रजनित करने में पर्याप्त हैं, boy may frighten the sincerity, (लड़का ईमानदारी को भयभीत कर सकता है) जैसे नियमच्युत शृंखलाओं को भी प्रजनित कर देते हैं। यह एक समस्या है जिस पर हम आगे § 2.3 में विचार करेंगे।

(5) में कोशीय रचनांगों (वर्ग II) को सर्वप्रथम प्रस्तुत करने वाले नियमों में और अन्य नियमों में स्वाभाविक अन्तर स्पष्ट है। वस्तुत: हम § 2.3 में देखेंगे कि इन समुच्चयों में भेद रखना हमारे लिए आवश्यक है और हमें कोशीय नियमों को वाक्यविन्यासीय-घटक के आधार पर प्रभिन्न उप-भाग में रखना होगा।

(2i) में दो संरचना के सम्बन्ध में हम स्पष्टतया देखते हैं कि यह किस प्रकार रूपात्मक रूप से निरूपित होती है, और इन निरूपणों को प्रजनित करने के लिए किस प्रकार के नियम काम में आते हैं।

§ 2·2 प्रकार्यात्मक संप्रत्यय

(2ii) पर विचार करने पर हम तुरन्त देख सकते हैं कि विवेच्य संप्रत्ययों की नितान्त भिन्न प्रास्थिति है। संप्रत्यय "उद्देश्य" जोकि संप्रत्यय (संप.NP)से नितांत भिन्न हैं, **व्याकरणिक प्रकार्य** को अभिहित करता है न कि **व्याकरणिक कोटि** को।

दूसरे शब्दों में यह मूलतः संबंधीय संप्रत्यय है। पारंपरिक शब्दों को हम कह सकते हैं कि (1) में sincerity (ईमानदारी) एक NP (संप.) है (न कि वह वाक्य का NP (संप.) है और वह वाक्य का 'उद्देश्य' है (अर्थात् 'उद्देश्य' का कार्य करता है) न कि वह 'उद्देश्य' है (बिना वाक्य का उल्लेख किए)। प्रकार्यात्मक संप्रत्यय जैसे, उद्देश्य, विधेय को स्पष्टतया कोटीय संप्रत्ययों, जैसे NP (संज्ञा पदबंध), Verb (क्रिया) आदि से भिन्न समझना चाहिए, और यह अन्तर बना ही रहता है यद्यपि हम कभी-कभी दोनों प्रकार के संप्रत्ययों के लिए एक ही पद प्रयुक्त कर देते हैं। इस प्रकार, यह केवल प्रश्न को उलझा देगा यदि हम (2ii) में प्रस्तुत सूचना को (5I) में, आवश्यक पुनर्लेखी नियमों को जोड़कर, पदबंध-चिह्नक (3) के स्थान पर (6) द्वारा प्रस्तुत कर रूपीयतः विस्तुत करें।

(6)
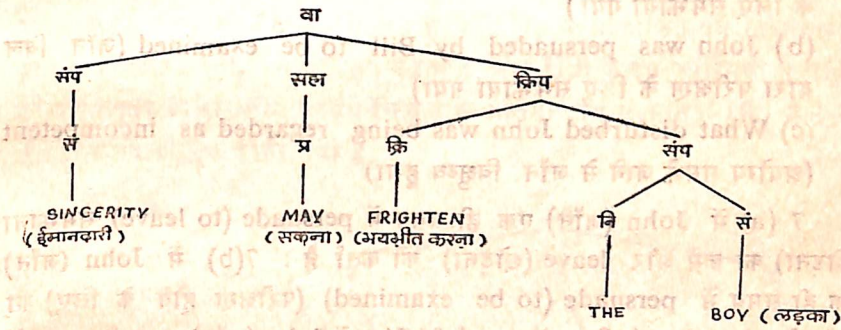
इस उपागम में दो प्रकार से त्रुटियाँ आ सकती हैं। प्रथमतः यह दोनों को कोटीय प्रास्थिति देकर कोटीय और प्रकार्यात्मक संप्रत्ययों के बीच भ्रांति उत्पन्न करता है और इस प्रकार प्रकार्यात्मक संप्रत्यय के संबंधीय स्वरूप को अभिव्यक्त करने में असफल रहता है। द्वितीयतः, वह यह दिखाने में भी असफल होता है कि (6) और वह व्याकरण जिस पर यह आधारित है—दोनों समधिकता के कारण व्यर्थ हैं, क्योंकि उद्देश्य, विधेय मुख्यक्रिया, कर्म आदि संप्रत्यय संबंधीय हैं, और पदबंध-चिह्नक (3) में पहले से ही निरूपित हो चुके हैं और उन्हें प्रस्तुत करने के लिए किन्हीं नये पुनर्लेखी नियमों की आवश्ययता नहीं है। आवश्यता केवल इतनी है कि इन संप्रत्ययों के संबंधीय स्वरूप को "(इसका)–उद्देश्य" "(इसका)-कर्म" आदि को परिभाषित किया जाए, जैसे अंग्रेजी के लिए "इसका-उद्देश्य" NP⁀Aux⁀VP(संप.सहा.क्रिप.(जैसे वाक्य केNP(सं.प.) और संपूर्ण वाक्य के बीच का सम्बन्ध है; 'और "(इसका)-कर्म" V⁀NP(क्रि⁀संप) रूप वाले VP (क्रिप.) के NP (संप.) और संपूर्ण VP (क्रिप.) के बीच का संबंध है, इत्यादि। अधिक सामान्य-

तया, हम किसी भी पुनर्लेखी नियम के व्याकरणिक प्रकार्यों के रूप में परिभाषित करने वाला मान सकते हैं, और इस प्रकार इनमें से केवल कुछ (अर्थात्, जिनका संबंध 'उच्चस्तर' से है, अधिक अमूर्त व्याकरणिक कोटियाँ आदि) परम्परागत स्पष्ट नामों से अभिहित किए जा चुके हैं।

प्रकार्यात्मक संप्रत्ययों को कोटीय मानने की आधारभूत त्रुटि (6) जैसे उदाहरणों में बहुत कुछ अस्पष्ट बनी रहती है क्योंकि उसमें केवल एक उद्देश्य, एक कर्म और एक मुख्य क्रिया है। इस उदाहरण में, संबंधीय सूचना पाठक के द्वारा अंत:प्रज्ञा से दी जा सकती है। किंतु (7) जैसे वाक्यों पर विचार कीजिए जहाँ कई व्याकरणिक प्रकार्य रूपित होते हैं और इनमें कई एक-ही पदबंध से होते हैं :

(7) (a) John was persuaded by Bill to leave (जॉन बिल द्वारा छोड़ने के लिए समझाया गया)

(b) John was persuaded by Bill to be examined (जॉन बिल द्वारा परीक्षण के लिए समझाया गया)

(c) What disturbed John was being regarded as incompetent (अयोग्य समझे जाने से जॉन विक्षुब्ध हुआ)

7 (a) में John (जॉन) एक ही समय में persuade (to leave) समझाना (छोड़ना) का कर्म और leave (छोड़ना) का कर्ता है : 7(b) में John (जॉन) एक ही समय में persuade (to be examined) (परीक्षण होने के लिए) का कर्म और examine (परीक्षण) का कर्म है; 7(c) में John (जॉन) एक ही समय में regard (समझना) (as incompetent) (अयोग्य जैसे) का कर्म और as incompetent का कर्ता है। 7 (a) और 7 (b) दोनों में Bill (बिल) वाक्य का (तार्किक) कर्ता है, न कि John (जॉन) जो कि वाक्य का तथाकथित "व्याकरणिक" कर्ता है, अर्थात् जोकि बहिस्तलीय संरचना की दृष्टि से कर्ता है (देखिए, टिप्पणी–32)। ऐसे उदाहरणों में प्रकार्यात्मक संप्रत्ययों के कोटीय निर्वचन की असंभावना तुरंत स्पष्ट हो जाती है ; तदनुसार, गहनस्तरीय संरचना, जिसमें महत्वपूर्ण व्याकरणिक प्रकार्य निरूपित होते हैं, बहिस्तलीय संरचना से नितांत भिन्न हैं। निस्संदेह, इस प्रकार के उदाहरण रचनांतरण व्याकरण के सिद्धान्त को प्राथमिक अभिप्रेरण और इन्द्रियानुभूत औचित्य प्रदान करते हैं। अर्थात् (7) के प्रत्येक वाक्य का एक आधार होगा, जिसमें आधार–पदबंध-चिह्नक की एक शृंखला होगी, औ जिसका प्रत्येक अंश व्याकरणिक प्रकार्य से संबद्ध कुछ आवश्यक अर्थपरक सूचना निरूपित करेगा।

अब मुख्य प्रश्न पर लौटकर हम यह विचार करें कि किस प्रकार अपने को

आधार–पदबंध चिह्नकों में सीमित करते हुए, हम व्याकरणिक प्रकार्य के संबंध में सुस्पष्ट और पर्याप्त रीति से सूचना प्रस्तुत कर सकते हैं। इस प्रश्न के लिए एकरूप उपागम विकसित करने के लिए हम इस प्रकार बढ़ सकते हैं। मान लीजिए, पुनर्लेखी नियमों का एक अनुक्रम, जैसा (5), है और एक विशिष्ट नियम

(8 A→X

है। इस नियम के साथ प्रत्येक व्याकरणिक प्रकार्य

(9) [B, A]

संबद्ध है, जहाँ B एक कोटि है और X = YBZ कुछ Y, Z (संभवतः शून्य) के लिए है[7] यदि अंतिम शृंखला W का एक पदबंध-चिह्नक दिया हुआ है, तो हम कह सकते हैं कि W की उप शृंखला U,W की एक अन्य उपशृंखला V (क्रि.) से व्याकरणिक संबंध W [B,A] से बद्ध है, यदि V, A नामांकित पर्व से अधिकृत है, और A प्रत्यक्षतः YBZ को अधिकृत करता है, और U,B के इस उपस्थिति से अधिकृत है[8] इस प्रकार विचारणीय पदबंध-चिह्नक के अन्तर्गत उप-संस्थान (10) है। यदि (3) पदबंध-चिह्नक दिया गया है
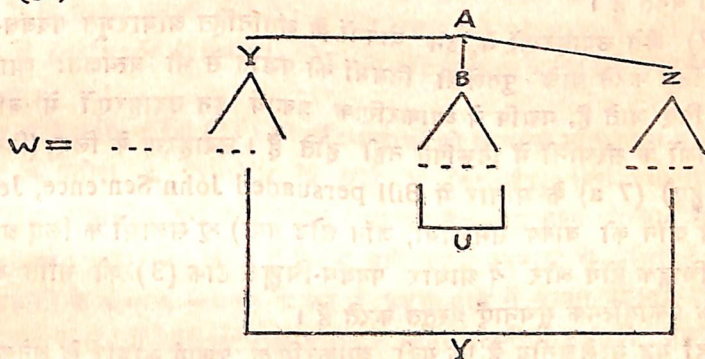
और वह नियम (5) से प्रजनित है, तो sincerity (ईमानदारी) संबंध (NP,S) (संप, उ.) द्वारा sincerity may frighten the boy (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है) संबद्ध है, frighten the boy (लड़के को भयभीत करना) सम्बन्ध (VP,S क्रिप. उ०) द्वारा sincerity may frighten the boy (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है) से बद्ध है, the boy (लड़का) सम्बन्ध (NP, VP संप. क्रिप.) द्वारा frighten the boy (लड़के को भयभीत करना) से बद्ध है और frig- hten (भयभीत करना) सम्बन्ध (V, VP) (क्रि. क्रिप.) द्वारा frighten the boy (लड़के को भयभीत करना) संबद्ध है।

मान लीजिए, हम निम्नलिखित सामान्य परिभाषाएँ प्रस्तुत करें :

(11) (i) उद्देश्यत्व : (NP, S) (संप. उ.)
(ii) विधेयत्व : (VP, S) (क्रिप, उ.)
(iii) मुख्य कर्मत्व : (NP, VP) (संप. क्रिप.)
(iv) मुख्य क्रियात्व : (V, VP) (क्रि. क्रिप.)

यहाँ हम कह सकते हैं कि (5) के नियमों द्वारा प्रजनित पदबंध-चिह्नक (3) के विषय में sincerity (ईमानदारी) वाक्य sincerity may frighten the boy (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है) का उद्देश्य भाग है, और frighten the boy (लड़के को भयभीत करना) इसी वाक्य का विधेय भाग है; और the boy (लड़का) क्रिया पदबंध frighten the boy (लड़के को भयभीत करना) का मुख्यकर्म हैं और frighten (भयभीत करना) इसी की मुख्य क्रिया है। इन परिभाषाओं के द्वारा, समधिक-निरूपण (6) में प्रस्तुत सूचना सीधे (3) से, अर्थात् व्याकरण (5) के द्वारा ही, व्युत्पन्न हो जाती है। इन परिभाषाओं को सामान्य भाषा-वैज्ञानिक सिद्धान्तों का अंग मानना चाहिए; दूसरे शब्दों में, यदि एक व्याकरण दिया है तो ये, वाक्य के पूर्ण संरचनात्मक वर्णन समनुदेशित करने के लिए सामान्य प्रक्रिया (अध्याय 1 के § 6 के (12 iv), (13 iv), (14 iv) की प्रक्रिया f) का अंग बनते हैं।

(7) जैसे उदाहरणों में, इन वाक्यों के अंतर्निहित आधारभूत पदबंध-चिह्नकों को प्रजनित करने वाले पुनर्लेखी नियमों की पद्धति से भी प्रत्यक्षतः व्याकरणिक प्रकार्य दिए जाते हैं, यद्यपि ये व्याकरणिक प्रकार्य इन उदाहरणों में बहिस्तलीय संरचनाओं के संस्थानों में निरूपित नहीं होते हैं। उदाहरण के लिए, (विस्तार को छोड़ते हुए) (7 a) के आधार में Bill persuaded John Sentence, John left (बिल ने जॉन को वाक्य समझाया, जॉन छोड़ गया) श्रृंखलाओं के लिए आधारभूत पदबंध-चिह्नक होंगे और ये आधार पदबंध-चिह्नक ठीक (3) की भांति आवश्यक अर्थपरक प्रकार्यात्मक सूचनाएँ प्रस्तुत करते हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यही व्याकरणिक प्रकार्य आधार के अनेक विभिन्न पुनर्लेखी नियमों द्वारा भी परिभाषित हो सकता है। इस प्रकार मान लीजिए कि एक व्याकरण में निम्नलिखित पुनर्लेखी नियम दिए गए हैं :

(12) (i) S→ Adverbial⁀NP⁀Aux⁀VP (Naturally, John will leave)
(वा→ क्रिया विशेषण⁀संप⁀सहा⁀क्रिप) (स्वभावतः, जॉन छोड़ेगा)

(ii) S→ NP⁀Aux⁀VP (John will leave)
(वा→ संप⁀सहा⁀क्रिप) (जॉन छोड़ेगा)

(iii) VP→ V⁀NP (examine Bill) (बिल का परीक्षण करना)
(क्रिप.→ क्रि⁀संप)

(iv) VP→ V	(leave)
(क्रिप→ क्रि)	(छोड़ना)
(v) VP→ V⁀NP⁀sentence	(persuade Bill that
(क्रिप→ क्रि⁀संप⁀वाक्य)	John left) (बिल ने समझा कि जॉन छोड़ गया)
(vi) VP⁀copula⁀predicate	(be President)
(क्रिप⁀कॉप्यूला⁀विधेय)	(अध्यक्ष होना)
(vii) Predicate→ N	(President)
(विधेय→ सं)	(अध्यक्ष)

तब कर्तृत्व की परिभाषा दोनों (i) और (ii) से होती है। अत: John (जॉन) दोनों वाक्यों (i) और (ii) का कर्ता बन जाता है; कर्मत्व की परिभाषा (iii) और (iv) दोनों से होती है अत: Bill दोनों (iii) और (v) के उदाहरणों से क्रिया पदबंध का कार्य बन जाता है, मुख्य क्रिया की परिभाषा (iii), (iv) और (v) से होती है। अत: examine, leave, persuade (परीक्षण करना, छोड़ना, समझाना) में संलग्न उदाहरणों की मुख्य क्रियाएँ बन जाती हैं। किन्तु ध्यान दीजिए कि "President" John is President (अध्यक्ष, जॉन अध्यक्ष है।) का कर्म नहीं है, यदि (12) के नियम प्रयुक्त होते हैं। ये इस प्रकार की परिभाषा हैं जोकि अध्याय 1, § 4 में persuade (समझाना) और expect (अपेक्षा करना) के विवेचन में पूर्व-कल्पित है।

यह उल्लेखनीय है कि (11) की परिभाषाओं की सामान्य महत्ता इस अभिग्रह पर निर्भर है कि प्रतीक S, Np, Vp, N और V (वा. संप, क्रिपं, सं. और क्रि.) व्याकरणिक सार्वभौम के रूप में लक्षित किए गए हैं। इस प्रश्न पर बाद में विचार करेंगे। इससे पृथक्, यह संभव है कि ये परिभाषाएँ परम्परा से अभिहित व्याकरणिक प्रकार्यों के सामान्य विवेचन के रूप में प्रयुक्त होने में अत्यंत प्रतिबद्ध हों क्योंकि ये व्याकरण के रूप में अभिपुष्ट विनिर्देशों के अत्यंत संकुचित रूप को लेकर चलती हैं। ये विविध विधियों से सामान्यीकृत की जा सकती हैं, किन्तु इस समय मुझे किसी एक विशिष्ट विस्तार अथवा परिष्कार के लिए कोई प्रबल इंद्रियानुभूत अभिप्रेरण नहीं है (किन्तु, § देखिए 2.3.4)। प्रत्येक स्थिति में, इन प्रश्नों को पृथक् करने पर, यह स्पष्ट है कि (2 ii) उदाहृत प्ररूप के व्याकरणिक प्रकार्यों से संबद्ध सूचनाएं सीधे आधार के पुनर्लेखी नियमों से प्राप्त की जा सकती हैं और व्याकरणिक प्रकार्य के विशिष्ट उल्लेख देने के लिए इन नियमों के तदर्थ विस्तार और व्याख्या की कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसे विस्तार, समधिक होने के साथ-साथ, प्रकार्यात्मक

संप्रत्ययों के संबंधीय स्वरूप को उपयुक्ततया व्यक्ततया करने में असफल होते हैं और इस प्रकार बहुत ही सरल उदाहरणों को छोड़ कर अन्यत्र व्यर्थ होते हैं।

फिर भी, हम (2ii) में प्रस्तुत सूचना पर पूरा-पूरा विवेचन नहीं कर पाए हैं अतएवयह आवश्यक है कि (i) में हम sincerity(ईमानदारी) और frighten(भयभीत करना) (कर्ता-क्रिया) तथा frighten(भयभीत करना) और the boy (लड़का)(क्रिया-कर्म) जैसे पारस्परिक व्याकरणिक संबधों की परिभाषा करें। ऐसे संबंध पहले संसूचित प्रकार्यात्मक संप्रत्ययों के शब्दों में व्युत्पादनतया परिभाषित किए जा सकते हैं। इस प्रकार कर्ता-क्रिया संबंध की परिभाषा यों हो सकती है कि वह वाक्य के उद्देश्य और वाक्य के विधेयत्व (11)के संप्रत्यय हैं; और तदनुसार क्रियाकर्म संबंध की परिभाषा यों हो सकती है कि वह क्रियापदबध की मुख्यक्रिया और मुख्यकर्म के बीच का संबंध है। फिर भी, इस वर्णन में अब भी कुछ कमी है। अब भी हमारे पास इसका कोई आधार नहीं है कि अभी पारिभाषित परंपरागत तथा औचित्यपूर्ण मान्यताप्राप्त व्याकरणिक संबंध कर्ता-क्रिया, और व्यर्थ संबंधभासी कर्ता-कर्म में, जिसकी इन्हीं शब्दों में सरलता से परिभाषा दी जा सकती है, कैसे भेद करें। पारंपरिक व्याकरण, ऐसा लगता है, ऐसे संबंध पारिभाषित करते हैं, जहाँ युग्मित कोटियों को अभिशासित करने में चयनात्मक प्रतिबंध विद्यमान हैं। इस प्रकार मुख्यक्रिया का चयन कर्ता-कर्म के चयन पर निर्भर है, यद्यपि कर्ता और कर्म सामान्यतया बिना एक दूसरे पर आश्रित हुए चुने जाते हैं और तदनुसार उनमें विचारणीय व्याकरणिक संबंध जैसा कोई संबंध नहीं होता है। मैं चयनात्मक संबंधों के विवेचन को § 4.2 तक स्थगित रखूँगा और तभी व्याकरणिक संबंध के प्रश्न पर पुनः विचार करूँगा। किन्तु प्रत्येक स्थिति में, यह पर्याप्त स्पष्ट है कि श्रृंखला और पदबंध चिह्नों को प्रजनित करने वाले नियमों के अतिरिक्त यहाँ कोई तत्वतः नई बात नहीं लाई गई गई है।

अतएव, संक्षेप में यह अनावश्यक है कि पुनर्लेखी नियमों की पद्धति को, (2ii) में प्रस्तुत प्ररूप की सूचना को संभालने के लिए, विस्तृत करें। तत्संबद्ध संबधीय संप्रत्ययों की उपयुक्त सामान्य परिभाषाओं के साथ, यह सूचना (5) और (12) जैसे सरल पुनर्लेखी नियमों से प्रजनित पदबंध-चिह्नकों से प्रत्यक्षतः प्राप्त की जा सकती है। यह सूचना अस्फुट रूप में प्रारंभिक पुनर्लेखी नियमों की पद्धति में ही अंतर्निहित थी। (6) जैसे निरूपण और उनको प्रजनित करने के लिए नए और विस्तृत पुनर्लेखी नियम अनावश्यक हैं और साथ ही साथ वे भ्रांतिजनक और अनुपयुक्त हैं।

अंत में, हम फिर से इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाना चाहेंगे कि इन प्रकार्यात्मक संप्रत्ययों के विभिन्न आपरिवर्तन और विस्तरण संभव हैं और ऐसे सुधारों के लिए इन्द्रियानुभूत अनुप्रेरणों का पता लगाना अत्यावश्यक है। उदाहरण के लिए, निरूपण को उन विविध संप्रत्ययों के द्वारा, जोकि आगे चलकर उपयोगी होंगे,

परिष्कृत किया जा सकता है। मान लीजिए कि हमारे पास पुनर्लेखी नियमों के अनुक्रम से युक्त एक आधार-व्याकरण है और जैसा (5) में किया है हमने (5II) जैसे कोशीय नियमों को जो कि कोशीय रचनांगों को प्रस्तुत करते हैं, अन्य से प्रभिन्न माना है। हम आगे देखेंगे कि यह अंतर रूपीय दृष्टि से बहुत स्पष्ट चिह्नित है। उस कोटि को जो कोशीय नियम में बाएं प्रकट होती है हम कोशीय कोटि कहेंगे; एक कोशीय कोटि अथवा ऐसी कोटि जो शृंखला X को अधिकृत करती है, जहाँ X एक कोशीय कोटि है—इसे **प्रमुख कोटि** कहेंगे। इस प्रकार व्याकरण (5) में, कोटियाँ N, V, M (सं, क्रि,प्र.) कोशीय कोटियां हैं,[9] और Det (नि,) (और संभवत: M (प्र.) और Aux (सहा.) (–देखिए टिप्पणी 9) को छोड़ कर अन्य कोटियाँ प्रमुख कोटियाँ हैं। इनका अधिक परिष्करण हम § 2. 3. 4. के अन्तिम अनुच्छेद में देंगे।

§ 2.3 वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण

§ 2.3.1 **समस्या** जिस प्रकार की सूचना (2iii) में प्रस्तुत की गई है, उस प्रकार की सूचना अनेक कठिन और कुछ उलझन में डालने वाले प्रश्नों को उठाती है। प्रथमत:, यह स्पष्ट नहीं है कि किस सीमा तक यह सूचना वाक्यविन्यासीय घटक द्वारा ही दी जाए। द्वितीयत:, यह एक रोचक प्रश्न है कि क्या और किस सीमा तक आर्थी विचारणाएँ (2iii) से संबंद्ध उप कोटिकरणों को निर्धारित करने में संगत हैं। ये दोनों प्रभिन्न प्रश्न यद्यपि इसमें भ्रान्ति प्राय: होती है यह उससे तभी संबद्ध होते हैं यदि प्रभेदों का निश्चायक आधार शुद्धतया वाक्यविन्यासीय हो, और तब निश्चयत: सूचना व्याकरण के वाक्यविन्यासीय घटक द्वारा ही प्रस्तुत होगा। हम इन प्रश्नों को क्रमश: **प्रस्तुतीकरण** और **औचित्य** के प्रश्न कह सकते हैं।

जहाँ तक औचित्य के प्रश्न का संबंध है, शब्दार्थ विज्ञान में गंभीर रुचि रखने वाला भाषाविज्ञानी संभवत: वाक्यविन्यासीय विश्लेषण को इस बिन्दु तक गंभीर और विस्तृत करना चाहेगा जहाँ वह उपकोटिकरण से संबंद्ध सूचनाएँ दे सके बजाय इसके कि आवश्यक प्रभेदों के निश्चायक आर्थी आधार के संबंध में अन्य प्रस्ताव की वर्तमान अनुपलब्धि में वह अविश्लेषित आर्थी अन्त:प्रज्ञा पर उसे टाल दे। निस्संदेह यह विवादास्पद प्रश्न है कि यह प्रयत्न क्या अंशत: भी सफल हो सकता है।

हम यहां (2iii) में जैसी दी है उस प्रकार की सूचना के प्रस्तुतीकरण के प्रश्न से ही संबंध रख रहे हैं। मैं यह निरन्तर मानता रहा हूँ कि प्रजनक-व्याकरण का आर्थी घटक, स्वनप्रक्रियात्मक घटक के समान, शुद्धतया निर्वचनात्मक है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि आर्थी निर्वचन में प्रयुक्त सभी सूचनाएँ व्याकरण के

वाक्यविन्यासीय घटक में अवश्य प्रस्तुत की जाएँ (किन्तु, देखिए अध्याय 4, § 1.2) इस सूचना को प्रस्तुत करने के संबंध में उठी कुछ समस्याओं पर बाद में खोज की जाएगी।

यद्यपि (2iii) जैसे उपकोटिकरणों के औचित्य का प्रश्न वर्तमान विवेचन के क्षेत्र से बाहर है, फिर भी उस पर संक्षेप में विचार करना उपयोगी ही होगा। उलझन तत्वत: निम्नलिखित जैसी वृत्तियों की प्रास्थिति की है :

(13) (i) the boy may frighten sincerity (लड़का ईमानदारी को भयभीत कर सकता है)

(ii) sincerity may admire the boy (ईमानदारी लड़के की प्रशंसा कर सकती है)

(iii) John amazed the injustice of that decision (उस निर्णय के अन्याय से जॉन विस्मित हुआ)

(iv) the boy elapsed (लड़का समाप्त हुआ)

(v) the boy was abundant (लड़का परिपक्व था)

(vi) the harvest was clever to agree (कृषक सहमत होने के लिए चतुर था)

(vii) John is owning a house (जॉन के पास एक घर है)

(viii) the dog looks barking (कुत्ता भौंकता हुआ दिखता है।)

(ix) John solved the pipe (जॉन ने बाँसुरी साधी।)

(x) the book dispersed (पुस्तक बिखर गई)

अंग्रेजी जानने वाले प्रत्येक व्यक्ति को यह स्पष्ट है कि इन उक्तियों की निम्नलिखित जैसे वाक्यों की तुलना में नितांत भिन्न प्रास्थिति है।

(14) (i) sincerity may frighten the boy (=(1)) (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है।)

(ii) the boy may admire sincerity (लड़का ईमानदारी की प्रशंसा कर सकता है।)

(iii) the injustice of that decision amazed John (उस निर्णय के अन्याय ने जॉन को विस्मित किया)

(iv) a week elapsed (सप्ताह समाप्त हुआ)

(v) the harvest was abundant (कृषक सम्पन्न था)

(vi) the boy was clever to agree (लड़का सहमति के लिए चतुर था।)

(vii) John owns a house (जॉन के पास एक घर है।)

(viii) the dog looks terrifying (कुत्ता आक्रान्त दिखता है)

(ix) John solved the problem (जॉन ने समस्या हल की)

(x) the boys dispersed (लड़के बिखर गए)

(13) और (14) के बीच का अन्तर विवाद का विषय नहीं है और स्पष्टतया इसे किसी न किसी प्रकार वाक्यीय निर्वचन के पर्याप्त सिद्धान्त (वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण) द्वारा सुलझाया जाना चाहिए। (13) की उक्तियाँ अंग्रेजी के नियमों से किसी न किसी प्रकार (यह आवश्यक नहीं है कि सभी में एक प्रकार से) च्युत हैं।[10] यदि वे निर्वचन योग्य किसी प्रकार हैं तो वे निस्संदेह तदनुरूप (14) के वाक्यों की भाँति निर्वचनीय नहीं है। बल्कि ऐसा लगता है कि उन पर उन सादृश्यों के कारण निर्वचन थोपा जा रहा है जो तत्सम्बद्ध व्याकरण-संमत वाक्यों से उत्पन्न है।

शुद्धतया वाक्यविन्यासीय नियमों के पर्याप्ततया सुस्पष्ट उदाहरण भी हैं, जैसे—

(15) (i) sincerity frighten may boy the (ईमानदारी भयभीत सकना लड़का)

(ii) boy the frighten may sincerity (लड़का भयभीत सकना ईमानदारी)

और शुद्धतया आर्थी (अथवा अर्थ क्रियापरक) असंगति के मानक उदाहरण भी मिलते हैं, जैसे,

(16) (i) oculists are generally better trained than eye-doctors (सामान्यरूप से नेत्र विशेषज्ञ आँख के डॉक्टर से अधिक प्रशिक्षित होते हैं)

(ii) both of John's parents are married to aunts of mine (जॉन के दोनों पूर्वजों की शादी मेरी मौसियों (बूआओं) से हुई है)

(iii) I'm memorizing the score of sonata I hope to compose some day (मैं रागों की स्वरलिपि का अभ्यास कर रहा हूँ, आशा करता हूँ किसी दिन मैं उसे लिख सकूँगा)

(iv) that ice cube that you finally managed to melt just shattered (पिघलाने के लिए जैसे ही आपने अन्तिम रूप से बर्फ के टुकड़ों की व्यवस्था की, अभी चूर-चूर हो गयी)

(v) I knew you would come, but I was wrong (मुझे पता था कि आप आएँगे, किन्तु मैं गलती पर था।)

(13) के उदाहरण सीमान्तरेखीय प्रकृति के हैं और यह बहुत कम स्पष्ट है कि किस प्रकार उनकी नियमच्युत प्रास्थिति की व्याख्या की जाए। दूसरे शब्दों में, इन उक्तियों की नियमच्युति और उनके निर्वचनों के कारण बताने के लिए किस सीमा तक

वाक्यविन्यासीय अथवा आर्थी विश्लेषण के परिणामों और विधियों को विस्तरित किया जाए, इसे निर्धारित करने की समस्या का हमें सामना करना पड़ेगा। यह सुस्पष्ट है कि एक ही उत्तर इन सभी स्थितियों में उपयुक्त न होगा और किसी विशिष्ट स्थिति में शुद्धतया आर्थी अथवा शुद्धतया वाक्यविन्यासीय विचारणाएँ उत्तर देने में असमर्थ होंगी। वस्तुतः, यह अवश्यमेव नहीं मान लेना चाहिए कि वाक्यविन्यासीय और आर्थी विचारणाओं को सुस्पष्टतया प्रभिन्न किया जा सकता है।

वाक्यविन्यासीय विचारणाएँ किस प्रकार उपयुक्त प्रकार का उपवर्गीकरण दे सकती हैं इसके अनेक सुझाव दिए जा चुके हैं। इनमें विविध आयामों में 'व्याकरणिकता की मात्रा" का संप्रत्यय सम्बद्ध है। और वितरणात्मक साम्यताओं पर आधारित उपवर्गीकरण की तकनीकों से ठोस प्रस्तावों का सम्बन्ध है। यद्यपि ये सप्रत्यय अत्यधिक काम चलाऊ रूप में स्थापित किए गए हैं तथापि मुझे ऐसा लगता है कि इनमें कुछ शक्य है।[11] इन प्रभेदों के आर्थी आधार क्या संभव है इसका एक मात्र सुझाव यह रहा है कि ये भाषानिरपेक्ष आर्थी निरूपाधियों पर आधारित हैं और प्रत्येक स्थिति में च्युति के मूल में कुछ उन भाषाई सार्वभौमों का उल्लंघन है जो किसी भी प्रजनक-व्याकरण के आर्थी घटक के रूप को प्रतिबद्ध करते हैं। यह संभव है कि यह सही उत्तर हो; इसके अतिरिक्त इसका कोई कारण नहीं है कि इन दो आत्यन्तिक उपागमों के किसी संयोजन का प्रयत्न न किया जाए।

प्रत्येक स्थिति में आवश्यकता एक व्यवस्थाबद्ध वर्णन की है जो यह बताए कि असंदिग्ध स्थितियों में उपयुक्त विधियों और युक्तियों के अनुप्रयोग को इस प्रकार विस्तरित और गंभीर किया जाए कि उनमें (13) के जो उक्तियों की प्रास्थिति व्याख्यायित हो सके और यह भी बताए कि किस प्रकार एक आदर्श श्रोता ऐसे वाक्यों की, यथासंभव अच्युत वाक्यों के साहश्य के परिकल्पित तथा निर्वचन समनुदेशित करता है, ये वास्तविक और महत्वपूर्ण प्रश्न हैं। एक वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण द्वारा ऐसे घटनाक्रमों का उसके वाक्यविन्यासीय और आर्थी घटकों द्वारा दिए संरचनात्मक वर्णनों के शब्दों में वर्णन करना चाहिए और व्याख्यात्मक पर्याप्तता को लक्ष्य में रखने वाले सामान्य भाषाई सिद्धान्त को यह अवश्य दिखाना चाहिए कि किस प्रकार ऐसा व्याकरण भाषा सीखने वाले को उपलब्ध सामग्री के आधार पर विकसित किया जा सकता है। "वाक्य विन्यास के लिए आर्थी आधार" विषयक अस्पष्ट और असमर्थित अभिकथनों का इन प्रश्नों के समझने में कोई योगदान नहीं होता है।

औचित्य के प्रश्न से प्रस्तुतीकरण के प्रश्न की ओर बढ़ते हुए हमें यह निर्धारित करना चाहिए कि किस प्रकार व्याकरण संरचनात्मक वर्णन दे सकता है जो ऊपर

उदाहरण रूप दिए घटनाचक्रों का सही कारण बता सकता है। अनुभवपूर्व, यह निश्चित करने की कोई विधि नहीं है कि प्रस्तुतीकरण का भार प्रजनक-व्याकरण के वाक्यविन्यासीय अथवा आर्थी घटक पर पड़े। यदि वाक्यविन्यासीय घटक पर भार पड़ना है तो हम उस घटक की ऐसी अभिकल्पना करें कि वह (13) के वाक्यों को प्रत्यक्षतः न दे सकें, किन्तु (14) जैसे पूर्णतया सुरक्षित वाक्यों से उनके संरचना साहृश्य के बल पर, कदाचित् टिप्पणी 11 में दिए सन्दर्भों में वर्णित रीति से, उनके लिए पदबन्ध–चिह्नक समनुदेशित कर सकें। इस प्रकार वाक्यविन्यासीय घटक उन चयनात्मक प्रतिबंधों के शब्दों में संक्रिया करेगा जो चेतनता और अमूर्तता जैसी कोटियों से संलग्न है, और इन प्रतिबन्धों में से कुछ को शिथिलित करनेमात्र से प्रजनित शृङ्खला के रूप में, उदाहरणार्थ (13i) को, लक्षित करेगा। विकल्पतः यदि हम यह निश्चित करते हैं कि इन तथ्यों को समझाने का भारी आर्थी घटक पर है, तो हम वाक्यविन्यासीय घटक को (14) और उसी प्रकार (13) के वाक्यों को, बिना किसी व्याकरणिक भेदभाव के, प्रजनित करने देंगे, किन्तु कोशीय एकांशों को इस प्रकार विनिर्दिष्ट करेंगे कि आर्थी घटक के नियम (13) के वाक्यों की असंगति को और उनकी व्याख्या-विधि को (यदि कोई ऐसी हो) निर्धारित कर सकें। प्रत्येक दृष्टि से, हमें एक सुपरिभाषित समस्या का सामना करना पड़ता है और यह पर्याप्त स्पष्ट है कि इसके परीक्षण के लिए हम कैसे आगे बढ़ें। इस समय तो मैं यह मान कर चल रहा हूँ कि "व्याकरणिकता की मापनी" का संप्रत्यय आर्थी निर्वचन के लिए सार्थक होगा और टिप्पणी 11 के सन्दर्भों में दी इस स्थिति को स्वीकार कर रहा हूँ कि (13) और (14) के बीच वाक्यविन्यासीय घटक के नियमों द्वारा प्रभेद रखना चाहिए और (13) के वाक्यों को कुछ वाक्यविन्यासीय निर्धारकों के शिथिलन से ही पदबन्ध-चिह्नक समनुदेशित किए जा सकते हैं। बाद में, मैं उस यथार्थ बिन्दु को बताऊँगा जहाँ यह निर्णय वाक्यविन्यासीय घटक के रूप को प्रभावित करता है और तभी संक्षेप में कुछ संमान्य विकल्पों की चर्चा करूँगा।

§ 2·3·2. वाक्यविन्यास और स्वनप्रक्रिया के बीच कुछ रूपात्मक साहृश्य

अब इस पर विचार करें कि (2iii) जैसे में दी सूचना किस प्रकार सुव्यक्त नियमों द्वारा प्रस्तुत किए जा सकते हैं। यह ध्यातव्य है कि यह सूचना उपकोटिकरण से न कि "प्रशाखन" से (अर्थात्, कोटि का कोटियों के अनुक्रम में विश्लेषण, जैसे

जब S (वा०) विश्लेषित होता है NP⁀Aux⁀VP (सं०⁀सहा.⁀क्रिप.) अथवा NP (सं०)

विश्लेषित होता है Det⁀N (नि०⁀सं०) में) सम्बद्ध है। इसके अतिरिक्त ऐसा लगता है कि सम्बद्ध कोटियाँ केवल वे हैं जिनमें कोशीय रचनांग सदस्य के रूप में हैं। अतएव हम व्याकरणिक संरचना के कुछ सीमित अंश पर कार्य कर रहे हैं और इन

तथ्यों को प्रस्तुत करने के उपयुक्त साधनों को ढूँढ़ते समय इस पर ध्यान रखना महत्वपूर्ण है।

स्पष्ट सुझाव यह है कि उपकोटिकरण पर § 2.2 में वर्णित प्रकार के पुनर्लेखी नियमों द्वारा कार्य किया जाए और यही वह अभिग्रह था जो प्रजनक-व्याकरणों को व्यवस्थापित करने के प्राथमिक प्रयासों में स्वीकार किया गया था (देखिए, चॉम्स्की, 1951[12], 1955, 1957)। फिर भी, 1957-58 में जर्मन के प्रजनक-व्याकरण से संबद्ध अपने कार्य के दौरान जी० एच० मैथ्यूस ने यह प्रदर्शित किया था कि यह अभिग्रह गलत है और कोशीय कोटियों के उपकोटिकरण को प्रभावित करने की उपयुक्त युक्ति पुनर्लेखी नियम नहीं है[13]। कठिनाई यह है कि यह उपकोटिकरण प्रकारात्मक रूप से शुद्ध सोपानिक नहीं है, बल्कि इसमें व्यभिचरित वर्गीकरण प्रयुक्त होता है। इस प्रकार, उदाहरणार्थ, अंग्रेजी के संज्ञा-शब्द व्यक्तिवाचक (John, Egypt) (जॉन, मिस्र) अथवा जाति वाचक (boy, book) (लड़का पुस्तक) होते हैं। किन्तु साथ ही वे मानव (John, boy) (जॉन, लड़का) अथवा मानवेतर (Egypt, book) (मिस्र, पुस्तक) होते हैं। कुछ नियम (जैसे, निर्धारक शब्दों से संबद्ध) व्यक्ति/जाति अंतर पर प्रयुक्त होते हैं: अन्य (जैसे, संबंधवाची सर्वनाम के चयन नियम) मानव/मानवेतर प्रभेद पर निर्भर हैं। किन्तु यदि उपकोटिकरण पुनर्लेखी नियमों द्वारा दिया जाता है तो इनमें से एक या दूसरे प्रभेद को प्रभावकारी होना होगा और स्वाभाविक रीति से दूसरा प्रभेद अकथनीय होगा। इस प्रकार यदि हम व्यक्ति/जाति को प्रमुख प्रभेद निश्चित करते हैं तो नियम इस प्रकार के होंगे :

(17)	N→ Proper	(व्यक्ति–)
	N→ Common	(जाति–)
	Proper → Pr–Human	(व्यक्ति–मानव)
	Proper →Pr-n Human	(व्यक्ति–मानवेतर)
	Common →C–Human	(जाति–मानव)
	Common C-n Human	(जाति-मानवेतर)

यहाँ प्रतीक "Pr-Human" (व्यक्ति-मानव) "Pr-n Human", (व्यक्ति-मानवेतर), "C-Human", (जाति-मानव) और "C-n Human" (जाति-मानवेतर) पूर्णतया असंबद्ध है और प्रतीक "Noun" ('संज्ञा') "Verb" (क्रिया) "Adjective" (विशेषण), "Modal" (प्रकारक) के समान आपस में प्रभिन्न हैं। इस व्यवस्था में यद्यपि हम आसानी से उस नियम को दिखा सकते हैं जो केवल व्यक्तिवाचक संज्ञाओं पर प्रयुक्त हो अथवा केवल जातिवाचक संज्ञाओं पर प्रयुक्त हो तथापि मानव संज्ञाओं पर प्रयुक्त होने वाले नियम को असम्बद्ध कोटियों Pr-Human (व्यक्ति मानव) और C-Human (जाति-मानव) के शब्दों में कथित करना होगा। यह स्पष्टतया

प्रदर्शित करता है कि सामान्यीकरण तक हम नहीं पहुँच पाए क्योंकि यह नियम उस नियम, जैसे, असंबद्ध कोटियों Pr-Human (व्यक्ति-मानव) और अमूर्त संज्ञाओं पर प्रयुक्त होने वाले नियम, की तुलना में न तो अधिक सरल है और न अधिक अभि-प्रेरण से जन्य है। विश्लेषण की गहनता जैसे-जैसे बढ़ती जाएगी इस प्रकार की समस्याएँ उस बिन्दु तक बढ़ती जाएँगी जहाँ केवल पुनर्लेखी नियमों से युक्त व्याकरण में गंभीर अपर्याप्तता प्रदर्शित होने लगेगी। व्याकरण में रचनांतरणात्मक नियमों के जोड़ने पर भी यह विशिष्ट कठिनाई उस प्रकार दूर नहीं हो पाएगी जिस प्रकार अन्य अनेक हो जाती हैं।

रूपीयत:, यह समस्या उस समस्या से सर्वांगसम है जिससे स्वनप्रक्रिया के स्तर पर हम परिचित हैं इस प्रकार, स्वनप्रक्रियात्मक एकक भी स्वनप्रक्रियात्मक नियमों की दृष्टि से व्यभिचरित वर्गीकृत हैं। उदाहरणार्थ वहाँ वे नियम हैं जो सघोष व्यंजनों [b], [z] पर प्रयुक्त होते हैं किन्तु अघोष व्यंजनों [p], [s] पर नहीं होते, और अन्य नियम हैं जो प्रवाही [s] [z] पर प्रयुक्त होते हैं किन्तु स्पर्श व्यंजनों [p], [b] पर नहीं होते, आदि। इस कारण प्रत्येक स्वनप्रक्रियात्मक एकक को अभिल-क्षणों का समुच्चय मानना चाहिए और स्वप्रक्रियात्मक घटक को इस प्रकार अभिकल्पित करना चाहिए कि प्रत्येक नियम अभिलक्षण विशेष या अभिलक्षण-गुच्छ से युक्त सभी खंडों पर प्रयुक्त हो सके। प्रस्तुत वाक्यविन्यासीय समस्या के संबंध में भी वही समाधान आगे आ रहा है और समस्या के हल करने की इसी विधि पर मैं यहाँ विस्तार से चर्चा करूँगा।

वाक्यविन्यासीय स्तर पर अभिलक्षणों के प्रयोग करने की चर्चा के पूर्व हम स्वनप्रक्रियात्मक घटक की संक्रिया का संक्षेप में पुनर्दर्शन करना चाहेंगे (इस प्रश्न के विवेचन के लिए देखिए, हाले 1959 a, 1959 b, 1962 a, 1964)। प्रत्येक कोशीय रचनांग खंडों के अनुक्रम के रूप में निरूपित किया जाता है और प्रत्येक खंड अभिलक्षणों का एक समुच्चय होता है। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक कोशीय रचनांग एक परिच्छेदक, अभिलक्षण मैट्रिक्स द्वारा निरूपित होता है जिसमें स्तंभ उत्तरोत्तर खंडों के लिए और पंक्तियाँ विशिष्ट अभिलक्षणों के लिए प्रयुक्त होते हैं। ऐसे मैट्रिक्स के i-वें स्तंभी और j-वीं पंक्ति की प्रविष्टि यह प्रदर्शित करती है कि किस प्रकार i-वाँ खंड j-वें अभिलक्षण की दृष्टि से समनुदेशित हुआ है। एक विशिष्ट प्रविष्टि यह सूचित कर सकती है कि विवेच्य खड विवेच्य अभिलक्षण की दृष्टि से अ-विनिर्दिष्ट है, अथवा इस अभिलक्षण की दृष्टि से **सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट** है अथवा **नकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट** है। हम दो खंडों को **प्रभिन्न** कहते हैं जब एक किसी अभिलक्षण की दृष्टि से सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट है जबकि दूसरा उसी की दृष्टि से नकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट है, और अधिक सामान्यतया, समान

स्तंभों की संख्या वाले दो मैट्रिक्स प्रभिन्न हो यदि इसी अर्थ में एक का i-वाँ खंड दूसरे के i-वे खड से, किसी i के लिए प्रभिन्न हो ।

मान लीजिए

(18) A → Z/X—Y

एक स्वनप्रक्रियात्मक नियम है, जहाँ A, Z, X और Y मैट्रिक्स हैं, और A और Z इसके अतिरिक्त खण्ड हैं (ऐसे मैट्रिक्स जिसमें एक ही स्तम्भ है) । यह स्वन प्रक्रियात्मक नियम का एक प्रकारात्मक रूप है । हम कहेंगे कि नियम (18) किसी भी श्रृङ्खला WX' A' Y'V पर प्रयोग योग्य है जहाँ X' A' Y' क्रमश: X, A, Y, से स्तम्भ सख्या की दृष्टि से समान हैं और X' A' Y' XAY से प्रभिन्न नहीं है (वस्तुत:, कुछ अर्हताओं की आवश्यकता है जिनका हमसे यहाँ सम्बन्ध नहीं है—देखिए विवेचनार्थ हाले और चॉम्स्की 1968) । नियम (18) श्रृङ्खला WX' A' Y' V को श्रृङ्खला WX' Z' Y' V में प्रतिरूपित करता है जहाँ Z' ऐसा खण्ड है जिसमें Z के अभिलक्षण विनिर्देश मिलते हैं और साथ ही साथ A' के वे सभी अभिलक्षण विनिर्देश भी मिलते हैं जिन अभिलक्षणों की दृष्टि में Z अविनिर्दिष्ट है ।

इन संप्रत्ययों के निदर्शन के रूप में इस स्वनप्रक्रियात्मक नियम पर विचार करें :

(19) [+ continuant] → [+ voiced]/—[+ voiced]

[+ प्रवाही] → [+ सघोष/—[+ सघोष]

यह नियम [sm] को [zm] में [fd] को [vd] में [š g] को]ž g] आदि में प्रतिरूपित करेगा किन्तु [st] [pd] आदि को उदाहरणार्थ अप्रभावित रखेगा[14] । ये रूढ़ियाँ (जो उन रीतियों से सरलीकृत और सामान्यीकृत हो सकती हैं जिनका यहाँ हमसे कोई सम्बन्ध नहीं है) हमें अभिलक्षणों के संयोजन विशेष द्वारा विनिर्दिष्ट खण्डों के किसी भी वर्ग पर नियमों को प्रयुक्त करने देती है, और इस प्रकार अभिलक्षण निरूपण द्वारा दिए खंडों का व्यभिचरित वर्गीकरण प्रयुक्त करने देते हैं ।

यही संप्रत्यय बिना तात्विक परिवर्तन के कोशीय कोटियों और उनके सदस्यों के निरूपणों पर काम में लाए जा सकते हैं, और वे व्यभिचरित वर्गीकरण की समस्या का अत्यधिक स्वाभाविक समाधान देते हैं और साथ ही साथ व्याकरणिक सिद्धांत की सामान्य एकता बनाए रखते हैं । प्रत्येक कोशीय रचनांग को वाक्य-विन्यासीय अभिलक्षणों के समुच्चय से सहचरित होना होगा (इस प्रकार boy (लड़का) के वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण होंगे—[+ जाति] [+ मानव] आदि । इसके अतिरिक्त कोशीय कोटियों N (सं०), V (क्रि०) आदि को निरूपित करने वाले प्रतीकों को नियमों द्वारा मिश्र प्रतीकों में विश्लेषित किया जाएगा जहाँ प्रत्येक मिश्र प्रतीक, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार प्रत्येक स्वप्रक्रियात्मक खंड विनिर्दिष्ट स्वन-प्रक्रियात्मक अभिलक्षणों का समुच्चय होगा ।

उदाहरणार्थ,हम निम्नलिखित व्याकरणिक नियम बना सकते हैं :

(20) (i) N → [+N, ± जाति] Common
सं → [+सं, ±

(ii) [+ जाति] → [± गणनीय Count]

(iii) [+ गणनीय] → [± चेतन Animate]

(iv) [—जाति] → [± चेतन]

(v) [+ चेतन] → [± मानव Human]

(iv) [—गणनीय] → [± अमूर्त Abstract]

हम नियम (20i) का निर्वचन इस प्रकार करेंगे कि वह बलपूर्वक यह कहता है कि व्युत्पादन की पंक्ति में प्रतीक N (स०) इन दो मिश्र प्रतीकों [+N, (सं०), + जाति] अथवा [+N, (सं०)—जाति] में से एक के द्वारा विस्थापित होगा। नियम (20ii—20vi) स्वनप्रक्रियात्मक नियमों की रूढ़ियों के भीतर संक्रिया करते हैं। इस प्रकार नियम (20ii) यह अभिकथित करता है कि मिश्र प्रतीक Q जो [+ जाति] के रूप में विनिर्दिष्ट हो चुका है Q के सभी अभिलक्षणों के साथ-साथ अभिलक्षण विनिर्देश [+ गणनीय] अथवा [—गणनीय] से युक्त मिश्र प्रतीक द्वारा विस्थापित होता है। यही मिश्र प्रतीकों पर संक्रिया करने वाले अन्य नियमों पर भी सही बैठता है।

नियम (20) का पूरा प्रभाव प्रशाखी आरेख (21) द्वारा निरूपित हो सकता है। इस निरूपण में, प्रत्येक पर्व अभिलक्षण द्वारा नामांकित होता है।
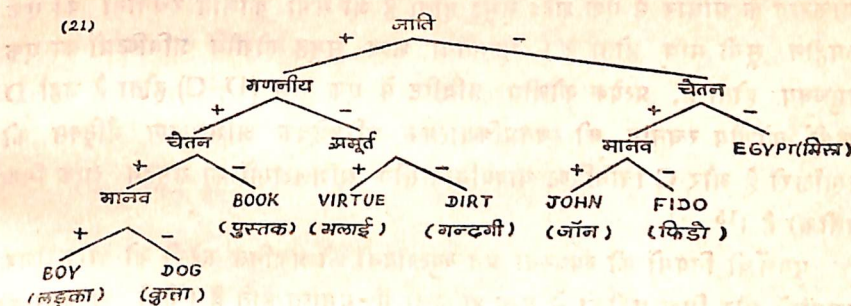
और रेखाएँ + अथवा − द्वारा अंकित होती हैं। प्रत्येक उच्चिष्ठ पथ कोशीय एकांशों की कोटि के अनुरूप होता है; इस कोटि के प्रत्येक तत्व में (αF) (α = + अथवा −) अभिलक्षण होता है और यह केवल तभी होता है जब इस पथ की एक रेखा α से नामांकित हो और F नामांकित पर्व से अवरोहित हो। (20) द्वारा परिभाषित कोटियों के प्रकारात्मक सदस्य (21) के अन्त्य बिन्दु पर दिए गए हैं।

(22) (i) N (सं०) → [+ N (सं०), ± चेतन ± जाति]
(ii) [+ जाति] → [± गणनीय]
(iii) [- गणनीय] → [± अमूर्त, - चेतन]
(iv) [+ चेतन] → [± मानव]

यदि हम इन नियमों के रूपीय निर्धारक के रूप में प्रशाखी–आरेख में निरूपणीयता को आवश्यक मानते होते तो (22) का कोई स्थान न होता। इस स्थिति में, नियम (21) अथवा (20) के रूप में ही निरूपित होते। प्रत्येक दशा में, इस प्रकार के नियमों के द्वारा जो मिश्र प्रतीकों को प्रस्तुत और विस्तरित करते हैं, हम कोशीय कोटियों के पूरे समुच्चय को विकसित कर सकते हैं।

§ 2.3.3 आधार घटक की सामान्य संरचना

हम अब उस आधार उपघटक के वर्णन को जिसका पहले वर्णन किया जा चुका है और जो (5) द्वारा उदाहृत हो चुका है, निम्नलिखित रीति से आपरिवर्तित करेंगे। उन पुनर्लेखी नियमों के अतिरिक्त, जो कोटीय प्रतीकों पर प्रयुक्त होते हैं और जिनमें सामान्यतया प्रशाखन होता है, ऐसे भी पुनर्लेखी नियम होते हैं (जैसे, (20) के नियम) जो कोशीय कोटियों के प्रतीकों पर प्रयुक्त होते हैं और मिश्र प्रतीकों (विनिर्दिष्ट वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों के समुच्चयों) पर संक्रिया करते हैं अथवा उन्हें प्रस्तुत करते हैं। व्याकरण में (5 II) जैसे कोई नियम अब नहीं रहेंगे जो कि कोशीय कोटियों से संलग्न रचनांगों को प्रस्तुत करते हैं, इसके विपरीत, व्याकरण के आधार में एक शब्द समूह होता है जो सभी कोशीय रचनांगों की एक क्रमहीन सूची मात्र होता है। सूक्ष्मतया, शब्द समूह **कोशीय प्रविष्टियों** का एक समुच्चय होता है, प्रत्येक कोशीय प्रविष्टि में एक युग्म (D, C) होता है जहाँ D किसी कोशीय रचनांग की स्वनप्रक्रियात्मक परिच्छेदक अभिलक्षण मैट्रिक्स की वर्णाक्षरी है और C विनिर्दिष्ट वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों का समूहन (एक मिश्र प्रतीक) है।[15]

पुनर्लेखी नियमों की व्यवस्था अब व्युत्पादनों को प्रजनित करेगी जो व्याकरणिक रचनांगों और मिश्र प्रतीकों से युक्त शृंखला में समाप्त होते हैं। ऐसी शृंखला को पूर्वान्त्य शृंखला कहते हैं। अन्त्य शृंखला पूर्वान्त्य शृंखला से निम्नलिखित कोशीय नियम के अनुसार कोशीय रचनांग के अन्तः प्रवेश द्वारा बनती है :

यदि Q पूर्वान्त्य शृंखला का मिश्र प्रतीक है और (D, C) एक कोशीय प्रविष्टि है जहाँ C Q से प्रभिन्न नहीं है, तो Q D के द्वारा विस्थापित हो सकता है।

अब हम शृंखलाओं को कोटियों से सम्बद्ध करने वाले आधारभूत से संप्रत्यय is a (है) को (जैसे, (3) में the boy is an NP लड़का सं प. है) को निम्न प्रकार

से विस्तरित करेंगे। हम कहते हैं कि कोशीय प्रविष्टि (D, C) के रचनांग D द्वारा मिश्र प्रतीक Q को विस्थापित करने से रचित अंत्य शृंखला में रचनांग D is an (है) [α F] (D एक [α F] है) है (समतुल्यतया, [α F] द्वारा अधिकृत है) यदि F मिश्र प्रतीक Q अथवा मिश्र प्रतीक C का अंश है जहाँ α या तो + है या − और F एक अभिलक्षण है. (किन्तु देखिए, टिप्पणी 15)। हम सामान्य 'पदबन्ध-चिह्नक" संप्रत्यय को भी इस प्रकार विस्तरित करेंगे कि अन्य शृंखला के पदबन्ध-चिह्नक में भी नयी सूचना हो। इस विस्तार के बाद, पदबन्ध-चिह्नक को स्वाभाविक रूप से अब पहले की भांति वृक्ष आरेख द्वारा निरूपित नहीं किया जा सकता है क्योंकि उपकोटिकरण के स्तर पर उसमें एक अतिरिक्त "आयाम" जुड़ गया है।

स्थूल उदाहरण के रूप में sincerity may frighten the boy (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है) (=(1) वाक्य पर पुनर्विचार करें। व्याकरण (5) के स्थान पर, हमारे व्याकरण में अब प्रशाखी नियम (51) जिन्हें अब (23) में पुनरावृत किया जा रहा है, उपकोटिकरण नियम (20) अब (24) में पुनरावृत और प्रविष्टियों सहित शब्द समूह (25) हैं। यहाँ और आगे भी यह समझ लेना चाहिए कि तिर्यगक्षरों में मुद्रित एकांश स्वनप्रक्रियात्मक परिच्छेदक अभिलक्षण मैट्रिक्स, अर्थात् रचनांगों की "वर्णाक्षरी" हैं।

(23) S → NP⁀Aux⁀VP (वा → संप⁀सहा. क्रिप)

VP → V⁀NP (क्रिप → क्रि⁀संप)

NP → Det⁀N (संप → नि⁀सं)

NP → N (संप → सं)

Det → *the* (नि → *the*)

Aux → M (सहा → प्र)

(24) (i) N (सं) → [+ N (सं), ± जाति]

(ii) [+ जाति] → [± गणनीय]

(iii) [+ गणनीय] → [± चेतन]

(iv) [− जाति] → [± चेतन]

(v) [+ चेतन] → [± मानव]

(vi) [− गणनीय] → [± अमूर्त]

(25) (Sincerity (ईमानदारी) [+ N (सं), – गणनीय, + अमूर्त])
(boy, (लड़का) [+ N(सं), + गणनीय*, + जाति, + चेतन, + मानव])
(may, (सकना) [+ M) (प्र.)])

हमें इन नियमों और कोशीय प्रविष्टियों के सम्बन्ध में आगे चल कर और कहना होगा और उनमें महत्वपूर्ण संशोधन-संवर्धन आदमी होंगे।

ये नियम हमें निम्नलिखित पूर्वान्त्य शृंखला प्रजनित करने देंगे :

(26) [+ N, (सं)-गणनीय, + अमूर्त]⁀Mप्र.⁀Q⁀the⁀
+ N (सं), + गणनीय, + चेतन, + मानव],

जहाँ Q एक मिश्र प्रतीक है जिसमें Y उन नियमों के द्वारा जिन पर हम प्रत्यक्षतः विचार करेंगे विश्लेषित होगा। कोशीय नियम (जो, चूँकि यह पूर्णतया सामान्य है, किसी भी व्याकरण में अवश्य कथनीय नहीं होते हैं,—दूसरे शब्दों में, वह "व्युत्पादन" की परिभाषा का अंग ही है) हमें प्रथम मिश्र प्रतीक के स्थान पर sincerity (ईमानदारी) और (26) के अन्तिम मिश्र प्रतीक के स्थान पर boy (लड़का) और, जैसाकि हम देखेंगे Q के स्थान पर frighten (भयभीत करना)(और M(प्र.) के स्थान पर may (सकना), देखिए टिप्पणी 9) रखने देता है। frighten (भयभीत करना) को छोड़कर (1) वाक्य की सूचना जोकि (2) में दी गई है अब स्पष्टतया और पूरी-पूरी नियम (23) और (24) और शब्द समूह (25) से युक्त व्याकरण द्वारा प्रजनित पदबन्ध चिह्न द्वारा दी जा रही है। हम इस पदबन्ध-चिह्नक को (27) में प्रदर्शित रूप द्वारा निरूपित कर सकते हैं यदि शब्द समूह में

मूल आरेख–25 में–Count मुद्रित है, जो गलत है। (अनु॰)
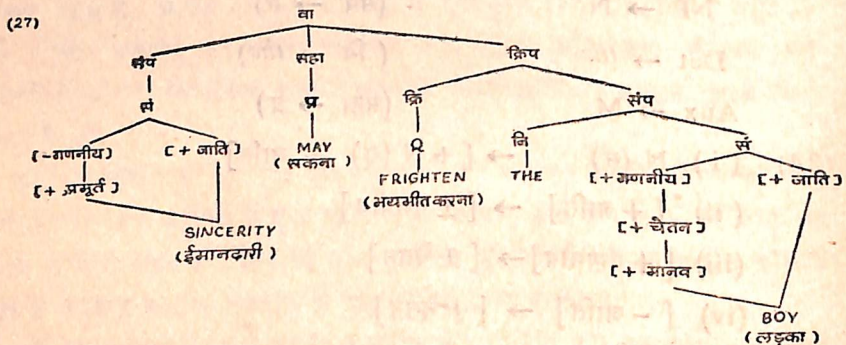
(26) में दिखाई पड़ने वाले कोशीय एकांशों के सम्बन्ध में अतिरिक्त विनिर्दिष्ट सूचना है, तो यह सूचना भी पदबन्ध-चिह्नक में उन अभिलक्षणों के शब्दों में प्रकट होगी जो कोशीय कोटियों N और Y द्वारा अधिकृत और विवेचन रचनांग को अधिकृत करने वाले स्थान में पदबन्ध-चिह्नक में प्रकट होते हैं ।

इस पदबन्ध-चिह्नक के देने पर, हम सभी (2i) और (2iii) की सूचना को जो उपश्रृंखलाओं में कोटियों के समनुदेशन से सम्बद्ध है, सम्बन्ध is a (है) के शब्दों में व्युत्पन्न कर सकते हैं; और प्रकार्यात्मक सूचना (2ii) § 2·2 में वर्णित रीति से पदबन्ध-चिह्नक से व्युत्पादन योग्य हैं ।

हम अध्याय 4, § 2 में कोशीय प्रविष्टियों के समुचित व्यवस्थापन से संबद्ध प्रश्नों पर फिर विचार करेंगे । किन्तु, हम तुरंत देख सकते हैं कि पुनर्लेखी नियमों की व्यवस्था से शब्दसमूह को पृथक् करने के पर्याप्त संख्या में लाभ हैं । एक लाभ तो यह है कि रचनांगों के व्याकरणिक गुणधर्मों में से अनेक शब्दसमूह में, वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों के साथ कोशीय रचनांगों के साहचर्य द्वारा अब प्रत्यक्षतः विनिर्दिष्ट हो सकते हैं, और इस प्रकार उन्हें पुनर्लेखी नियमों में निरूपित करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । विशिष्टतया विविध प्रकार के रूप प्रक्रियात्मक गुणधर्म इस प्रकार निश्चित किए जा सकते हैं—उदाहरणार्थ, कोशीय एकांशों की शब्दसाधक वर्गों (रूप साधक वर्ग, सबल और दुर्बल क्रियाएँ, नामिकी करणयोग्य विशेषण आदि) में सदस्यता । चूँकि अनेक ऐसे गुणधर्म आधार के नियमों की कार्यकारिता से नितांत असंगत हैं और इसके अतिरिक्त, अत्यधिक विलक्षण हैं, अतएव व्याकरण महत्वपूर्ण रीति से सरलीकृत की जा सकती है यदि ये गुणधर्म पुनर्लेखी नियमों से बहिर्गत किए जाएं और कोशीय प्रविष्टियों के भीतर, जहाँ स्वाभाविक रूप में उनका स्थान है, रखे जाएँ अथवा, (2iii) पर लौट कर, यह ध्यातव्य है कि पुनर्लेखी नियमों को सकर्मक क्रियाओं के इस वर्गीकरण करने में प्रयुक्त करना अब अनावश्यक होगा कि कौन-सी क्रियाएँ कर्म का लोपन स्वीकार करती हैं और कौन-सी प्रसामान्यतया नहीं करती हैं । इसके स्थान पर read, eat (पढ़ना, खाना) के लिए कोशीय प्रविष्टियाँ और frighten, keep (भयभीत करना, रखना) के लिए कोशीय प्रविष्टियाँ कर्म-लोपन के वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण विशेष के लिए दिए विनिर्देशों में परस्पर भिन्न होंगी और इस विनिर्देष्ट का पुनर्लेखी नियमों में उल्लेख तक नहीं होगा । कर्म के लोपन को करने वाला रचनांतरण नियम अब केवल उन शब्दों पर प्रयुक्त होगा जो इस अभिलक्षण की दृष्टि से सकारात्मक रूप में विनिर्दिष्ट है; यह सूचना अब उन श्रृंखलाओं के पदबंध-चिह्नक में होगी जिनमें ये शब्द आ रहे हैं । एक सावधानीपूर्वक रचित व्याकरण को रचित करने का कोई प्रयत्न तुरंत यह प्रकट कर देगा कि अनेक रचनांगों के अनन्य अथवा लगभग अनन्य व्याकरणिक

लक्षण होते हैं और इस प्रकार इन रीतियों से किया व्याकरण का सरलीकरण निश्चयत: सारपूर्ण होगा।

सामान्यतया, रचनांग के वे सभी गुणधर्म जो तत्वत: विलक्षण हैं शब्दसमूह में विनिर्दिष्ट होंगे[16]। विशेष रूप से कोशीय प्रविष्टि को निम्नलिखित विनिर्देश अवश्य करने चाहिए : (क) स्वनिक संरचना के पक्ष जो सामान्य नियम द्वारा पूर्व कथ्य नहीं हैं (उदाहरणार्थ, bee (मधुमक्खी) के संबंध में, कोशीय प्रविष्टि की स्वनप्रक्रियात्मक मैट्रिक्स यह विनिर्दिष्ट करेगी कि प्रथम खंड अघोष ओष्ठ्य स्पर्श है और दूसरा एक 'एक्यूट' स्वर है किन्तु वह स्पर्श के प्राणत्व की मात्रा अथवा स्वर सघोष, दृढ़ और अवर्तुलित है यह तथ्य विनिर्दिष्ट नहीं करेगा[17]; (ख) रचनांतरणात्मक नियमों की कार्यकारिता से संगत गुणधर्म (पूर्ववर्ती अनुच्छेद का उदाहरण और अन्य अनेक) : (ग) आर्थी विवेचन के लिए संगत रचनांगों के गुणधर्म (अर्थात् शब्दकोष परिभाषा के घटक) ; (घ) कोशीय अभिलक्षण, वे स्थान बताते हुए जिनमें एक पूर्वात्य श्रृंखला में (कोशीय नियम द्वारा) कोशीय रचनांग अन्त: प्रविष्ट हो सकता है। संक्षेप में, उसके अन्तर्गत सूचना होती है जो व्याकरण के स्वन प्रक्रियात्मक और आर्थी घटक द्वारा और व्याकरण के वाक्यविन्यासीय घटक के रचनांतरणात्मक अंश द्वारा अपेक्षित है। इसमें यह सूचना भी होती है जो वाक्यों में कोशीय प्रविष्टियों के समुचित स्थापनों को निर्धारित करती है, और,इस कारण, अभिव्यंजना-रूप प्रत्यक्षतया न प्रजनित हुई श्रृंखलाओं के विचलन (च्युति) की मात्रा और रीति दी होती है (देखिए § 2.3.1 और अध्याय 4, § 1.1)। प्रसंगवश यह भी द्रष्टव्य है कि किसी दिए हुए व्याकरण में शुद्धतया आर्थी कोशीय अभिलक्षणों से एक सुपरिभाषित समुच्चय बनता है। एक अभिलक्षण इस समुच्चय का सदस्य बना रहता है यदि वह स्वनप्रक्रियात्मक अथवा वाक्यविन्यासीय घटक के किसी नियम द्वारा निर्दिष्ट न हुआ हो। यह आर्थी विवेचन के सिद्धान्त के लिए महत्वपूर्ण हो सकता है। देखिए केट्स (1964b)।

यह देखना महत्वपूर्ण है कि आधार व्यवस्था, सही-सही अर्थ में, अब एक पदबंध संरचना (अवयव-संरचना) व्याकरण नहीं रह सकता है। जैसाकि § 2.3.1 में अरूपात्मक रूप में कहा गया है और वहाँ उद्धृत संदर्भों में अधिक सावधानीपूर्वक वर्णित है पदबंध संरचना व्याकरण में पुनर्लेखी नियमों का एक क्रमहीन समुच्चय होता है और वह व्याकरण एक संरचना-वर्णन समनुदेशित करता है जो कि ऐसे वृक्ष-आरेख द्वारा निरूपणीय होता है जिसके पर्व वर्णावली के प्रतीकों द्वारा नामांकित होते हैं। यह सिद्धांत भाषाई संरचना की धारणा को रूप प्रदान करता है जो कि अभिपुष्ट और रोचक है और जो कि कम से कम आधी सदी तक पर्याप्त प्रभावकारी रहा है और यह है वर्गीकरणात्मक दृष्टिकोण। इस दृष्टिकोण में वाक्य-

विन्यासीय संरचना विखंडनों और वर्गीकरण की संक्रियाओं मात्र से निर्धारित हो जाती है। (देखिए, § 2.3.1.; पोस्टल, 1964a, और चॉम्स्की-1964)। निस्संदेह, हम इस सिद्धान्त से यह मान कर स्वयं दूर हो चुके हैं कि पुनर्लेखी नियम (आधार) शृंखलाओं के सीमित समुच्चय को प्रजनित करने में एक पूर्वनिर्धारित अनुक्रम में प्रयुक्त होते हैं न कि वास्तविक वाक्यों के पूरे समुच्चय को प्रजनित करने में मुक्ततया प्रयुक्त होते हैं। इस आपरिवर्तन ने पदबंध संरचना व्याकरण की भूमिका को सीमित कर दिया था। किन्तु मिश्र प्रतीकों को प्रयोग में लाने से इस सिद्धान्त से मूलतः महत्वपूर्ण विचलन हो गया है और अभी संसूचित शब्दसमूह का पृथक् विवेचन एक तात्विक संशोधन है। अब यह कहना सत्य नहीं है कि पदबंध-चिह्नक एक नामांकित वृक्ष-आरेख द्वारा निरूपित हो सकता है जहाँ प्रत्येक नामांकन शृंखलाओं की कोटि के लिए नियत है। इसके अतिरिक्त, मिश्र प्रतीकों के प्रयोग की रूढ़ियाँ, प्रभावतः आधार घटक में मिथ्या-रचनांतरणात्मक नियमों को प्रयोग में आने दे रही हैं।

यह देखने के लिए कि ऐसा क्या है, यह द्रष्टव्य है कि केवल पदबंध सरचना नियमों (पुनर्लेखी नियमों) से संबद्ध व्युत्पादन सुदृढ़तया "मारकोवी" (Markovian) प्रकृति का होता है। अर्थात् एक व्युत्पादन में जहाँ क्रमिक पंक्तियाँ $\sigma_1 \cdots \sigma_n$ ($\sigma_1 = \#S\#$, $\sigma_n = a_1 -- a_k \#$ (जहाँ प्रत्येक a_i उस वर्णावली का अंत्य अथवा उपांत्य प्रतीक है जिस पर व्याकरण आधारित है) हैं a_i नियम जो अगली पंक्ति σ_{n+1} को बनाने में प्रयुक्त होते हैं $\sigma_1 \cdots, \sigma_{n-1}$ से स्वतत्र होते हैं और पूर्णतया σ_n शृंखला पर निर्भर होते हैं। इसके विपरीत, व्याकरणिक रचनांतरण प्रकारात्मक रूप से विशिष्ट संरचना वर्णन के साथ शृंखला पर प्रयुक्त होता है। इस प्रकार, ऐसे नियम का व्युत्पादन की अन्तिम रेखा पर अनुप्रयोग अंशतः पूर्ववर्ती पंक्तियों पर निर्भर होता है। दूसरे शब्दों में, व्याकरणिक रचनांतरण एक ऐसा नियम है जो पदबंध-चिह्नकों पर, न कि व्याकरण की अंत्य और उपांत्य वर्णावली में शृंखलाओं पर प्रयुक्त होता है।

किन्तु, मान लीजिए कि हमें उन शृंखलाओं में नामांकित कोष्ठक सम्मिलित करने को हों जो व्युत्पादन निर्मित करती हैं और "पुनर्लेखी नियमों" को इन प्रतीकों के लिए निर्दिष्ट करने देना हों। जब हमें एक प्रकार का रचनांतरण व्याकरण मिलेगा और हमें भाषा संरचना विषयक अन्तः प्रज्ञा को पूर्णतया भूल जाना होगा जिसने पदबंध संरचना व्याकरण के विकास को अभिप्रेरित किया था। वस्तुतः कोष्ठकों का शृंखलाओं में समावेश स्वनप्रक्रियात्मक घटक के रचनांतरणात्मक नियमों के सर्वाधिक उपयुक्त अंकन देता है (देखिए हॉले और चॉम्स्की, 1960, 1968; चॉम्स्की और मिलर, 1963, § 6), यद्यपि वाक्यविन्यासीय घटक के

रचनांतरणात्मक नियमों के संबंध में ऐसा नहीं है क्योंकि वे स्वनप्रक्रिया के रचनांतरण–चक्र में अनन्य रूप से प्रकट होने वाले "स्थानीय रचनांतरणों" से भिन्न हैं।[18] किन्तु मिश्र प्रतीकों की उपलब्धि के साथ, व्युत्पादन के पूर्ववर्ती सोपानों के पक्ष परवर्ती सोपानों तक ले जाए जा सकते हैं। यह ऐसा ही है जैसे रचनांतरणात्मक नियमों के अंकन में होता है जो व्युत्पादन की पंक्तियों में नामांकित कोष्ठकों के साथ-साथ चलते हैं, और कुछ सीमा तक, श्रृंखलाओं पर की समग्र संक्रियाएँ मिश्र कोटि प्रतीकों में संकेतित की जा सकती हैं और व्युत्पादनों में आगे चलायी जा सकती हैं जबतक कि इन संक्रियाओं का "अनुप्रयोग" बिन्दु नहीं आ जाता है। परिणामतः, मिश्र प्रतीकों पर प्रयुक्त नियम प्रभावतः रचनांतरण–नियम हैं और मिश्र प्रतीकों को काम में लाने वाला व्याकरण एक प्रकार का रचनांतरण-व्याकरण होता है, न कि पदबंध संरचना व्याकरण। प्रसंगवश यह द्रष्टव्य है कि मिश्र प्रतीकों के प्रयोग के लिए स्थापित रूढ़ियाँ पदबंध संरचना व्याकरणों की तुलना में अधिक दुर्बल प्रजनक क्षमता वाली व्यवस्थाओं को नहीं देती है (यदि व्युत्पादन में, न कि केवल कोशीय कोटियों में, किसी बिन्दु पर मिश्र प्रतीकों को प्रकट होने देने के लिए उपयुक्त रूढ़ियाँ स्थापित भी हो जाए –देखिए टिप्पणी 4) निस्संदेह यह तथ्य इस प्रेक्षण को प्रभावित नहीं करता है कि ऐसा सिद्धान्त का रूपान्तर नहीं रह पाता है।

§ 2.3.4. प्रसंगसापेक्ष रूपकोटिकरण नियम

हमने अभी तक इस पर विचार नहीं किया कि कोटि V(क्रि) किस प्रकार मिश्र प्रतीक में विश्लेषित हो सकती है। इस प्रकार मान लीजिए कि हमारे पास व्याकरण (23)–(25) है। हमें अब भी वे नियम देने चाहिए जो यह निर्धारित करें कि किसी V (क्रि) को सकर्मक होना चाहिए या नहीं, इत्यादि और हमें शब्द-समूह में प्रत्येक क्रियात्मक रचनांगों के लिए उपयुक्त प्रविष्टियाँ देनी चाहिए। (24) के समतुल्य नियम (28) को व्याकरण में जोड़ देने मात्र से काम नहीं चलेगा :

(28) (क्रि) V→ [+ V(क्रि) ± कि घटमान, ± सकर्मक, ± अमूर्त-कर्ता, ± चेतन-कर्म]

समस्या यह है कि मिश्र प्रतीक V (क्रि) की उपस्थिति एक ऐसे मिश्र प्रतीक द्वारा विस्थापित हो सकती है जिसमें परिवेश–NP (संप) में अभिलक्षण [+ सकर्मक) होता है। इसी प्रकार, क्रिया अभिलक्षण [अमूर्त-कर्ता] के लिए सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट हो सकती है यदि वह परिवेश (+ अमूर्त]....में हो; और वह अभिलक्षण [चेतन-कर्म] के लिए सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट हो सकती है यदि वह परिवेश–....[+ चेतन] में हो, और इसी प्रकार उन सब कोशीय अभिलक्षणों के

संबंध में होगा जो प्रासंगिक प्रतिबंधों के कथन में उपलब्ध है। अतएव, [सकर्मक], [अमूर्त-कर्ता], [चेतन-कर्म] अभिलक्षणों को उन पुनर्लेखी नियमों द्वारा प्रस्तुत करना चाहिए जो प्रसंग से किसी भांति प्रतिबद्ध हों और ये संज्ञाओं को उपकोटिकृत करने वाले प्रसंगनिरपेक्ष (22) के नियमों से प्रभिन्न हैं।[19]

प्रथम सन्निकटन के रूप में V (क्रि) के विश्लेषण के लिए निम्नलिखित प्रकार के नियमों पर विचार कर सकते हैं।

(29) (i) V (क्रि) → [+V, (क्रि) + सकर्मक]/—NP (संप)

(ii) V (क्रि) → [+V, (क्रि) − सकर्मक]/—#

(30) (i) [+क्रि (V) → [+[+अमूर्त] − कर्ता]/[+N सं, +अमूर्त] Aux (सहा)–

(ii) [+ क्रि (V) → [+[− अमूर्त]–कर्ता]/[+N सं, − अमूर्त] Aux (सहा)–

(iii) [+क्रि (V) → [+ [+चेतन] − कर्म]/नि. (Det) [+सं (N), + चेतन]

(iv) [+क्रि (V) → [+[− चेतन]-कर्म]/ − नि॰ (Det) [+सं N, − चेतन]

अब हम (4), (29), (30) जैसे प्रसंगसापेक्ष पुनर्लेखी नियमों से सम्बद्ध सामान्यीकरणों को अभिव्यक्त करने के लिए मानक रूढ़ियाँ प्रस्तुत कर सकते हैं। (देखिए, उदाहरणार्थ, चॉम्स्की, 1957, परिशिष्ट, देखिए अध्याय 1 § 7 भाषाई सिद्धान्त में इन रूढ़ियों की भूमिका के विवेचन के लिए) और विशेषतः इस रूढ़ि को कि :

(31) $$A \rightarrow Z \,/\, \left\{ \begin{array}{c} X_1 — Y_1 \\ \vdots \\ X_n — Y_n \end{array} \right\}$$

निम्नलिखित नियमों के अनुक्रम का संक्षिप्त रूप है :

(32) (i) $A \rightarrow Z/X_1—Y_1$

$\vdots$

(ii) $A \rightarrow Z/X_n—Y_n$

और अन्य परिचित सम्बद्ध रूढ़ियों को भी प्रस्तुत करते हैं। इनकी सहायता से (29) और (30) को (33) और (34) में क्रमशः पुनः कथित कर सकते हैं :

(33) (i), (ii) (V) कि → [+Vकि, { + सकर्मक]/−संप.(NP) ; − सकर्मक]/−# }

(34) (i) (ii) (iii) (iv) [+क्रि(V)] →
[+[+अमूर्त]-कर्ता]/ [[+सं. N, +अमूर्त] सहा(Aux)-
[+[-अमूर्त]-कर्ता]/ [[+स.N, -अमूर्त] सहा(Aux)-
[+[+चेतन]-कर्म]/ [-नि. Det[+सं N, +चेतन]
[+[-चेतन]-कर्म]/ [-नि. Det[+सं. N, -चेतन]

यह तुरन्त प्रकट है कि नियम (33) और (34), यद्यपि रूपीयतः पर्याप्त हैं, अत्यधिक भौंड़े हैं और महत्वपूर्ण सामान्यीकरणों में अनभिव्यक्त छोड़ देते हैं। यह और भी अधिक स्पष्ट हो जाता है जब हम देखते हैं कि (34) के साथ-साथ इसी भांति के अनेक नियम हैं, और (33) के साथ-साथ क्रियाओं के उपकोटियों के विविध अन्य विकल्पों को विनिर्दिष्ट करने वाले नियम मिलते हैं, जैसे इन परिवेशों में :—

विशेषण [जैसे grow (old), (वृद्ध) होना, feel (sad) (दुखी) होना–विधेय-नामिक [become (होना) (president) (अध्यक्ष)], –like⁀विधेय-नामिक [look (like a nice person) देखना (अच्छे व्यक्ति की तरह), [act (like a fool) कार्य करना (मूर्ख की तरह)],–s' (वा') [think (that he will come), सोचना (कि वह आएगा) believe (it to be unlikely) समझना (ऐसा होना असम्भव है) जहाँ s' (वा') वाक्य–NP⁀s' (सप⁀वा)[persuade (John that it is unlikely)] [समझना(जॉन कि यह असम्भव है)(कुछ परिष्कारों को छोड़ते हुए) का एक परिवर्त है।

दूसरे शब्दों में, अभी तक विकसित व्याकरणिक वर्णन की समावृत्ति वाक्यों के रूप निर्धारण में लग्न वास्तविक प्रक्रियाओं को हमें कथित करने नहीं देती है। वर्तमान स्थिति में, नियमों का एक विशाल समुच्चय (जिसके केवल चार उल्लेख (34) में दिए गए हैं) है जो प्रभावतः कर्ता और कर्म के अभिलक्षणों को, कुछ-कुछ अनेक भाषाओं में अन्विति के सामान्य नियमों की रीति से, क्रिया पर समनुदेशित करता है; और अनेक नियम हैं (जिनमें(33)में केवल दो प्रस्तुत किए गए हैं)जो क्रिया नामक कोटि पर उन ढाँचों के समुच्चय के शब्दों में उपवर्गीकरण अध्यारोपित करते हैं जिनमें व्युत्पादन के उपकोटिकरणीय सोपान पर कोटि प्रकट होती है। यह सामान्यीकरण अभी तक विकसित व्याकरणिक वर्णन के लिए समाकृति के शब्दों में अभिव्यक्ति योग्य नहीं है, और यह ऐसी अपर्याप्तता है जो उन नियमों की व्यवस्थाओं की समाधिकता और भद्देपन में स्वयं प्रकट होती है जो (33) और (34) में नमूने के रूप में आए हैं।

हमारी वर्तमान कठिनाई स्पष्टतया नियम (34) को परिकल्पित समुच्चय (35) से तुलना द्वारा दिखाई पड़ती है :

(35)
(i) [+ कि. V] → [+ F_1]/ [+ N, सं. + अमूर्त] Aux सहा—
(ii) [+ F_2]/ [+ N, सं., − अमूर्त] Aux सहा—
(iii) [+ F_1]/—Det नि. [+ N, सं. + चेतन]
(iv) [− F_2]/ —Det नि. [+ N, सं. − चेतन]

जहाँ F_1 और F_2 कतिपय वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण हैं। (34) जैसे नियम व्यवस्थापूर्ण रीति से क्रिया को कर्ता और कर्म के चयन के शब्दों में चुनते हैं, जबकि नियम (35) कर्ता और कर्म के चयन के शब्दों में किसी तत्वत: अव्यवस्थित रीति से क्रियाओं के उपकोटिकरण को निर्धारित करते हैं। किन्तु, व्यवस्था (34) हमारे वर्तमान शब्दों में (35) की तुलना में अधिक उच्चतया मूल्यवान नहीं है। वस्तुत: इस स्थिति में विपरीत सही होता यदि इन व्यवस्थाओं के मूल्यांकन के लिए परिचित आंकनिक रूढ़ियाँ प्रयुक्त की गई होतीं। दूसरे शब्दों में, (34) में अन्तर्निहित भाषाई दृष्टि से महत्वपूर्ण सामान्यीकरण हमारे वर्तमान ढाँचे में अभिव्यक्ति योग्य नहीं है जोकि इस कारण अपर्याप्त दिखाया गया है (इस उदाहरण में अपर्याप्तता व्याख्यात्मक पर्याप्तता के स्तर की है)।

अब यह देखना है कि इन प्रक्रियाओं की अधिक स्वाभाविक और प्रकटकारी अभिव्यक्ति किस प्रकार विकसित की जा सकती है। द्रष्टव्य है कि अभिलक्षण विनिर्देश(+सकर्मक) परिवेश–संप (NP) में उपस्थिति-सूचक अंकन मात्र माना जा सकता है। एक अधिक अभिव्यक्तिकारी अंकन स्वयं "संप NP" प्रतीक मात्र हो सकता है[20]। सामान्यीकरण करते हुए, हमें कुछ अभिलक्षण रूप (X–Y) में लक्षित करने चाहिए, जहाँ X और Y प्रतीकों की शृंखला (कदाचित् शून्य) है। अब से हम इन्हें **प्रासंगिक अभिलक्षणों** से अभिहित करेंगे। सकर्मक क्रियाओं को प्रासंगिक अभिलक्षण (− संप (NP) के लिए सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट माना जा सकता है, प्राक् विशेषणात्मक क्रियाओं, जैसे grow, feel (उगना, होना) आदि को अभिलक्षण (− विशेषण) के लिए सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट माना जा सकता है, इत्यादि। अतएव हम उपकोटिकरण का यह सामान्य नियम बना सकते हैं कि **प्रत्येक क्रिया उस प्रासंगिक अभिलक्षण की दृष्टि से सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट होती है जो उस प्रसंग से सहचरित है जिसमें वह उपस्थित होती है।**

हम इस प्रकार अंकन

(36) $A \rightarrow X \frown CS \frown Y / Z — W$

को निम्नलिखित पुनर्लेखी नियम की संक्षिप्ति के रूप में प्रस्तुत करते हैं :

(37) $A \rightarrow X \frown (+A, +Z - W) \frown Y / Z–W,$

जहाँ CS (मिप्र) "मिश्र प्रतीक" के लिए प्रयुक्त चिह्न है। कोष्ठन रूढ़ियों को प्रयुक्त करते हुए हम

(38) $A \rightarrow X \frown CS \frown Y / \left\{ \begin{array}{c} Z_1 - W_1 \\ \cdots\cdots \\ \cdots\cdots \\ \cdots\cdots \\ Z_n - W_n \end{array} \right\}$

को निम्नलिखित नियमों के अनुक्रम की सक्षिप्त के रूप में रख सकते हैं।

(39) $A \rightarrow X \frown [+A, +Z_1 - W_1] \frown Y / Z_1 - W_1$

$\vdots$

$A \rightarrow X \frown [+A, +Z_n - W_n] \frown Y / Z_n - W_n$

(35) में प्रस्तुत अंकन यह तथ्य हमें प्रकट करने देता है कि ढाँचों का वह समुच्चय जिसमें प्रतीक A आता है A पर तदनुरूप उपवर्गीकरण अध्यारोपित कर देता है और प्रत्येक सूचीबद्ध प्रसंग के लिए तदनुरूप एक-एक उपविभाजन होता है। इस प्रकार क्रिया उपवर्गीकरण की स्थिति में हम (33) के स्थान पर नियम (40) को एक अधिक अच्छा सन्निकटन मान सकते हैं :

(40) (क्रि → मिप्र)
V → CS/– {
NP संप
#
विशेषण
विधेय-नामिक
तरह
like⁀विधेय-नामिक][21]
पूर्वसर्गीय पदबंध
कि
that⁀S'
संप नि सं उ
NP (of⁀Det⁀N) S'
आदि........
}

शब्द समूह अब इन एकांशों से युक्त होगा :

(41) **eat,** [+V, +− NP] खाना, [+ क्रि, + —संप]

elapse, [+ V, + −#] समाप्त होना, [क्रि, + −#]

grow, [+ V, + − NP, + —#, + —विशेषण]

(उगना) (क्रि) (संप)

become, [+ V, + − विशेषण, + —विधेय-नामिक]

(होना) (क्रि)

Seem, [+ V, + − विशेषण, + — like विधेय-नामिक]

(लगना) (क्रि) (तरह)

look, [+ V, + − (पूर्वसर्गीय-पदबंध) #, + —विशेषण,

(देखना) (क्रि)

+ —like विधेय-नामिक]

(तरह)

believe, [+ V, + —NP, + —that S')

विश्वास करना क्रि संप क्रि वा

persuade, [+ V, + —NP(of Det N) S')

(समझाना) (क्रि) (संप) (नि सं)(वा)

आदि आदि[22]। नियम (40) शब्द समूह (41) द्वारा परिपूरित होकर इस प्रकार की उक्तियों को बनने देंगे :

John eats food (जॉन खाना खाता है), a week elapsed (एक सप्ताह समाप्त हुआ), John grew a beard (जॉन ने दाढ़ी उगाई), John grew (जॉन बढ़ा), John grew sad (जॉन दुखी हुआ), John became sad (जॉन दुखी बना), John became president (जॉन अध्यक्ष बना), John seems sad (जॉन दुखी लगता है), John seems like a nice fellow, (जॉन अच्छा साथी लगता है), John looked (जॉन ने देखा), John looked at Bill (जॉन ने बिल को देखा), John looks sad (जॉन दुखी लगता है), John looks like a nice fellow (जॉन एक अच्छा साथी दिखता है), John believes me (जॉन मुझ पर विश्वास करता है), John believes that it is unlikely (जॉन विश्वास करता है कि यह असम्भव है), John persuaded Bill that we should leave (जॉन ने बिल को समझाया कि हमको छोड़ देना चाहिए), John persuaded Bill of the necessity for us to leave, (जॉन ने बिल को छोड़ने की आवश्यकता समझाई)। हम देखते हैं कि पारम्परिक अंकनों के किंचित् विस्तार के बाद मिश्र प्रतीकों का

व्यवस्थाबद्ध प्रयोग उपवर्गीकरण की आधारभूत प्रक्रियाओं में से एक के सम्बन्ध में पर्याप्त सरल और सूचनापूर्ण कथन प्रस्तुत करता है।

हम इसी आंकनिक युक्ति को (34) जैसे नियमों में व्यक्त चयनात्मक प्रतिबन्धों के प्रकारों को अभिव्यक्त कर सकते हैं जो कर्ता और कर्म के अभिलक्षण को क्रिया पर समनुदेशित करते हैं। इस प्रकार हम (34) के नियमों को इन नियमों से विस्थापित कर सकते हैं :

(42) (i) (ii) (iii) (iv) — क्रि→मिप्र [+V]→CS/ { [+अमूर्त] Aux सहा.— ; [−अमूर्त] Aux सहा.— ; —Det (नि.)[+चेतन] ; —Det (नि.)[—चेतन] }

(i)	क्रि→मिप्र [+V]→CS/	[+अमूर्त] Aux सहा.—
(ii)		[−अमूर्त] Aux सहा.—
(iii)		—Det (नि.)[+चेतन]
(iv)		—Det (नि.)[—चेतन]

जहाँ अब [[+अमूर्त]Aux सहा—] अभिलक्षण (34) में [[+अमूर्त]—कर्ता से द्योतित था। आंकनिक रूढ़ियाँ (36)-(37) यह प्रदर्शित करती हैं कि किस दृष्टि से (34) जैसे, किन्तु (35) नहीं, व्यवस्था-नियम एक भाषाई दृष्टि से महत्वपूर्ण सामान्यीकरण को अभिव्यक्त करते हैं।

(40) और (42) के नियम एक कोटि को, उस ढाँचे के शब्दों में जिसमें वह कोटि प्रकट होती है, मिश्र-प्रतीक में विश्लेषित करते हैं। नियम इस दृष्टि से भिन्न हैं कि (40) में ढाँचा कोटीय प्रतीकों के शब्दों में कथित किया गया है, जबकि (42) में वह वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों के शब्दों में कथित किया गया है। (40) जैसे नियमों को जो प्रतीक को अपनी कोटीय प्रसंग के शब्दों में विश्लेषित करते हैं, अब से मैं **सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम** कहूँगा। (42) जैसे नियम, जो प्रतीक (प्रायः, मिश्र प्रतीक) को, उन ढाँचों के वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों के शब्दों में जिसमें वह प्रकट होता है, विश्लेषित करते हैं, हम "चयनात्मक नियम" कहेंगे। चयनात्मक नियम, जिन्हें हम सामान्यतया "चयनात्मक प्रतिबन्ध" अथवा "सहभागिता (सहघटन) के प्रतिबन्ध" के कहते हैं, उन्हें अभिव्यक्त करता है। हम आगे चलकर देखेंगे कि रूप और प्रकार्य दोनों की दृष्टि से सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों और चयनात्मक नियमों के बीच महत्वपूर्ण वाक्यविन्यासीय और आर्थी अन्तर है। अतएव यह प्रभेद एक महत्वपूर्ण प्रभेद माना जा सकता है।

(40) जैसे सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों और (42) जैसे चयनात्मक नियमों दोनों की स्थिति में और अधिक गहन सामान्यीकरण हैं जिन्हें अभी अभिव्यक्त नहीं किया गया है। पहले (40) को लें। नियमों का यह समुच्चय प्रतीक क्रि० (V) पर, उन कुछ ढाँचों के समुच्चय के शब्दों में जिनमें क्रि० (V) घटित होता है, कोटिकरण

अध्यारोपित करता है। वह यह तथ्य अभिव्यक्त करने में असफल रहता है कि प्रत्येक ढाँचा जिसमें क्रिप. (VP) में क्रि. (V) प्रकट होता है क्रि. (V) के सुदृढ़ उपकोटिकरण के लिए सार्थक है, और वह यह तथ्य भी अभिव्यक्त नहीं कर पाता कि कोई भी ढाँचा जो क्रिप (VP) का भाग नहीं है, क्रि. (V) के सुदृढ़ उपकोटिकरण के लिए सार्थक नहीं हो सकता है। इस प्रकार आधार के पुनर्लेखी नियमों से प्रजनित व्युत्पादनों में प्रतीक क्रिप. (VP) निम्नलिखित जैसी शृङ्खलाओं को अधिकृत करेगा।

(43) (i) V (क्रि) (elapse) (समाप्त होना)
(ii) V NP (क्रि संप) (bring the book) (पुस्तक लाओ)
(iii) V NP that–S (persuade John that there was no hope)
(क्रि संप कि वा) (जॉन को समझाओ कि कोई आशा नहीं)
(iv) V Prep–Phrase (decide on a new course of action)
(क्रि पूर्व पद) (नई कार्य-प्रणाली निश्चय करो)
(v) V Prep–Phrase Prep-Phrase
(क्रि पूर्व पद पूर्वपद)
(argue with John about the plan)
(जॉन के साथ योजना पर तर्क करो)
(vi) V Adj (grow sad)
(क्रि विशे) (दुखी होना)
(vii) V like Predicate–Nominal (feel like a new man)
(क्रि तरह विधेय ना.) (नए व्यक्ति की तरह अनुभव करो)
(viii) V NP Prep–Phrase (save the book for John)
(क्रि संप पूर्व पद) (जॉन के लिए पुस्तक सुरक्षित रखो)
(ix) V NP Prep–Phrase Prep-Phrase
(क्रि संप पूर्व पद पूर्वपद)
(trade the bicycle to John for a tennis racket)
(टेनिस रेकट के लिए जॉन को साइकिल बेच दो)

इत्यादि क्रिप.(VP) द्वारा अधिकृत प्रत्येक इस प्रकार की शृंखला के अनुरूप क्रियाओं का एक सुदृढ़ उपकोटिकरण है। इसके विपरीत, प्रकटतया क्रियाएँ कर्ता संप (NP) अथवा क्रियासहायकों सहा (Aux) के प्रकार के आधार पर सुदृढ़तया उपकोटिकृत नहीं होती हैं[23]। यह पर्यवेक्षण यह सुझाव देता है कि आधार पुनर्लेखी नियमों के अनुक्रम में किसी एक बिन्दु पर हम ऐसा नियम प्रस्तुत करते हैं जो क्रियाओं को निम्नलिखित रूप में सुदृढ़तया उपकोटिकृत करता है :

(44) V → CS/—α क्रि → मिप्र/—α

जहाँ α ऐसी शृंखला है कि क्रि. (V) α एक क्रिप. (VP) है। नियम समाकृति (44) उस वास्तविक सामान्यीकरण को अभिव्यक्त करता है जो क्रियाओं के सुदृढ़ उपकोटिकरण को उन वाक्यविन्यासीय ढाँचों के समुच्चय के शब्दों में जिसमें क्रिया (V) प्रकट होता है, निर्धारित करता है।

अब हम उन सामान्यीकरणों को व्यवस्थापित करने की समस्या का विवेचन कर चुके हैं जो वस्तुत: सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों (40) में अन्तर्निहित है और इस कार्य सिद्धि के लिए अनौपचारिक रूप से एक युक्ति कर चुके हैं। अब चयनात्मक नियमों पर, जिसका (42) एक नमूना है, विचार करना बाकी है। यहाँ भी यह स्पष्ट है कि अनेक भाषाई दृष्टि से महत्वपूर्ण सामान्यीकरण हैं जो इस रूप में दिए नियमों में अभिव्यक्त नहीं हो पाते हैं। इस प्रकार नियम (4) इस तथ्य का कोई उपयोग नहीं करते हैं कि कर्ता और कर्म का प्रत्येक वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण, न कि कुछ यादृच्छिक रूप से चुने अभिलक्षण, क्रियाओं पर तदनुरूप वर्गीकरण अध्यारोपित करता है[24]। फिर से, नियम को व्यवस्थापित करने के लिए आंकनिक युक्तियों का एक विस्तार विशेष आवश्यक है ताकि मूल्यांकन माप सही-सी संक्रिया कर सके। इस स्थिति में, आधारभूत सामान्यीकरण को व्यवस्थापित करने की सर्वाधिक स्वाभाविक रीति निम्नलिखित जैसे नियम-समाकृति से होगी :

(45) $\underset{\text{(क्रि}}{[+V]} \rightarrow \underset{\text{मिप्र)}}{CS/} \left\{ \begin{array}{l} \alpha \frown \text{Aux–सहा} \\ \\ \text{—}\underset{\text{नि.}}{\text{Det}} \frown \alpha \end{array} \right\}$, जहाँ α एक सं. (N) है।

और यहाँ α विनिर्दिष्ट अभिलक्षणों पर व्याप्त एक परिवर्त है। हम इस समाकृति का निर्वचन इस प्रकार करते हैं कि वह (45) से व्युत्पन्न सभी नियमों के अनुक्रम को, α के स्थान पर कथित निर्धारक को पूर्ण करने वाले प्रतीक द्वारा जैसे N द्वारा अधिकार (कुछ क्रमबंधन के साथ जोकि प्रकटतया परिणाम रहित है) संक्षिप्त रूप में करता है। समाकृति (45) द्वारा संक्षेपीकृत नियम केवल यह बलपूर्वक कहते हैं कि पूर्ववर्ती और परवर्ती संज्ञा का प्रत्येक अभिलक्षण क्रिया पर समनुदेशित किया जाता है और वह उसके उपयुक्त चयनात्मक उपवर्गीकरण को निर्धारित करता है। इस प्रकार यदि नियम (45) नियम (20) के पश्चात् आधार नियमों के अनुक्रम में प्रकट होता है तो (20) के नियमों द्वारा प्रस्तुत प्रत्येक कोशीय अभिलक्षण मिश्र प्रतीक [+V क्रि] के तदनुरूप उपवर्गीकरण को निर्धारित करेगा।

नियम समाकृति (44) और (45) उस परिस्थिति से सामना कर रही है जहाँ एक तत्व (उदाहरण में 'क्रिया'), उन प्रसंगों के शब्दों में जिनमें यह तत्व प्रकट होता है, उपकोटिकृत होता है और ये प्रसंग ऐसे हैं जो कुछ वाक्यविन्यासीय निर्धारक को

पूरा करते हैं। सभी स्थितियों में, कोई भी महत्वपूर्ण सामान्यीकरण छूट सकता है यदि सार्थक प्रसंग केवल सूत्रीबद्ध किए गए हैं। व्याकरण का सिद्धान्त इस तथ्य को अभिव्यक्त करने में असफल होगा कि व्याकरण स्पष्टतया अधिक उच्चतया मूल्यवान होता है यदि उपकोटिकरण वाक्यविन्यासीय दृष्टि से परिभाषित प्रसंग-समुच्चय द्वारा निर्धारित होता है। "वाक्यविन्यासीय दृष्टि से परिभाषित" होने के उपयुक्त अर्थ का सुझाव अभी चर्चित उदाहरणों में दिया गया है। "वाक्यविन्यासीय दृष्टि से परिभाषित" होने का सूक्ष्म वर्णन रचनांतरण-व्याकरण के ढाँचे के भीतर तुरंत दिया जा सकता है।

§ 2. 3. 3. की समाप्ति पर हमने यह दिखाया था कि मिश्र प्रतीकों का प्रयोग करने वाली पुनर्लेखी नियमों की व्यवस्था अब एक पदबंध संरचना व्याकरण नहीं कही जा सकती है (यद्यपि यह व्यवस्था दुर्बल प्रजनक क्षमता वाले व्याकरण से भिन्न नहीं होती है), बल्कि उसे रचनांतरण-व्याकरण का एक प्रकार मानना अधिक उपयुक्त होगा। नियम समाकृति (44) और (45) रचनांतरणात्मक नियमों की प्रकृति और अधिक स्पष्टता से स्वीकार करती है। इस प्रकारता के नियम तत्वतः निम्नलिखित रूप के होते हैं :–

(6) $A \rightarrow CS/X—Y$,जहां XAY विश्लेषणीय है Z_1,—Z_n में,

जहाँ अभिव्यक्त "X" विश्लेषणीय है "$Y_1,\ldots,Y_n$" में का अर्थ है कि X का $X = X_1 - X_n$ में ऐसा विखंडन किया जा सकता है कि विवेच्य व्युत्पादन के पदबंध-चिह्नक में X_i Y_i द्वारा अधिकृत है। इस अर्थ में विश्लेषणीयता आधारशिला है जिसके शब्दों में रचनांतरण-व्याकरण का सिद्धान्त विकसित होता है। (देखिए, चॉम्स्की, 1955, 1956 और अन्य अनेक संदर्भ)। इस प्रकार, उदाहरणार्थ, हम प्रायः विवेच्य नियमों को नामांकित कोष्ठकों द्वारा (यह मानते हुए कि व्युत्पादन के दौरान ये बढ़ते रहेंगे) अथवा व्युत्पादन के यादृच्छिकतया निश्चित बिन्दु पर मिश्र प्रतीकों को प्रकट करने के द्वारा पुनः कथित कर सकते हैं। दूसरी विधि में हम टिप्पणी 13 में संदर्भित मैथ्यूस की व्यवस्था की रीति से अथवा अनेक अन्य समान रीतियों से [25] विशेष मिश्र प्रतीक के "वंशजों" (पररूपों) में से कुछ तक कुछ अभिलक्षणों में आगे ले जा सकते हैं।

शब्द समूह के साथ-साथ, इस प्रकार, व्याकरण के आधार घटक के अन्तर्गत आते हैं : (i) पुनर्लेखी नियम जो प्रकारात्मक रूप से प्रशाखन से संबद्ध हैं और जो केवल कोटीय (अ–मिश्र) प्रतीकों को प्रयुक्त करते हैं, और (ii) नियम समाकृतियाँ जो प्रसंग के कथन के अतिरिक्त केवल कोशीय कोटियों से संबद्ध हैं और जो मिश्र प्रतीकों को काम में लाती हैं। नियम (i) सामान्य पदबंध-संरचना नियम होते हैं, किन्तु नियम (ii) आरंभिक प्रकार के रचनांतरण नियम हैं। वस्तुतः यह सुझाव

दिया जा सकता है कि नियम (1) को अंशतः नियम समाकृतियों द्वारा विस्थापित करना चाहिए जो सबल प्रजनक क्षमता में पदबंध संरचना नियमों के परास के बाहर तक जाती हैं (देखिए, उदाहरणार्थ, चॉम्स्की और मिलर, 1963, पृ० 298, चॉम्स्की और शिस्टज़ेन्बेन्ज (Schistzenbenges) 1963, पृ० 133, जहाँ समुच्चयन जैसी संक्रियाओं का इस प्रकार के ढाँचे के शब्दों में विवेचन किया गया है) अथवा स्थानीय रचनांतरणों द्वारा (देखिए, टिप्पणी 18) विस्थापित करना चाहिए। संक्षेप में, यह स्पष्ट हो चुका है कि प्रथमतः यह मानना एक गलती थी कि रचनांतरण व्याकरण का आधारघटक सुदृढ़तया पदबंध संरचना नियमों में ही सीमित रहे, यद्यपि ऐसी व्यवस्था की आधार घटक के उप-भाग के रूप में आधारभूत भूमिका रहती है। वस्तुतः, उसकी भूमिका उन व्याकरणिक सबंधों को परिभाषित करने में है जो गहन संरचना में अभिव्यक्त होते हैं और जो इस कारण वाक्य के आर्थी निर्वचन को निर्धारित करते हैं।

आधार घटक की वर्णनात्मक शक्ति रचनांतरण-नियमों को स्वीकार करने से अत्यधिक बढ़ जाती है; परिणामतः, उनके प्रयोग पर कौन-सी परिसीमाएँ अध्यारोपित की जाएँ यह देखना महत्वपूर्ण है, अर्थात् यह देखना कि ऐसी युक्तियों को प्रयुक्त करने की किस सीमा तक स्वतंत्रता वस्तुतः अनुभवाश्रित अभिप्रेरणों से उत्पन्न है। अभी दिए उदाहरणों से, यह लगता है कि वास्तव में भारी प्रतिबंध हैं। इस प्रकार, V का सुदृढ़ उपकोटिकरण केवल उन ढाँचों से संबद्ध है जो प्रतीक VP द्वारा अधिकृत होते हैं और स्पष्ट प्रतिबंध भी हैं (जिन पर हम § 4.2 में विचार करेंगे) जो चयनात्मक नियमों से संबद्ध हैं। इस समय इन पर ध्यान न देते हुए, हमें सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों की गवेषणा को ज़ारी रखना चाहिए।

प्रतीक V(क्रि)इस रूप के नियमों द्वारा प्रस्तुत होता है : VP(क्रिप)→ V(क्रि).... VP (क्रिप) द्वारा अधिकृत ढाँचे ही क्रियाओं से सुदृढ़ उपकोटिकरण को निर्धारित करते हैं, इससे यह सुझाव मिलता है कि सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम पर हम यह सामान्य निर्धारक अध्यारोपित कर दें : ऐसे प्रत्येक नियम को निम्नलिखित रूप का होना चाहिए :

(47) $A \rightarrow CS/\alpha - \beta$ जहाँ α A β एक σ है,

जहाँ पुनश्च, σ एक कोटीय प्रतीक है जो A को प्रस्तुत करने वाले नियम $\sigma \rightarrow$ ..A--- में बायीं ओर है। इस प्रकार (47) व्याकरणिक रचनांतरणों के सिद्धान्त के ढाँचे के भीतर पुनर्व्यवस्थापित करने पर वह बनेगा जिसे हम "स्थानीय रचनांतरण" कहते आए हैं। देखिए टिप्पणी 18। अधोरेखांकित निर्धारक इसकी गारंटी करता है कि रचनांतरण, पुनश्च, टिप्पणी 18 के अर्थ में "सुदृढ़तया स्थानीय" है। यदि व्याकरण के रूप पर सामान्य निर्धारक के रूप में सुदृढ़ स्थानीय

उपकोटिकरण का यह निर्धारक स्वीकार किया जाता है तो सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों को केवल निम्नलिखित रूप में दिया जा सकता है।

(48) A→CS

और शेष रूढ़ि द्वारा स्वयमेव प्रस्तुत कर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, इन नियमों का एक मात्र यह लक्षण, जिसे व्याकरण में सुस्पष्टतया दिखाना है, नियमों के अनुक्रम में उनका स्थान है। यह स्थान उपकोटिकरण को निर्धारित करने वाले ढाँचों के समुच्चय को स्थिर करता है।

मान लीजिए कि वह नियम जो संज्ञाओं को व्याकरण में प्रस्तुत करता है, तत्वतः निम्नलिखित है :

(49) NP (संप)→(Det) (नि) N (सं) (S')

इस स्थिति में, संज्ञाओं को सुदृढ़ कोटिकरण इन कोटियों में—नि (Det)—(S') नि. (Det–), [–S'] [—] (पूर्ववर्ती प्रस्तुत अभिलक्षणों के लिए आंकनिक रूढ़ियों को जारी रखते हुए) होगा, यह आशा की जाती है। कोटि [Det (नि.)—S'] संज्ञाओं की वह कोटि है जिसमें वाक्यीय पूरक होते हैं। (जैसे, "the idea that he might succeed", (विचार है कि वह सफल होगा)", "the fact that he was guilty (तथ्य है कि वह दोषी था),"the oppurtunity for him to leave (उसको छोड़ने के लिए यह अवसर है)","the habit of working hard"(कठिन काम करने की आदत)",–पश्चवर्ती में वाक्यीय पूरक के साथ अनिवार्यतया कर्ता का लोपन भी है)। कोटि [Det–नि] जातिवाचक संज्ञाओं की कोटि मात्र है। कोटि[–] व्यक्तिवाचक संज्ञाओं की कोटि है अर्थात् वे जो निर्धारण नहीं लेते हैं (अथवा,"The Hague',"The Nile" जैसे उदाहरणों में एक स्थिर निर्धारक होता है जिसे स्वयं संज्ञा का ही अंश, न कि स्वतंत्रतया और निरपेक्षतया चयन प्राप्त निर्धारक-व्यवस्था का अंश माना जा सकता है)[26] यदि यह सही है तो व्यक्ति जाति प्रभेद सुदृढ़ उपकोटीय और (20) में प्रस्तुत अन्य अभिलक्षणों के साथ मेल नहीं खाता है। कोटि [—S'] अन्य के समान इतनी स्पष्ट रीति से रूपित नहीं होती है। कदाचित् इस कोटि का उपयोग "उद्धृत प्रसंगों" को, अथवा, अधिक महत्वपूर्ण दृष्टि से "it strikes me that he had no choice", (मुझे ऐसा अनुमान होता है कि उसके पास कोई विकल्प नहीं था।),"it surprised me that he left", (इससे मुझे आश्चर्य हुआ कि वह छोड़ गया), "it is obvious that the attempt must fail" (यह प्रत्यक्ष है कि यह प्रयास असफल होना चाहिए) आदि वाक्यों के पुरुष

निरपेक्ष 'it' (यह) को जो it⁀Sentence (यह⁀वाक्य) रूप के संप (NP) रूपों से

युक्त आधारभूत शृंखलाओं से व्युत्पन्न है, समझने के लिए किया जा सकता है (वाक्यपूरक it (यह) से एक रचनांतरण द्वारा पृथक् किया जाता है जैसाकि ऊपर के उदाहरणों में है, अथवा टिप्पणी 18 में वर्णित रीति से सुदृढ़ स्थानीय रचनांतरण द्वारा it (यह) को विस्थापित किया जाता है)।

क्रिया उपकोटिकरण पर फिर से एक बार और विचार करते हुए यह द्रष्टव्य है कि (47) के सम्बन्ध में सुझाए सामान्य निर्धारक के स्वीकार करने का और परिणाम भी है। यह सुविदित है कि क्रिया-पूर्वसर्गीय पदबन्ध रचनाओं में क्रिया और सहवर्ती पूर्वसर्गीय-पदबन्ध के बीच आसंजन की विभिन्न मात्राओं में अन्तर करना चाहिए। यह बात निम्नलिखित जैसे संदिग्ध रचनाओं द्वारा स्पष्टतया उदाहृत की जा सकती है।

(50) he decided on the boat (उसने नाव पर निर्णय किया)

जिसके दोनों अर्थ हो सकते हैं—"उसने नाव के विषय में निर्णय लिया" अथवा "उसने नाव पर बैठकर निश्चय लिया"। दोनों प्रकार के पदबन्ध

(51) he decided on the boat on the train (उसने रेलगाड़ी में नाव पर निर्णय किया) साथ-साथ आ सकते है, अर्थात् "उसने नाव के सम्बन्ध में ट्रेन पर बैठे हुए निर्णय लिया"। स्पष्टतया (51) का दूसरा पूर्वसर्गीय-पदबन्ध केवल एक स्थानवाची क्रियाविशेषण रूप है, जोकि, समयवाची क्रियाविशेषण रूप के समान, क्रिया से कोई विशिष्टतया सम्बद्ध नहीं होता है, बल्कि पूरे क्रिया पदबन्ध के अथवा कदाचित् पूरे वाक्य का विशेषक बनता है। यह वस्तुतः विकल्पतः वाक्य के प्रारम्भ में भी आ सकता है, यद्यपि (51) का पहला पूर्वसर्गीय पदबन्ध, जो कि क्रिया से घनिष्टतया सम्बद्ध है, वाक्य के प्रारम्भ में कदापि नहीं आ सकता है—अर्थात् वाक्य' 'on the train, he decided (रेलगाड़ी में, उसने निर्णय किया) असंदिग्ध वाक्य है। इसी प्रकार के अनेक अन्य उदाहरण हैं (जैसे, "he worked at the office" (उसने कार्यालय में काम किया) बनाम "he worked at the job" (वह नौकरी करता है) "he laughed at ten o'clock" (वह 10 बजे हँसा) बनाम "he laughed at the clown", (वह विदूषक पर हंसता है) बनाम he ran after dinner (वह भोजन पर मरता है (भोजन के पीछे दौड़ता है) बनाम "he ran after John" (वह जॉन के पीछे दौड़ा)।

स्पष्टतया, विविध प्रकार के क्रिया-पदबन्ध के साथ स्थान और समय क्रिया विशेषण रूप पर्याप्त स्वतन्त्रतया घटित हो सकता है, जबकि इसके विपरीत पूर्वसर्गीय पदबन्ध के अनेक प्रकार क्रियाओं से अधिक घनिष्ठ रचना में प्रकट होते हैं। यह पर्यवेक्षण यह संसूचित करता है कि आधार के प्रथम अनेक नियम किंचित् आपरिवर्तन के साथ इस प्रकार विस्थापित कर सकते हैं :

(52) (i) S → NP (वा संप) विधेय पदबन्ध (Predicate Phrase)

(ii) विधेय पदबन्ध → Aux (सहा) VP (क्रिप) (स्थान) (समय)

(iii) VP (क्रिप) → { be विधेय (होना) संप उप-पद उप-पद ; क्रि V { (NP)(Prep-Phrase)(Prep-Phrase) ; Adj विशेषण (रीति) ; S' वा. ; (like) विधेय-नामिक } }

(iv) Prep-Phrase (उप-पद) → { दिशा Direction ; अवधि Duration ; स्थान Place ; आवृत्ति Frequency ; आदि }

क्रि → मिश्र

(v) V → CS

मिश्र प्रतीकों को अभिशासित करने वाली रूढ़ियाँ नियम (iii) के द्वितीय भाग और नियम (iv) में प्रस्तुत सभी प्रसंगों की दृष्टि से (v) को क्रियाओं के सुदृढ़तया उपकोटिकरण करने वाला मानती है ।

तो, इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि क्रियाएँ (52 iii) द्वारा प्रस्तुत पूर्वसर्गीय-पदबन्ध की दृष्टि से तो, किन्तु (52 ii) द्वारा प्रस्तुत पूर्वसर्गीय पदबन्ध की दृष्टि से नहीं, उपकोटिकृत होती हैं । (52 ii) द्वारा प्रस्तुत पूर्वसर्गीय पदबन्ध, अर्थात् स्थान और समय के क्रियाविशेषण रूप पूरे विधेय-पदबन्ध से सहचरित हैं और वे वस्तुतः अंशतः सहा-(Aux) (देखिए टिप्पणी 23) के साथ अथवा अन्तर्निहित संरचना में "प्राक्-वाक्य" एकक को निर्मित करने वाले वाक्यीय-क्रियाविशेषण रूप के साथ अधिक घनिष्ठतया सहचरित हो सकते हैं । इस प्रकार क्रियाएँ क्रियात्मक पूरकों की दृष्टि से उपकोटिकृत होती हैं किन्तु क्रिया पदबन्धीय पूरकों की दृष्टि से ऐसा नहीं हो सकता है । तत्वतः यही स्थिति है, जो ऊपर दिए उदाहरणों से स्पष्ट है । फिर से यदि उदाहरण दें तो (52 iv) में सूचीबद्ध क्रियाविशेषण रूपों के चार प्रकारों के सम्बन्ध में, (53) में ऐसे पदबन्ध मिलते हैं, किन्तु (54) में नहीं[27] :

(53) dash—into the room (V—Direction)
(रेखाचिह्न) (कमरे में) (क्रि—दिशा)

last —for three hours (V—Duration)
(समाप्ति) (तीन घण्टे के लिए) (क्रि—अवधि)

remain—in England (V—Place)
(रहना) (इंग्लैण्ड में) (क्रि—स्थान)

win—three times a week (V—Frequency)
(जीतना) (सप्ताह में तीन बार) (क्रि—आवृत्ति)

(54) Dash—in England
(रेखाचिह्न) (इंग्लैण्ड में)

last—three times a week
(समाप्ति) (सप्ताह में तीन बार)

remain—into the room
(रहना) (कमरे में)

win—for three hours
(जीतना) (तीन घण्टे के लिए)

इसी प्रकार, "he argued *with John (about politics)*", (उसने जॉन से राजनीति पर) तर्क किया), "he aimed (the gun) at John", (उसने जॉन को (बन्दूक का) निशाना बनाया), "he talked *about Greece*" (उसने ग्रीस पर बातें की), "he ran *after John*", (वह जॉन के पीछे दौड़ा), "he decided *on a new course of action*" (उसने नई कार्य प्रणाली पर निर्णय किया)

आदि वाक्यों में तिर्यगक्षर वाले पदबन्ध उस प्रकार के हैं जो क्रियाओं में उपकोटिकरण लाते हैं, जबकि "John died *in England*", John played Othello in England", "John always runs *after dinner*" (जॉन इंग्लैण्ड में मरा, जॉन इंग्लैण्ड में ऑथेलो खेला, जॉन सदैव खाने पर मरता है।) आदि क्रिया उपकोटिकरण में कोई योगदान नहीं देते हैं, चूँकि वे ऐसे नियम (52iii) द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं जिसके बायीं ओर का प्रतीक प्रत्यक्षत: V को अधिकृत नहीं करता है।

इसी प्रकार, (52iii) द्वारा प्रस्तुत अन्य प्रसंग क्रियाओं के सुदृढ़ उपकोटिकरण में भूमिका नहीं अदा करते हैं। विशिष्टतया, रीतिवाची क्रियाविशेषण रूप क्रिया उपकोटिकरण में भाग लेते हैं। इस प्रकार क्रियाएँ सामान्यतया रीतिवाची क्रियाविशेषण रूपों को स्वतन्त्रतया लेती हैं,किन्तु कुछ ऐसी हैं जो नहीं लेती हैं, उदाहरणार्थ, resemble, have, marry (मिलना, रखना, शादी करना) ("John married

Mary" (जॉन ने मेरी से विवाह किया) के अर्थ में, न कि "the preacher married John and Mary" (धर्मोपदेशक ने जॉन और मेरी का विवाह किया) के अर्थ में,) जो कि रीतिवाची मुक्तया ले सकता है); fit (ठीक) ("the suit fits me") (सूट मेरे ठीक है) के अर्थ में, न कि "the tailor fitted me" (दर्जी ने मेरे लिए उसे ठीक किया) जोकि रीतिवाची मुक्तया लेता है); cost (कीमत), weight (भार), ("the car weighed two tons") (कार भार में दो टन की है) के अर्थ में, न कि "John weighed the letter" (जॉन ने पत्र तोला) जोकि रीतिवाची मुक्तया लेता है); इत्यादि। उन क्रियाओं को जो रीतिवाची क्रियाविशेषण रूप नहीं लेती हैं, लीज़ "मिडिल क्रियाएँ" (लीज, 1960a, पृष्ठ 8) कहते हैं, और उन्होंने यह भी पर्यवेक्षण किया है कि ये लक्षणतः, परवर्ती NP (संप) वाली क्रियाएँ हैं, जिनका कर्मवाच्य-रचनांतरण नहीं होता है। इस प्रकार हमें ये रूप नहीं मिलते हैं—

"John is resembled by Bill" (जॉन बिल से मिलता है), "a good book is had by John", (एक अच्छी पुस्तक जॉन के पास है), "John was married by Marry" (मेरी द्वारा जॉन से विवाह हुआ), "I am fitted by the suit" (मैं सूट में ठीक हूँ), "ten dollars is cost by this book" (दस डालर इस पुस्तक का मूल्य है), "two tons is weighed by the car" (दो टन वजन कार में है), आदि (यद्यपि निस्संदेह "John was married by Mary" (मेरी द्वारा जॉन से विवाह हुआ) इस अर्थ में कि "John was married by the preacher" (धर्मोपदेशक द्वारा जॉन का विवाह हुआ) स्वीकार्य है और इसी प्रकार ये भी स्वीकार्य हैं–"I was fitted by the tailor" (दर्जी द्वारा मेरे लिए उसे ठीक किया गया), "the letter was weighed by John" (जॉन द्वारा पत्र तोला गया), आदि।[28]

इन पर्यवेक्षणों से यह सुझाव मिलता है कि रीतिवाची क्रियाविशेषण रूपों के अनेक अभिव्यक्तियों में से एक को "डमी (मूक) तत्व" होना चाहिए जो कि यह लक्षित करता है कि कर्मवाच्य-रचनांतरण अनिवार्यतः प्रयुक्त होना चाहिए अर्थात्, नियम (55) को आधार के पुनर्लेखी नियम के रूप में रखना चाहिए और हम कर्मवाच्य-रचनांतरण को इस प्रकार व्यवस्थापित कर सकते हैं कि (56) के रूप की शृङ्खलाओं पर एक प्राथमिक रचनांतरण द्वारा प्रस्तुत हो सके। यह प्राथमिक रचनांतरण प्रथम NP (संप) के स्थान पर एक मूक (डमी) तत्व "passive" (कर्म-वाच्य) स्थानापन्न करता है और दूसरे NP (संप) को प्रथम NP (संप) के स्थान पर रखता है :

(55) रीति → by⁀passive कर्मवाच्य द्वारा
संप सहा क्रि संप कर्मवाच्य द्वारा
(56) NP—Aux—V—NP—by passive—
(जहां (56) में सबसे बायें के लिए.... और अधिक विनिर्देश आवश्यक हैं, जैसे, उसमें संप (NP) नहीं हो सकता है)

इस व्यवस्थापन के, रचनांतरण व्याकरण के पूर्वतर कार्यों (चॉम्स्की, 1957) में प्रस्तुत व्यवस्थापन की तुलना में, अनेक लाभ हैं। सर्वप्रथम, यह रीतिवाची क्रिया-विशेषण रूपों को मुक्ततया लेने वाली क्रियाओं के कर्मवाच्यीकरण के प्रतिबंध का स्वयं से कारण बताता है। अर्थात्, क्रिया ढांचे (56) में प्रकट होगी और कर्मवाच्य-रचनांतरण उस पर तभी प्रयुक्त होगा जब शब्दकोश में, सुदृढ़ उपकोटिकरण अभि-लक्षण (–संप(NP)⁀रीति) के लिए वह एकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट हो, और ऐसी स्थिति में वह रीतिवाची क्रियाविशेषण रूप मुक्ततया ग्रहण करेगी। इसके अतिरिक्त, इस व्यवस्थापन से स्थानापत्ति रचनांतरणों के नियमों द्वारा कर्मवाच्य का व्युत्पन्न पदबंध-चिह्नक का कारण बताना संभव हो जाता है। इसमें व्युत्पन्न अवयव संरचना के एतदर्थ नियम को जो वस्तुतः कर्मवाच्य रचना द्वारा ही अभिप्रेरित हुआ है, पूरी तरह हटाया जा सकता है (देखिए, चॉम्स्की, 1957, पृष्ठ 73–74)। तीसरे, अब "छद्म कर्मवाच्य रूपों" को, जैसे "the proposal was vehemently argued against" (प्रस्ताव के विरुद्ध उग्र तर्क दिए गए), "the new course of action was agreed on" (नई कार्यविधि पर सहमति हुई), "John is looked up to by everyone"(जॉन का सम्मान प्रत्येक द्वारा होता है) वाक्यों को,सामान्य कर्मवाच्य-रचनांतरण के किंचित् सामान्यीकरण द्वारा समझाना सम्भव हो सका है। वस्तुतः, समाकृति (56) इन कर्मवाच्यों को पहले से ही स्वीकार कर चुकी है। इस प्रकार "everyone looks up to John(प्रत्येक व्यक्ति जॉन का सम्मान करता है)by *passive* कर्म द्वारा निर्धारक (56) को पूरा करता है और इसमें John (जॉन) दूसरा NP (संप) है, और यह "John is looked up to by everyone" (जॉन का सम्मान प्रत्येक व्यक्ति द्वारा होता है),में उसी आरम्भिक रचनांतरण द्वारा प्रतिरूपित हो जाता है जिससे"everyone saw John"(प्रत्येक व्यक्ति ने जॉन को देखा) से "John was seen by everyone" (जॉन को प्रत्येक व्यक्ति द्वारा देखा गया) रचित होता है। पूर्वतर व्यवस्थापन में (देखिए, चॉम्स्की, 1955 अध्याय IX)। इन छद्म-कर्मवाच्यों को एक नवीन रचनांतरण द्वारा स्वीकार करना पड़ता था। कारण यह था कि (56) के V (क्रि) को सामान्य कर्मवाच्य-रचनांतरण के लिए सकर्मक क्रियाओं में ही सीमित करना होता था ताकि have, resemble (रखना, मिलना) जैसी 'मिडिल'

क्रियाएँ उसके अन्तर्गत न आ सकें। किन्तु जैसाकि सुझाव दिया है कर्मवाच्यीकरण रीति क्रियाविशेषण रूपों से निर्धारित होता है, तो (56) में V (क्रि) पर्याप्त मुक्त हो सकता है और अकर्मक और सकर्मक दोनों क्रियायें हो सकता है। इस प्रकार, "John is looked up to" (जॉन सम्मानित होता है) और "John was seen" (जॉन देखा गया) एक ही नियम द्वारा रचित होते हैं यद्यपि केवल दूसरे वाक्य में John (जॉन) गहन संरचना में प्रत्यक्ष-कर्म है।

किन्तु यह द्रष्टव्य है कि (52 ii) द्वारा प्रस्तुत क्रियाविशेषणरूप जैसा (56) द्वारा परिभाषित किया गया है वैसे कर्मवाच्य-रचनांतरण पर निर्भर नहीं है, क्योंकि वह क्रियाविशेषणरूप by passive (कर्मवाच्य द्वारा) के बाद आता है। इससे इस तथ्य की व्याख्या होती है कि हम "Unspecified subject is working at this job quite seriously" (इस कार्य में अनिर्दिष्ट विषय पूर्ण गम्भीर रूप से कार्य कर रहा है) से, जहाँ "at this job" (इस कार्य में) (52 ii) द्वारा प्रस्तुत क्रिया-पूरक है, "this job is being worked at quite seriously" (यह कार्य-पूर्ण गम्भीरता से किया जाता रहा है) निकलता है, किन्तु "Unspecified-Subject is working at the office" (कार्यालय में सब कुछ अनिर्दिष्ट हो रहा है) से जहाँ पदबन्ध "at the office" (इस कार्यालय में) (52ii) द्वारा प्रस्तुत VP (क्रिप.)-पूरक है और इस कारण रीतिवाची क्रियाविशेषणरूप के बाद आता है, "the office is being worked at" (कार्यालय में कार्य किया जाता रहा है) वाक्य नहीं निकल सकता है। इसी प्रकार, "the boat was decided on" (नाव तय की गई) इस अर्थ में कि उसने नाव का चयन किया स्वीकार्य है। इस अर्थ में कि 'नाव पर बैठे हुए निश्चय किया' स्वीकार्य नहीं है। इस प्रकार (50) के अनुरूप कर्मवाच्य वाक्य असंदिग्ध है यद्यपि (50) स्वयं संदिग्ध है। इसी प्रकार अनेक अन्य तथ्य व्याख्यायित हो सकते हैं।

यह तथ्य कि इस प्रकार हम "the boat was decided on by John" (जॉन द्वारा नाव तय की गई) की असंदिग्धता की" John decided on the boat" (जॉन ने नाव पर निर्णय किया) और अन्य समान उदाहरणों की संदिग्धता के वैषम्य में, व्याख्या कर सकते हैं। इस प्रस्ताव (देखिए पृष्ठ 99) को अप्रत्यक्ष औचित्य प्रदान करता है कि सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम सुदृढ़तया स्थानीय रचनांतरणों तक ही सीमित रहें। इस तर्क पर पूरा विचार करना कि ऐसा क्यों हो कदाचित् एक लाभप्रद कार्य है। "सुदृढ़तया स्थानीय उपकोटिकरण" सिद्धान्त द्वारा हम जानते हैं कि कुछ कोटियों को क्रिप (VP) की दृष्टि से आंतरिक होना चाहिए

और कुछ को बाह्य। इस सिद्धान्त के अनुसार क्रिप (VP) के आंतरिक होने वाले तत्वों में से एक तत्व कर्मवाच्यीकरण चिह्नक है क्योंकि उसकी क्रिया से सुदृढ़ उपकोटिकरण में भूमिका है। इसके अतिरिक्त, कर्मवाच्यीकरण का चिह्नक रीति-वाची क्रियाविशेषण रूपों की उपस्थिति से सहचरित है जो कि सुदृढ़तया स्थानीय उपकोटिकरण सिद्धान्त द्वारा VP (क्रिप.) के लिए आंतरिक होता है। चूँकि कर्म-वाच्य रचनांतरण को संरचना सूचकांक (56) द्वारा व्यवस्थापित होना चाहिए, अतएव क्रिप (VP)–पूरकों में संप (VP) "छद्म कर्मवाच्यीकरण" के अधिकार क्षेत्र में नहीं आते हैं किन्तु V क्रि-पूरकों के NP (संप) इस संक्रिया के अधिकार क्षेत्र में आते हैं। विशिष्टतया "John decided on the boat" (जॉन ने नाव पर निर्णय किया) अर्थ, "John chose the boat" (जॉन ने नाव चुनी) में "on the boat" (नाव पर) एक V क्रि-पूरक है, और इसलिए कर्मवाच्य-रचनांतरण द्वारा इसका छद्म कर्मवाच्यीकरण हो सकता है; किन्तु "John decided on the boat" (जॉन ने नाव पर निर्णय किया) अर्थ, "John decided while he was on the boat" (जॉन ने उस समय निर्णय किया जबकि वह नाव पर था) अथवा समतुल्यतया "on the boat, (नाव पर) John decided," (जॉन ने निर्णय किया) में "on the boat" (नाव पर) एक VP 'क्रिप–पूरक है और (56) के निर्धारक को न पूरा करने के कारण उस पर छद्म कर्मवाच्यीकरण प्रयुक्त नहीं होता है। अतएव यह देखते हुए कि "the boat was decided on by John" (नाव का निर्णय जॉन द्वारा किया गया) असंदिग्ध है और उसका केवल यही अर्थ निकलता है कि नाव के सम्बन्ध में निश्चय किया गया है, हम निष्कर्ष निकालते हैं कि इस तर्क के आधार वाक्य को–अर्थात् यह अभिग्रह कि सुदृढ़ उपकोटिकरण सुदृढ़तया स्थानीय रचनांतरणों तक सीमित है—अनुभवाश्रित समर्थन है।

(52) के पुनर्विश्लेषण की यह अपेक्षा है कि § 2.2 (देखिए (11)) में प्रकार्यात्मक संप्रत्ययों की प्रस्तावित परिभाषाएँ किंचित्, परिवर्तित की जानी चाहिए। इस प्रकार हम कदाचित् "का-विधेय" संप्रत्यय को (विधेय पदबन्ध, S (वा,) के रूप में, न कि (VP,S (क्रिप. वा.)) के रूप में परिभाषित कर सकते हैं। नियमों का यह संशोधित व्यवस्थापन प्रसंगवश, पारम्परिक प्रकार्यात्मक संप्रत्ययों के एक अन्य गुण-धर्म को उदाहृत करता है। § 2-2 में हमने देखा था कि ये संप्रत्यय केवल उन्हीं के लिए परिभाषित हैं जिन्हें हमने "प्रमुख कोटियाँ" कहा है। इसके अतिरिक्त ऐसा लगता है कि वे केवल उन प्रमुख कोटियों A के लिए परिभाषित की गई हैं जो X → A........B........अथवा X → ....B........A, रूप के नियमों में, जहाँ भी एवं प्रमुख कोटि है, प्रकट होती हैं। यह बिल्कुल स्वाभाविक लगता है यदि हम इन संप्रत्यों के सम्बन्धात्मक प्रकृति का ध्यान करें।

§ 3. आधार घटक एक उदाहरणात्मक खण्ड

§ 1 में उठायी गयी मूल समस्या पर लौटते हुए हम इस विवाद का अब संक्षेपन कर रहे हैं। मूल समस्या § 1 के (ii) में उदाहृत संरचनात्मक सूचना को ऐसे नियमों के समुच्चय में प्रस्तुत करने की थी जो सूक्ष्मतया आधार रूप भाषाई सम्बद्ध प्रक्रियाओं को अभिव्यक्त करने के लिए बनाए गए हैं।

हम अब आधार घटक से युक्त एक प्रजनक-व्याकरण पर विचार कर रहे हैं, जिसके अन्तर्गत अन्य के साथ नियम, समाकृति नियम (57) और शब्दकोश (58) लें।

(57) (i) S → NP⁀Predicate–Phrase
(वा) → (संप) (विधेय) (पदबन्ध)

(ii) Predicate Phrase → Aux⁀NP (place) (time)
(विधेय) (पदबन्ध) (सहा) (क्रिप) (स्थान) (काल)

(iii) VP → { V / क्रि { (NP) (Prep-Phrase) (Manner) / (संप) (पूर्व–पदबंध) (रीति) / S' (उ) } ; Copula⁀Predicate (काप्यूला विधेय) ; Predicate (विधेय) }
(क्रिप)

(iv) Predicate → { Adjective (विशेषण) ; (like) Predicate-Nominal / (तरह) (विधेय—नामिक) }
(विधेय)

(v) Prep-Phrase → Direction, Duration, Place, Frequency
(उप-पद) → (दिशा) (स्थान) (आवृत्ति) etc. आदि

(vi) V → CS (क्रि → कोप्र)

(vii) NP → (Det) N (S') (संप → (नि) सं (S')

(viii) N → CS (सं → कोप्र)

(ix) [+Det—] → [±Count]
(नि) (गणनीय)

(x) [+Count] → [±Animate]
(गणनीय) (चेतन)

(xi) [+N, +—] → [±Animate]
(सं) (चेतन)

(xii) [+ Animate] → [± Human]
(चेतन) (मानव)

(xiii) [—Count] → [± Abstract]
(गणनीय) (अमूर्त)

(xiv) [+V] → CS/α⁀Aux—(Det⁀β)
(क्रि) (कोप्र) (सहा) (नि)

(xv) Adjective → CS/α
(विशेषण) (कोप्र)

where α is an N and β is an N
जहाँ पर α N है और β N है।

(xvi) Aux → Tense (M) (Aspect)
(संपा) (काल) (प्र) (पक्ष)

(xvii) Det → (Pre-Article⁀of) Article (Post-Article)
(नि) (पूर्व-आर्टिकल) (आर्टिकल) (पश्च-आर्टिकल)

(xviii) Article → [± Definite]
(आर्टिकल) (निश्चायक)

(58) (*sincerity*, [+N, + Det—,— Count, + Abstract,....])
(ईमानदारी) (सं) (नि) (गणनीय) (अमूर्त)
(*boy*, [+N, + Det—, + Count, + Animate, + Human,....])
(लड़का) (सं) (नि) (गणनीय) (चेतन) (मानव)
(*frighten*, [+V + – NP, + [+ Abstract] Aux–Det
(भयभीत होना) (क्रि) (संप) (अमूर्त) (सहा) (नि)
+ Animate], + Object—deletion....])
(चेतन) (कर्म) (लोप)
(*may*, [+M,....])
(सकना) (प्र)

नियमों की यह व्यवस्था पदबन्ध-चिह्नक (59) प्रजनित करेगी।

उन नियमों को जोड़ते हुए (Definite) (निश्चायक) को the के द्वारा और Non-definite (अनिश्चायक) को परवर्ती अगणनीय संज्ञा के पूर्व शून्य के द्वारा रूपायित करता है। हम पदबन्ध-चिह्नक (59) से ∮1 के "sincerity may frighten the boy," (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है) वाक्य को व्युत्पन्न करते हैं। ध्यान दीजिए कि आधार का यह खण्ड ∮ 2.1 के आशय में अनक्रमीय है।

हमने किसी व्युत्पादन से अपेक्षित भांति के पदबन्ध-चिह्नक की रचना प्रक्रिया

की रूपरेखा मात्र दी है। किन्तु समुचित रूप निबन्धन की यह एक अपेक्षाकृत गौण विषय है और इसमें कोई सिद्धान्त की बात नहीं है। विशेषतः (59) न केवल शृंखलाओं और तत्संबद्ध कोटियों (जिनमें से अनेक अब अधि-लक्षणों द्वारा निरूपित हो रही है) के बीच स्थिति सम्बन्ध "is a" (है) के विषय में सभी सूचनाएँ देता है बल्कि इन कोटियों के बीच सोपानिक सम्बन्ध को भी, जोकि नियमों द्वारा प्रदत्त और व्युत्पादन में सूक्ष्मतया प्रतिबिम्बित हैं, देता है।
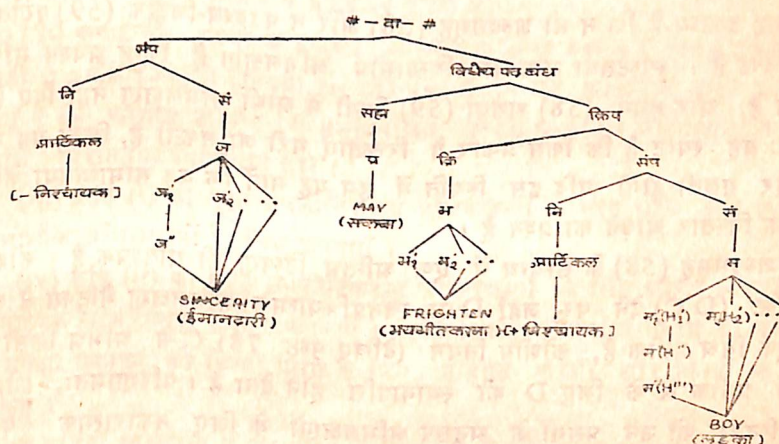
पदबन्ध-चिह्नक (59) वाक्य (2i) और (2iii) में विनिर्दिष्ट सभी सूचनाएँ प्रत्यक्षतया देता है और जैसाकि हम देख चुके हैं (2ii) जैसी प्रकार्यात्मक सूचना भी इस पदबन्ध-चिह्नक से व्युत्पन्न है। यदि हमारा विश्लेषण सही है तो वह अभी प्रदर्शित जैसी युक्तियाँ हैं जोकि (2) में संक्षेप में दिए परम्परागत व्याकरण के अनौपचारिक कथनों में अन्तर्निहित हैं, और जिसका केवल एक अपवाद है जिस पर हम अगले अनुच्छेद में चर्चा करेंगे।

यह द्रष्टव्य है कि न तो शब्दसमूह (58) और न पदबन्ध-चिह्नक (59) पूर्णतया विनिर्दिष्ट है। स्पष्टतया अन्य वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण हैं जिन्हें अवश्य सूचित करना है, और हमने (58) अथवा (59) किसी में आर्थी अभिलक्षण नहीं दिए हैं। अंशतः यह स्पष्ट है कि किस प्रकार ये रिक्तताएँ भरी जा सकती हैं, किन्तु यह एक गम्भीर गलती होगी यदि इस स्थिति में हम यह मानें कि यह सामान्यतया केवल अधिक विस्तार जोड़ने का प्रश्न है।

शब्दसमूह (58) के सम्बन्ध में एक अन्तिम टिप्पण भी आवश्यक है। कोशीय प्रविष्टि (D,C) देने पर, जहाँ D एवं स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षण मैट्रिक्स है और C एक मिश्र प्रतीक है, कोशीय नियम (देखिए पृष्ठ 78) C से अभिन्न किसी भी मिश्र प्रतीक K के लिए D की स्थानापत्ति होने देता है। परिणामतः, कोशीय प्रविष्टियों को उन प्रसंगों के अनुरूप अभिलक्षणों के लिए नकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट होना चाहिए जिनमें वे नहीं प्रकट होती हैं। इस प्रकार (58) में, उदाहरणार्थ, boy (लड़का) को [–V क्रि] से विनिर्दिष्ट करना चाहिए ताकि "Sincerity may frighten the boy" (ईमानदारी लड़के को भयतीत कर सकती है) में frighten (भयभीत करना) के स्थान में वह न आ सके। और frighten (भयभीत करना) को न केवल [–N (–सं)] से विनिर्दिष्ट किया जाना चाहिए ताकि वह इस वाक्य में boy (लड़का) के स्थान पर न आ सके, बल्कि [–विशेषण] अभिलक्षण के लिए भी नकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट करना चाहिए ताकि "his hair turned grey" (उसके बाल सफेद हो गए) आदि में turn (फेरना) के स्थान पर न आ सके। (58) में नकारात्मक विनिर्देश वस्तुतः नहीं दिए गए हैं।

हम आधार घटक को अभिशासित करने वाली अनेक अतिरिक्त रूढ़ियों को स्वीकार कर इसका समाधान कर सकते हैं। सर्वप्रथम हम यह मानेंगे कि आधार नियम जो कोशीय कोटि A को मिश्र प्रतीक में विश्लेषित करता है स्वयंमेव इस मिश्र प्रतीक के तत्वों में से एक के रूप में अभिलक्षण [+A] अन्तर्गत करता है (देखिए (20) § 2.3.2)। दूसरे, हम यह मान सकते हैं कि प्रत्येक कोशीय प्रविष्टि स्वयंमेव रूढ़ि द्वारा प्रत्येक कोशीय कोटि A के लिए अभिलक्षण [–A] रखती है, जब तक कि वह अभिलक्षण [+A] सुस्पष्टतया प्रदान करता। इस प्रकार (58) में,

boy (लड़का) की प्रविष्टि में [−V] [−विशेषण] [−M] होते हैं (देखिए, टिप्पणी 9)[29] । तीसरे, सुदृढ़ उपकोटिकरण अथवा चयनात्मक नियमों द्वारा प्रस्तुत अभिलक्षणों की स्थिति में (जिसे हम "प्रासंगिक अभिलक्षण" कहते हैं) हम निम्नलिखित रूढ़ियों में से कोई एक अपनाते हैं :

(i) शब्दसमूह में केवल उन अभिलक्षणों को सूचीबद्ध करें जो उन ढाँचों के, जिनमें विवेच्य एकांश नहीं प्रकट हो सकता है, अनुरूप हैं (न कि, जैसे (58) में, उन अभिलक्षणों के अनुरूप जिनमें वे प्रकट हो सकते हैं)।

(ii) केवल उन सांचों के अनुरूप अभिलक्षण सूची बद्ध करें जिसमें एकांश आ सकता है : जैसे (58) में (स्थिति (i) और (ii) में हम यह अतिरिक्त रूढ़ि भी लगा सकते हैं कि कोशीय प्रविष्टि में अनुल्लिखित प्रत्येक प्रासंगिक अभिलक्षण के लिए एकांश विपरीततया विनिर्दिष्ट हो)।

(iii) रूढ़ि (i) को सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षणों के लिए और रूढ़ि (ii) को चयनात्मक अभिलक्षणों के लिए अपनाएँ।

(iv) रूढ़ि (ii) को सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षणों के लिए और रूढ़ि (i) को चयनात्मक अभिलक्षणों के लिए अपनाएँ। प्रत्येक स्थिति में कोशीय नियम की प्रभेदता की अपेक्षा एकाशों को किन्हीं प्रसंग के लिए बहिर्गत करेंगी और किन्हीं के लिए स्वीकृत।

ये रूढ़ियाँ व्याकरण के मूल्यांकन के विषय में वैकल्पिक अनुभवाश्रित प्राक्कल्पनाओं को समाविष्ट करती हैं। इस प्रकार (i) सही है यदि सर्वाधिक-मान वाला व्याकरण वह है जिसमें एकांशों का वितरण सबसे कम नियामक-बद्ध है, और (ii) सही है यदि सर्वाधिक मान वाला व्याकरण वह है जिसमें एकांशों का वितरण सबसे अधिक नियामक-बद्ध है (इसी प्रकार, (iii) और (iv))। इस समय तो, इनमें से किसी एक या अन्य अभिग्रह को समश्रित करने के लिए सबल उदाहरण नहीं दे पा रहा हूँ और इस कारण इस प्रश्न को अनिर्णीत छोड़ रहा हूँ। हम इस समस्या पर अध्याय 4 में पुनः विचार करेंगे।

§ 4. आधार नियमों के प्रकार

§ 4.1 सारांश

§ 3 में प्रस्तुत खण्डीय विवेचन उस प्रकार के नियमों का उदाहरण है जो प्रकटतया आधार घटक में मिलते हैं। पुनर्लेखी नियमों (57) और शब्द समूह (58) के बीच एक मौलिक अन्तर है। व्याकरण में कोशीय नियम के उल्लेख की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वह सार्वत्रिक है और इस कारण व्याकरण के सिद्धान्त का अंग है। कोशीय नियम की प्रास्थिति लगभग उन सिद्धान्तों के समान है जो

उदाहरणार्थ, पुनर्लेखी नियमों की व्यवस्था के शब्दों में व्युत्पादन को परिभाषित करते हैं। इस प्रकार उसकी प्रास्थिति एक रूढ़ि के समान है जो व्याकरण के निर्वचन को निर्धारित करती है, न कि व्याकरण के नियम के समान। अध्याय-1 § 6 के ढांचों के शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि कोशीय नियम वस्तुतः अध्याय 1 § 6 (14, iv) के फलक f की सामान्य भाषा-निरपेक्ष परिभाषा के अंग रूप होता है।

आधार घटक के पुनर्लेखी नियमों के अन्तर्गत हम **प्रशाखन नियम** जैसे (i), (ii), (iii), (iv), (v), (vii), (xvi), (xvii) को **उपकोटिकरण नियमों** जैसेकि (57) के शेष से अलग कर सकते हैं सभी पुनर्लेखी नियम निम्नलिखित रूप के होते हैं :

(60) $A \rightarrow Z/X—W$

प्रशाखन नियम (60) के वे नियम हैं जिसमें न तो A और न Z किसी मिश्र–प्रतीक से युक्त होता है। इस प्रकार एक प्रशाखन नियम कोटि प्रतीक A को (एक या अधिक) प्रतीकों की शृंखला में विश्लेषित करता है, जिसमें प्रत्येक या तो अन्त्य प्रतीक है या अनन्त्य कोटि-प्रतीक है। इसके विपरीत एक उप-कोटिकरण नियम वाक्य विन्यासीय अभिलक्षणों को प्रस्तुत करता है और इस प्रकार के मिश्र प्रतीक को बनाता है या विस्तारित करता है। हमने अब तक उपकोटिकरण नियमों को शब्द-कोशीय कोटियों में सीमित रक्खा है। विशेषतः, हमने रूप (60) के नियमों के अन्तर्गत ऐसे नियम नहीं आने दिए हैं जिनमें A एक मिश्र प्रतीक है और Z एक अन्तिम अथवा कोटीय प्रतीक अथवा एकाधिक प्रतीक वाली शृंखला है। यह प्रतिबंध बहुत कठोर हैं और हमें इसे किंचित् प्रकट रूप से शिथिल करना है। (देखिए अध्याय 4 § 2)। यह उल्लेखनीय है कि यह दो अर्थात् प्रशाखन और उपकोटिकरण नियमों के समुच्चय परस्पर क्रमबद्ध नहीं हैं यद्यपि यदि किसी कोटिय प्रतीक पर उपकोटिकरण नियम प्रयुक्त हो जाता है तो σ-से व्युत्पन्न किसी भी प्रतीक पर कोई σ प्रशाखन नियम नहीं प्रयुक्त हो सकता है।

प्रशाखन नियम और उपकोटिकरण नियम **प्रसंग निरपेक्ष** (जैसे (57) के सभी प्रशाखन नियम और (x) (xi) (xii), (xiii) (xviii) अथवा प्रसंग सापेक्ष (जैसे (vi) (viii), (xiv), (xv)। यहाँ उल्लेखनीय है कि (57) में कोई प्रसंग सापेक्ष प्रशाखन नियम नहीं है। इसके अतिरिक्त उपकोटिकरण नियम मात्र है (देखिए पृ० 94)। यह महत्वपूर्ण तथ्य है, जिन पर अध्याय 3 में हम फिर से विचार करेंगे।

इसके अतिरिक्त प्रसंग सापेक्ष उपकोटिकरण नियमों में दो महत्वपूर्ण उपभेद हैं अर्थात् सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम जैसे (57vi) और (57viii) जो एक कोशीय कोटि को उन कोटिय प्रतीकों के ढांचों के पद के शब्दों में बांटते हैं जिनमें वह कोशीय कोटि आती है, और चयनात्मक नियम जैसे (57xiv), (57 xv) जो कि एक

कोशीय कोटि का वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों के शब्दों में निर्धारित करता है जो वाक्य में विशिष्ट स्थानों पर आते हैं।

हम देख चुके हैं कि उपकोटिकरण नियम आधार को संरचित करने वाले नियमों के अनुक्रम में प्रशाखन नियमों के बाद आते हैं, किन्तु यदि उपकोटिकरण नियम मिश्र प्रतीक Σ को बनाने के लिए प्रयुक्त हो चुका है तो इस Σ पर बाद में कोई भी प्रशाखन नियम लागू नहीं होगा (किन्तु देखिए अध्याय 4 § 2)। (प्रकटतया) यही सम्बन्ध सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों और चयनात्मक नियमों के बीच है अर्थात् यह आधार में दूसरे के बाद आ सकते हैं, किन्तु एक चयनात्मक नियम मिश्र प्रतीक Σ को बनाने के लिए प्रयुक्त हो चुका है तो कोई भी सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम Σ को आगे विकसित करने में लागू नहीं हो सकता। कम-से-कम ऐसा उन उदाहरणों से लगता है जिन पर मैंने विचार किया है। कदाचित् यह सामान्य रूप से आधार के ऊपर एक अतिरिक्त निर्धारक के रूप में कहा जा सकता है।

§ 4·2 चयनात्मक नियम और व्याकरणिक सम्बन्ध

हम यह कह सकते हैं कि एक चयनात्मक नियम जैसे (57xiv) (57xv) या वाक्य में दो स्थानों के बीच के **चयनात्मक सम्बन्ध** को परिभाषित करता है उदाहरणार्थ, (57xiv) में चयनात्मक नियम क्रिया के स्थान और ठीक उसके पहले या उसके बाद वाले संज्ञा के बीच का चयनात्मक सम्बन्ध है। ऐसे चयनात्मक सम्बन्ध इस परम्परागत शब्द के अनेक अर्थों में से एक अर्थ में व्याकरणिक सम्बन्धों को निर्धारित करते हैं। हम इसके पहले देख चुके हैं कि § 2·2 में परिभाषित व्याकरणिक प्रकार की धारणा "sincerity may frighten the boy" (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है) (= 1)) वाक्य में "frighten" (भयभीत करना) और "boy" (लड़का) के बीच स्थित क्रिया-कर्म सम्बन्ध को और "sincerity" (ईमानदारी) और "frighten" (भयभीत करना) के कर्ता-क्रिया सम्बन्ध को सुस्पष्ट करने में असफल रही है। व्याकरणिक-सम्बन्ध की सुझाई गई परिभाषा इन अभिकथनों का सही-सही वर्णन करने से सफल रहेगी यदि व्याकरण (57), (58) दिया हुआ हो। वस्तुतः, व्याकरणिक सम्बन्ध की यही धारणा प्रमुख कोटियों के शीर्षकों के शब्दों में परिभाषित हो सकती थी (देखिए § 2·2), किन्तु चयनात्मक सम्बन्धों के शब्दों में परिभाषित करना कुछ अधिक स्वाभाविक प्रतीत होता है और इससे पृ० 67–69 में उठाई समस्या का परिहार भी होता है। इस धारणा को परिभाषित करने के पश्चात् हमने § 1 का अनौपचारिक व्याकरणिक कथन (2) का विश्लेषण पूरा कर लिया है [3]

अब चयनात्मक नियम (57xiv) और (57xv) पर विचार करें जो क्रिया और

विशेषण के चयन को संज्ञा के विशिष्ट अभिलक्षणों के शब्दों में नियमित करते हैं (इस उदाहरण में कर्ता और कर्म) के मुक्त चयन के शब्दों में नियमित करते हैं। मान लीजिए कि इसके विपरीत हमें क्रिया को एक प्रसंग निरपेक्ष नियम द्वारा उपकोटिकृत करना हो और तदनन्तर कर्ता और कर्म के उपकोटिकरण को निर्धारित करने के लिए एक चयनात्मक नियम प्रयुक्त करना हो तो क्रिया के लिए हम इस प्रकार का नियम बना सकते हैं—

(61) V→ [+ V [+Abstract]–Subject, + [+ Animate]–Object][31]
(क्रि) →(क्रि) (+ अमूर्त) (कर्ता) + (+ चेतन) –(कर्म)

इस प्रकार मिश्र प्रतीक को हम यह रूप दे सकते हैं।

(62) [+ V, + [+ Abstract]–Subject, + [+ Animate]– Object]
(+ क्रि) + (+ अमूर्त) –(कर्ता) + (+ चेतन) – (कर्म)

जो कि एक कोशीय एकांश, जैसे "frighten" (भयभीत करना) द्वारा विस्थापित हो सकता है। और जो कोशीय रूप से इस प्रकार अंकित है कि इसमें एक अमूर्तकर्ता और एक चेतन कर्म सम्भव हो सके। हमें एक कर्ता और कर्म के चयन को निर्धारित करने के लिए अब एक प्रसंग सापेक्ष चयनात्मक नियम स्थापित करना चाहिए, जिस प्रकार (57) में हमने कर्ता और कर्म के शब्दों में क्रिया में चयन को निर्धारित करने के लिए नियम दिया था। इस प्रकार हमें ऐसे नियम मिलेंगे।

(63) N → CS/ { – Aux + α (सहा) / α + Det– (नि) }
(सं) → (कोप्र)

जहां α एक V (क्रि) है।

ये नियम कर्ता और कर्म में क्रिया के अभिलक्षणों को समनुदेशित करेंगे, जिस प्रकार (57xiv) में क्रिया में कर्ता और कर्म के अभिलक्षण समनुदेशित थे। उदाहरण के लिए, यदि क्रिया (62) है तो कर्ता का निम्नलिखित अभिलक्षण से विनिर्दिष्ट किया जाना चाहिए।

(64) [Pre– + + Abstract]–Subject, Pre– + [+ Animate]–Object]
(पूर्व) + (अमूर्त) (कर्ता), (पूर्व) (+ चेतन) – (कर्म)

इसी प्रकार कर्म में यह अभिलक्षण होंगे।

(65) [Post– + [+ Abstract]–Subject,Post– + [+ Animate]–Object]
(पर) + (+ अमूर्त) – (कर्ता),(पश्च) + (+चेतन) – (कर्म)

किन्तु स्पष्टतया, कर्ता संज्ञा के चयन में अभिलक्षण Pre– + [+ Animate] (पूर्व) + (चेतन) –Object] (कर्म) अप्रासंगिक है और कर्म संज्ञा के चयन में अभिलक्षण [Post– + (पश्च) [+ Abstract] – Subject] (अमूर्त) (कर्ता) है किन्तु इससे भी अधिक गंभीर बात यह है कि संज्ञा

शब्दसमूह में अभिलक्षण [Pre–X–Subject] से तभी अंकित होनी चाहिए जबकि
(पूर्व) (कर्ता)

वह अभिलक्षण [Post–X–Object] से अंकित है जहाँ X कोई एक अभिलक्षण है।
(पश्च) (कर्म)

अर्थात् "एक चेतनकर्ता के साथ क्रिया का कर्ता" स्थान के लिए तत्वों का चयन उसी प्रकार है जिस प्रकार "चेतन कर्म के साथ क्रिया का कर्म" स्थान के लिए तत्वों का चयन। किन्तु अभिलक्षण (चेतन) संज्ञाओं के लिए उपलब्ध नहीं होगा उसके स्थान पर केवल अभिलक्षण [Pre– + [+ Animate] – Subject] और [Post– +
(पूर्व) (चेतन) (कर्ता) (पश्च)

[+ Animate – Object] परिणामतः, एक बड़ी संख्या में पूर्णतया एतदर्थ नियमों
(चेतन) (कर्म)

को व्याकरण में जोड़ना होगा ताकि संज्ञाओं के साथ अभिलक्षण [Pre–X–Subject]
(पूर्व) (कर्ता)

और प्रत्येक अभिलक्षण X के लिए अभिलक्षण [Post–X–Object] अथवा इसके
(पश्च) (कर्ता)

विपरीत निर्दिष्ट किया जा सके। फिर भी, अभिलक्षण [Pre–X–Subject]
(पूर्व) (कर्ता)

[Post–X–Object] प्रत्येक X के लिए एकाकी प्रतीक है और ये तथ्य कि X दोनों
(पश्च) (कर्म)

में घटित होता है व्याकरण को किसी नियम के द्वारा निर्दिष्ट नहीं हो सकता (जब तक कि हम इस यांत्रिकी को इस प्रकार और अधिक जटिल न बना दें कि अभिलक्षण स्वयं अभिलक्षण रचना करने लगे)।

संक्षेप में, क्रियाओं के मिश्र प्रतीक-विश्लेषण को स्वतंत्र रूप से चुनने का निर्णय और क्रियाओं के शब्दों में चयनात्मक नियम द्वारा संज्ञाओं के चयन करने का निर्णय व्याकरण में काफी अधिक जटिलता उत्पन्न करता है। समस्याएँ और अधिक बड़ी मात्रा में बढ़ जाती हैं जब हम स्वतंत्र संज्ञा-विशेषण चयनात्मक नियमों की भी व्याख्या करना चाहते हैं। लगभग इसी प्रकार हम इस बात की संभावना को अस्वीकार करते हैं कि कर्ता क्रिया का चयन करे, किन्तु क्रिया का कर्म को चयन करना संभव है।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि अब तक विकसित ढाँचे में क्रिया को संज्ञा के शब्दों में चयन करने का कोई भी संकल्प संभव नहीं है (और इसी तर्क पर संज्ञाओं के शब्दों में विशेषणों का चयन भी संभव नहीं है) किन्तु इसका विपरीत संभव है। इसके अतिरिक्त, यह ढाँचा इस रूप में सर्वाधिक अभीष्ट है क्योंकि इसमें भाषाई तथ्यों से वस्तुतः निर्धारित यांत्रिकी से अधिक की कोई आवश्यकता नहीं है। कोई यह कल्पना कर सकता है कि इसी प्रकार का तर्क किसी भी भाषा के लिए दिया

जा सकता है। अगर यह सत्य है, तो संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि कोटियों के सामान्य लक्षण की ओर एक महत्वपूर्ण चरण उठाने की संभावना है (देखिए § 2.1 § 2.2)।

§ 2.2 में मैंने "कोशीय कोटि" और "प्रमुख कोटि" की परिभाषा दी थी और बताया था कि प्रमुख कोटि एक ऐसी कोशीय कोटि या कोटि है जो एक शृंखला को अधिकृत करती है जिसके अंतर्गत एक कोशीय कोटि है। मान लीजिए कोशीय कोटियों में हम एक कोटि को संज्ञा के नाम से नामांकित करते हैं जो कि चयनात्मक दृष्टि से अधिकारवान् है। इस अर्थ में कि उसकी अभिलक्षण-रचना एक प्रसंग निरपेक्ष उपकोटिकरण नियम द्वारा निर्धारित होती है और उसके अभिलक्षण चयनात्मक नियमों द्वारा दूसरी कोशीय कोटियों के पास पहुँच जाते हैं। वाक्य के विश्लेषण में प्रस्तुत प्रमुख कोटियों में हम NP (संप.) के रूप में उस कोटि को स्थापित करते हैं जो ....N (संज्ञा).... के रूप में विश्लेषित होता है। ....NP (संप).... को प्रत्यक्ष रूप से अधिकृत करने वाली प्रमुख कोटि को हम VP (क्रिप.) द्वारा स्थापित करते हैं और वह कोटि जो प्रत्यक्षतया VP (क्रिप) को अधिकृत करती है हम विधेय पदबंध द्वारा स्थापित करते हैं। हम V(क्रि.) को विविध रीतियों से परिभाषित कर सकते हैं—उदाहरणार्थ, एक कोशीय कोटि X के रूप में जो VP (क्रिप) से प्रत्यक्षतया अधिकृत---X---NP(संप.).... या NP (संप.) X प्रकट होती है (यहाँ हम यह मानकर चले हैं कि केवल एक ही X यहाँ आ सकता है), अथवा, एक कोशीय कोटि के रूप में जो दो या दो से अधिक N (संज्ञा) से संबद्ध चयनात्मक नियमों द्वारा अभिलक्षण-युक्त होती है (यदि सकर्मकता एक सार्वत्रिक कोटि हो तो)। अब अन्य कोशीय प्रमुख और प्रमुखेतर कोटियों को सामान्य शब्दों में निरूपित करने के लिए प्रयत्न किया जा सकता है। जिस सीमा तक हम इसे कर सकते हैं हम § 2.2 में विवेचित प्रकार्यात्मक धारणाओं को ठोस विशेषीकरण देने में सफल होंगे।

पाठक को यह स्पष्ट ही होगा कि यह लक्षण-निरूपण किसी भी अर्थ में निश्चयात्मक नहीं माना गया है। इसका कारण टिप्पणी, (2) में भलीभाँति सूचित किया गया है। इन परिभाषाओं को इस प्रकार अथवा अन्यथा सामान्यीकृत करने या सुस्पष्ट करने के विषय में कोई सिद्धान्ततः समस्या नहीं है और व्याकरण के अनेक रूपात्मक अभिलक्षण होते हैं जोकि इस प्रकार करने में ध्यान में रखे जा सकते हैं। समस्या केवल इतनी है कि इस समय किसी एक या उससे भिन्न सुझाव के लिए कोई प्रबल अनुभवजन्य अभिप्रेरण नहीं है जो इन दिशाओं में किया जा सके। यह इस तथ्य का परिणाम है कि कदाचित् ही कोई ऐसा व्याकरण (प्रजनक व्याकरण) हो जो वाक्यों और संरचनात्मक वर्णनों के परास का, यहाँ तक कि

आंशिक रूप में, स्पष्ट निरूपण देने का प्रयास करे। जैसे-जैसे इस लक्ष्य को ध्यान में रखने वाले स्पष्ट व्याकरणिक वर्णन बढ़ते जाएँगे यह निस्संदेह संभव होगा कि हम इस प्रकार के शिथिलतया अंकित प्रस्तावों के संशोधनों और विभिन्न परिष्कारों के लिए अनुभवजन्य औचित्य दे सकें और कदाचित् तब हम सार्वभौम शब्दावली का जिससे व्याकरणिक वर्णन रचे जाते हैं यथार्थ लक्षण निरूपण कर सकें। फिर भी, इस परंपरागत दृष्टिकोण को, प्रागनुभव, निरस्त करने का कोई कारण नहीं है कि ऐसे यथार्थ लक्षण-निरूपण किसी एक या अन्य प्रकार के आर्थी संप्रत्ययों को अन्त में अवश्य सूचित करें।

§ § 2.1–2.2 की तरह यह एक बार फिर से स्पष्ट है कि सार्वभौम कोटियों को लक्षित करने का यह प्रयास वस्तुतः इस तथ्य पर निर्भर है कि वाक्यविन्यासीय घटक का आधार स्वयं वाक्यों के पूरे परास को स्पष्टतया निरूपित नहीं करता बल्कि केवल कुछ अत्यधिक नियंत्रित प्राथमिक संरचनाओं के समुच्चय को करता है जिससे वास्तविक वाक्य रचनांतरण नियमों द्वारा रचित होते हैं।[32] आधार पद-बंध-चिह्नकों को प्राथमिक आशय-तत्व माना जा सकता है जिससे वास्तविक वाक्यों के अर्थ-परक निर्वचन रचित होते हैं[33]। अतएव, यह पर्यवेक्षण कि आर्थी दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रकार्यात्मक धारणाएँ (व्याकरणिक संबंध) आधार संरचना में और केवल उन्हीं में प्रत्यक्षतया निरूपित हैं कोई आश्चर्य की बात नहीं है और परिणामतः यह मानना बहुत स्वाभाविक है कि आधार के रूपात्मक गुण-धर्म सार्वभौम कोटियों के स्थापन के लिए उचित ढाँचा प्रदान करेंगे।

यह कहने का कि आधार के रूपात्मक गुण-धर्म सार्वभौम कोटियों के स्थापन के लिए ढाँचा प्रदान करेंगे,यह अर्थ होगा कि आधार की अधिकांश संरचनाएँ सभी भाषाओं में सामान्य हैं। यह एक परंपरागत दृष्टिकोण का कथनमात्र है जिसका आरंभ कम से कम Grammaire generale et raisonnée, (लेंसलो (Lancelotetal, 1660) लिया जा सकता है। आज तक उपलब्ध सम्बद्ध साक्ष्यों से ऐसा नहीं प्रतीत होता कि यह गलत है। जिस सीमा तक आधार संरचना के पक्ष भाषा-विशेष के केवल अपने पक्ष नहीं हैं, उस सीमा तक उन्हें उस भाषा के व्याकरण में वणित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके विपरीत, सामान्य भाषाई सिद्धान्त के अन्तर्गत स्वयं 'मानव भाषा'' की धारणा के परिभाषा के अंग रूप में वर्णित करना चाहिए। परंपरा के शब्दों में वे पक्ष भाषा के सामान्य रूप के अंग हैं न कि भाषा-विशेष के रूप के अंग और इस प्रकार संभवतः यह उसे प्रतिबिम्बित करता है जो मस्तिष्क भाषोपार्जन करते समय काम में लाता है न कि वह जो भाषोपार्जन करने के द्वारा प्राप्त या आविष्कृत करता है एवं कुछ सीमा तक यहाँ पर सुझाए हुए आधार नियमों के वर्णन उसी प्रकार अंग्रेजी व्याकरण के अंग नहीं हैं जिस प्रकार

अंग्रेजी व्याकरण में व्युत्पादन या 'रचनांतरण' की परिभाषा। (देखिए अध्याय 1 § §6 और 8)

यह सामान्यतया माना जाता है कि आधुनिक भाषा वैज्ञानिक और नृतत्व-शास्त्रीय खोजों ने प्राचीन सार्वभौम व्याकरण के सिद्धान्तों का निर्णयात्मक रूप से खंडन कर दिया है किन्तु यह दावा मुझे अत्यंत अत्युक्तिपूर्ण लगता है। आधुनिक अनुसंधानों ने निस्संदेह भाषाओं की बाह्य संरचना में अत्यधिक वैविध्य दिखाया है। किन्तु चूँकि उन खोजों का संबंध गहन संरचना के अध्ययन से नहीं रहा है अतएव आधारभूत संरचनाओं की तदनुरूप विविधता को दिखाने का उसने कोई प्रयास नहीं किया है और वस्तुतः भाषा के वर्तमान अध्ययन में अब तक एकत्र साक्ष्य इस प्रकार का कोई सुझाव देता हुआ नहीं दिखाई पड़ता। यह तथ्य कि भाषाएँ बाह्य संरचना की दृष्टि से एक दूसरे से बहुत अधिक विभिन्न हो सकती हैं उन विद्वानों के लिए कोई आश्चर्यजनक वस्तु नहीं है जिन्होंने परंपरागत सार्वभौम व्याकरण का विकास किया था। Grammaire générale et raisonnée में इस कार्य के प्रारंभ से लेकर अब तक इस पर विशेष बल दिया गया है कि गहन संरचनाएँ, जिनके संबंध में सार्वभौमिकता का दावा किया गया है, वस्तुतः प्रयुक्त वाक्यों की बाह्य संरच-नाओं से स्पष्टतया भिन्न हैं। परिणामतः बाह्य संरचनाओं की एकरूपता की आशा करने का कोई कारण नहीं है और इस प्रकार आधुनिक भाषाविज्ञान की उपलब्धियाँ सार्वभौम व्याकरण के प्रतिपादकों की प्राक्कल्पनाओं से असंगत नहीं हैं, जहाँ तक बाह्य संरचनाओं पर ध्यान सीमित रहा है ग्रीनबर्ग (1963) द्वारा प्रस्तुत सांख्यकीय प्रवृत्तियों की खोज ही एक विशेष उल्लेखनीय बात मानी जा सकती है।

चयनात्मक नियम (57xiv) के संबंध में हमने एक संभावना को पक्के तौर से निरस्त कर दिया है वह यह है कि कर्ता या कर्म क्रिया के स्वतंत्र अथवा आंशिक स्वतंत्र विकल्प के शब्दों में चुना जा सकता है। किन्तु यह प्रश्न इतना सरल नहीं है कि क्या यह नियम जिसमें (66) के रूप में कुछ अधिक विस्तृत रूप में प्रस्तुत कर रहा हूँ अपने विकल्प (67) से अधिक अच्छा है।

(66) (i), (ii) [+क्रि] → कोप्र / [+V] → CS / { α⁀Aux — ⁀β / सहा ; α⁀Aux — / सहा }

(67) (i), (ii) [+क्रि] → कोप्र / [+V] → CS / { α⁀Aux — / सहा ; — Det⁀β / नि० }

अब तक प्रस्तावित (देखिए उदाहरणार्थ अध्याय 3, चॉम्स्की 1955) मूल्यांकन मापों के शब्दों में इन दोनों में से किन्हें चुना जाए इसका निश्चय नहीं हो सकता। पुनर्लेखी नियमों के अनिवार्य प्रयोग की सामान्य रूढ़ियों के अनुसार (66i) अकर्मक क्रियाओं के लिए कुछ अभिलक्षण समनुदेशित करता है, (66ii) अकर्मक क्रियाओं के लिए। इसके विपरीत, (67i) सभी क्रियाओं में कर्ता चयन का अभिलक्षण समनुदेशित करता है और (67ii) सकर्मक क्रियाओं के कर्म चयन के अभिलक्षण को। यदि हम (66) को लेते हैं तो frighten (भयभीत करना) के लिए कोशीय प्रविष्टि अभिलक्षण [[+ Abstract अमूर्त] Aux–Det सहा-नि. (+Animate चेतन)]] के लिए धनात्मक रूप से विनिर्दिष्ट होगा; यदि हम (67) को लेते हैं तो धनात्मक रूप से दो अभिलक्षण [Abstraet अमूर्त]Aux-सहा–] और [–Det नि [+An.-mate चेतन]]के लिए विशेषीकृत होगी ऊपर से यह लग सकता है कि यह तकनीकी प्रश्न स्थापन का प्रश्न मात्र है, किन्तु जैसेकि अनेक उदाहरणों में यह कदापि स्पष्ट नहीं है उदाहरण के लिए निम्नलिखित प्रश्नों पर विचार करें :

(68) (i) He—the platoon (वह—प्लाटून)

(ii) his decision to resign his commission–the platoon
(उसका अपने पद से त्याग का निर्णय—प्लाटून)

(iii) his decision to resign his commission–our respect
(उसका अपने पद से त्याग का निर्णय–हमारा सम्मान)

(68i) में हम क्रिया command (आज्ञा) रख सकते हैं (विवेचन की सरलता के लिए सहायक क्रियाओं के विकल्प के प्रश्नों को हमने उपेक्षित कर दिया है) (68iii) में भी command (आज्ञा) आ सकता है, किन्तु इसका एक विभिन्न यद्यपि पूर्णतया असंबद्ध नहीं, अर्थ होगा। (68ii) में हम command (आज्ञा) को नहीं रख सकते किन्तु हम उदाहरण के लिए baffle (घबरा देना) को रख सकते हैं जोकि (68i) में आ सकता है किन्तु (68iii) में नहीं। अगर हम विकल्प (67) को लेते हैं तो क्रिया command (आज्ञा) धनात्मक रूप से अभिलक्षण [[+ Animate चेतन] Aux सहा–][-Det नि [+ Animate चेतन]], [[+Abstract अमूर्त] Aux–सहा–], और [–Det नि[+ Abstract अमूर्त]] के लिए अंकित होगा। अर्थात् यह इस प्रकार से अंकित होगा कि उसके साथ एक अचेतन अथवा अमूर्त संज्ञा कर्ता या कर्म के रूप में आ सके। किन्तु यह विनिर्देशन कर्ता और कर्म की उस निर्भरता को सूचित करने में असफल होता है जो कि (68ii) की उस च्युति से प्रदर्शित होता है जब इस प्रसंग में command (आज्ञा) आता है। यदि हम विकल्प (66) लें तो command (आज्ञा) को अभिलक्षण [[+ Animate चेतन] Aux-Det (सहा-नि)

[+ Animate चेतन]] और [[+ Abstract] Aux-Det (सहा-नि)[+ Abstract अमूर्त]] के धनात्मक रूप से अंकित होना चाहिए किन्तु अभिलक्षण [[+Abstract अमूर्त] Aux-Det (सहा-नि)[+Animate चेतन]] से नहीं। इस प्रकार (66ii) के प्रसंग से command (आज्ञा) बहिर्गत हो जाएगा। हमने इन कारणों से व्याकरणिक रेखाचित्र में विकल्प (66) का चयन किया है। फिर भी, यह उल्लेखनीय है कि इस निर्णय के आधार बहुत अशक्त हैं क्योंकि एक महत्वपूर्ण प्रश्न अर्थात् विभिन्न किन्तु संबद्ध वाक्यविन्यासीय और आर्थी अभिलक्षणों के परास से किस प्रकार कोशीय एकांशों को प्रविष्ट किया जाए, अनिर्धारित रहता है। हमें अब तक इससे अधिक प्रभावशाली उदाहरण नहीं मिले।

प्रथमतः ऐसा लगता है कि (67) के स्थान पर (66) को चुनने के निश्चय से कुछ समाधिकता उन क्रियाओं के सम्बन्ध में मिल रही है जहाँ कर्ता और कर्म विकल्पन स्वतंत्र है। फिर भी, इस स्थिति में भी शब्दसमूह में उतनी ही संख्या के अभिलक्षण सूचित करने होते हैं। (66) के चयन के साथ कुछ अर्थों में अभिलक्षण अधिक जटिल दिखाई पड़ते हैं किन्तु यह एक आंकनिक व्यवस्था की कुव्याख्या है। यहाँ इस बात का ध्यान देना चाहिए कि अंकन

[+ Animate] Aux—Det [+ Abstract]
[+चेतन] सहा – नि० [+अमूर्त]

उदाहरण के लिए, हमारे ढाँचे में एक विशिष्ट कोशीय अभिलक्षण को स्थापित करने वाला एक प्रतीक है।

स्पष्टतया यह टिप्पणी किसी भी प्रकार से प्रश्न का सर्वांगीण उत्तर नहीं है। इससे सम्बद्ध अधिक विवेचन के लिए देखिए अध्याय 3 और 4।

§ 4·3 उपकोटिकरण नियमों पर अतिरिक्त अन्य टिप्पणियाँ

हम आधार में प्रशाखन नियमों और उपकोटिकरण नियमों और इसी प्रकार प्रसंग नियमों और प्रसंग सापेक्ष नियमों के बीच अतर स्पष्ट कर चुके हैं। प्रसंग-सापेक्ष उपकोटिकरण नियमों का सुदृढ़ उपकोटिकरण-नियमों और चयनात्मक-नियमों में पुनः विभाजन किया गया। यह नियम प्रसंगगत अभिलक्षणों को प्रस्तुत करते हैं जबकि प्रसंगनिरपेक्ष उपकोटिकरण नियम अंतर्निहित नियमों को प्रस्तुत करते हैं। विकल्पतः कोई यह प्रस्ताव कर सकता है कि उपकोटिकरण नियमों को पुनर्लेखी नियमों की व्यवस्था से बिल्कुल हटा दिया जाए और उन्हें फलतः शब्द समूह में निर्दिष्ट किया जाए। वस्तुतः यह एक पूरी तरह से संभव सुझाव है।

तब मान लीजिए कि आधार को दो भागों में विभाजित किया जाता है—कोटिय घटक और शब्दसमूह। कोटिय घटक के अंतर्गत केवल प्रशाखन नियम आते हैं जो संभवत सभी प्रसंग-निरपेक्ष नियम हैं (देखिए अध्याय 3)। विशेषतः, (57)

के प्रशाखन नियम अंग्रेजी के इस खंडीय व्याकरण के आधार के कोटिय घटक बनेंगे। कोटिय घटक का प्राथमिक कार्य उन आधारभूत व्याकरणिक संबंधों को अव्यक्त तौर से परिभाषित करना है जोकि भाषा की गहन संरचनाओं में कार्य करते हैं। यह संभव है कि एक बड़ी सीमा तक कोटिय घटक का रूप "मानव भाषा" की परिभाषा देने वाले सार्वभौम प्रतिबंधों से निर्धारित हो।

उपकोटिकरण नियम आधार के कोशीय घटक में निम्नलिखित रीति से समनुदेशित किए जा सकते हैं। सर्वप्रथम प्रसंग निरपेक्ष उपकोटिकरण नियम, जैसे (57ix) से (xiii) तक वाक्यविन्यासीय समाधिकता नियम माने जा सकते हैं, और इस कारण शब्दसमूह में समनुदेशित किए जा सकते हैं। अब हम उन नियमों पर विचार करें जो प्रासंगिक अभिलक्षणों को प्रस्तुत करते हैं। यह नियम कुछ विशेष ढाँचों को चुन लेते हैं जिनमें एक प्रतीक आता है और तदनुरूप प्रासंगिक अभिलक्षणों को ये समनुदेशित करते हैं। इन स्थितियों में एक कोशीय प्रविष्टि स्थानापन्न हो सकती है यदि उसके प्रासंगिक अभिलक्षण उस प्रतीक से मेल खाते हों जिसके लिए वह स्थानापन्न हुई है। स्पष्टतया प्रासंगिक अभिलक्षण कोशीय एकांशों में अवश्य प्रकट होंगे। किन्तु वे नियम जो मिश्र प्रतीकों में प्रासंगिक अभिलक्षण प्रस्तुत करते हैं। कोशीय नियम (अर्थात् वे नियम जो कोशीय एकांशों के व्युत्पादनों में प्रस्तुत करते हैं; तुलना कीजिए पृ० 78) के समुचित पुनर्व्यवस्थापन द्वारा हटाए जा सकते हैं। इसे एक प्रसंग-निरपेक्ष नियम के रूप में व्यवस्थापित करने के स्थान पर जोकि मिश्र प्रतीक के मेलायन द्वारा परिचालित होता है, हम उसे एक निम्नलिखित प्रकार की रूढ़ियों द्वारा एक संदर्भ-सापेक्ष नियम में परिवर्तित कर सकते हैं। मान लीजिए कि हमारी कोशीय प्रविष्टि (D,C) है जहाँ D एक स्वनप्रक्रियात्मक मैट्रिक्स है और C एक मिश्र प्रतीक है जिसमें अभिलक्षण (+X – Y) है। हमने पहले यह स्वीकार किया था कि कोशीय नियम D को पूर्वान्त्य शृंखला $\phi Q \psi$ के प्रतीक Q को विस्थापित करने देता है यदि Q मिश्र प्रतीक C से भिन्न नहीं है। मान लीजिए कि हम इसके अतिरिक्त यह अपेक्षा रखें कि Q का यह घटित होना साँचा X—Y में वस्तुतः हो। अर्थात् हम यह अपेक्षा करें कि $\phi Q \psi$ बराबर है $\phi_1 \phi_2 \; Q \psi_1 \psi_2$ जहाँ $\phi_1 Q \psi$ के पदबंध-चिन्हक में $\phi_2 X$ द्वारा और $\psi_1 Y$ द्वारा अधिकृत है। यह रूढ़ि "विश्लेषणीयता" जिस पर रचनांतरण सिद्धान्त आधारित है की धारणा के शब्दों में सूक्ष्मतया व्यवस्थापित की जा सकती है। अब हमने व्याकरण के सभी प्रसंग सापेक्ष उपकोटिकरण नियम हटा दिए हैं और उनके स्थान पर कोशीय अभिलक्षणों और अभी उल्लिखित सिद्धान्त पर इस परिणाम को पाने के लिए निर्भर हैं। उपकोटिकरण नियमों पर लगाए हमारे पहले वाले निर्धारक (देखिए § .3.4) कोशीय

प्रविष्टियों में प्रकट होने वाले प्रासंगिक अभिलक्षणों के भेदों पर निर्धारक बन जाते हैं। इस प्रकार कोटि A के किसी एकांश के लिए सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षणों का संबंध उन साँचों से अवश्य होता है जो A के साथ एकल अवयव B को बनाता है जो कि अव्यवहित रूप से A को अधिकृत करता है; और चयनात्मक अभिलक्षण कोशीय कोटियों से अवश्य सम्बद्ध होते हैं जोकि पूर्वचर्चित दृष्टि से व्याकरणिक रूप से संबद्ध पदबंधों के शीर्ष होते हैं।

इस प्रकार आधार के कोटीय घटक में अब कोई उपकोटिकरण नियम नहीं बनता। पूर्वान्त्य शृंखला कोटीय घटक के प्रशाखन नियमों द्वारा प्रजनित होती है। पूर्वान्त्य शृंखला की कोशीय कोटियाँ अभी बताए सिद्धान्त के अनुसार कोशीय प्रविष्टियों द्वारा स्थानापन्न होती हैं। यह व्यवस्थापन बहुत स्पष्टतया उस अर्थ को प्रस्फुटित करता है जिसमें मिश्र प्रतीकों का हमारा उपयोग आधार घटक में रचनांतरण नियमों को प्रस्तुत करने के लिए एक युक्ति मात्र है। वस्तुतः मान लीजिए कि (रचनांतरण नियमों के निर्देशन की एकरूपता के लिए) हम यह रूढ़ि जोड़ दें कि कोटीय घटक में प्रत्येक कोशीय कोटि के लिए एक नियम $A \rightarrow \triangle$ जहाँ कि $\triangle$ एक "मूक-(डमी) प्रतीक" हैं। अब कोटीय घटक के नियम (कोशीय कोटियों की स्थितियों को चिह्नित करने वाले) व्याकरणिक रचनांगों और $\triangle$ के विभिन्न घटनों से उक्त शृंखलाओं के पदबंध-चिह्नकों को प्रजनित करेंगे। कोशीय प्रविष्टि (D, C) रूप की होती जहाँ D एक स्वन प्रक्रियात्मक मैट्रिक्स है और C एक मिश्र प्रतीक है। मिश्र प्रतीक C के अंतर्गत अंतर्निहित अभिलक्षण और प्रासंगिक अभिलक्षण आते हैं। हम इस अभिलक्षण C की व्यवस्था को विशिष्ट स्थानापत्ति रूपांतरण के लिए संरचना सूचकांक I के रूप में प्रत्यक्षतया पुनर्कथित कर सकते हैं। यह रचना रूपांतरण(D,C) (इसे अब एक मिश्र अंत्य प्रतीक माना गया है—देखिए टिप्पणी 15) को पदबंध-चिह्नक K में $\triangle$ के एक विशिष्ट घटन के लिए स्थानापन्न करता है, यदि K प्रतिबंध I को पूरा करता है जो कि रचनांतरण व्याकरण के सामान्य अर्थ में विश्लेषणीयता के शब्दों में एक बूलीय (Boolian) निर्धारक है। जहाँ सुदृढ़ उपकोटिकरण संबद्ध है वहाँ स्थानापत्ति रचनांतरण, इसके अतिरिक्त, टिप्पणी 18 के अर्थ में सुदृढ़तया स्थानीय है।

इस प्रकार कोटीय घटक एक न्यूनीकृत अंत्य शब्दावली के साथ (अर्थात् जहाँ सभी कोशीय एकांश एक एकल प्रतीक $\triangle$ में प्रतिचित्रित हो गए हों) एक प्रसंग-निरपेक्ष अवयव-संरचना-व्याकरण (सरल पदबंध संरचना व्याकरण) है। शब्दसमूह के अंतर्गत उन विशिष्ट स्थानापत्ति स्थानांतरणों से सहचरित प्रविष्टियां आती हैं जो कोटीय घटक द्वारा प्रजनित शृंखलाओं में कोशीय एकांशों को प्रस्तुत करते हैं।

आधार के सभी प्रासंगिक प्रतिबंध शब्द समूह के इन रचनांतरण नियमों द्वारा निश्चित होते हैं। कोटीय घटक का प्रकार्य व्याकरणिक संबंधों की व्यवस्था को परिभाषित करना और गहन संरचनाओं के तत्वों के क्रमबन्ध का निर्धारण करना है।

आधार घटक का इस प्रकार का विकसन पूर्व प्रस्तुत विवेचन का ठीक समतुल्य नहीं है। पूर्ववर्ती प्रस्ताव किन्हीं दिशाओं में कुछ अधिक प्रतिबंध लगाने वाला था। दोनों व्यवस्थापनों में शब्द समूह में मिलने वाले प्रासंगिक अभिलक्षण स्थानापत्ति रचनांतरणों के संरचना सूचकांक पूर्व विवेचित सुदृढ़ उपकोटिकरण और चयनात्मक नियमों के निर्धारकों से सीमित हैं। किन्तु पूर्ववर्ती व्यवस्थापन में जहाँ उपकोटिकरण नियम पुनर्लेखी नियमों के रूप में दिए गए हैं, एक अतिरिक्त प्रतिबंध भी है। पुनर्लेखी नियम A → CS का क्रमबन्ध प्रासंगिक अभिलक्षणों के उस वर्ग पर, जो कि प्रयुक्त हो सकता है, एक अतिरिक्त परिसीमन लगता है। इसी प्रकार उदाहरण (66)–(68) के संबंध में § 4.2 में उठाए प्रश्न इस नए व्यवस्थापन में नहीं आते है। चूँकि इसमें और अधिक नम्यता ली गई है। कुछ क्रियाएँ कर्ता और कर्म के चयन के शब्दों में, कुछ कर्ता चयन के शब्दों में और कुछ कर्म चयन के शब्दों में प्रतिबंधित की जा सकती हैं। यह एक रोचक प्रश्न है, क्या इस उप-अनुभाग के उपागम द्वारा प्रदत्त अधिक नम्यता की कभी आवश्यकता पड़ेगी भी। यदि ऐसा है तो आधार के सिद्धान्त के व्यवस्थापन में इस व्यवस्थापन को प्राथमिकता मिलनी चाहिए। यदि नहीं है तो प्रभिन्नता प्रतिबंध पर आधारित कोशीय नियम के शब्दों में दूसरे व्यवस्थापन को प्राथमिकता मिलनी चाहिए। हम इस प्रश्न पर अध्याय 4 में पुनः विचार करेंगे।

§ 4·4. उपकोटिकरण नियमों की कार्य-भूमिका

हमने कोटीय घटक को आधार के पुनर्लेखी नियमों की व्यवस्था के रूप में अर्थात् आधार नियमों की ऐसी व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया जहाँ शब्दसमूह और उपकोटिकरण नियमों को (जिन्हें वर्तमान में शब्दसमूह के भीतर रखा गया) पृथक् रखा गया है। कोटीय घटक के नियम दो पूर्णतया पृथक्-पृथक् प्रकार्य करते हैं : वे व्याकरणिक संबंधों की व्यवस्था की परिभाषा देते हैं और गहन संरचनाओं में तत्वों के क्रमबंध को निर्धारित करते हैं। ऐसा लगता है कि कम से कम, इन प्रकार्यों में पहला, बहुत सामान्य और कदाचित् सार्वभौम रीति से इन नियमों के द्वारा पूरा किया जाता है। रचनांतरण नियम गहन संरचनाओं को बाह्य संरचनाओं में प्रतिचित्रित करते हैं और इस संक्रिया की अवधि में विभिन्न रीतियों से कदाचित् तत्वों को पुनः क्रमबद्ध करता है।

इसका सुझाव कई बार दिया गया है कि कोटीय घटक के इन दो प्रकार्यों को और अधिक स्पष्टता से प्रकट करना चाहिए और कदाचित् दूसरे प्रकार को पूर्णतया

निरस्त कर देना चाहिए। करी (1961) और शाउम्यान और सौबोलेबा (1963) में वाक्यीय संरचना की प्रकृति के संबंध में दिए गए प्रस्तावों का ऐसा ही तात्पर्य है[34]। साररूप में उनका प्रस्ताव यह है कि (69) जैसे नियमों के स्थान पर कोटीय घटक के अन्तर्गत (70) जैसे तदनुरूप नियम होने चाहिए जहाँ दाहिनी ओर का तत्व एक समुच्चय है कि एक शृंखला :

(69) → NP⌢VP वा० → संप⌢क्रिप

VP → V⌢NP क्रिप → क्रि⌢संप

(70) S → {NP, VP} वा → संप क्रिप

VP → {V, NP} क्रिप → क्रि संप

(70) में नियम के दाहिनी ओर के तत्वों में कोई क्रम विनिर्दिष्ट नहीं किया गया है।

(संप क्रिप क्रिप संप) (संप⌢क्रिप क्रिप⌢संप)
इस प्रकार {NP, VP} = {VP, NP} यद्यपि NP⌢VP = VP⌢NP।

(70) के नियम व्याकरणिक संबंधों को बिलकुल उसी प्रकार परिभाषित कर सकते हैं जिस प्रकार (69) के नियम। (69) के नियम तदनुरूप (70) के नियमों की अपेक्षा अधिक सूचना देते हैं। चूंकि न केवल व्याकरणिक संबंधों की अमूर्त व्यवस्था को परिभाषित करते हैं, बल्कि तत्वों को एक अमूर्त आधारभूत क्रम में विनिर्दिष्ट भी करते हैं। (69) जैसे नियमों से प्रजनित पदबंध-चिह्नक नामांकित पर्व और नामांकित रेखाओं से युक्त वृक्ष-आरेख द्वारा प्रदर्शनीय है : (70) जैसे नियमों से प्रजनित पदबंध-चिह्न नामांकित पर्वों किंतु नामांकनहीन रेखाओं से युक्त वृक्ष-आरेख द्वारा प्रदर्शनीय होते हैं।

(70) जैसे समुच्चय व्यवस्थाओं के प्रतिपादक यह युक्ति देते हैं कि उनकी पद्धतियाँ (69) जैसे शृंखला व्यवस्था की तुलना में अधिक "अमूर्त" हैं और क्रम निरपेक्ष व्याकरणिक संबंधों के अध्ययन की ओर से ले जाती हैं क्योंकि क्रम केवल बाह्यस्तलीय संरचना का एक घटना-क्रम तथ्य है। किंतु समुच्चय व्यवस्थाओं की अधिक अमूर्तता जहाँ तक व्याकरणिक संबंधों का संबंध है, केवल एक कल्पना है। इस प्रकार (70) द्वारा परिभाषित व्याकरणिक संबंध, (69) द्वारा परिभाषित व्याकरणिक संबंधों की तुलना में न तो अमूर्तता की दृष्टि से कम या अधिक हैं और न कम निरपेक्ष हैं। वस्तुतः इन दोनों के द्वारा परिभाषित व्याकरणिक संबंधों की व्यवस्थाएँ एक समान हैं। बिना अनुभव किए कौन से सिद्धान्त सही हैं इसका कोई उपाय नहीं है, यह एक पूर्णतया अनुभवजन्य प्रश्न है और वर्तमान उपलब्ध साक्ष्य कोटीय घटक के सिद्धान्त के लिए समुच्चय व्यवस्थाओं की तुलना में शृंखला व्यवस्थाओं के प्रति बहुत अधिक पक्ष में है। वास्तव में, समुच्चय व्यवस्था के किसी भी

प्रतिपादक ने इसका संकेत नहीं दिया कि अमूर्त आधारभूत क्रमहीन संरचनाएँ किस प्रकार बाह्य संरचनाओं के साथ वास्तविक श्रृंखलाओं में बदल जाती हैं। अतएव इस सिद्धान्त को अनुभवजन्य पुष्टि देने की समस्या का अभी सामना ही नहीं किया गया है।

कोटीय घटक समुच्चय व्यवस्था बने इस प्रस्ताव का अनुमानतः तात्पर्य यह है कि व्याकरणिक संबंधों के एक एकल जालतंत्र के युक्त वाक्यविन्यासीय दृष्टि से सम्बद्ध संरचनाओं के समुच्चय में (उदाहरण के लिए "for us to please John is difficult" (हमारे लिए जॉन को प्रसन्न करना कठिन है) "it is difficult for us to please John" (जॉन को हमारे लिए प्रसन्न करना कठिन हैं) "to please John is difficult for us" (जॉन को प्रसन्न करना हमारे लिए कठिन है) 'John is difficult for us to please" (जॉन हमारे लिए प्रसन्न करने के लिए कठिन हैं) प्रत्येक सदस्य (वाक्य) आधारभूत अमूर्त निरूपण से संबद्ध है और संरचनाओं के समुच्चय के भीतर कोई आंतरिक संगठन (अर्थात् व्युत्पादन का क्रम) नहीं है। किन्तु वस्तुतः जब कभी ऐसी संरचनाओं की व्याख्या करने का प्रयास वास्तव में किया गया है, यह सर्वदा पाया गया है कि एक प्रकार के समुच्चय के अवयव रूप एकांशों में एक आंतरिक संगठन और एक अंतर्निहित व्युत्पादन-क्रम विनिर्दिष्ट करने के प्रबल कारण हैं। इसके अतिरिक्त यह भी हमेशा देखा गया है कि किसी भाषा में विभिन्न समुच्चय तत्वों की आधारभूत अमूर्त दृष्टि से एक ही निर्णय पर पहुँचते हैं। अतएव ऐसा लगता है कि (70) जैसी समुच्चय व्यवस्था की परिपूर्ति नियमों के दो समुच्चयों द्वारा होनी चाहिए। प्रथम समुच्चय आधारभूत क्रमहीन पदबंध-चिह्नकों के तत्वों में अन्तर्निहित क्रम को निर्दिष्ट करता है (अर्थात् इन संरचनाओं को निरूपित करने वाले वृक्ष-आरेखों की पंक्तियों को नामांकित करता है)। नियमों को दूसरा समुच्चय व्याकरणिक रचनांतरण होगा जो परिचित रीति से बाह्यस्तलीय संरचनाओं के अनुक्रम में प्रयुक्त होते हैं। नियमों का प्रथम समुच्चय समुच्चय-व्यवस्था की श्रृंखला व्यवस्था में परिवर्तित मात्र करता है। वह उन रचनांतरणों अनुक्रमों के प्रयोग के लिए अपेक्षित आधार पदबंध चिह्नकों की व्यवस्था करता है जो कि अंत में चल कर बाह्य संरचनाओं का निर्माण करते हैं। इस सुझाव का किंचित् मात्र साक्ष्य नहीं है कि प्राकृतिक भाषाओं में इनमें से कोई भी चरण लुप्त किया जा सकता है। परिणामतः, कम से कम इस समय प्रस्तुत चर्चा में समुच्चय-व्यवस्था को एक व्याकरणिक संरचना के संभव सिद्धान्त मानने का कोई तर्क नहीं है।

तथाकथित "मुक्त शब्द क्रम" कभी-कभी इस प्रश्न के लिए सार्थक कहा गया है किंतु जहाँ तक मैं देखता हूँ इसका इससे कोई सम्बन्ध नहीं है। मान लीजिए कोई

एक ऐसी भाषा है जिसके प्रत्येक वाक्य के शब्दों का प्रत्येक क्रम परिवर्तन एक व्याकरणिक वाक्य ही बनता है जोकि वस्तुत: मूल का पुनर्कथन है। इस स्थिति में इस भाषा के व्याकरण के कोटीय घटक के लिए समुच्चय-व्यवस्था बहुत अधिक श्रेष्ठ रहेगी। तब न तो व्याकरणिक रचनान्तरणों की आवश्यकता होगी और आधारभूत अमूर्त निरूपणों के रूपायन-नियम अत्यधिक सरल होंगे किन्तु कोई भी ज्ञात भाषा ऐसी नहीं है जो इस वर्णन से किंचित् मात्र भी मिलती हो। प्रत्येक ज्ञात भाषा में क्रम के प्रतिबन्ध काफी कड़े हैं और इसलिए अमूर्त संरचनाओं के समापन नियम आवश्यक हैं। जब तक इस प्रकार के नियमों की कुछ व्याख्या का सुझाव नहीं मिलता समुच्चय-व्यवस्था को व्याकरणिक सिद्धान्त के रूप में गंभीरता से नहीं सोचा जा सकता है।

फिर भी, मुक्त शब्द-क्रम का घटना-क्रम एक रोचक और महत्वपूर्ण घटना-क्रम है और अब तक इस पर बहुत कम ध्यान दिया गया है। सर्वप्रथम इस बात पर बल देना चाहिए कि व्याकरणिक रचनांतरण शैली-गत-विलोम के लिए संभावना के पूरे परास को अभिव्यक्त करने की एक समुचित युक्ति नहीं प्रतीत होते हैं। बल्कि ऐसा लगता है कि अनेक आधारभूत सामान्यीकरण हैं जो यह निर्धारित करते हैं कि इस प्रकार का पुन: क्रमबंध कब ग्राह्य है और उसके आर्थी प्रकार्य कौन-से हैं। एक बात अवश्य है ऐसी भाषाओं में, जो रूप साधन में समृद्ध हैं उन भाषाओं की तुलना में जो रूप साधन में क्षीण है, स्पष्ट कारणों से शैलीगत पुन: क्रमबंध की अत्यधिक सीमा तक संभावनाएँ हैं। इसके अतिरिक्त, समृद्ध रूप-साधनों वाली भाषाओं में भी जब पुन: क्रमबंध के कारण नैकार्थता उत्पन्न होने लगती है तो उससे बचाव किया जाता है। इस प्रकार "Die Mutter sieht die Tochter" (माँ और उसकी पुत्री) जर्मन वाक्य में जहाँ रूपसाधन व्याकरणिक प्रकार्यों को सूचित करने में पर्याप्त नहीं होते हैं, ऐसा लगता है कि हमेशा यही व्याख्या रहेगी कि "Die Mutter (माँ)" एक कर्ता है (दूसरा अर्थ तभी संभव है जबकि व्यतिरेकी बलाघात हो और उस स्थिति में यह कर्ता भी हो सकता है और कर्म भी)। यही बात अन्य भाषाओं के लिए भी रूसी (देखिए पेश्कोवस्ती, 1956, पृष्ठ 42) और मोहाक (Mohawk) जैसी दूरवर्ती भाषाओं के लिए भी सही है। मोहाक में क्रिया के अन्दर कर्ता और कर्म की सूचना देने वाले प्रत्यय लगे होते हैं किन्तु जहाँ संदर्भ में कोई नैकार्थता होती है सामान्य अनुतान होने पर पहले NP (संप) को कर्ता माना जाता है (इस सूचना के लिए मैं पॉल पोस्टल का ऋणी हूँ)। अगर यह सार्वभौमिक है तो यह इस सामान्यीकरण का संकेत देता है कि किसी भी भाषा में "मुख्य अवयवों" (जिसे किसी अर्थ में परिभाषित करना है) का शैलीगत विलोम उस सीमा तक सहा जाता है जहाँ तक वह नैकार्थता उत्पन्न न कर दे, अर्थात् उस बिन्दु तक सही होता है जहाँ उत्पन्न संरचना ऐसी हो जोकि व्याकरणिक नियमों

के द्वारा स्वतंत्र रूप से भी उत्पन्न की जा सके। (इसलिए इसके विशेष उदाहरण के रूप में परिणाम यह निकलेगा कि रूप-साधन वाली भाषाएँ अरूप-साधन वाली भाषाओं की तुलना में कहीं अधिक सफलता के साथ पुन: क्रमबंध को स्वीकार करती हैं)। इस प्रकार की कोई चीज तो वास्तव में है और वह रचनांतरणों के सिद्धान्त के शब्दों में वर्णनीय नहीं है।

सामान्यतया शैलीगत पुन: क्रमबंध के नियम व्याकरणिक रचनांतरणों से अत्यधिक भिन्न हैं क्योंकि व्याकरणिक रचनांतरण व्याकरणिक व्यवस्था में कहीं अधिक गहराई से आधायित हैं [35]। वस्तुत: कोई यह भी तर्क दे सकता है कि शैली-गत पुन: क्रमबंध के नियम इतने व्याकरण के नियम नहीं हैं जितने निष्पादन के (तुलना कीजिए अध्याय 1 § § 1 और 2)। हर स्थिति में यद्यपि यह एक निश्चयत: रोचक घटनाक्रम है तथापि इसका प्रस्तुत चर्चा में व्याकरणिक संरचना के सिद्धान्त पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं है।

3

गहन संरचनाएँ और व्याकरणिक रचनांतरण

इस समय हम परीक्षण के रूप में अध्याय 2 § 4.3 में बताए आधार-घटक के सिद्धान्त को ग्रहण कर रहे हैं और अध्याय 2 § 3 के खंडीय विवेचन को ऐसे उपयुक्त परिवर्तन के साथ, जिससे आधार के कोटिगत घटक के उपकोटिकरण नियमों को बहिर्गत कर सकें, अब भी व्याकरण के उदाहरणात्मक नमूने के रूप में प्रयुक्त कर रहे हैं।

अब आधार पदबन्ध-चिह्नकों को प्रजनित करेगा। अध्याय 1 § 1 में हमने वाक्य के आधार को अन्तर्निहित पदबंध-चिह्नकों के अनुक्रम के रूप में परिभाषित किया है। वाक्य का आधार रचनांतरण नियमों द्वारा वाक्य में प्रतिचित्रित किया जाता है जो कि आगे चलकर रचना-प्रक्रिया में अपने आप वाक्य के लिए एक व्युत्पन्न पदबन्ध-चिह्नक (अन्ततोगत्वा, एक बाह्य संरचना विनिर्दिष्ट करते हैं)।

स्पष्टता के लिए, हम एक ऐसे आधार-घटक पर विचार कर रहे हैं जो पदबन्ध-चिह्नक (1)–(3) को प्रजनित कर रहा है।[1] आधार-पदबन्ध-चिह्नक (3) क्रिया-सहायक के भिन्न विकल्प के साथ वाक्य "John was examined by a specialist" (विशेषज्ञ द्वारा जॉन का परीक्षण किया गया) के लिए आधार होगा। पदबन्ध-चिह्नक (1) "The man was fired" (व्यक्ति मार दिया गया) वाक्य का आधार होगा यदि हम man (व्यक्ति) के सहचारित निर्धारक से S' को लोपित करके वाक्य को परिवर्तित करें। (इस स्थिति में कर्मवाच्य रचनांतरण के पश्चात् अविनिर्दिष्ट साधक का लोपन होगा)। फिर भी जैसी स्थिति है, किसी वाक्य के आधार बनने के लिए आधार पदबन्ध-चिन्हक (1) को एक अन्य पदबन्ध-चिह्नक द्वारा सम्पूरित होना होगा, और इस अन्य पदबन्ध-चिह्नक का एक रचनांतरण (1) में S' के स्थान की पूर्ति करेगा और इस प्रकार man (व्यक्ति) का सम्बन्ध-वाचक उपवाक्य के रूप में गुणक बनेगा। इसी प्रकार एक मात्र (2) वाक्य का आधार बनने में असमर्थ रहेगा क्योंकि त्रियापूरक स्थान में आने वाले को किसी अन्य पदबन्ध-चिह्नक के चनांतर

(1)

—वा—
संप
विधेय पद बंध
सहा
क्रिप
PAST
(भूतकाल)
क्रि
संप
रीति
FIRE
(मारना)
नि
सं
BY
(द्वारा)
कर्मवाच्य
THE
S'
MAN
(व्यक्ति)

—वा—
संप
विधेय पद बंध
नि
सं
सहा
क्रिप
THE
MAN
(व्यक्ति)
PAST
(भूतकाल)
क्रि
संप
पूर्व-पद बंध
PERSUADE
(समझाना)
सं
OF
संप
JOHN
(जॉन)
सं
S'

—वा—
संप
विधेय पद बंध
नि
सं
सहा
क्रिप
A
(एक)
SPECIALIST NOM
(विशेषज्ञ)
क्रि
संप
रीति
EXAMINE
(परीक्षण करना)
सं
BY
(द्वारा)
कर्मवाच्य
JOHN
(जॉन)

द्वारा अवश्य विस्थापित करना होगा। वस्तुतः आधार पदबन्ध-चिह्नक (1), (2) और (3) का अनुक्रम निम्नलिखित सुरचित वाक्य का आधार है,

(4) the man who persuaded John to be examined by a specialist was fired (जिस व्यक्ति ने जॉन को विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण के लिए समझाया, मार दिया गया)

(4) का "रचनांतरणपरक इतिहास", जिसके द्वारा वह अपने आधार से व्युत्पन्न हुआ है, अरूपीयतः, आरेख (5) द्वारा निरूपित किया जा सकता है :

हम इसकी व्याख्या इस प्रकार करते हैं। सबसे पहले आधार पदबन्ध-चिन्हक (3) में कर्मवाच्य रचनांतरण T_P (रक) प्रयुक्त करेंगे, परिणाम को आधार पदबन्ध-चिह्नक (2) में S' के स्थान पर एक व्यापक (द्वि-आधारी) प्रतिस्थापन रचनांतरण T_E (रप्र) द्वारा आधायित करेंगे जो कि "the man persuaded John of व्यक्ति ने जॉन को (समझाया) △John *Nom* be examined by a specialist" (जॉन का विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण किया जाए) के लिए पदबन्ध-चिह्नक देगा; तब हम पहले T_D (रल) जो कि संप'John'(जॉन) की पुनरावृत्ति का लोप करता है, और तबT_{to} को प्रयुक्त करेंगे जो कि "of △ nom (नाम का)"को "to (को)" से प्रतिस्थापित करेगा और "the man persuaded John to be examined by a specialist (व्यक्ति ने जॉन को विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण के लिए समझाया) के लिए एक पदबन्ध-चिह्नक देगा; इसके बाद T_E (रप्र) के द्वारा हम इसको S' के स्थान में आधायित करेंगे; तब सम्बन्ध वाचक रचनांतरण T_R (र सम्बन्ध) प्रयुक्त करेंगे जोकि परवर्ती N (संज्ञा) के साथ इस आधायित वाक्य की क्रम-परिवृत्ति करेगा और पुनरावृत्त पदबन्ध "the man" (व्यक्ति) को "who" (जिस) द्वारा प्रतिस्थापित करेगा और "△ fired the man who persuaded John to be examined by a specialist by passive" (व्यक्ति को मार दिया गया जिसने जॉन को विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण के लिए समझाया कर्मवाच्य द्वारा) के लिए पदबन्ध-चिह्नक देगा; और तब अन्त में कर्मवाच्य रचनांतरण प्रयुक्त करेंगे और (T_{AD} (र सा० लो०) द्वारा साधक के लोपन के पश्चात् हमें (4) मिलेगा।

इस वर्णन में हमने कई ऐसे रचनांतरण छोड़ दिए हैं जो (4) के सही रूप देने के लिए आवश्यक हैं और अन्य उन विस्तारों की भी चर्चा नहीं की है जो प्रायः सुविदित हैं और जिनका यहाँ वर्णन विवेचन में कोई सार्थक परिवर्तन नहीं ला सकता है।

आरेख (5) उसका अरूपीय निरूपण है जिसे हम "रचनांतरण-चिह्नक" कह सकते हैं। यह उक्ति (5) की रचनांतरण संरचना को ठीक उसी प्रकार निरूपित करता है जिस प्रकार पदबन्ध-चिह्नक अन्त्य शृंखला के पदबन्धीय संरचना को निरूपित करता है। वस्तुतः, रचनांतरण-चिन्हक रूपीयतः शृंखलाओं के समुच्चय के रूप में निरूपित किया जा सकता है और इस शृंखला के पदों में आधार पदबन्ध-चिह्नक और रचनांतरण तत्वों के रूप में आते हैं और यह उसी प्रकार है जिस प्रकार पदबन्ध-चिह्नक ऐसे पदावली की शृंखला के समुच्चय में रूपीयतः निरूपित होता है जिसमें अन्त्य प्रतीक, कोटि-प्रतीक और पूर्ववर्ती अनुभागों के विकास के साथ विनिर्दिष्ट अभिलक्षण आते हैं[2]।

किसी भी उक्ति की गहन स्तरीय संरचना पूरी-पूरी अभी अपने रचनांतरण-चिह्नक द्वारा दे दी जाती है जोकि उस उक्ति के आधार को अंतर्निहित करता है। वाक्य को बाह्य संरचना रचनांतरण-चिह्नक में निरूपित संक्रियाओं के निर्गम के रूप में दिया व्युत्पन्न पदबन्ध-चिह्नक है। वाक्य का आधार उन पदबन्ध-चिन्हकों का अनुक्रम है जो कि वंशवृक्ष के अंत्य बिन्दुओं को ((5) में बाएँ हाथ के पर्वों को) रचित करते हैं। जब रचनांतरण चिन्हक जैसे (5) में निरूपित होते हैं तब प्रशाखन बिन्दु उन सामान्यीकृत रचनांतरणों से अनुरूपता रखते हैं जो कि अवयव-वाक्य (नीचे की शाखा) को निर्दिष्ट स्थान में (आधात वाक्य) ऊपर वाली शाखा में आधायित रहता है।

इस प्रकार का सैद्धान्तिक उपकरण अपने मूलतत्वों में पिछले दस साल में सम्मुख आए रचनांतरण-प्रजनक व्याकरण से सम्बद्ध अध्ययनों में अन्तर्निहित रहा है। फिर भी, इस पुस्तक के लिखने की अवधि में कई महत्वपूर्ण विचार बिन्दु क्रमशः उभड़ आए हैं जो इसका संकेत देते हैं कि कुछ अधिक प्रतिबन्धित और संप्रत्ययों की दृष्टि से सरलतर रचनांतरण सिद्धान्त पर्याप्त हो सकता है।

सर्वप्रथम यह दिखाया जा चुका है कि चॉम्स्की (1955, 1957, 1962) के अनेक वैकल्पिक एकल रचनांतरणों को उन अनिवार्य रचनांतरणों के रूप में पुन-र्व्यवस्थापित शृंखला में स्थित कुछ चिह्नक की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के द्वारा निर्धारित होती है यह तथ्य नकारात्मक रचनांतर के लिए लीज़ (1960a) द्वारा और लगभग उसी समय प्रश्नवाचक रचनांतरण के लिए क्लीमा (व्यक्तिगत पत्राचार द्वारा)

दिखाया गया था। वस्तुतः यह कर्मवाक्य रचनांतरण के लिए भी सही है जैसाकि अध्याय 2 § 2.3.4 में उल्लिखित है। कैट्स और पोस्टल (1964) ने इन पर्यवेक्षणों को आगे बढ़ाया और सामान्य सिद्धान्त के शब्दों में उन्हें व्यवस्थापित किया है और वह सिद्धान्त इस प्रकार है कि "आर्थी निर्वचन के लिए रचनांतरणों का एक मात्र योगदान यह है कि वे पदबन्ध-चिह्नकों को परस्पर-सम्बद्ध करते हैं" (अर्थात् वे पहले से निर्वचन प्राप्त पदबन्ध-चिह्नकों के आर्थी निर्वचनों को एक निश्चित रीति से सुनियोजित करते हैं)।[3] इस प्रकार निष्कर्ष निकलता है कि रचनांतरण अर्थ-वहन करने वाले तत्वों को प्रस्तुत नहीं कर सकते (और न टिप्पणी 1 में उल्लिखित पदबंध द्वारा वे कोशीय एकांशों को इस प्रकार लोपित कर सकते हैं कि वे पुनः प्राप्त न हो सकें)। इन टिप्पणों को आधायन रचनांतरण में सामान्यीकृत करते हुए वे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि आधातृ वाक्य Σ में आधायित वाक्य रचनांतरण को मूक (डमी) प्रतीक को अवश्य विस्थापित करना चाहिए (पूर्ववर्ती विवेचन में इस सुझाव को मानते हुए हमने S' को उसी प्रतीक के रूप में रक्खा है यह अभिग्रह फिलमोर, 1963 में भी अंतर्निहित है)

कैट्स एवं पोस्टल यह दिखाते हैं कि अभी बताए सिद्धान्त के द्वारा आर्थी-घटक का सिद्धान्त बहुत अधिक सरल हो सकता है क्योंकि अब आर्थी निर्वचन रचनांतरण-चिह्नक के सभी पक्षों से निरपेक्ष होगी, सिवाय उस सीमा तक जहाँ वह यह निर्दिष्ट करता है कि आधार संरचनाएँ किस प्रकार परस्पर संबंधित होती हैं। वे लोग यह भी दिखाने में सफल हुए हैं कि नाना प्रकार के उदाहरणों में जहाँ इस सामान्य सिद्धान्त का वाक्यविन्यासीय वर्णन में ध्यान नहीं रखा गया है, वर्णन वस्तुतः आंतरिक वाक्यविन्यासीय आधारों पर गलत रहा है। इस प्रकार 'सिद्धान्त बहुत अधिक विश्वास्य दिखाई पड़ रहा है।

इसके अतिरिक्त यह उल्लेखनीय है कि रचनांतरण-चिह्नकों का सिद्धान्त जहां तक रचनांतरणों के क्रम का सबंध है, पर्याप्त मात्रा में ढील देता है। इस प्रकार इस दृष्टिकोण में व्याकरण के अंतर्गत समान्य रचनांतरण चिन्हकों को प्रजनित करने वाले नियत अवश्य होने चाहिए और ऐसा उन निर्धारकों के उल्लेखों से होता है जो सुरचितता का अवश्य पालन करते हैं (इन्हीं को लीज (1960a) में "ट्रैफिक नियम" कहा गया है)[4]। ये नियम रचनांतरणों के पारस्परिक क्रमबंध को दिखा सकते हैं और रचनांतरण-चिह्नकों में विनिर्दिष्ट स्थानों पर प्रकट होने के प्रतिबंध के द्वारा कुछ रचनांतरणों को अनिवार्य अथवा विशिष्ट प्रसंगों में अनिवार्य घोषित कर सकते हैं। किन्तु इस सामान्य सिद्धान्त के द्वारा स्वीकृत अनेक संभावनाओं में से केवल कुछ ही वास्तविक भाषाई सामग्री के साथ निश्चित रूप से प्राप्त हो सकी हैं। विशेषतः सामान्यीकृत आधायन रचनांतरणों में क्रमबंध के कोई विदित उदाहरण

नहीं मिले, यद्यपि रचनांतरण-चिह्नकों में सिद्धान्त के द्वारा ऐसा क्रमबंध स्वीकृत हैं। इसके अतिरिक्त, एकल रचनांतरण के भी वास्तविक संतोषजनक उदाहरण नहीं मिले हैं जोकि वाक्य रचनांतरण के आधायित होने के पूर्व आधातृ वाक्य में अवश्य प्रयुक्त हों, यद्यपि सिद्धान्तानुसार इसकी भी संभावना है[5]। इसके विपरीत एकल रचनांतरणों के क्रमबंध के अनेक उदाहरण मिलते हैं और एकल रचनांतरणों के ऐसे अनेक उदाहरण भी मिलते हैं जोकि अवयव वाक्य में आधायित होने के पूर्व अवश्य प्रयुक्त हों अथवा आधातृ वाक्य में अवयव संरचना के आधायन के पश्चात् अवश्य प्रयुक्त हों। इस प्रकार आरेख (5) उस संरचना का एक ज्वलंत नमूना है जोकि रचनांतरण चिह्नकों में वस्तुतः ढूँढ निकाली गयी है।

संक्षेप में, वर्तमान उपलब्ध वर्णनात्मक अध्ययन रचनांतरणों के क्रमबंध का निम्न लिखित प्रतिबंधों का संकेत देते हैं। एकल रचनांतरण रैखिक रूप से (कदाचित् आंशिक रूप से ही) क्रमबद्ध होते हैं। वे अवयव संरचना में आधायन के पूर्व प्रयुक्त हो सकते हैं अथवा आधात संरचना और उसमें आधायित अवयव संरचना में इस अवयव संरचना के आधायन के पश्चात् प्रयुक्त होते हैं। सामान्यीकृत रचनांतरणों पर कोई बहिर्निष्ठ क्रम आरोपित करने का कोई कारण नहीं है[6]।

यह पर्यवेक्षण रचनांतरण व्याकरण के सिद्धान्त के एक संभाव्य सरलीकरण का संकेत देते हैं। मान लीजिए कि हम "सामान्यीकृत रचनांतरण" और "रचनांतरण चिह्नक" इन दोनों धारणाओं को बिलकुल बहिर्गत कर दें।[7] आधार के पुनर्लेखी नियमों में (वस्तुतः उसके कोटीय घटक में) शृंखला #S# उन स्थानों में प्रस्तुत होती है जहाँ हमने उदाहरण में प्रतीक S' प्रस्तुत किया है अर्थात् जहाँ कहीं आधार पदबंध-चिह्नक के अन्तर्गत एक ऐसा स्थान आता है जिसमें एक वाक्य रचनांतर प्रस्तुत किया जाने वाला हो, हम उस स्थान को शृंखला #S# द्वारा भरते हैं और #S# व्युत्पादनों का प्रारंभ करती है। हम अब आधार के नियमों को चक्रीय रीति से प्रयुक्त करते हैं यद्यपि उनके एक रेखीय क्रम को बनाए रखते हैं। इस प्रकार उदाहरण के लिए S' के स्थान में #S वा# को रखकर (1) को प्रजनित करने के बाद यह नियम (1) द्वारा निरूपित व्युत्पादन की अन्य पंक्ति में #S वा# के नए घटन पर पुनः प्रयुक्त होते हैं। #S वा# के कुछ घटनों से आधार के नियम (2) द्वारा निरूपित व्युत्पादन को (2) में S' के घटन के स्थान में #S#वा रखते हुए प्रजनित कर सकते हैं। #S वा के इस परवर्ती घटन से वही आधार नियम (3) द्वारा निरूपित व्युत्पादन को बनाने के लिए पुनः प्रयुक्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार आधार नियम(1) में S' को (2) द्वारा और (2) के S' को (3) द्वारा विस्थापित करते हुए (1), (2), (3) से सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक प्रजनित करेंगे।

इस प्रकार हमने उन विशेष प्रशाखन नियमों में दाहिनी ओर #S वा# को

लाने की अनुमति देकर जहाँ पहले डमी प्रतीक S' आया था, और नियमों को (क्रम बनाए रखते हुए) #S वा # के नए प्रस्तुत किए घटनों की अनुमति देकर आधार के सिद्धान्त को संशोधित किया है। इस रीति से रचित सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक के अन्तर्गत वे सभी आधार पदबंध-चिह्नक आते हैं जो वाक्य के आधार को घटित करते हैं। किन्तु यह पुराने अर्थ में प्रयुक्त आधार से अधिक सूचना देते हैं, क्योंकि यह यह भी स्पष्टतया बता देता है कि आधार पदबंध-चिह्नक किस प्रकार एक दूसरे में आधायित हैं अर्थात् सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक के अन्तर्गत आधार में स्थित सभी सूचना होती है और साथ ही साथ सामान्यीकृत आधायान रचनांतरणों द्वारा सूचना मिलती है।

इस प्रकार परिवर्तित आधार नियमों के अतिरिक्त व्याकरण के अन्तर्गत एकल रचनांतरणों का रैखिक अनुक्रम भी आता है। यह एकल रचनांतरण निम्न प्रकार सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नकों पर चक्रीय रीति से प्रयुक्त होते हैं। सर्वप्रथम सबसे अधिक गहन रूप से आधायित आधार पदबंध-चिह्नक पर यह रचनांतरण नियमों का अनुक्रम प्रयुक्त होता है (उदाहरण के लिए यह (2) में (3) के आधायन से रचित सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक में (3) को प्रयुक्त करता है और परिणाम को (1) में पूर्व वर्णन के अनुसार प्रयुक्त होता है)। ऐसे सब आधार पदबंध-चिह्नकों पर प्रयुक्त होने के बाद नियमों का अनुक्रम S द्वारा अधिकृत उस संस्थिति पर पुनः प्रयुक्त होता है जिसमें यह आधार पदबंध-चिह्नक आधायित हो रहे हैं (इसी उदाहरण में जैसे (2) पर) और इसी प्रकार आगे जब तक कि अन्त में नियमों का अनुक्रम संपूर्ण सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक (हमारे उदाहरण में (1) के आदि प्रतीक S द्वारा अधिकृत संस्थिति पर प्रयुक्त नहीं हो जाता। यह उल्लेखनीय है कि (1), (2), (3) के उदाहरण में इस रूढ़ि का प्रभाव ठीक-ठीक नहीं है जोकि पदबंध-चिह्नक (5) में वर्णित किया गया है अर्थात् एकल रचनांतरण अवयव वाक्यों पर आधायन के पूर्व और आधात् वाक्यों पर आधायन के बाद प्रयुक्त होते हैं। आधायन स्वयं अब आधार के प्रशाखन नियमों द्वारा प्रस्तुत होता है न कि सामान्यीकृत रचनांतरणों के द्वारा। प्रभाव की दृष्टि से हमने पदबंध-चिह्नक (5) के विशिष्ट गुण धर्मों को किसी भी संभाव्य रचनांतरण व्युत्पादन के सामान्य गुण-धर्मों में परिवर्तित कर दिया है।

इस प्रकार अब व्याकरण के अन्तर्गत आधार और एकल रचनांतरणों का एक रैखिक अनुक्रम आता है। ये अभी बतायी हुई रीति से प्रयुक्त होते हैं। रचनांतरण चिह्नकों के सिद्धान्त द्वारा स्वीकृत किंतु प्रत्यक्षतः कभी भी न प्रयुक्त की हुई बंध संभावनाएँ सिद्धान्ततः अब बहिर्गत कर दी गई हैं। रचनांतरण-चिह्नक की धारणा भी लुप्त हो गई है और सामान्यीकृत रचनांतरण की भी। आधार नियम

सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नकों को रचित करते हैं जिनके अन्तर्गत आधार और सामान्यीकृत रचनांतरण के पुराने रूप में विद्यमान सूचनाएँ आती हैं। किंतु इस पर ध्यान देना चाहिए कि पूर्व विवेचित पृ० 127–28 पर केट्स एवं पोस्टल के सिद्धान्त के अनुसार ठीक-ठीक यही सूचना एक आर्थी निर्वचन के लिए सार्थक सूचना है। परिणामतः, अभी परिभाषित अर्थ में हम सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक को वाक्य-विन्यासीय घटक द्वारा प्रजनित गहन संरचना मान सकते हैं।

इस प्रकार वाक्यविन्यासीय घटक के अन्तर्गत आधार जोकि गहन संरचनाओं को प्रजनित करता है और रचनांतरण भाग जोकि इन गहन संरचनाओं को बाह्य संरचनाओं में प्रतिचित्रित करता है, आते हैं। वाक्य की गहनस्तरीय संरचना आर्थी निर्वचन के लिए अर्थ आर्थी घटक में प्रयुक्त होता है और बहिस्तलीय संरचना स्वन-प्रक्रियात्मक घटक में प्रविष्ट होकर स्वनात्मक निर्वचन प्रस्तुत करता है। इस प्रकार व्याकरण का अन्तिम प्रभाव यह है कि वह आर्थी निर्वचन को स्वनात्मक निरूपण से जोड़ता है, अर्थात् यह बताता है कि वाक्य का किस प्रकार निर्वचन किया जाए। इस सम्बन्ध के बीच में व्याकरण का वाक्यविन्यासीय घटक आता है जोकि एक मात्र सृजनात्मक अंश है।

आधार के प्रशाखन नियम (अर्थात् उसका कोटीय घटक) व्याकरणिक प्रकार्यों को और व्याकरणिक सम्बन्धों को परिभाषित करता है तथा अमूर्त अन्तर्निहित क्रम (देखिए अध्याय 2 § 4.4) को निर्धारित करता है; शब्दसमूह उन विशिष्ट कोशीय एकांशों के निजी गुण धर्मों को लक्षित करता है जोकि आधार पदबन्ध-चिह्नकों में विशिष्ट स्थानों में अन्तः प्रविष्ट होते हैं। इस प्रकार जब हम 'गहन-संरचनाओं'' को आधार घटक द्वारा "प्रजनित संरचनाएँ" कहते हैं तो वास्तव में हम यह मानते हैं कि वाक्य का आर्थी निर्वचन केवल उसके कोशीय एकांशों पर और व्याकरणिक प्रकार्यों पर और तत्सम्बद्ध अन्तर्निहित संरचनाओं में निरूपित सम्बन्धों पर निर्भर है।[9] यह रचनांतरण व्याकरण के सिद्धान्त को उसके आरम्भ से अभिप्रेरित करने वाली आधारभूत धारणा है (देखिए अध्याय 2, टिप्पणी 33)। इसका अपेक्षाकृत सर्वप्रथम व्यवस्थापन केट्स एवं फोडार (1963) में मिलता है और उसके बाद इसका संशोधित रूप केट्स और पोस्टल (1964) में दिया गया है जोकि वहाँ वाक्य विन्यासीय सिद्धान्त के परिवर्तन के रूप में प्रस्तावित किया गया है और पिछले अनुच्छेदों में विवेचित किया गया है। जिस व्यवस्थापन का अभी हमने संकेत दिया है वह इस धारण (विचार) को और अधिक स्पष्ट करता है। वास्तव में केट्स एवं पोस्टल (1964) में प्रस्तावित आर्थी निर्वचन के सिद्धान्त का और अधिक सरलीकरण इसके द्वारा स्वीकृत है क्योंकि रचनांतरण चिह्नक और सामान्यीकृत रचनांतरण तथा साथ ही साथ इनसे सम्बद्ध 'प्रक्षेप नियम' इनकी अब कोई भी आवश्यकता

नहीं रही। यह व्यवस्थापन अभी संक्षेप में वर्णित पिछले कई सालों के विकासों का सारांश और स्वाभाविक विस्तार है।

यह देखने योग्य है कि इस दृष्टिकोण में रचनांतरण नियमों का एक प्रमुख प्रकार्य वाक्य के आशय को अभिव्यक्त करने वाली अमूर्त गहन संरचना को प्रायः मूर्त बाह्य संरचना में (जो कि उसके रूप को प्रदर्शित करती है) में प्रतिवर्तित करना है।[10] व्याकरण के इस प्रकार्य के संघटन के कुछ सम्भाव्य कारण प्रात्यक्षिक यांत्रिकी के शब्दों में मिला एवं चाम्स्की (1963 § 2·2) में संसूचित है। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि तर्क अथवा सुयोजन के सिद्धान्त की "कृत्रिम भाषाओं" के व्याकरण प्रकट रूप से बिना किसी अपवाद के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलुओं में सरल पदबन्ध संरचना व्याकरण है।

व्याकरण के पुनरावृत्ति गुणधर्म पर अधिक सूक्ष्मता से विचार करने पर हम रचनांतरण सिद्धान्त में निम्नलिखित परिवर्तन सुझा सकते हैं। सिद्धान्त के पूर्वतर विवरण में पुनरावर्ती गुणधर्म रचनांतरण घटक में विशेषतः सामान्यीकृत रचनांतरणों में और रचनांतरण चिह्नकों के रचना नियमों में दिखाया गया था। अब पुनरावर्ती गुणधर्म आधार घटक का विशेषतः उन नियमों के अभिलक्षण हैं जोकि कोटीय प्रतीकों की श्रृंखलाओं के संकेतित स्थानों में आदि-प्रतीक S को प्रस्तावित करते हैं स्पष्टतया आधार में और पुनरावृर्ती नियम नहीं है।[11] रचनांतरण घटक शुद्ध रूप से निर्वचनात्मक है।

यह उल्लेखनीय है कि रचनांतरण व्याकरण सिद्धान्त के इस व्यवस्थापन से हम भाषा संरचना की ऐसी धारणा पर लौट गए हैं जो आधुनिक वाक्यविन्यासीय सिद्धान्त के प्रारम्भ में थी अर्थात् जोकि Grammaire ge'ne'rale et raisonne'e में प्रदर्शित थी।[12]

"गहन संरचना" की धारणा के सम्बन्ध में एक अतिरिक्त बिंदु पर बल डालना आवश्यक है। जब आधार नियम पूर्व प्रजनित पदबन्ध-चिह्नक में आधायित S के घटन से किसी पदबन्ध-चिह्नक को प्रजनित करते हैं तब वे इस संदर्भ की व्याख्या नहीं कर पाते जिसमें S के घटन का यह घटन आया है। उदाहरण के लिए (1), (2), (3) के सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक M (प्र) के स्थान पर (जहाँ (2) में (3) आधायित है और परिणाम (1) में आधायित है) हम सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक M' को (1), K, (3) से बना सकते थे जहाँ कि K (2) से इस अर्थ में भिन्न पदबन्ध-चिह्नक है कि (2) का man (व्यक्ति) K के boy (लड़का) से विस्थापित होता है। किन्तु अब व्युत्पादन की उस स्थिति में जब सम्बन्ध वाचक उपवाक्य रचनांतरण ((5) का T_R (र सबन्ध)) पर उसमें आधायित (3) के साथ प्रयुक्त होता है हमें श्रृंखला (6) न मिलकर (7) मिलेगी ;

(6) △fired the man (#the man persuaded John to be examined by specialist#) by passive

(6) △व्यक्ति मार दिया गया (#व्यक्ति ने जॉन को विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण के लिए समझाया #) कर्मवाच्य द्वारा

(7) △fired the man (# the boy persuaded John to be examined by a specialist #) by passlve.

(7) △व्यक्ति मार दिया गया #लड़के ने जॉन को विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण के लिए समझाया #) कर्मवाच्य द्वारा

श्रृंखला (6) (अपने पदबन्ध-चिह्नक के साथ) उस रूप में है जोकि सम्बन्ध वाचक उप वाक्य रचनांतरण को, "the man" (व्यक्ति) को "who" (जिसने) से विस्थापित करते हुए प्रयुक्त करने देता है क्योंकि दोनों संज्ञाओं की सर्वांगसमता का निर्धारक पूरा हो जाता है और हमें एक पुन: प्राप्य लोपन मिलता है (देखिए टिप्पणी 1)। किंतु (7) में यह रचनांतरण अवरुद्ध हो जाता है। इस प्रकार (7) में "the boy" (लड़का) का लोपन नहीं हो सकता क्योंकि सामान्य निर्धारक यह है कि केवल पुन: प्राप्य लोपन स्वीकृत है, अर्थात् रचनांतरण की सर्वांगसमता का निर्धारक पूरा नहीं होता।[13] और यही हम चाहते हैं, क्योंकि स्पष्टतया (1), K; (3) द्वारा रचित सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक (4) का आर्थी निर्वचन वैसा नहीं देता है जैसा वह तब देता जब इस स्थिति में सम्बन्ध वाचक उपवाक्य रचनांतरण का प्रयोग होता। वस्तुत: (1), K, (3) से रचित सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक यद्यपि आधार नियमों से प्रजनित है, किसी भी बाह्य संरचना की अंतर्निहित गहन संरचना नहीं है।

हम इस पर्यवेक्षण को इस उदाहरण में सूक्ष्मतया स्पष्ट कर सकते हैं यदि हम सम्बन्ध वाचक उपवाक्य रचनांतरण को इस प्रकार परिभाषित करें कि वह सीमांत प्रतीक # को तब लोपन कर सके जबकि इसका प्रयोग किया जाए। इस प्रकार यदि उसका प्रयोग अवरुद्ध कर दिया जाता है तो यह प्रतीक श्रृंखला में बना रहता है। तब हम इस रूढ़ि की स्थापना करेंगे कि एक सुरचित बाह्य संरचना के भीतर # का घटन नहीं हो सकता। इस प्रकार के घटन यह दिखलाएँगे कि कुछ रचनांतरण जो कि सामान्यतया प्रयुक्त होते हैं अवरुद्ध कर दिए गए हैं। यही (अथवा इस प्रकार की) रूपात्मक युक्तियाँ इस प्रकार के विविध उदाहरणों में प्रयुक्त हो सकती हैं।

रूपायन के प्रश्नों को अलग करने पर हम देख सकते हैं कि आधार के द्वारा प्रजनित सभी सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक वास्तविक वाक्यों के आधार में हों और इस प्रकार वे गहन संरचना कहलाने योग्य हैं। ऐसा नहीं है तो वह क्या परीक्षण है जो यह निर्धारित करता है कि कोई सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक किसी वाक्य

की गहन संरचना है। उत्तर बहुत सरल है। रचनांतरण नियम ठीक-ठीक ऐसा परीक्षण प्रस्तुत करते हैं और सामान्यतः इससे सरल परीक्षण नहीं हैं। एक सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक M_D बाह्य संरचना M_s रखने वाले वाक्य S की अंतर्निहित संरचना है यदि रचनांतरण नियम को M_s को M_D से प्रजनित करते हैं। S की बाह्य संरचना M_s सुरचित है यदि S में ऐसे कोई प्रतीक नहीं हैं जो अनिवार्य रचनांतरणों को अवरुद्ध करते हैं। गहन संरचना किसी सुरचित बाह्य संरचना का अंतर्निहित सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक है। इस प्रकार रचनांतरण व्याकरण से परिभाषित मूल धारणा यह है: "गहन संरचना" M_D सुरचित बाह्य संरचना M_s में अंतर्निहित होती है।" "गहन संरचना" की धारणा वास्तव में इसी से निकली है। रचनांतरण नियम एक निस्पंदक (फिल्टर) के रूप में कार्य करते हैं जोकि केवल कुछ ही सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नकों को गहन संरचना के लिए योग्य स्वीकृत करते हैं।

यह दिखाया जा सकता है कि रचनांतरण घटक का यह निस्पंदक (फिल्टर) की तरह का प्रकार्य रचनांतरण व्याकरण के उस विवरण के लिए एक बिलकुल नया अभिलक्षण नहीं है जिसे कि हम आजकल कर रहे हैं। वस्तुतः यह पूर्वतर विवरण के लिए ही सही था जो कभी यह तथ्य किसी भी व्याख्या में कभी भी विदित नहीं हुआ। इस प्रकार आधार पदबंध-चिह्नकों का अनुक्रम चुन लिया जा सकता था जोकि किसी भी वाक्य का आधार न बन पाता। इसके अतिरिक्त रचनांतरण-चिह्नकों को प्रजनित करने की कोई भी व्यवस्था निश्चय रूप से उन संरचनाओं को अनुमति देती है जोकि रचनांतरण चिह्नक के रूप में स्वनिरूपित निर्देशों के अनुपालन की अवधि में उत्पन्न होने वाले अवरोधों और असंगतियों के कारण, योग्य नहीं हो पातीं। वर्तमान विवरण में यह निस्यंदक (फिल्टर) करने का प्रकार्य और अधिक स्पष्टतया प्रकट किया जाता है।

अध्याय § 24.3 में हमने यह सुझाव दिए थे: (a) कोशीय एकांशों के वितरणात्मक प्रतिबंध कोशीय प्रविष्टियों में अनुसूचित प्रासंगिक अभिलक्षणों के द्वारा निर्धारित होना चाहिए, और (b) और इन प्रासंगिक अभिलक्षण को ऐसा समझना चाहिए कि वे कुछ विशिष्ट प्रतिस्थापित रचनांतरणों को परिभाषित कर रहे हैं। इस प्रकार कोशीय एकांशों के सुदृढ़ उपकोटीय और चयनात्मक प्रतिबंध इन एकांशों से सहचरित रचनांतरण नियमों द्वारा परिभाषित होते हैं। अब हम लोगों ने भली भांति देख लिया है कि रचनांतरण नियमों पर आधार पदबंध-चिह्नकों के वितरणात्मक प्रतिबंधों के निर्धारण का भी भार है। इस प्रकार सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नकों के असीमित समुच्चय को प्रजनित करने वाले कोटीय

नियम प्रकटतया अपने सभी वितरणात्मक प्रतिबंधों के साथ, चाहे वे आधार पदबंध-चिह्नक के संबंध में हों अथवा कोशीय प्रविष्टियों के संबंध में (एकल) रचनांतरणों द्वारा निर्धारित होने के कारण प्रसंग निरपेक्ष हो सकते हैं।

वाक्यविन्यासीय घटक के रूप का ऐसा वर्णन विचित्र सा लग सकता है यदि कोई प्रजनक नियमों को वक्ता द्वारा बनाए वास्तविक वाक्य रचना के लिए आदर्श के रूप में समझे। इस प्रकार यह मानना बेतुका सा लगता है कि वक्ता पहले आधार नियमों द्वारा सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक बनाता है और तब अंत में यह देखने के लिए कि उससे सुरचित वाक्य बनता है अथवा नहीं, सुरचितता के लिए रचनांतरण नियमों के प्रयोग द्वारा परीक्षण करता है। किन्तु यह बेतुकापन इससे गहरे बेतुकेपन की स्वाभाविक उपनिगमन मात्र है जोकि प्रजनक नियमों की व्यवस्था को वक्ता द्वारा वास्तविक वाक्य रचना के लिए बिन्दु प्रति बिन्दु आदर्श मानने से उत्पन्न होती है। इससे भी एक सरल पदबंध संरचना व्याकरण का उदाहरण ले सकते हैं जिसमें कोई भी रचनांतरण नहीं है (जैसे प्रक्रमन-भाषा का व्याकरण, या सामान्य अंकगणित, अथवा इन पदों में वर्णनीय अंग्रेजी भाषा के कुछ छोटे अंश)। यह मानना स्पष्टतया बेतुका होगा कि ऐसी भाषा का "वक्ता" "उक्ति" व्यवस्थापित करते समय पहले प्रमुख कोटियों का चयन करता है और फिर उन कोटियों का जिनमें इनका विश्लेषण होता है (यह निश्चय करते हुए कि वह क्या कहना चाहता है) और इस प्रकार करते हुए अंत में प्रक्रिया की समाप्ति पर प्रयोग किए जाने वाले शब्दों और प्रतीकों का चयन करता है। प्रजनक-व्याकरण को इन पदों में सोचना इसे एक निष्पादन का मॉडल बनाना होता है न कि सामर्थ्य का मॉडल, इस प्रकार इसकी प्रकृति को बिल्कुल ही गलत समझा जाता है। लोग ऐसे निष्पादन के मॉडल का अध्ययन कर सकते हैं जो प्रजनक-व्याकरणों को ग्रहण करते और ऐसे अध्ययनों से भी कुछ परिणाम मिले हैं[14] किन्तु प्रजनक-व्याकरण, जैसा कि यह है, न तो वक्ता का मॉडल है न श्रोता का, बल्कि जैसाकि बार-बार इस तथ्य पर बल दिया गया है, अंतर्निष्ठ स्पष्ट ज्ञान अथवा वास्तविक निष्पादन के अंतर्निहित सामर्थ्य का लक्षण निरूपण मात्र है।

आधार नियम और रचनांतरण नियम कुछ निर्धारक रखते हैं जिसे किसी भी संरचना को, किसी भी सुरचित वाक्य के आर्थी आशय को अभिव्यक्त करने वाली गहन संरचना बनने के लिए, पूरा करना आवश्यक है। यदि किसी आधार घटक और रचनांतरण घटक से युक्त व्याकरण दिया गया है तो वस्तुतः गहन संरचनाओं के वस्तुतः निर्माण के लिए असंख्य प्रक्रियाएँ विकसित की जा सकती हैं। यह सर्वांगीणता, कार्यकारिता और वाक्य के व्युत्पादन और संबोधि की समस्याओं में ग्रहण-योग्यता की सीमा की दृष्टि से भिन्न-भिन्न हो सकती हैं। इनमें से एक

रचनात्मक प्रक्रिया यह है कि आधार नियमों (क्रम का ध्यान रखते हुए) से गुजरा जाए ताकि सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक M बन सके और तब क्रम का ध्यान रखते हुए) रचनांतरण नियमों से गुजरे ताकि M से M' एक बाह्य संरचना का रूप बन सके। यदि M' सुरचित है तो M एक गहन संरचना है। सभी गहन संरचनाएँ इस रीति से गणनाबद्ध की जा सकती हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे व्याकरण देने पर अनेक अन्य रीतियों से गणनाबद्ध हो सकती हैं। जैसेकि पहले कहा जा चुका है, व्याकरण उस संबंध को परभाषित करता है जो यह है "गहन संरचना" M' वाक्य S के सुरचित बाह्य संरचना M' के आधार में होती है "और इसी के द्वारा व्याकरण इन धारणाओं को परिभाषित करता है "M एक गहन संरचना है"। "M" एक सुरचित बाह्य संरचना है" "S एक सुरचित वाक्य है," और कई अन्य जैसे "S संरचना की दृष्टि से अनेकार्थी है"। "S और S पुनर्कथन (एक ही अर्थ की भिन्न अभिव्यक्तियाँ) है।" "S नियम R या प्रतिबंध C के उल्लंघन से प्राप्त व्याकरण च्युत वाक्य हैं,") व्याकरण स्वयं में किसी दिए हुए वाक्य को गहन संरचना का पता लगाने अथवा किसी दिए हुए वाक्य को उत्पन्न करने की कोई ढंग की सार्थक प्रक्रिया नहीं देता है और उसी प्रकार न किसी दिए हुए वाक्य के पुनर्कथन को पता लगाने की कोई ढंग की प्रक्रिया देता है। व्याकरण केवल ठीक-ठीक ढँग से इन कार्यों की परिभाषा मात्र देता है। एक निष्पादन मॉडल में निश्चय रूप से ही किसी न किसी भी रूप में व्याकरण का समावेश होगा, लेकिन मॉडल को व्याकरण से संभ्रमित नहीं करना चाहिए। यदि यह चीज एक बार स्पष्ट हो जाती है तो इस तथ्य से कि रचनांतरण एक स्पंदक (फिल्टर) के ढँग का कार्य करते हैं। इस तथ्य से कोई आश्चर्य अथवा परेशानी उत्पन्न होने का मौका नहीं है।

संक्षेप में, हमने यह सुझाव दिया है कि व्याकरण का रूप इस प्रकार हो सकता है। व्याकरण के अंतर्गत वाक्यविन्यासीय घटक, आर्थी घटक और स्वन-प्रक्रियात्मक घटक—यह तीनों घटक हों। बाद वाले दोनों निर्वचनात्मक हैं अर्थात् वाक्य संरचनाओं के पुनरावर्ती प्रजनन में उनकी कोई भूमिका नहीं होती। वाक्य-विन्यासीय घटक के दो अंश होते हैं—आधार और रचनांतरण घटक। आधार के दो अंश होते हैं कोटिगत उपघटक और शब्दसमूह। आधार गहन संरचनाओं को प्रजनित करता है। गहन संरचना आर्थी घटक में प्रविष्ट होकर आर्थी निर्वचन प्राप्त करती है ; और रचनांतरण नियमों द्वारा बाह्य संरचना में प्रतिचित्रित होती है और तब उसे स्वनप्रक्रियात्मक घटक के नियमों द्वारा स्वनात्मक निर्वचन दिया जाता है। इस प्रकार व्याकरण संकेतों में आर्थी निर्वचन निर्दिष्ट

करता है और यह साहचर्य वाक्यविन्यासीय घटक के पुनरावर्ती नियमों के बीच में आने से होता है।

आधार के कोटीय घटक के अन्तर्गत प्रसंग निरपेक्ष पुनर्लेखी नियमों का एक अनुक्रम होता है। तत्वतः इन नियमों का प्रकार्य ऐसे व्याकरणिक सम्बन्धों की एक व्यवस्था परिभाषित करना है जो आर्थी निर्वचन को निर्धारित करते हैं और उन तत्वों के अमूर्त अन्तर्निहित क्रम को निश्चित करना है जो रचनांतरण नियमों की कार्यकारिता को सम्भव बनाते हैं। एक बहुत बड़ी सीमा तक आधार के नियम सार्वभाषिक हो सकते हैं और इस प्रकार वास्तव में विशिष्ट व्याकरणों के अंग नहीं हैं; अथवा यह भी हो सकता है कि आधार नियमों का चयन अंशतः स्वतंत्र होने पर भी परिभाषित व्याकरणिक प्रकार्यों पर लगे सार्वत्रिक पदबन्धों के द्वारा प्रतिबन्धित हैं। इसी प्रकार आधार नियमों में आने वाले कोटीय प्रतीक स्थिर सार्वत्रिक वर्णमाला से लिए जाते हैं; वास्तव में प्रतीक का चयन अधिकतर अथवा कदाचित् पूरी तरह उस रूपात्मक भूमिका द्वारा निर्धारित होता है जो प्रतीक आधार नियमों की व्यवस्था में निभाता है। व्याकरण की असीमित प्रजनन क्षमता इन कोटीय नियमों के विशिष्ट रूपीय गुण-धर्म द्वारा उत्पन्न होती है। गुणधर्म यह है कि कोटीय नियम व्युत्पादन की पंक्ति में आदि प्रतीक S प्रस्तावित कर सकते हैं। इस प्रकार पुनर्लेखी नियम प्रभावतः आधार पदबन्ध-चिह्नकों को अन्य आधार पदबन्ध-चिह्नकों को अन्तः प्रविष्ट करते हैं और यह प्रक्रिया बिना सीमा के बार-बार की जा सकती है।

शब्दसमूह के अन्तर्गत कोशीय प्रविष्टियों का एक क्रमहीन समुच्चय और कुछ समधिकता नियम आते हैं। प्रत्येक कोशीय प्रविष्टि अभिलक्षणों का एक समुच्चय है (किन्तु अध्याय 2 की टिप्पणी 15 देखिए)। इनमें से कुछ स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षण हैं जो कि स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षणों के विशिष्ट सार्वत्रिक समुच्चय (परिच्छेदक अभिलक्षण व्यवस्था) से लिए गए हैं कोशीय प्रविष्टि में स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षणों का समुच्चय एक स्वनप्रक्रियात्मक मैट्रिक्स के रूप में उपलब्ध और निरूपित किया जा सकता है जोकि कोशीय प्रविष्टि के विशिष्ट वाक्यीय अभिलक्षणों में से प्रत्येक के साथ "है" ("is a") का सम्बन्ध रखती है। इनमें से कुछ अभिलक्षण आर्थी अभिलक्षण हैं। ये भी अनुमानतः सार्वत्रिक वर्णमाला से लिए गए हैं किन्तु इसके सम्बन्ध में इस समय कुछ भी नहीं कहा गया है। हम किसी अभिलक्षण को "आर्थी" कहते हैं यदि वह किसी वाक्यविन्यासीय नियम में उल्लिखित नहीं है, और इस प्रकार हम इस प्रश्न को फिर उठा लेते हैं कि अर्थ विज्ञान वाक्यविज्ञान से अन्तः सम्बद्ध है या नहीं।[15] शब्दसमूह के समधिकता नियम अभिलक्षणों को जोड़ देते हैं और उनकी विशेषता बताते हैं जहाँ कहीं यह सामान्य

नियम द्वारा पूर्व कथित हो सके। इस प्रकार कोशीय प्रविष्टियाँ भाषा की अनियमितताओं के पूरे समुच्चय का निर्माण करती हैं।

हम सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक के व्युत्पादन को एक निर्दिष्ट क्रम में कोटिगत नियमों के प्रयोग द्वारा रचित कर सकते हैं। क्रम इस प्रकार है कि हम S से प्रारम्भ करते हैं और व्युत्पादन की अवधि में प्रस्तुत किए S के प्रत्येक घटन में उन्हें बार-बार प्रयुक्त करते हैं। इस प्रकार हम उपान्त्य शृंखला को व्युत्पन्न करते हैं जोकि बाद में एक सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक बन जाती है, जब अपने कोशीय प्रविष्टियों से सम्बद्ध प्रासंगिक अभिलक्षणों द्वारा विनिर्दिष्ट रचनांतरण नियमों के अनुसार कोशीय प्रविष्टियाँ अन्तःप्रविष्ट होती हैं। इस प्रकार वाक्यविन्यासीय घटक का आधार सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नकों के एक असीमित समुच्चय को प्रजनित करता है।

रचनांतरण-उपघटक के अन्तर्गत एकल रचनांतरणों का अनुक्रम आता है। प्रत्येक रचनांतरण एक संरचना सूचकांक, जो कि विश्लेषणीयता के लिए एक बूलीय निर्धारक है और आरम्भिक रचनांतरणों में एक अनुक्रम द्वारा पूरी तरह परिभाषित होता है। "विश्लेषणीयता" की धारणा सम्बन्ध या अस्ति सम्बन्ध ("is a" relation) के शब्दों में निर्धारित होता है और यह सम्बन्ध स्वयं आधार के पुनर्लेखी नियमों और शब्दसमूह द्वारा परिभाषित होता है। इस प्रकार रचनांतरण विशिष्ट वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों को इस प्रकार संकेतित करते हैं मानों वे कोटियाँ हों। वस्तुतः रचनांतरणों को इस प्रकार रचित करना चाहिए कि वे वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों को भी विनिर्दिष्ट कर सके और जोड़ सके किन्तु हम रचनांतरण व्याकरण के सिद्धान्त में इस परिवर्तन पर यहाँ चर्चा नहीं करेंगे (देखिए अध्याय 4, § 2)। सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक दिए जाने पर हम एक रचनांतरण व्युत्पादन रचनांतरण नियमों को अनुक्रम से "नीचे से ऊपर की ओर" प्रयुक्त कर बना सकते हैं अर्थात् किसी सांस्थिति पर तभी नियमों का अनुक्रम प्रयुक्त करेंगे जब उस सांस्थिति में आधायित सभी आधार पदबन्ध-चिह्नकों पर हम प्रयुक्त कर चुके हों। इन रचनांतरणों में से किसी का भी अवरोध नहीं होता है तो हम इस प्रकार एक सुरचित बाह्य संरचना की व्युत्पत्ति प्राप्त करते हैं। इस और केवल इसी स्थिति में सामान्यीकृत पदबन्ध-चिह्नक, जिस पर मूलतः रचनांतरण प्रयुक्त हुए थे, गहन संरचना, अर्थात् वाक्य जो कि व्युत्पन्न बाह्य संरचना की अन्तिम शृंखला है, की गहन संरचना, बनते हैं। यह गहन संरचना S के अर्थगत आशय को अभिगत करती है जबकि S की बाह्य संरचना उसके स्वनात्मक रूप को निर्धारित करती है।

व्याकरण के निर्वचनात्मक घटक यहाँ हमारी चर्चा का विषय नहीं रहे हैं। जहाँ तक इनकी संरचना का विस्तार निकाला गया है ऐसा लगता है कि वे समानांतर रीतियों से कार्य करती हैं। स्वनप्रक्रियात्मक घटक के अन्तर्गत उन नियमों का अनुक्रम

आता है जो निरूपण करने वाले वृक्ष आरेख में नीचे से ऊपर की ओर बाह्य संरचना पर प्रयुक्त होते हैं अर्थात् ये नियम एक चक्र में प्रयुक्त होते हैं। सबसे पहले न्यूनतम तत्वों (रचनाओं) पर, तब उन अवयवों पर जिसके वे अंग हैं (एक अकेले कोटीय प्रतीक से अधिकृत अंत्य शृंखला की उपशृंखला के रूप में पदबन्ध-चिह्नक के अवयव का) इसके बाद उन अवयवों पर जिसके कि वे अंग हैं, इसी प्रकार जहाँ तक स्वनप्रक्रियात्मक प्रक्रियाओं के उच्चिष्ठ क्षेत्र तक नहीं पहुँच जाते (देखिए चॉम्स्की, हाले और लुकॉफ 1956; हाले और चॉम्स्की 1960; चॉम्स्की 1962 b; चॉम्स्की और मिलर, 1963)। इस प्रकार पूरे वाक्य का स्वनात्मक निरूपण उसके रचनांगों की अन्तर्निष्ठ अमूर्त स्वनप्रक्रियात्मक गुणधर्मों के आधार पर और बाह्य संरचना में निरूपित कोटियों के आधार पर निर्मित होता है।

कुछ-कुछ लगभग इसी प्रकार आर्थी घटक के प्रक्षेप नियम आधार द्वारा प्रजनित गहन संरचना पर कार्य करते हैं और वे प्रत्येक भाग (अन्ततोगत्वा रचनांगों के अन्तर्निष्ठ आर्थी गुणधर्मों के) और गहन संरचना में निरूपित कोटियों और व्याकरणिक सम्बन्धों से विनिर्दिष्ट पठनांकों के आधार पर प्रत्येक घटक का एक आर्थी निर्वचन (एक 'पठनांक') करते हैं। (कैट्ज़ और फोडर, 1963, केट्स और पोस्टल, 1964, और केट्स द्वारा संदर्भ ग्रन्थ सूची में अनुसूचित अन्य शोध पत्र)। भाषा–निरपेक्ष शब्दों में जिस सीमा तक व्याकरणिक कोटियों और सम्बन्ध वर्णित किए जा सकते हैं, उस सीमा तक हम सार्वत्रिक प्रक्षेप नियमों का जिनका एक विशिष्ट व्याकरण के अंश के रूप में दिया जाना आवश्यक नहीं है, पता लगाने की आशा कर सकते हैं।

इस पूरे विवेचन में, हम व्याकरणिक रचनांतरणों के सिद्धान्त के उल्लिखित संदर्भों में विवेचित रूप को मान कर चले हैं; किन्तु यह उल्लेखनीय है कि यह सिद्धान्त भी प्रकटतया विविध रूपों में सरलीकृत हो सकता है। सर्वप्रथम, यह लगता है कि क्रम परिवृत्तियों को हम आरंभिक रचनांतरणों से निकाल सकते हैं, यदि हम प्रतिस्थापन लोपन और अनुबन्धी रचनांतरणों को अधिक महत्व दें, अर्थात् क्रम परिवृत्तियों द्वारा उपलब्ध व्युत्पन्न पदबन्ध-चिह्नक अन्य प्रारम्भिक रचनांतरणों द्वारा दिए पदबन्ध चिह्नकों के साथ अनावश्यक हो सकते हैं। क्रम-परिवृत्तियों का निरसन व्युत्पन्न अवयव संरचना के सिद्धान्त को बहुत अधिक सरलीकृत कर सकता है।[16] इसके अतिरिक्त, ऐसा लगता है कि रचनांतरणों के क्षेत्र का निर्धारण करने वाले संरचनात्मक विश्लेषण विश्लेषणीयता के बूलीय निर्धारकों तक सीमित रखे जा सकते हैं, अर्थात् टिप्पणी 13 में उल्लिखित लोपन की सामान्य रूढ़ि पर अधिक बल देते हुए रचनांतरणों के व्यवस्थापन से परिमाणवाची शब्दों को निरस्त

किया जा सकता है। यदि ऐसा किया जाए तो रचनांतरणों के सिद्धान्त पर एक कठोर अतिरिक्त प्रतिबन्ध लग जाएगा।

इस दूसरे विचार बिन्दु पर कुछ और प्रकाश डालना चाहिए। हम संक्षेप में यहाँ इस पर विवेचन करेंगे और तब अध्याय 4, § 2·2 पर लौट जाएँगे। लोपन की पुनः प्राप्यता को पक्का करने के लिए हम निम्नलिखित रूढ़ि का प्रस्ताव कर रहे हैं : एक लोपन संक्रिया केवल एक मूक (डमी) तथ्य को, अथवा संरचना-सूचकांक में स्पष्टतया उल्लिखित रचनांग को (उदाहरण) के लिए आज्ञा वाक्यों में you (तुम) अथवा कोटि के सुनिर्दिष्ट प्रतिनिधि को (उदाहरणार्थ wh प्रश्न-रचनांतरण, जो संज्ञा पदबन्धों का लोपन करते हैं वस्तुतः अनिश्चित सर्वनामों में सीमित रहते हैं–तुलना कीजिए चॉम्स्की, 1964, § 2·2) अथवा वाक्य में एक नियत स्थान पर अन्यथा निरूपित किसी तत्व को निरस्त कर सकते हैं। इस अन्तिम बिन्दु को और स्पष्ट करने के लिए आइए हम उद्घर्षण रचनांतरण की परिभाषा हम इस प्रकार दें कि वह अपने उपयुक्त विश्लेषण (X को यथावत् रखते हुए) के पद Y के स्थान पर X का प्रतिस्थापन करता है और तब Y को प्रतिस्थापित करने वाले X के नये घटन का लोपन करते हैं। पूर्वविवेचित (पृष्ठ 124 और तदनन्तर) सम्बन्ध-वाची करण के उदाहरण में यदि हमारे पास शृंखला

(8) the man— # wh– –the man– –had been fired #] returned to work
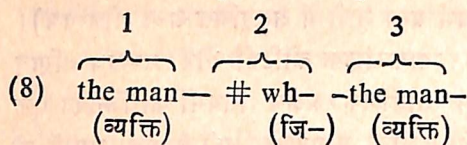
(1: the man (व्यक्ति); 2: # wh– (जि–); 3: –the man– (व्यक्ति); 4: –had been fired #] returned to work (मार दिया गया) (कार्य पर लौटा))

हो तो सम्बन्ध-वाची रचनांतरण को एक उद्घर्षक संक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। यह संक्रिया तीसरे पद Y के स्थान पर उपयुक्त विश्लेषण के प्रथम पद X को प्रतिस्थापित करती है और इस प्रक्रिया में Y को साफ कर देती है[17]। निरूपण के विस्तार का परिहार करते हुए, जो कि रचनांतरणों के सामान्य सिद्धान्त के भीतर सीधा-साधा है, हम संक्षेप में कह सकते हैं कि ऐसे उदाहरण में उद्घर्षक या उद्घर्षण संक्रिया Y को लोपित करने के लिए पद X का प्रयोग करती है। तो हम कहेंगे कि Y को लोपित करने के लिए पद X का प्रयोग उद्घर्षक संक्रिया कर सकती है यदि X और Y सर्वांगसम हों। हम X और Y के अपेक्षित सम्बन्ध की यथार्थ प्रकृति का अन्वेषण कुछ अधिक विस्तार के साथ अध्याय 4 (पृ० 172 और आगे) में करेंगे।

एक अतिरिक्त उदाहरण के रूप में हम निजवाचीकरण संक्रिया पर विचार कर सकते हैं (विस्तृत विवेचन के लिए देखिए लीज़ और क्लीमा, 1963)। यह प्रायः देखा गया है कि "John hurt John" (जॉन ने जॉन को आघात किया) अथवा "the boy hurt the boy" (लड़के ने लड़के को आघात किया) जैसे वाक्य में दो स्वनात्मक एक सम संज्ञा पदबंधों का निर्वचन आवश्यक रूपसे भिन्न-भिन्न संदर्भों में भिन्न माना जाता है ; संदर्भ की एकता दूसरे संज्ञा पदबंध के स्थान पर निज वाची रूप की अपेक्षा करती है (यही सर्वनामीकरण के लिए सत्य है)। इस वाक्यीय घटक में इसे वर्णित करने के अनेक प्रयास किए गए हैं, किन्तु कोशीय अभिलक्षणों की उपलब्धि एक नए उपागम की ओर संकेत करती है जिसकी खोज-बीन की जा सकती है। मान लीजिए कि कुछ कोशीय एकांश "सांदर्भिक" कहे जाते हैं और एक सामान्य रूढ़ि के द्वारा सांदर्भिक एकांश की प्रत्येक प्राप्ति के साथ अभि-लक्षण के रूप एक चिह्नक जैसे—पूर्णांक समनुदेशित किया जाता है [18]। निजवाचकीकरण नियम एक उद्घर्षण संक्रिया के रूप में व्यवस्थापित किया जा सकता है जो कि एक पदबंध को दूसरे के लोपन के लिए प्रयुक्त करती है। संबंधवाचीकरण (देखिए टिप्पणी 17) उद्घर्षण एक अवशेष छोड़ता है। एक अवशेष विशेषतः (± मानव) अभिलक्षण छोड़ता है और एक नए स्वनात्म तत्व 'अपना' (self) को प्रथम बार लाता है। इस प्रकार (I hurt I) (मैंने अपने को आघात किया) में प्रयुक्त होने पर प्रथम संज्ञा पदबंध दूसरे संज्ञा पदबंध को लोपित करने में प्रयुक्त होता है और अंत में "I hurt myself" (मैंने स्वयं आघात किया) देता है। किन्तु लोपन के पुनः प्राप्यता निर्धारक द्वारा निजवाचीकरण नियम (इसी प्रकार सर्वनामी करण नियम) तभी प्रयोग में आता है, जब दो एकांशों पर विनिर्दिष्ट पूर्णांक एक ही हों। ऐसी स्थिति में आर्थी घटक दो सांदर्भिक एकांशों को एक संदर्भ वाला निर्वचन देगा यदि वे सुदृढ़तया सर्वांगसम हों। विशेषतः यदि गहन संरचना में वे एक ही पूर्णांक द्वारा समनुदेशित किए गए हों। इससे अनेक उदाहरणों में सही उत्तर मिल जाता है, किन्तु कुछ रोचक समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं जब सांदर्भिक एकांश बहुवचन होते हैं और धारणा "सांदर्भिक" को ठीक-ठीक विनिर्दिष्ट करने में निस्संदेह समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

प्रसंगवश यह देखा जा सकता है कि निजवाचीकरण नियम सदैव प्रयुक्त नहीं होता है (यद्यपि सर्वनामीकरण होता है) चाहे दो संज्ञाएँ सुदृढ़तया सर्वांगसम हों और इस कारण समसांदर्भिक होता है। इस प्रकार हमें "I kept it near me" (मैंने इसे अपने पास रखा) के साथ-साथ "I aimed it at my self" (मैंने इसे अपने पर लक्षित किया) आदि वाक्य मिलते हैं। अंतर यह है कि प्रथम वाक्य में पुनरावृत्त संज्ञा क्रिया के वाक्य पूरक स्थान में है किन्तु दूसरे में ऐसा नहीं है। इस

प्रकार "I kept it near me" (मैंने इसे अपने पास रखा) की गहन संरचना में रूप I-kept-it (यह–मेरे पास–था) #S# है जहाँ "It is near me" (यह मेरे पास है) को अधिकृत करता है। किन्तु "I aimed it at myself (मैंने इसे अपने पर लक्षित किया) की गहन संरचना में रूप "I-aimed it-at me" (मैंने इसे मुझ पर लक्षित किया) है यहाँ (कोई अंतर्निहित वाक्य "It is at me" (यह मुझ पर है) नहीं है) निजवाचीकरण नियम S की उस प्राप्ति द्वारा अधिकृत पुनरावृत्त N पर प्रयुक्त नहीं होता है जो N के पूर्ववर्ती घटन को अधिकृत न करता हो। अंग्रेजी के संबंध में यह विशिष्ट टिप्पण प्रकटतया रचनांतरणों पर एक अधिक सामान्य निर्धारक का परिणाम है। निर्धारक यह है कि एक बार रचनांतरण नियमों का चक्र किसी संस्थिति पर पूरी तरह प्रयुक्त हो चुका हो तो S द्वारा अधिकृत इस संस्थिति के भीतर कोई भी नई रूप प्रक्रियात्मक सामग्री (इस उदाहरण में self) नहीं लाई जा सकती है (यद्यपि रचनांतरण नियमों के अगले चक्र में वृहत्तर मैट्रिक्स संरचना के इस घटक से निकाला हुआ एकांश प्रथम बार लाया जा सकता है)। कुछ उदाहरण इस विश्लेषण में मेल न खाते हुए दिखाई पड़ते हैं ("I pushed it away from me") (मैंने इसे अपने से दूर हटा दिया) 'I drew it towards me (मैंने इसे अपनी ओर खींचा) और इसका कारण मेरी समझ में नहीं आ रहा है। किन्तु यह विश्लेषण बड़ी संख्या में विश्वसनीय उदाहरणों पर सही बैठता है और इस अंतर द्वारा, जो उसने ऊपर से एक-सम लगने वाली उन स्थितियों में किया है जहाँ केवल भिन्नता यह है कि एक, न कि दूसरा, स्वतंत्रतया विद्यमान आधायित वाक्य पर आधारित है, वह रचनांतरणात्मक व्याकरण के सिद्धान्त की रोचक संपुष्टि करता है।

अब मुख्य विषय पर लौटकर हम स्पष्टतया व्याकरणिक रचनांतरणों को "संरचना सूचकांक" के शब्दों में परिभाषित कर सकते हैं जो विश्लेषण की एक बूलीय निर्धारक स्थिति है और प्रतिस्थापन, लोपन और अनुबंधिता से युक्त आधार समुच्चय से प्राप्त आंरभिक रचनांतरणों का अनुक्रम है। यह भी प्रतीत होता है कि इनसे वृहत्तर पुरावर्ती इकाइयाँ (उदाहरण के लिए प्रतिस्थापन-लोपन, उद्घर्षण आदि) बनते हैं और इनके प्रयोग की परसीमाएँ उपरलिखित जैसी सामान्य रूढ़ियों द्वारा दी जा सकती हैं। यदि यह सही है तो रचनांतरणों के सिद्धान्त के रूपात्मक गुण-धर्म पर्याप्त स्पष्ट और सरल हो जाते हैं और यह भी संभव है कि हम इनका एक अमूर्त अध्ययन प्रारंभ कर सकें जो कि अतीत में संभव न था।

4

कुछ अवशिष्ट समस्याएँ

§ 1. वाक्यविज्ञान और अर्थविज्ञान की सीमाएँ

§ 1.1 व्याकरणिकता की मात्राएँ

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि वाक्यविज्ञान और शब्दार्थविज्ञान के वर्तमान सिद्धान्त अत्यधिक खंडात्मक और काम चलाऊ स्थिति में हैं और आधारभूत प्रकृति के अनेक विवादास्पद प्रश्न उनसे सम्बद्ध हैं। इसके अतिरिक्त, किसी भी भाषा के केवल बहुत ही अल्प-विकसित व्याकरणिक वर्णन उपलब्ध हैं, अतएव अनेक तथ्यात्मक प्रश्नों के संतोषजनक उत्तर नहीं दिए जा सकते हैं। परिणामतः, इस अनुभाग के शीर्षक से संसूचित समस्या, वर्तमान स्थिति में, अधिक से अधिक परिकल्पना का स्रोत मात्र होगी। फिर भी, पूर्ववर्ती अध्यायों के कुछ विचार्य-विषय वाक्यविज्ञान और शब्दार्थ-विज्ञान के बीच उचित संतुलन के प्रश्न से इस प्रकार सम्बद्ध हैं कि कम से कम कुछ और टिप्पणी करना अत्यावश्यक है।

सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षणों और चयनात्मक अभिलक्षणों के बीच का अन्तर, जो कि रूपात्मक दृष्टि से सुपरिभाषित है, भाषा-प्रयोग के एक महत्वपूर्ण अन्तर के साथ घनिष्टतया सहसम्बन्धित मालूम पड़ता है। ऐसा प्रत्येक प्रासंगिक अभिललण किसी-न-किसी नियम से सहचरित है जो इस अभिलक्षण से युक्त कोशीय प्रविष्टियों को प्रसंग विशेष में सीमाबद्ध कर देता है।[1] हम, प्रत्येक उदाहरण में, नियम भंग करके एक च्युत-वाक्य बना सकते हैं। इस प्रकार अध्याय 2 के § 3 में क्रियाओं को इस प्रकार सुदृढ़ उपकोटिकृत किया गया है—अकर्मक, सकर्मक, प्राक्-विशेषण, प्राक्-वाक्य, आदि। इन उदाहरणों में, नियमों के भंग से निम्नलिखित श्रृंखलाएँ बनेंगी—

(1) (i) John found sad (जॉन दुखी मिला)

(ii) John elapsed that Bill will come (जॉन समाप्त हुआ कि बिल नहीं आएगा)

(iii) John compelled (जॉन ने विवश किया)

(iv) John became Bill to leave (जॉन छोड़ने के लिए बिल बिना)

(v) John persuaded great authority to Bill (जॉन ने बिल के लिए बड़े अधिकारी को समझाया)

इसके विपरीत, चयनात्मक नियमों को न मानने से निम्नलिखित उदाहरण मिलेंगे :

(2) (i) Colorless green ideas sleep furiously (परिणामहीन विचार भयानक नींद सोते रहते हैं)

(ii) golf plays John (गोल्फ जॉन खेलती है)

(iii) the boy may frighten sincerity (लड़का ईमानदारी को भयभीत कर सकता है)

(iv) misery loves company (विपत्ति संगति से प्रेम करती है)

(v) they perform their leisure with dilgence (वे सपरिश्रम अपना खाली समय बिताते हैं)

(तुलना कीजिए § 2.3.1, अध्याय 2)। स्पष्टतया (1) में दी शृंखलाएँ जो सुदृढ़-उपकोटिकरण नियमों का भंग करती हैं और (2) में दी शृंखलाएँ जो चयनात्मक नियमों का भंग करती हैं, दोनों च्युत-वाक्य बनाती हैं। उन पर किसी भी प्रकार कोई निर्वचन आरोपित करना आवश्यक है, और यह ऐसा कार्य है जो एक उदाहरण से दूसरे उदाहरण में कम या ज्यादा कठिन या चुनौती भरा हो सकता है, किन्तु निम्नलिखित सुदृढ़ सुरचित वाक्यों पर किसी निर्वचन को आरोपित करने का प्रश्न नहीं उठता है :

(3) (i) revolutionary new ideas appear infrequently (क्रान्तिकारी नवीन विचार प्रायः आते रहते हैं।)

(ii) John plays golf (जॉन गोल्फ खेलता है)

(iii) sincerity may frighten the boy (ईमानदारी लड़के को भयभीत कर सकती है :)

(iv) John loves company (जॉन संगति प्रेमी है)

(v) they perform their duty with diligence (वे अपना कार्य सपरिश्रम करते हैं)

फिर भी, (2) में उदाहृत च्युत की रीति (1) में उदाहृत रीति से भिन्न है। चयनात्मक नियमों को भंग करने वाले वाक्यों की प्रायः रूपकीकरण (विशेषतः, मानवीयकरण तुलना कीजिए, ब्लूमफील्ड, 1963), अथवा दृष्टान्तीकरण (निदर्शना) द्वारा किसी-न-किसी रूप में व्याख्या दी जा सकती है, यदि न्यूनाधिक जटिलता का यथोचित प्रसंग अन्यथा उपलब्ध हो अर्थात्, इन वाक्यों की व्याख्या प्रकटतया उन सुरचित वाक्यों के प्रत्यक्ष साहश्य से दी जाती है जो सम्बद्ध चयनात्मक नियमों का

पालन करने से बने हैं। किन्तु (1) में उदाहृत वाक्यों जैसे वाक्यों की, जिन्होंने सुदृढ़-उपकोटिकरण नियमों का भंग किया है, निर्वचन करने पर मजबूर किया जाए तो, स्पष्टतया, बिल्कुल दूसरी रीति से ही कार्य करना होगा।

मेरी दृष्टि से, ये उदाहरण पर्याप्त विस्तृत उदाहरणों के वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। वर्णनात्मकतया पर्याप्त व्याकरण द्वारा किसी-न-किसी रूपात्मक आधार पर इन अन्तरों को स्पष्ट करना चाहिए और अभी वर्णित व्याकरण-प्ररूप कम-से-कम कुछ मात्रा तक ऐसा ही करता है। उसमें (3) जैसे पूर्णतः सुरचित वाक्यों को (1) और (2) के वाक्यों से, जो कि व्याकरण नियमों की व्यवस्था से प्रत्यक्षतः जनित नहीं होते हैं, भिन्न रखा है। उसने (1) के वाक्यों को जो सुदृढ़-उपकोटिकरण नियमों के शिथिलन से जनित हैं (2) के वाक्यों से, जो चयनात्मक नियमों के शिथिलन से जनित हैं, पृथक् रखा है। इस प्रकार उसने 'व्याकरणिकता की मात्रा' के सार्थक सिद्धान्त के विकास की ओर कई चरण उठाए हैं।[2]

ऐसा प्रतीत होता है कि "उच्चतर-स्तर" के कोशीय अभिलक्षण, जैसे [count (गणनीय)], से सम्बद्ध चयनात्मक नियमों के च्युत वाक्य, उन वाक्यों की तुलना में जिनमें "निम्नतर-स्तर" के कोशीय अभिलक्षण, जैसे [मानव] सम्बद्ध हैं, बहुत ही कम स्वीकार्य होते हैं और कठिनाई से व्याख्यात होते हैं। साथ-ही-साथ, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि निम्नस्तरीय वाक्यीय अभिलक्षणों से सम्बद्ध सभी नियम च्युति को उतनी सरलता से सहन नहीं करते जितनी कि इन्हीं अभिलक्षणों से संबद्ध चयनात्मक नियम[3]। इस प्रकार दोनों वाक्य

(4) (i) the book who you read was a best seller (जो पुस्तक आपने पढ़ी, सर्वाधिक बिकी है)

(ii) who you met is John (जिससे आप मिले, वह जॉन है)

अभिलक्षण [मानव] से सम्बद्ध नियमों के न पालन करने से बने हैं, किन्तु पूर्णतया अस्वीकार्य हैं—यद्यपि निस्सदेह एक निर्वचन सरलतया और प्रायः सदैव, इन पर आरोपित की जा सकती है। स्वीकार्यता की मात्रा और निर्वचन की रीति, दोनों की दृष्टि से ये उन वाक्यों से नितांत भिन्न हैं जो अभिलक्षण [मानव] से सम्बद्ध चयनात्मक नियमों पर विचार करें इसमें कोई संदेह नहीं है [मानव] जैसे अभिलक्षण शुद्ध वाक्यविन्यासीय नियमों में भूमिका-निर्वाह करते हैं (चूँकि निस्संदेह (4) के उदाहरण शुद्ध वाक्यविन्यासीय आधार पर नियमविरुद्ध ठहराए जाते हैं)

इसी प्रकार, चयनात्मक अभिलक्षण [[+ अमूर्त]....—[+ चेतन]] क्रियाएँ frighten, amuse, charm (भयभीत करना, दिल बहलाना, मोहना) आदि से सहबद्ध किया जाता है। यह अभिलक्षण उन नियमों से संबद्ध है जो (4) को बहिष्कृत करते हुए the book which you read was a best seller (जो पुस्तक

आपने पढ़ी, सर्वाधिक बिकी) और what you found was my book (जो आपको मिली, मेरे पुस्तक थी) को नियमित ठहराने वाले नियमों की भाँति अनुल्लंघनीय हैं। इसी प्रकार इस अभिलक्षण से निश्चयात्मक रीति से निर्दिष्ट एकांश शुद्ध विशेषण की स्थिति में आ सकते हैं और इसी कारण a very frightening (amusing, charming,....) person suddenly appeared [बहुत भयानक (दिल बहलाने वाला, मोहने वाला) व्यक्ति यकायक मिला] नियमित हैं, किन्तु, उदाहरणार्थ

(5) (i) a very walking person appeard (वही घूमता हुआ व्यक्ति मिला)
(ii) a very hitting person appeard (वही बार करने वाला व्यक्ति मिला)

सही नहीं हैं; ये वाक्य (4) के समान, तुरन्त और कदाचित् अनन्यतया व्याख्यात हैं, किन्तु पूर्वोक्त चयनात्मक नियमों के उल्लंघनों के उदाहरणों की तुलना में, उस अन्त;प्रज्ञात्मक दृष्टि से जिसे हम इस समय स्पष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं, स्पष्टतया कहीं अधिक गम्भीरतया अव्याकरणिक हैं। इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि यह चयनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत प्रासंगिक अभिलक्षण भी उन नियमों से संबद्ध है जो व्याकरणिकता से गम्भीरतया विचलन के बिना उल्लंघित नहीं किए जा सकते हैं।[4]

अतएव (4) और (5) जैसे उदाहरण दो महत्वपूर्ण तथ्यों को पुष्ट करते हैं। पहले, यदि हम इसमें सहमत हैं कि (4) और (5) वाक्यीय दृष्टि से च्युत हैं तो यह स्पष्ट है कि [मानव] और[[+अमूर्त]--[+चेतन]] जैसे अभिलक्षण वाक्य-विन्यासीय घटक की कार्यशीलता की भूमिका निभाते हैं। (2) के उदाहरणों का विशेष लक्षण इस कारण नहीं है कि ये वाक्य निम्नस्तरीय अभिलक्षणों के नियमों का उल्लंघन करते हैं, बल्कि इस कारण है कि ये जिन नियमों का उल्लंघन कर रहे हैं वे चयनात्मक नियम हैं। दूसरे, (4) और (5) जैसे नियमों से स्पष्ट है कि "व्याकरणिकता'' की धारणा "निर्वचनीयता'' निर्वचन करने की सरलता और अनन्यता अथवा निर्वचन की सरलता) कम-से-कम किसी सरल रीति से, संबद्ध नहीं की जा सकती है। हमें (4) और (5) जैसे वाक्य मिल सकते हैं जो निस्संदेह अनन्य रूप से एकरूपता के साथ तुरंत निर्वचन योग्य हैं यद्यपि वे सुरचितता से विचलन के सुन्दर उदाहरण हैं। इसके विपरीत, हमें ऐसे पूरी तरह से सुरचित वाक्य मिल सकते हैं जो निर्वचन करते समय बड़ी कठिनाइयाँ सामने खड़ी करते हैं और जिनके कदाचित् परस्परविरोधी विविध निर्वचन हो सकते हैं। इससे अधिक सामान्य दृष्टि से, यह उतना ही स्पष्ट है कि व्याकरणिक सुरचितता की अन्त: प्रज्ञात्मक धारणा किसी भी प्रकार एक सरल धारणा नहीं है और उसकी यथोचित विवृति के लिए हमें अत्यंत अमूर्त रूप के सैद्धान्तिक रचकों की आवश्यकता होगी,

जितना कि यह स्पष्ट है कि एक वाक्य को किस प्रकार और क्यों कर निर्वचन मिल सकता है इसके निर्धारण करने वाले विविध विभिन्न कारक होते हैं।

व्याकरणिकता की मात्रा कम-से-कम एक आयाम की यथार्थ परिभाषा देने के टिप्पणी 2 के प्रसंगों में वर्णित प्रयास और अधिक युक्ति-संगत होते हैं यदि वे चयनात्मक नियमों से विचलन के प्रश्न एक सीमित रहते हैं और सुरचितता से विचलन के उदाहरणों के पूरे परास को अपने विवेचन-क्षेत्र में नहीं रखते हैं। वस्तुतः इस सुझाव को मानते हुए हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि चयनात्मक नियमों का **एकमात्र** प्रकार्य एक विशेष प्रकार के उन वाक्यों के समुच्चय पर व्याकरणिकता से विचलनों का एक सोपानक्रम आरोपित करना है जो कि व्याकरण को अन्यथा अपरिवर्तित रखते हुए चयनात्मक प्रतिबंधों से उत्पादित किए गए हैं।

यहाँ यह ध्यातव्य है कि व्याकरण के नियम पदबंध-चिह्नक में स्थित मिश्र-प्रतीक के घटकीय अभिलक्षणों को अधिकृति की दृष्टि से एक आंशिक क्रमबंध में स्थापित करते हैं, उदाहरणार्थ, अध्याय (2) के नमूने के पदबंध (59) और रचनांक frighten (भयभीत करना) पर पुर्नविचार करें तो हमें एक मिश्र-प्रतीक मिलता है जिसके अभिलक्षण है—[+ Vक्रि, + —NP संप, + [अमूर्त]——[+ चेतन]] और अन्य व्याकरण के नियम (59) में सूचित अधिकृति क्रम [+ Vक्रि], [+ —NP संप], [+ [+ अमूर्त]——[+ चेतन]] स्थापित करते हैं। इस क्रम के शब्दों में हम किसी उस श्रृंखला की **विचलन-मात्रा** निर्धारित कर सकते हैं जो इस पदबंध-चिह्नक में frighten (भयभीत करना) के स्थान पर किसी कोशीय एकांश को स्थानापन्न करने से उत्पन्न होती है। विचलन जितना उच्चस्तरीय होगा, उतना ही शिथिलीकृत नियम के अनुरूप अभिलक्षण अधिकृति सोपानक्रम में ऊँचा होगा। अतएव, ऊपर के उदाहरण में, विचलन सर्वाधिक होगा यदि frighten (भयभीत करना) के स्थान पर कोई verb (क्रिया) से भिन्न एकांश हो, उससे कम होगा यदि स्थानापन्न भाषांश क्रिया तो हो किन्तु [+ —NP संप] न हो अर्थात् सकर्मक से भिन्न क्रिया हो, और उससे कम होगा यदि वह ऐसी सकर्मक क्रिया हो जो अमूर्त कर्ता [+ अमूर्त] नहीं लेती हो। इस प्रकार विचलन का निम्नलिखित क्रम मिलेगा :

(6) (i) sincerity may virtue the boy (ईमानदारी लड़के की भलाई कर सकती है)

(ii) sincerity may elapse the boy (ईमानदारी लड़के को समाप्त कर सकती है)

(iii) sincerity may admire the boy (ईमानदारी लड़के की प्रशंसा कर सकती है)

इससे "विचलन" का कम से कम एक दृष्टि से स्वाभाविक स्पष्टीकरण स्थूलतः मिलता है। इस संबंध में टिप्पणी 2 के संदर्भों के सुझावों की तुलना की जा सकती है जिनमें किसी शृंखला की व्याकरणिकता-मात्रा (वाक्यविन्यासीय विचलनों की मात्रा) के निर्धारण में स्थानापन्न की कोटि के आकार पर विचार किया गया है।

अध्याय 2 के § 4.1 के अंत में यह बताया गया था कि सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों से प्रस्तुत अभिलक्षण चयनात्मक नियमों से प्रस्तुत अभिलक्षणों से अधिकृति की दृष्टि से उच्च होते हैं; और उसी भाग में यह भी स्पष्ट किया गया था कि सभी कोशीय अभिलक्षण कोशीय कोटियों के प्रतीकों की अधिकृति में होते हैं। इसके अतिरिक्त, उच्चस्तरीय अभिलक्षणों से संबद्ध चयनात्मक नियमों के विचलन निम्नस्तरीय अभिलक्षणों से संबद्ध चयनात्मक नियमों के विचलन की तुलना में प्रकटतया अधिक गंभीर होते हैं। इन विविध परिणामों से "विचलन-मात्रा' की अभी प्रस्तावित परिभाषा स्वाभाविक-सी लगती है। यदि सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों और चयनात्मक नियमों के बीच का पूर्वोल्लिखित अन्तर सामान्यतया युक्तियुक्त है, तो विचलन-मापनी को कदाचित् तीन सामान्य प्ररूपों में विभाजित किया जा सकता है :

(i) कोशीय कोटि का उल्लंघन (जैसे 6i में)
(ii) सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षण का संघर्ष (जैसे 6ii और 1में)
(iii) चयनात्मक अभिलक्षण का संघर्ष (जैसे 6iii) और 2 में)

कम से कम तीसरे प्ररूप में उपविभाजन भी हैं। निस्संदेह कुछ अन्य प्ररूप भी मिलते हैं (जैसे, (4) और (5)[5]। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि ऐसे अनेक नियम होते हैं जिनका उल्लंघन किया जा सकता है।

1.2 चयनात्मक नियमों पर और अधिक विचार

चयनात्मक नियमों की व्याकरण में कुछ अप्रमुख भूमिका है यद्यपि उनसे संबद्ध अभिलक्षण अनेक शुद्धतया वाक्यविन्यासीय प्रक्रमों से संलग्न है (देखिए (4), (5)। अतएव यह प्रस्ताव किया जा सकता है कि चयनात्मक नियमों को वाक्यविन्यासीय से पृथक कर देना चाहिए और उनका प्रकार्य आर्थी घटक को करना चाहिए। ऐसे परिवर्तन से पूर्ववर्णित व्याकरण-संरचना से अनुकूल होगा। निस्संदेह, चयनात्मक नियमों द्वारा प्रस्तुत और प्रयुक्त अभिलक्षण अब भी शृंखलाओं की कोशीय प्रविष्टियों में उपस्थित रहेंगे अर्थात्, boy (लड़का) और frighten (भयभीत करना) की कोशीय प्रविष्टियों में boy (लड़का) को [+मानव] और frighten (भयभीत करना) को अमूर्त कर्ता और चेतन कर्म आदि संभव है, द्वारा

निर्दिष्ट किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, यदि हम कोशीय प्रविष्टि के अभिलक्षण को, जबकि वह शुद्धतया वाक्यविन्यासीय नियम से संबद्ध है, "वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण" कहते रहना चाहते हैं, तो वाक्यविन्यासीय प्रविष्टि के ये अभिलक्षण होंगे न कि आर्थी (देखिए, (4) (5) का विवेचन)। फिर भी, इस प्रस्ताव के अनुसार, व्याकरण द्वारा (1 जैसे वाक्य भी यद्यपि निस्संदेह (1) जैसे नहीं, वाक्यविन्यासीय दृष्टि से सुरचित होकर प्रत्यक्षतः उत्पन्न हो जाएँगे। दूसरे शब्दों में व्याकरण का वाक्यविन्यासीय घटक विचलन के इन निम्नस्तरों पर व्याकरणिकता-मात्रा का सोपानक्रम प्रयुक्त नहीं कर पाएगा जबकि यह कार्य वस्तुतः वाक्यविन्यासीय घटक को ही करना चाहिए।

हम यह मानकर चलते रह सकते हैं कि वाक्यविन्यासीय घटक, केट्स, फोडार और पोस्टल द्वारा सुझाए और पूर्वविवेचित प्ररूप के प्रक्षेप नियमों पर आधारित निर्वचनात्मक विधि है। प्रक्षेप-नियमों को अब आधार-शृंखलाओं के व्याकरणतः सम्बद्ध घटकों और व्याकरणतः सम्बद्ध कोशीय भाषांशों के बीच अभिलक्षण-रचना के संघर्षों को पहचानने और निर्वचन योग्य बनाने के लिए प्रयुक्त करना चाहिए। विचलन पर अभी की चर्चा, विशेषतः "विचलन-मात्रा" की परिभाषा, बिना किसी परिवर्तन के काम में लाई जा सकती है। यही बात संज्ञा-क्रिया और संज्ञा-विशेषण के चयनात्मक अधिकृति पर भी लागू होती है। किंचित् पुनर्व्यवस्थापन के बाद यही तर्क व्याकरण-संरचना के इस संशोधन के लिए प्रयुक्त होगा।

अध्याय 2 के § 4.3. में प्रासंगिक अभिलक्षणों के लिए दो वैकल्पिक प्रस्तावों पर विचार किया था। पहले विकल्प में प्रासंगिक अभिलक्षणों को पुनर्लेखी नियमों द्वारा प्रस्तुत करना था और कोशीय एकांशों को अभिन्न मिश्र प्रतीकों के मेलापन से व्युत्पत्ति में प्रस्तुत करना था (अध्याय 2, § 3)। दूसरे विकल्प में शब्दसमूह के प्रासंगिक अभिलक्षणों को कोशीय एकांशों को प्रविष्ट करने वाले कुछ स्थानापत्ति रचनांतरणों की परिभाषा देने वाला समझना था। जैसाकि वहाँ स्पष्ट किया था, यह केवल आंकनिक प्रश्न नहीं है।

अतएव चयनात्मक नियमों के संबंध में दो विवादार्ह प्रश्न हमारे सामने विशिष्टतः उपस्थित हैं—(i) वे वाक्यविन्यासीय घटक के अंतर्गत हैं या आर्थी घटक के? (ii) उन्हें मिश्र प्रतीकों को प्रस्तुत करने वाले पुनर्लेखी नियम होना चाहिए या स्थानापत्ति रचनांतरण? इन प्रश्नों पर बिना सर्वांगीण विवेचन किए मैं अब संक्षेप में उनसे संबद्ध कुछ विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मान लीजिए अध्याय 2 § 3 के अनुसार हमें चयनात्मक नियमों को पुनर्लेखी

नियमों द्वारा प्रस्तुत करना है। यह ध्यातव्य है कि चयनात्मक नियम सुदृढ़ उप-कोटिकरण नियमों से इस दृष्टि से भिन्न हैं कि उनके द्वारा वर्णित एकांशों के बीच उनमें अनेक असंगत प्रतीक आते हैं। इस दृष्टि से अध्याय 2 का नियम (57xiv) चयनात्मक नियमों का उदाहरण है और उसमें असंगत भाषांश aux (सहा) और Det (नि.); हाँ, यह अवश्य है कि इन तत्वों के सरल होने के कारण यह सामान्य उदाहरण नहीं है। यह आंकनिक व्यवस्था मात्र नहीं है। यह अध्याय 2 के (57xv) में उदाहृत हैं, जो उद्देश्य के अभिलक्षणों को विधेय के विशेषण पर आरोपित करता है। जिस प्रकार से ये नियम व्यवस्थापित हुए हैं, विशेषण के लिए वाक्यों में वस्तुतः विभिन्न अभिलक्षण समनुदेशित किए जाएँगे :

(7) the boy is sad (लड़का दुखी है)

(8) the boy grew sad (लड़का दुखी हुआ)

(7) में विशेषण के लिए अध्याय 2 नियम (57xv) द्वारा अभिलक्षण [[+मानव] (सहा, ‿ होना)
Aux be—] निर्दिष्ट किया जाएगा, जबकि (8) के उदाहरण में [[+मानव] Aux (सहा) [+V क्रि]—] या इसी तरह का कोई अभिलक्षण विनिर्दिष्ट किया जाएगा[6]। इन अभिलक्षणों में हमारी शब्दावली में कोई भी सामान्यता नहीं है यद्यपि ये कोशीय एकांशों के एक ही समुच्चय को वस्तुतः वर्णित करते हैं। यह उतनी ही गम्भीर कमी है जितनी कि उस व्याकरण के सम्बन्ध में दिखाई थी जो चेतन कर्ता को चेतन कर्म से विशिष्टतया भिन्न करता था (देखिए पृष्ठ 110–111) हम इस दोष का परिहार कर सकते हैं और साथ-ही-साथ चयनात्मक नियमों के मध्यवर्ती असंगत प्रसंगों को विनिर्दिष्ट करने से बचा सकते हैं यदि इन नियमों के साथ निम्नलिखित रूढ़ि स्थापित करें। मान लीजिए नियम समाकृति को हम इस प्रकार आयोजित करें :

(9) $A \rightarrow CS/[\alpha]—....[\beta]$

जहाँ $[\alpha]$ और $[\beta]$ विनिर्दिष्ट अभिलक्षण हैं या शून्य (किन्तु दोनों में एक को शून्यतर होना ही होगा)[7]। हम (9) को किसी भी शृंखला पर प्रयोग योग्य मानते हैं, जैसे, शृंखला

(10) XWAVY

जहाँ $X = [\alpha,....]$, $Y = [\beta....]$[8] $W \neq W_1 [\alpha,.....] W_2$ (अथवा शून्य) और $V \neq V_1 [\beta,....] V_2$ (अथवा शून्य)। (10) पर (9) के प्रयोग से निम्नलिखित शृंखला बनेगी :

(11) XWBVY

जहाँ B एक मिश्र प्रतीक है और उसके अन्तर्गत A के अभिलक्षण (अथवा) [+A]

यदि A एक कोटीय प्रतीक है) आते हैं और आते हैं प्रत्येक प्रासंगिक अभिलक्षरण [$+\phi$ - ψ] जहाँ X = [ϕ....] और Y = [ψ,....]।

(पाठक देखेंगे कि W,V पर प्रयुक्त निर्धारक को छोड़ कर, 'प्रयोज्यता' की धारणा और मिश्र प्रतीक की रूढ़ियाँ पूर्ववत् हैं यद्यपि कुछ भिन्न रीति से वर्णित की गई हैं)। इसका यह अर्थ होता है कि नियम (9) A पर सभी प्रासंगिक अभिलक्षरण [$+\phi-\psi$] समनुदेशित करता है, जहाँ [ϕ] उस समीपतम मिश्र प्रतीक का कोशीय अभिलक्षरण है जिसमें A [α] हैं, और जहाँ [ϕ] उस समीयतम मिश्र प्रतीक का कोशीय अभिलक्षरण है जिसमें B के दाहिने [β] है। इस प्रकार, विशेष रूप में, नियम (57 xiv) और (57 xv) को क्रमशः (12) और (13) के रूप में दिया जा सकता है :—

(12) [+Vक्रि] → CS कोप्र/[+N सं]—(....[+N सं])

(13) Adjective → CS/[+N]....–
(विशेषरण → कोप्र)/ (सं)

इन नियमों के अनुसार अब frighten (भयभीत करना) के लिए अभिलक्षरण [+[+अमूर्त]-[+चेतन]] और (7) और (8) दोनों में sad (दुःखी) के लिए अभिलक्षरण [+[+मानव]—] समनुदेशित होगा। प्रसंगों के कथनों में मध्यवर्ती असंगत प्रतीकों का उल्लेख इस प्रकार हम बचा सकते हैं, और अधिक महत्वपूर्ण दृष्टि से, (7) और (8) में उपलब्ध दुहरे, अभिलक्षरणों के समनुदेशन से उत्पन्न कमी को बचा सकते हैं।

वैकल्पिक ढाँचे में जहाँ स्थानापन्न रचनांतरण प्रयुक्त होते हैं समान रूढ़ियों को स्थापित करने की आवश्यकता है। इस उदाहरण में (10) में W और V के निर्धारक वर्णित करना मात्र पर्याप्त है। किन्तु यह निर्धारक रचनांतरण के लिए बूलीय संरचना-सूचकांक के रूप में प्रत्यक्षतः कथनीय नहीं है। इस तथ्य से, यद्यपि यह बहुत महत्वपूर्ण नहीं है, यह संकेत लिया जा सकता है कि पुनर्लेखी नियमों को प्रयोग में लाने वाली व्यवस्था अधिक वांछनीय है।[9]

इससे अधिक महत्वपूर्ण हैं व्याख्या के कुछ प्रश्न जो चयनात्मक नियमों के रूप और व्याकरण में उनकी स्थापना को प्रभावित करते हैं।[10] चयनात्मक नियमों के उल्लंघन निम्नलिखित नमूने पर विचार करें :

(14) John frightened sincerity (जॉन ने ईमानदारी को भयभीत किया।)

च्युत वाक्य है और frighten (भयभीत करना) सदैव चेतन प्रत्यक्ष-कर्म लेगा इस निर्धारक की शिथिलता से उत्पन्न हैं फिर भी कुछ ढाँचे ऐसे हैं जिनमें इस निर्धारक का उल्लंघन किया जा सकता है और कोई अस्वाभाविकता भी नहीं आती जैसे—उदाहरण के लिए, निम्नलिखित वाक्यों में :

(15) (i) It is nonsense to speak of (there is no such activity as) frightening sincerity (ईमानदारी में भय की बात करना (इस जैसी कोई क्रिया नहीं है) असंगत है।

(ii) sincerity is not the sort of thing that can be frightened (ईमानदारी ऐसी कोई चीज नहीं है जिसे भयभीत किया जा सके)

(iii) one can (not)frighten sincerity (कोई ईमानदारी को भयभीत (नहीं) कर सकता है)।

स्पष्टतया, वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण को यह अवश्य निर्दिष्ट करना चाहिए कि (14) ((2) के उदाहरणों की भांति) च्युत है और (15) के उदाहरण च्युत नहीं हैं। इस समस्या के प्रति बढ़ने की रीतियाँ हैं।

मान लीजिए कि चयनात्मक नियम वाक्य रचना के नियमों के अन्तर्गत आते हैं तब (14) और (15) व्याकरण से (टिप्पणी 2 के अर्थ में) केवल व्युत्पादन से ही प्रजनित होते हैं; वे उन पदबंध-चिह्नकों से प्रजनित होते हैं जो यह सूचित करते हैं कि व्याकरणिकता से एक विशेष दृष्टि में वे भिन्न हैं। चूँकि (14) अन्त: प्रज्ञात्मक दृष्टि-कोण से (15) से "विचलित" है यह अन्त:प्रज्ञात्मक धारणा व्याकरणिकता से मेल नहीं खाती बल्कि यह गुणधर्म अनुमानत: वाक्यविन्यासीय और आर्थी दोनों घटकों की संयुक्त संक्रिया द्वारा निर्धारित होता है। इस प्रकार nonsense (असंगत) और speak (बोलना) जैसे शब्दों के लिए कोशीय प्रविष्टियों और आर्थी घटक के प्रक्षेप नियमों को इस ढंग से अभिकल्पित करना चाहिए कि यद्यपि व्यापक पदबंध-चिह्नक (15 i–iii) का अवयव frighten sincerity (भयभीत ईमानदारी) अर्थ की दृष्टि से असंगत चिह्नित है तथापि उसे अधिकृत करने वाले अवयव में पठनांक समनुदेशित करके असंगति दूर की जा सकती है और परिणामत: ((15) के वाक्यों को किन्तु (14) के वाक्यों को नहीं) अन्त में एक अविचलित निर्वचन दिया जा सकता है।[11] यह हमें कदापि अस्वाभाविक अथवा असहनीय परिणाम नहीं लगता। निश्चय ही यह जानकर कोई आश्चर्य नहीं होता है कि "विचलन" जैसी अन्त:प्रज्ञात्मक धारणा विभिन्न प्रकार की सैद्धान्तिक रचनाओं के शब्दांशों में ही व्याख्यायित हो सकती हैं जिनकी कि स्वयं में प्रत्यक्ष और एकरूप अन्त:प्रज्ञात्मक व्याख्या नहीं है। इस निष्कर्ष की और अधिक पुष्टि में इस तथ्य को उदाहृत कर सकते हैं कि सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम भी प्रकटतया बिना किसी आर्थी असंगति के उल्लंघित किए जा सकते हैं जैसे कि उदाहरण के लिए

(16) (i) it is nonsense to speak of (there is no such activity as) elapsing a book [पुस्तक के समाप्त होने की बात करना (इस जैसी कोई क्रिया नही है) असंगत है।]

(ii) elapsing a book is not an activity that can be performed (पुस्तक समाप्त होना कोई कार्य नहीं है जो किया जा सके।)

(ii) one can not elapse a book (कोई पुस्तक को समाप्त नहीं कर सकता है।)

यहाँ भी अधिक सम्भावना के साथ कोई यह कह सकता है कि व्याकरणिकता से सार्थकता के साथ विचलित होने वाली आधार शृंखलाएँ फिर भी उन वाक्यों के अवयव हैं जो कुछ कोशीय एकांशों और कुछ संरचनाओं के आर्थी गुणधर्मों के कारण अविचलित निर्वचन ग्रहण करते हैं। व्याकरणिकता किसी भी स्थिति में विचलन की अन्तःप्रज्ञात्मक धारणा से पूर्णतः मिल नहीं सकती। इस तर्क के और अधिक समर्थन में उन पूर्णतया व्याकरणिक शृंखलाओं के उदाहरण उद्धृत किए जा सकते हैं जो वाक्यविन्यासेतर आधार पर असंगत हैं (देखिए, उदाहरण के लिए पृष्ठ 71)।

इस प्रकार मुझे ऐसा लगता है कि (15) जैसे उदाहरण वाक्यविन्यासीय घटक से चयनात्मक नियमों को हटाने के लिए और उनके प्रकार्य को निर्वचनात्मक आर्थी नियमों में समनुदेशित करने के लिए कोई विशेषतः सबल तर्क प्रस्तुत नहीं करते। फिर भी, यदि हम परवर्ती विधि अपनाते हैं तो (14) और (15) वाक्यविन्यासीय नियमों से सीधे प्रजनित होंगे और इन जैसे स्थलों में कम से कम व्याकरणिकता सम्बन्ध अन्तःप्रज्ञात्मक विचलन के अधिक समीप पहुँचेगा। वाक्यविन्यासीय घटक से चयनात्मक नियमों को पूरी तरह निरन्तर निरस्त करने के सम्बन्ध में और आर्थी घटक के सिद्धान्त को इस प्रकार परिवर्तित करने कि वे इन घटनाक्रमों को भी अन्तर्गत कर सकें, इसके सम्बन्ध में निर्णय के समर्थन में एक छोटे से विचार के रूप में उद्धृत किया जा सकता है।

हम लोग इस संभावना पर विचार कर रहे हैं कि चयनात्मक नियमों का प्रकार्य आर्थी घटक को दे दें। विकल्पतः कोई यह प्रश्न उठा सकता है कि क्या पूर्व वर्णित आर्थी घटक के प्रकार्य प्रजनन वाक्यविन्यासीय घटकों द्वारा पूरे के पूरे नहीं दिए जा सकते हैं। विशिष्टतया हम यह पूछ सकते हैं कि आधारभूत सामान्यीकृत पदबंध चिह्नक के उच्चतर पर्वों (वृहत्तर संरचक) के पठनांक को बताने वाले निर्वचात्मक नियमों का चक्र वाक्यविन्यासीय नियमों में से कुछ के पहले प्रयुक्त नहीं किए जा सकते हैं, ताकि दो घटकों के बीच का अन्तर प्रभावतः पूरी तरह से समाप्त कर दिया जा सके। इस धारणा की जिसे एकदम से बिना आगे सोचे विचारे अवहेलना नहीं की जा सकती और इस पर वीवर और रोजनवाम ने खोज कर यह दिखाया कि यदि इसे अपनाया जाय तो वाक्यीय घटक का आंतरिक संघटन अनेक मौलिक रीतियों से संशोधित करना पड़ेगा।

इस खंडीय और किसी निष्कर्ष तक पहुँचने वाले विवेचन से यह स्पष्ट है कि आर्थी और वाक्यविन्यासीय नियमों का पारस्परिक सम्बन्ध किसी भी प्रकार से एक समाधान की हुई समस्या नहीं है और हमारे समक्ष अनेक संभावनाएँ हो सकती हैं जो कि गहराई से खोज करने योग्य हैं। अध्याय 2, § 3 में हमारे द्वारा अपनाया हुआ उपागम वाक्यविन्यासीय घटक के भीतर ही आर्थी नियमों को अन्त:समाहित करने वाले प्रयत्न और चयनात्मक नियमों के प्रकार्य को ग्रहण कर सके। इस प्रकार आर्थी घटक को विस्तृत करने के प्रयत्न इन दोनों प्रयत्नों के बीच का मामूली समझौता है। स्पष्टतया इन प्रश्नों पर और अधिक अन्तर्ज्ञान तभी मिलेगा जब हम आर्थी निर्वचनात्मक नियमों का जितना अब तक कर चुके हैं उससे कहीं अधिक गहरा अध्ययन करें। मैं समझता हूँ कि पिछले कई सालों के कार्यों में इस प्रकार की अनुभवाश्रित खोज के लिए पृष्ठ भूमि तैयार कर दी है। इस समय हमारे पास सामान्य सैद्धान्तिक ढाँचा है जिसके कई अंशों को अनुभव जन्य समर्थन प्राप्त हो चुका है इस ढांचे के अन्तर्गत कुछ पर्याप्त स्पष्ट प्रश्नों को व्यवस्थापित करने की संभावना है। और यह भी पर्याप्त स्पष्ट है कि इन्हें निश्चित करने के लिए किस प्रकार का अनुभवाश्रित साक्ष्य संगत होगा। इनकी वैकल्पिक स्थितियाँ भी व्यवस्थापित की जा सकती हैं किन्तु इस समय जो कोई भी अपनाई जाएगी बहुत ही अधिक अस्थाई होगी।

सामान्यतया किसी को भी तब तक इस बड़े और जटिल क्षेत्र को सीमित करने की आशा नहीं करनी चाहिए, जब तक कि इसकी पूरी और पक्की तरह से खोज बीन न कर ली गई हो। वाक्यविन्यासीय और आर्थी नियमों के सैद्धान्तिक और वर्णनात्मक अध्ययन के लिए वाक्य-विज्ञान और अर्थविज्ञान की विभाजक सीमा (यदि कोई हो) का निर्णय एक पूर्वापेक्षा नहीं माना जा सकता। इसके विपरीत सीमा विभाजन की समस्या तब तक अनिर्णीत रहेगी जब तक ये क्षेत्र जितना आज समझे जा रहे हैं उससे कहीं अधिक समझे न जाएँ। ठीक इसी प्रकार उस विभाजन सीमा के सम्बन्ध में कहा जा सकता है जो आर्थी व्यवस्थाओं और ज्ञान और विश्वास की व्यवस्थाओं के बीच में है। वे एक दूसरे के भीतर एक दूसरे से दुरूहरूप से उलझी हुई हैं यह तथ्य बहुत दिनों से ज्ञात है इस विषय में कोई सार्थक जानकारी मुश्किल से उपलब्ध हो सकती है जब तक कि एक ओर आर्थी नियमों की व्यवस्थाओं का और दूसरी ओर इसी प्रकार विश्वास की व्यवस्थाओं का गंभीर विश्लेषण न हो जब तक ऐसा न हो तब तक सैद्धान्तिक शून्यता के भीतर केवल इक्के-दुक्के उदाहरणों पर विचार हो सकता है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि इससे कोई भी निर्णयकारी परिणाम नहीं मिलेगा।

§ 1.3 आर्थी सिद्धान्त की कुछ अन्य समस्याएँ

वाक्यविज्ञान और अर्थविज्ञान के सम्बन्ध के इस विवेचन में एक प्रमुख योग्यता

यह जोड़नी चाहिए कि हमने आर्थी घटक को उन नियमों, व्यवस्था के रूप में वर्णित किया है जो पदबंध चिह्नकों के संरचकों में पठनांक निर्दिष्ट करते हैं—अर्थात् वह व्यवस्था जिसकी इससे पूर्व कोई अन्तर्निष्ठ संरचना नहीं है। किन्तु ऐसा वर्णन कठिनाई से पर्याप्त होता है। विशिष्टतः, इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह "शब्दकोशीय परिभाषाओं" की व्यवस्था उतनी परमाणविक नहीं है जितनी कि इस वर्णन में मानी गई है।

शब्दकोशीय परिभाषाओं के सम्बन्ध में दो प्रमुख समस्याओं में खोजबीन होनी है। प्रथमतः आर्थी अभिलक्षणों के पारस्परिक पदावली में, संभाव्य धारणाओं की व्यवस्था के सार्वत्रिक भाषा-निरपेक्ष प्रतिबंधों का निर्धारण आवश्यक है। "कोशीय प्रविष्टि" की धारणा ही यह मान कर चलती है कि किसी प्रकार की एक स्थिर और सार्वत्रिक शब्दावली है जिससे इन वस्तुओं को अभिलक्षित किया जा सकता है और यह उसी प्रकार है जिस प्रकार "स्वनात्मक निरूपण" की धारणा यह मान कर चलती है कि यह किसी प्रकार के सार्वत्रिक स्वनात्मक सिद्धान्त हैं। यह संगत मनोवैज्ञानिक और शरीर प्रक्रियात्मक हमारा अज्ञान है जो बहुप्रचलित इस विश्वास को संभव बनाए रखता है कि "प्राप्ति योग्य धारणाओं" की व्यवस्था के सम्बन्ध में बहुत कम या बिल्कुल नहीं प्रागनुभव संरचना है।

इसके अतिरिक्त, सार्वत्रिक नियामकों के प्रश्न से नितांत भिन्न, यह बिल्कुल स्पष्ट लगता है कि किसी दी हुई भाषाई व्यवस्था में कोशीय प्रविष्टियाँ जो अब तक कहा गया है उससे कहीं अधिक, व्यवस्थाबद्ध प्रकार के अन्तर्निष्ठ आर्थी सम्बन्धों से युक्त हैं। हम इन निस्संदेह महत्वपूर्ण यद्यपि बहुत ही कम समझे गए वर्णात्मक आर्थी सिद्धान्तक के पक्षों के लिए "क्षेत्र गुण-धर्म" शब्द का प्रयोग कर सकते हैं।[12] इस प्रकार उदाहरण के लिए विशेषणों पर विचार कर सकते हैं जो किसी सांदर्भिक अधिकार क्षेत्र में परस्पर-व्यावर्ती हैं जैसे, रंगों के लिए शब्द। ऐसे "विपरीतार्थी समुच्चय" (देखिए केट्स 1964 b) ऐसे क्षेत्र गुण-धर्म का सरल उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जो पृथक् कोशीय प्रविष्टियों के शब्दों में स्वाभाविक रूप से वर्णित नहीं किए जा सकते हैं, यद्यपि स्पष्टतया उसकी आर्थी व्याख्या में भूमिका है अथवा वेवर और रोजेनबाम में वर्णित "रखता है" ("have a") सम्बन्ध पर विचार करें। हम (17) के वाक्य बना सकते हैं किन्तु (18) के नहीं।

(17) (i) the man has an arm (व्यक्ति के भुजा है)
(ii) the arm has a finger (भुजा में उँगली है।)
(iii) the finger has a cut (उँगली में घाव है।)

(18) (i) the arm has a man (भुजा के व्यक्ति है)

(ii) the finger has an arm (उँगली में भुजा है)

(iii) the cut has the finger (घाव में उंगली है ।)

(18) वाले वाक्य इस विचार बिन्दु से बिल्कुल असंगत रूप से पूर्णतया भिन्न रचनाओं के संभाव्य मध्यलोपी रूपांतर के रूप में प्रयुक्त हो सकते हैं, जैसे "the finger has an arm attached to it" (उँगली से जुड़ी हुई भुजा है) "the arm has a man on it" (भुजा से जुड़ा आदमी है) । इसके अतिरिक्त, ये उदाहरण अर्थ के सम्बन्धों को न कि तथ्यों के सम्बन्धों को, उदाहृत करते हैं । उस प्रकार "the ant has a kidney (चींटी के गुर्दा है)" के सम्बन्ध में हमें कोई आपत्ति नहीं है जबकि "the kidney has an ant" (गुर्दा के चींटी है) मिथ्या या असम्भव तो नहीं है, किन्तु अभी उल्लिखित निरर्थक अपवाद को छोड़ कर तात्पर्य हीन है । इस स्थिति में, हमारे सामने उन व्यवस्थाबद्ध सम्बन्धों के साथ पदों का सोपानक्रम है जो स्वयं स्वतंत्र कोशीय प्रविष्टियों के ढाँचे के भीतर किसी भी स्वाभाविक रूप से वर्णित नहीं हो सकता । इस प्रकार अन्य व्यवस्थाएँ भी आसानी से मिल सकती हैं और वस्तुतः वे यह संकेत भी करती हैं कि व्याकरण के आर्थी घटक का अंश क्षेत्र गुण-धर्मों के निरूपण जो कि शब्दकोश के बाहर है, करना चाहिए । यह विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण है किन्तु किसी सामान्य ढाँचे में अपेक्षाकृत है (देखिए टिप्पणी 12) इसके अतिरिक्त मान लें कि अन्तः प्रज्ञात्मक अर्थ में "विचलन" और तकनीकी अर्थ में "व्याकरणिकता की मात्रा" (18 i-iii) जैसे उदाहरणों को प्रत्यक्ष प्रजनन से पृथक् करके सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया गया है (देखिए टिप्पणी 1)। ऐसे निर्णय के परिणाम सरलता से निर्धारित नहीं किए जा सकते हैं ।

हम एक बार फिर समस्याओं को सूचित करने और इस तथ्य पर बल देने के अतिरिक्त कुछ और नहीं कर सकते कि सिद्धान्त के अनेक अनिर्णीत प्रश्न अब भी हैं जो व्याकरण सिद्धान्त के उन अंशों के व्यवस्थापन को पर्याप्त प्रभावित कर सकते हैं, जो अंश समुचित या सुस्थापित प्रतीत होते हैं ।

अंत में, पूर्ववर्ती विवेचन में निर्दिष्ट प्रकार के आर्थी निर्वचन के सिद्धान्त के सामने आने वाली अनेक अन्य समस्याओं की जानकारी रखना महत्वपूर्ण है । जैसा कि केट्स और फ़ोडर ने बल दिया है, यह स्पष्ट है कि वाक्य का अर्थ उसके अपने तात्विक अवयवों के अर्थों पर और उनके संयोजन रीति पर निर्भर हैं । यह भी स्पष्ट है कि बाह्य संरचना (सन्निहित संरचक) द्वारा दी संयोजन रीति सामान्यतया प्रायः पूरी तरह से आर्थी निर्वचन के लिए असंगत होती है, जबकि अमूर्त गहन संरचना में व्यक्त व्याकरणिक संबंध अनेक उदाहरणों में वाक्य के अर्थ के निर्धारक होते हैं (उदाहरण के लिए देखिए अध्याय 1, § 4 और अध्याय 2, § 2,2) । फिर भी, कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो किसी व्यवस्थाबद्ध रीति से अभी तक विकसित

व्याकरणिक प्रकार और व्याकरणिक संबंध की अमूर्त धारणा से कहीं अधिक गंभीर अध्ययन की आवश्यकता का संकेत देते हैं। उदाहरण के लिए इन वाक्य युग्मों पर विचार किया जाए—

(19) (i) John strikes me as pompous—I regard John as pompous (जॉन मुझे आत्माभिमानी लगता है—मैं जॉन को आत्माभिमानी मानता हूँ)।

(ii) I liked the play—the play pleased me (मुझे नाटक पसंद आया—नाटक ने मुझे प्रसन्न किया)।

(iii) John bought the book from Bill—Bill sold the book to John (जॉन बिल से पुस्तक लाया—बिल ने जॉन को पुस्तक बेची)।

(iv) John struck Bill—Bill received a blow at the hands of John (जॉन ने बिल को आहत किया—बिल ने जॉन के हाथ से प्रहार प्राप्त किया।)

स्पष्टतया इन उदाहरणों में अर्थ संबंध हैं, जो किसी प्रकार की समानाभिव्यक्ति सा लगता है। यह रचनांतरणपरक शब्दों में अभिव्यक्ति योग्य नहीं हो पा रहा है, जैसा कि नीचे दिए उदाहरणों में संभव हुआ।

(20) (i) John is easy for us to please—it is easy for us to please John (जॉन हमारे लिए प्रसन्न करने के लिए सरल है—हमारे लिए जॉन को प्रसन्न करना सरल है।)

(ii) it was yesterday that he came–he came yesterday (यह कल था जब वह आया—वह कल आया।)

(20) के वाक्यों के संबंध में, वाक्य युग्म की गहन संरचनाएँ, यहाँ विवेचनीय आर्थी निर्वचन से संगत सभी दृष्टियों से सर्वांगसम हैं और इस प्रकार रचनांतरणात्मक विश्लेषण.....(प्रज्ञानात्मक) समानार्थता का कारण बता पा रहा है। किन्तु (19) के उदाहरणों में यह बात नहीं है। उदाहरण के लिए (19i) में यद्यपि गहन संरचनाएँ यह दिखायेंगी कि युग्म के दोनों वाक्यों में "Pompous" (आत्माभिमानी) शब्द "John (जॉन)" का विश्लेषक है, तथापि वे दो संज्ञाओं के क्रिया के साथ के संबंधों को जो कि (कुछ अस्पष्ट अर्थ में) अर्थ की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, अभिव्यक्ति नहीं करते। इस प्रकार "John" (जॉन) का "strike" (लगना) के साथ संबंध कुछ अर्थ में वैसा ही है जैसा "John" (जॉन) का "regard" (मानना) के साथ, और "strike" (लगना) का "me" (मुझे) के साथ संबंध वैसा ही है जैसा "regard

(मानना) का" I (मैं) के साथ। हमारे पास इस तथ्य को अभिव्यक्त करने की कोई यांत्रिकी नहीं है, इस कारण अर्थ संबंध को कोशीय अभिलक्षण अथवा गहन संरचना के व्याकरणिक संबंधों के शब्दों में व्याख्यायित करने का कोई उपाय नहीं है।[13] परिणामतः ऐसा लगता है कि बाह्य संरचना (जैसे "व्याकरणिक कर्त्ता") और गहन संरचना (जैसे "तार्किककर्ता") इन धारणाओं से परे कोई और अमूर्त "आर्थी प्रकार्य" की धारणा है जिनकी अभी तक कोई व्याख्या नहीं की जा सकी है। इन तथ्यों को अभिव्यक्त करने के लिए विविध रूपात्मक युक्तियाँ अपने आप आगे आई हैं किन्तु सामान्य समस्या मुझे अभी भी अत्यंत महत्वपूर्ण लगती है।

वाक्य के "व्याकरणिक उद्देश्य" और विधेय और उसके" "तार्किक" अथवा "मनोवैज्ञानिक" उद्देश्य और विधेय के अंतर से संबद्ध विस्तृत विवेचन में अनेक संबंधित समस्याएँ उठाई गई हैं (देखिए उदाहरण के लिए पॉल (1886), येस्पर्सन (1924), विलसन (1926)। उल्लेख के लिए कुक विलसन को लें जो यह मानते हैं (1926, पृष्ठ 119 और उपरांत) कि "कथन glass is elastic"(ग्लास लचकदार है।) में यदि पृच्छा का विषय सुनम्यता था और प्रश्न यह था कि किन पदार्थों में सुनम्यता का गुण-धर्म है, तो glass (ग्लास) उद्देश्य नहीं रह पाएगा और वह बलाघात जो" elastic (लचकदार) के ऊपर तब पड़ता जबकि glass (ग्लास) उद्देश्य होता अब glass (ग्लास) के ऊपर पड़ेगा"। इस प्रकार कथन "glass is elastic" (ग्लास लचकदार है) में "glass (ग्लास) जिस पर कि बलाघात है वह अकेला शब्द है जो कि सुनम्यता की प्रकृति में किसी नए कल्पित तथ्य की ओर संकेत कर रहा है जो कि glass (ग्लास) में मिलता है—और इसलिए—glass (ग्लास) यहाँ विधेय है। इस प्रकार शब्दों का एक ही रूप अलग-अलग इस आधार पर विश्लेषित होता है कि शब्द इस प्रश्न या अन्य के उत्तर रूप में" और सामान्यतः "उद्देश्य और विधेय में शब्द हों और वाक्य के शब्दों द्वारा द्योतित कोई वस्तु हो ऐसा आवश्यक नहीं है।" इन पर्यवेक्षणों का चाहे जो भी बल रहा हो ऐसा लगता है कि वे भाषा-संरचना अथवा भाषा-प्रयोग के किसी विद्यमान सिद्धान्त के कार्य क्षेत्र के बाहर हैं।

इस अत्यंत अनर्गित विवेचन को समाप्त करते हुए हम केवल यह दिखा सकते हैं कि स्वाभाविक भाषाओं की वाक्यविन्यासीय अथवा आर्थी संरचना स्पष्टतया तथ्य और सिद्धान्त दोनों की दृष्टि से अनेक रहस्य प्रस्तुत करती है और इन अधिकार क्षेत्रों की सीमाओं को परिसीमित करने का कोई भी प्रयास निश्चित रूप से अत्यंत अस्थाई होगा।

§2. शब्दसमूह की संरचना

§2.1. समधिकता

शब्द समूह को हमने पहले केवल कोशीय प्रविष्टियों के समुच्चय के रूप में वर्णित किया था और प्रत्येक कोशीय प्रविष्टि के अन्तर्गत परिच्छेदक अभिलक्षण मैट्रिक्स D और मिश्र प्रतीक C होते हैं और C नाना प्रकार के अभिलक्षणों (वाक्य विन्यासीय और आर्थी अभिलक्षण, वे अभिलक्षण जो यह निर्दिष्ट करते हैं कि विवेचनीय एकांशों की शृंखलाओं पर कौन-सी रूपप्रक्रियात्मक अथवा रचनांतरणात्मक प्रक्रियाएँ लगती हैं, वे अभिलक्षण जो एकांशों को विशेष स्वन प्रक्रियात्मक नियमों । अपवाद बनाते हैं, इत्यादि[14]) का समुच्चय होता है। यह हम अभी देख आए हैं कि यह वर्णन आर्थी अभिलक्षणों के संबंध में अत्यंत सरलीकृत रूप है और क्षेत्र-गुण धर्मों के वर्णन के लिए शब्द समूह में और अधिक संरचना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त अध्याय 2, §3 में हम यह दिखा चुके हैं कि विविध सामान्य रूढ़ियाँ स्थपित की जा सकती हैं, जो ऐसी कोशीय प्रविष्टियों के सार्थक का महत्वपूर्ण सरलीकरण करेंगी।

कोशीय प्रविष्टियों के सरलीकरण के प्रश्न पर और अधिक छानबीन करने के लिए स्थूलता की दृष्टि से हम प्रत्येक बिन्दु पर, जहाँ विवेचन में विचार योग्य वैकल्पिक संभावनाओं को सूचीबद्ध किया है, विशिष्ट विकल्प लेंगे। उदाहरण के रूप में हम यह मान लें कि कोशीय एकांशों को अंतः प्रविष्ट करने की उचित पद्धति सामान्य नियम द्वारा है जो कि पदबंध चिह्नक में.....Q.....स्थिति में (Q पुनर्लेखी नियमों द्वारा एक मिश्र प्रतीक है)। कोशीय प्रविष्टि D, C अंतःप्रविष्ट करता है जहाँ C अभिलक्षण सिद्धान्त के तकनीक अर्थ में Q से भिन्न नहीं है। इस प्रकार अध्याय 2, §3 की पद्धति को हम परीक्षणात्मक रूप से स्वीकार करते हैं। न कि 2, §4.3 में संकेतित पद्धति को। इसके अतिरिक्त हम यह अनुभव जन्य अभिग्रह कर सकते हैं कि व्याकरण उच्चतया मान-युक्त है यदि कोशीय प्रविष्टियों में बहुत ही कम सकारात्मक रूप से निर्दिष्ट सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षण किन्तु सकारात्मक रूप से निर्दिष्ट अनेक चयनात्मक अभिलक्षण हों। इस प्रकार हम पृष्ठ 107 के विकल्प (iv) को अस्थाई रूप से स्वीकार करते हैं।[15] विकल्पों के ये चयन परवर्ती विवेचन को प्रभावित करते हैं, किन्तु किसी सीमा तक एक समान समस्याएँ उठती ही हैं चाहे हम प्रस्तावित विकल्पों में से किसी को न लें।

प्रभावतः हम निम्नलिखित रूढ़ियों को अब अपना रहे हैं :

(21) (i) कोशीय प्रविष्टियों में प्रत्यक्षतया केवल सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षण और केवल नकारात्मक रूप

से विनिर्दिष्ट चयनात्मक अभिलक्षण प्रकट हो सकते हैं और अन्य अभिलक्षण गौण रूढ़ि (ii) द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं।

(ii) यदि प्रासंगिक अभिलक्षण [$\alpha\phi$—ψ] के लिए कोशीय प्रविष्टि (D,C) में विशिष्ट अभिलक्षण [ϕ—ψ] प्रत्यक्षत: नहीं दिया गया है (वहाँ α सुदृढ़ उपकोटिकरण के सम्बंध में + और चयनात्मक संबंध में—है तो उसमें हम निर्दिष्ट अभिलक्षण [—$\alpha\phi$—ψ] लगा सकते हैं।

हम यह (अध्याय 2, § 3 में) दिखा आए हैं कि (21 ii) से मिलती-जुलती रूढ़ि कोशीय कोटियों के अनुरूप अभिलक्षणों में स्थापित कर सकते हैं।

इन रूढ़ियों के अनुसार frighten (भयभीत करना) (देखिए अध्याय 2 (58) के लिए कोशीय प्रविष्टि को केवल इस प्रकार देख सकते हैं—

(22) (frighten)(भयभीत करना)[+V क्रि, + – NP संप,–[+N सं]–
[–Animate चेतन],..]

रूढ़ियाँ निम्नलिखित को प्रस्तुत करेंगी: कोटीय अभिलक्षण [–N सं][–adjective विशेषण],[–M प्र]; सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षण [––], (—संपNP̂ ≠ Ŝ≠), ...; चयनात्मक अभिलक्षण [+[+Nसं]–[+Animate चेतन]],[+[+N(सं)] [+Human (मानव]]....; । इस प्रकार frighten (भयभीत करना) को (22) के नकारात्मक रूढ़ियों द्वारा क्रिया के रूप में विनिर्दिष्ट करेंगे न कि संज्ञा, विशेषण अथवा प्रकारक और frighten (भयभीत होना) इस संदर्भ में sincerity–John (ईमानदारी-जॉन) के प्रसंग में अन्त: प्रविष्ट योग्य होगा, किन्तु sincerity(ईमानदारी)[16] अथवा sincerity-justice (ईमानदारी-न्याय)[17] के प्रसंग में नहीं।

अब हम ऐसी उपयुक्त रूढ़ि विकसित कर सकते हैं जो एकांशों के कोशीय निरूपण को सरलीकृत कर सके जहाँ ऐसे अन्तर्निहित अभिलक्षण हों जो कि सोपनक्रम में हैं न कि व्यभिचरित वर्गीकारक क्रम में हैं। मान लीजिए कि विशिष्ट अभिलक्षणों ([α_1 F_1],....,[α_n F_n] [αi = + या –] का अनुक्रम व्याकरण G की दृष्टि से सोपानिक अनुक्रम है, यदि G में [αi Fi] ही प्रत्यक्षत: [$\alpha i + F_{i+1}$] को प्रत्येक $i < n$ के लिए) अधिकारी विशिष्ट अभिलक्षण है। इस प्रकार, उदाहरणार्थ अध्याय 2 के उदाहरणात्मक व्याकरण (57) के लिए हमें निम्नलिखित सोपानिक अनुक्रम मिलते हैं—

([+चेतन], [± मानव])
(23) (i) ([+Animate], [± Human])
([+सं], [+जाति], [-गणनीय], [± अमूर्त])
(ii) ([+N], [+Common], [–Count], [± Abstract])

([+ सं], [± जाति])

(iii) ([+N], [± Common])[18]

जहाँ ऐसे सम्बन्ध मिलते हैं, वहाँ हम निम्नलिखित स्वाभाविक सी रूढ़ि द्वारा कोशीय प्रविष्टियों को सरलीकृत कर सकते हैं :[19]

(24) मान लीजिए कि ($[\alpha, F_1]$....,$[\alpha_n F_n]$) व्याकरण G के लिए उच्चिष्ठ सोपानिक अनुक्रम है और (D,C) व्याकरण G की एक कोशीय प्रविष्टि है जहाँ C के अन्तर्गत $[\alpha_n F_n]$ है। तब, C स्वयंमेव C' में विस्तरित हो जाएगा जिस C' के अन्तर्गत C सभी विशिष्ट अभिलक्षणों $[\alpha_i F_i]$ के साथ आता है जहाँ प्रत्येक i के लिए $1 \leq i < n$ इस रूढ़ि को अपनाने पर अध्याय 2 की a boy के लिए दी कोशीय प्रविष्टि (58) को निम्नलिखित रीति से सरल कर सकते हैं :

(25) (boy, [+ Common, + Human, + Count,....]

(लड़का, [+ जाति, + मानव, + गणनीय,....]

अभिलक्षण [+ N सं], [+ Animate चेतन] अब पूर्वसूचित हैं।[20]

मान लीजिए कि यों कहें कि अभिलक्षण [αF] व्याकरण G में कोशीयतः निर्धारित है, यदि वहाँ G के लिए सोपानिक अनुक्रम ([+ K]....[αF]) है जहाँ K एक कोशीय कोटि (α = + या –) है। यह कहना हुआ कि यदि (D,C) एक कोशीय प्रविष्टि है और C के अन्तर्गत [α F] है तो (D,C) अवश्यमेव इस प्रविष्टि के लिए कोशीय कोटि K का सदस्य होगा और (रूढ़ि (24) के कारण) यह अनावश्यक है कि [+ K] को C में सूचिबद्ध करें। अध्याय 2, § 3 के उदाहरणात्मक व्याकरण (57), (58) में प्रत्येक कोशीय एकांश के भीतर कोशीयतः निर्धारित अभिलक्षण हैं। अतएव, (58) के शब्दसमूह में किसी भी एकांश के लिए कोशीय कोटि निर्दिष्ट करना अनावश्यक है। यदि प्रत्येक कोशीय प्रविष्टि के भीतर कोशीयतः निर्धारित अभिलक्षण रहते हैं, जैसा कि संभव हो सकता है, तो अभिलक्षण [+ C] और [–C] का जहाँ C एक कोशीय कोटि है, शब्दसमूह में कभी भी स्पष्ट उल्लेख नहीं होगा।

हम ने अभी तक कोशीय निरूपण के आधारभूत सार्वजिक आंकनिक रूढ़ियों पर ही विचार किया है। किन्तु, अनेक भाषा-विशिष्ट समाधिकताएँ भी हैं। इस प्रकार, उदाहरणार्थ, अंग्रेजी की प्रत्येक क्रिया जो प्रत्यक्ष-कर्म और परवर्ती रीतिवाचक क्रिया विशेषण के साथ आ सकती है, केवल प्रत्यक्ष कर्म के साथ आ सकती है, किन्तु विपरीततया संभव नहीं है[21] अध्याय 2, § 3 के व्याकरणात्मक रूप रेखा के सुदृढ़ उपकोटिकरण नियमों के क्रियाओं के लिए, अन्य के साथ, अभिलक्षण [–NP (संप]

और [–NP⁀Manner] (संप.⁀रीति) दिए थे। अभी बताए प्रेक्षण के अनुसार, हम देखते हैं कि यदि एक कोशीय एकांश शब्दसमूह में [+–NP⁀Manner](संप.⁀रीति) रूप में दिया है तो उसे [+–NPसंप] भी विनिर्दिष्ट होना होगा,यद्यपि विपरीततया आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए read (पढ़ना) इन दोनों अभिलक्षणों के लिए सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट होगी, किन्तु अनुरूप मूल्य [–NP संप] के लिए सकारात्मक,और [NP⁀Manner] (संप⁀रीति) के लिए नकारात्मक है, क्योंकि "he read the book (carefully, with great enthusiasm)" (उसने पुस्तक (ध्यान से, बड़े उत्साह के साथ) पढ़ी)"John resembled his father"(जॉन अपने पिता के अनुरूप है)तो संभव हैं किन्तु "John resembled his father carefully (with great enthusiasm)" (जॉन अपने पिता से ध्यान से (बड़े उत्साह के साथ) अनुरूप है।) आदि नहीं हैं। यहाँ फिर हमें शब्दसमूह में समधिकता मिली है और एक महत्वपूर्ण सामान्यीकरण भी व्याकरण में अनभिव्यक्त रह गया है। स्पष्टतया, जिसकी आवश्यकता है, वह नियम यह है :

(26) [+ – NP⁀Manner] →[+–NP] [+–संप.⁀रीति]→[+–संप]

इसकी व्याख्या इस प्रकार होगी : यदि (D,C) कोई कोशीय प्रविष्टि है और इसमें D विच्छेदक अभिलक्षण मैट्रिक्स और C[+–NP⁀Manner](संप⁀रीति) को रखने वाला मिश्र प्रतीक है, तो C के स्थान पर C' आ सकता है जिसके अन्तर्गत C' का प्रत्येक विशिष्ट अभिलक्षण [α F] आता है (जहाँ F ≠ [–NP संप] और विशिष्ट अभिलक्षण [+—NP संप] भी जाता है।

वस्तुतः, नियम (26) को और अधिक सामान्यीकृत किया जा सकता है। यह अकर्मक क्रियाओं के साथ भी सत्य है अर्थात् यदि वे रीतिवाचक क्रिया विशेषण लेती हैं तो उनके बिना वे आ सकती हैं। आवश्यकता वास्तव में एक रूढ़ि की है जो (26) को सामान्यीकृत करने वाले नियम में परिवर्त (चर) को शृंखला के ऊपर प्रादुर्भूत होने दे, और इस प्रकार प्रभावतः अंकनों की आंतरित संरचना के अंश को कोशीय अभिलक्षणों के प्रयुक्त करने दे। ϕ को शृंखला परिवर्त के रूप में प्रयुक्त करते हुए हम नियम को इस रूप में दे सकते हैं :

(27) [+–ϕ⁀Manner (रीति → [+—ϕ]

इसकी व्याख्या इस प्रकार होगी : प्रथमतः किसी अचल शृंखला को ϕ के रूप में चुने लें; फिर, परिणाम के (26) के सम्बन्ध में जिस प्रकार समझाया है उस प्रकार व्याख्यान करें। इस स्वयं स्पष्ट रूढ़ि को विकसित करना भी अधिक उपयोगी होगा

जो (27) को प्रसंग-सापेक्ष नियम के रूप में कथित होने देती है या आधार नियमों के शब्दों में सुपरिभाषितत होने पर ϕ पर कोई प्रतिबन्ध लगने देती है।

मान लीजिए कि (27) का नियम (21) और (24) की रूढ़ियों के पहले प्रयुक्त होता है। तब walk (घूमना), hit (प्रहार करना) आदि शब्दसमूह में इस रूप में लिखे जाएँगे :

(28) (i) (walk (घूमना), [+ —Manner (रीति),....])

(ii) (hit (प्रहार करना), [+ —NP⁀Manner....])(संप⁀रीति)

नियम (27) और तत्पश्चात् रूढ़ि (21) के द्वारा ये अपने-आप इस प्रकार विस्तरित हो जाएँगे :

(29) (i) (walk,[+— Manner, +—,—NP⁀Manner,—NP....])
(घूमना) (रीति) (संप) (रीति) (संप)

(ii) (hit, [+ —NP⁀Manner, +—NP,—Manner,—....])
(प्रहार करना)(संप) (रीति) (संप) (रीति)

इस प्रकार walk (घूमना) रीतिवाचक क्रिया विशेषण के साथ या के बिना आ सकता है, किन्तु प्रत्यक्ष-कर्म के साथ कदापि नहीं, जबकि hit (प्रहार करना) रीतिवाचक क्रिया विशेषण के साथ या के बिना आ सकता है, किन्तु केवल प्रत्यक्ष-कर्म के साथ ही।

(27) और (28) जैसे नियम उन स्वनप्रक्रियात्मक नियमों से घनिष्ठ तथा सदृश हैं जिन्हें हाले ने "रूपिम संरचना नियम" कहा है (हाले, 1959a, 1959b,) और जिन्हें मैं (हाले के सुझाव के अनुसार) वहाँ 'स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियम' कहता आ रहा हूँ। ये नियम इन तथ्यों की व्याख्या करते हैं कि कुछ स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षणों के विनिर्देशन पूर्वकथित हो सकते हैं यदि कुछ अन्य ऐसे अभिलक्षण दिए जा चुके हैं। इस प्रकार अंग्रेजी के प्रारंभिक अनुक्रम #CC में यदि दूसरा C एक सच्चा व्यंजन है (अथवा तरल अथवा श्रुति नहीं है), तो अवश्यमेव (S) होगा : यदि दूसरा व्यंजन तरल होगा तो पहला अवश्यमेव रोधी (स्पर्श) होगा इत्यादि। इन तत्वों को बताने वाले स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियय ठीक-ठीक (26) के रूप के होते हैं और उसी प्रकार व्याख्यात होते हैं सिवाय इस बात के कि विवेच्य अभिलक्षण हैं न कि वाक्यविन्यासीय और परिणामत: (27) के सामान्यीकृत (व्यापकीकृत) कथन के समान यहां कोई कथन नहीं है। हम सादृश्यद्योतक वाक्यविन्यासीय नियमों (26), (27) को वाक्यविन्यासीय समधिकता नियम कहते हैं। समधिकता नियम, स्वनप्रक्रियात्मक और वाक्यविन्यासीय

दोनों, सभी कोशीय प्रविष्टियों के सामान्य गुण-धर्मों, को व्यक्त करते हैं, और इसलिए कोशीय प्रविष्टियों में उन अभिलक्षण वैशिष्ट्यों को निर्दिष्ट करना अनावश्यक समझते हैं, जहां ये अनन्य नहीं हैं।

यह प्रेक्षणीय है कि रूढ़ियों जैसे (21), (24) और वाक्यविन्यासीय समधिकता नियमों जैसे (26), (27) के बीच अन्तर अवश्यमेव रखा जाए; यद्यपि दोनों शब्द-समूहों में समधिक वैशिष्टयों के निराकरण का काम करते हैं। रूढ़ियाँ सार्वत्रिक हैं और इस कारण इन्हें व्याकरण में विशेष कथन नहीं है। वे व्याकरणों की व्याख्या करने की प्रक्रिया का अंग हैं (अध्याय 1, § 6, (12 iv) — (14 iv) का फलक f)। इसके विपरीत वाक्यविन्यासीय समधिकता नियम, भाषा विशेष से संबंध है और इस कारण व्याकरण में उनका देना नितान्त आवश्यक है। [22] हमने इस अन्तर पर बल देने के लिए ही प्रथम को 'रूढ़ियाँ' और द्वितीय को "नियम" कहा है।

कोशीय प्रविष्टि (D, C) देने पर, स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियम D का और अधिक पूर्ण विनिर्देशन देते हैं और वाक्यविन्यासीय समाधिकता नियम C का और अधिक पूर्ण विनिर्देशन देते हैं। किन्तु फिर भी एक महत्वपूर्ण अन्तर है, जहां तक इनकी भूमिकाओं का प्रश्न है। इसे देखने के लिए स्वन क्रियात्मक समधिकता नियमों की व्यवस्था के एक पक्ष पर, जिसके महत्व को अभी पूरी तरह आँका नहीं गया है, विचार करना होगा। यह तथ्य कि कुछ स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षण–वैशिष्टयों को अन्यों के शब्द में पूर्व कथित करने के नियम हैं, बहुत दिनों से विदित है और ऐसे अनेक वर्णनात्मक अध्ययन हैं जो "स्वनप्रक्रिया की दृष्टि से स्वीकार्य अनुक्रम" "संभाव्य अक्षर" आदि के समुच्चय को किन्हीं भाँति के चार्टों या नियमों को देते रहे हैं। हॉले की उपलब्धि इस कथन के दुहराने में नहीं है कि ऐसे प्रतिबन्ध रहते हैं, बल्कि इसमें है कि उन्होंने, उनको निर्धारित करने में नियमों के इस समुच्चय को न लेकर क्योंकर दूसरे को लें—इसके सिद्धान्त पुष्ट आधार प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने यह दिखाया है कि स्वनप्रक्रिया का अत्यंत व्यापक और स्वतंत्रता प्रेरित मूल्यांकन प्रक्रिया (अर्थात् अभिलक्षण वैशिष्टयों का न्यूनतमीकरण) ऐसा आधार प्रस्तुत करता है अर्थात्, इस कसौटी का अनुप्रयोग ऐसी स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियमों की व्यवस्था चुनता है जो "स्वनप्रक्रियात्मक दृष्टि से स्वीकार्य" धारणा को इस प्रकार परिभाषित करती है कि अनेक निर्णायक स्थितियों में वह ज्ञान तथ्यों के अनुरूप रहती है। [23] वे इस प्रकार स्वनप्रक्रियात्मक स्वीकार्यता के तथ्यों का, वर्णन मात्र के स्थान पर, व्याख्या प्रस्तुत करने में सफल हो सके–अर्थात् वे एतदर्थ चार्ट अथवा सूची के स्थान पर "आकस्मिक रिक्तता" और "व्यवस्थाबद्ध रिक्तता" (जैसे, अंग्रेजी में)/blik/जैसे अंग्रेजी में/bnik/जैसे धारणाओं की सामान्य

भाषा निरपेक्ष भाषा देने में समर्थ हो सके । स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियमों का वास्तविक प्रकार्य स्वनप्रक्रिया की दृष्टि से स्वीकार्य (चाहे वे वस्तुतः न भी उपलब्ध हैं) अनुक्रमों के वर्ग को सिद्धान्त पुष्ट रीति से निर्धारित करना है । जिस सीमा तक वे यह करने में सफल होते हैं, उस सीमा तक वे उस भाषाई सिद्धान्त को अनुभवाश्रित समर्थना देते हैं जो हॉले द्वारा प्रस्तावित मूल्यांकन प्रक्रिया और इस प्रक्रिया से मान्यता प्राप्त स्वन प्रक्रियात्मक नियमों पर आरोपित प्रतिबंध व्यवस्था से युक्त होता है । किन्तु वाक्यविन्यासीय समधिकता नियमों में "स्वनप्रक्रियात्मक स्वीकार्यता" के समकक्ष कोई वस्तुतः विश्वासोत्पादक सादृश्य नहीं है । परिणामतः, यह विवादास्पद प्रश्न है कि क्या ये स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियमों की सी महत्ता रखते हैं ।

इस प्रेक्षण से यह संकेत मिलता है कि हमें आकस्मिक और व्यवस्थाबद्ध रिक्तताओं के अन्तर के सदृश कुछ वाक्यविन्यासीय स्तर पर भी ढूँढना चाहिए । वस्तुतः शुद्ध रूपात्मक दृष्टिकोण से, ठीक उसी प्रकार से जिस प्रकार स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियम वाक्यविन्यासीय करते हैं, वाक्यविन्यासीय समधिकता नियम "संभव किन्तु अनुपलब्ध कोशीय प्रविष्टि" और असंभव कोशीय प्रविष्टि में अन्तर रखते हैं । दोनों स्थितियों में, समधिकता नियमों द्वारा सभी कोशीय प्रविष्टियों पर सामान्य प्रतिबंध लगते हैं, और इस प्रकार संभव और असंभव कोशीय प्रविष्टियों में अन्तर स्वीकार कर लिया जाता है (संभावना भाषा विशेष के संबंध में होती है, अर्थात, जहां तक समधिकता नियमों का संबन्ध है वे सार्वत्रिक रूढ़ियाँ नहीं है) किन्तु सामान्यतः सभी संभावनाएँ वस्तुतः शब्दसमूह में विद्यमान नहीं होती । यह विशेषतः दिखाना है कि यह त्रिविध अन्तर—उपलब्ध, संभव किन्तु अनुपलब्ध, असंभव वाक्यविन्यासीय विवेचन में भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि स्वनप्रक्रियात्मक में । इस प्रकार यह दिखाना है कि संभव किन्तु अनुपलब्ध कोशीय प्रविष्टियों की प्रास्थिति इस अर्थ में 'आकस्मिक आर्थी रिक्तताओं" के समान है कि वे उन कोशीय एकांशों के अनुरूप है जिनका भाषा ने विशिष्टतया प्राविधान नहीं किया है किन्तु जिन्हें वह तत्संबद्ध सामान्य आर्थी व्यवस्था में बिना कोई परिवर्तन किए सिद्धान्ततः अंगीकार कर सकती है । मेरे पास इस समय कोई अत्यंत संतोष जनक उदाहरण नहीं है ।[24] किन्तु समस्या पर्याप्त स्पष्ट है और गवेषणा योग्य है ।

वाक्यविन्यासीय समधिकता नियमों का अध्ययन स्वयं में एक विशाल विषय है किन्तु अतिरिक्त उदाहरण देते रहने के स्थान पर, मैं कुछ उन समस्याओं पर विचार करना चाहूँगा जो पहले दी रूपरेखा के अनुकूल ढाँचों के भीतर रूप प्रक्रियात्मक प्रक्रियाओं को व्याख्यात करने के प्रयत्न में सामने आती है ।

§ 2.2. रूपसाधक प्रक्रियाएँ

रूपसाधक रूपप्रक्रिया के प्रश्नों पर विचार करने वाली दोनों रीतियों की तुलना करना उपयोगी होगा। एक रीति रूपावली परक पारंपरिक पद्धति है और दूसरी रूपिमीय विश्लेषण करने वाली वर्णनात्मक भाषा विज्ञानियों की है। चूँकि अंग्रेजी रूप साधन की दृष्टि से इतनी सरल है कि इस अंतर को अंग्रेजी से उदाहृत करना कठिन है, अतएव हम यहाँ जर्मन भाषा के उदाहरण ले रहे हैं। पारंपरिक व्याकरण में संज्ञा के किसी विशिष्ट रूप का वर्णन रूपावली व्यवस्था में उसके स्थान के अनुसार होता है और रूपावली व्यवस्था में कुछ रूपसाधक कोटियाँ स्थान परिभाषित करती हैं—ये कोटियाँ हैं लिंग, वचन, कारक और रूपावली वर्ग। इनमें प्रत्येक कोटि के भीतर रूपावली के स्वतन्त्र "आयाम" होते हैं और शब्द का इन प्रत्येक स्वतंत्र आयामों में एक विशिष्ट "मान" होता है।[25] इस प्रकार शब्द Brüder (भाई) (पदबन्ध der Brüder (भाई) में) पुलिंग, बहुवचन, षष्ठी और Vater (पिता), Mutter (माता) आदि के साथ एक रूपावली वर्ग का सदस्य है।

वस्तुत:, हम रूपावलीय वर्णन को प्रत्यक्षत: वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों के शब्दों में पुन: कथित कर सकते हैं। यदि रूपावली-पद्धति के प्रत्येक आयाम को एक बहु-मानवीय अभिलक्षण मान लें, और मान को केवल + और— में न रखते हुए पारंपरिक निर्देशन की परंपरा से सहचरित पूर्ण संख्या मान लें[26] तो वाक्य——der Brüder (भाई) के पदबन्ध चिह्नक को निम्नलिखित उप-संस्थिति—(30) से चित्रित कर सकेंगे। इस प्रकार Brüder (भाई) की इस उपलब्धि के
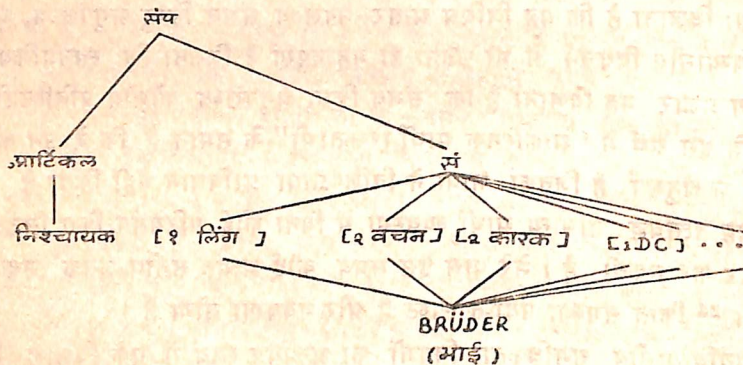
साथ एक अभिलक्षण मैट्रिक्स होगी जो यह सूचित करेगी कि यह रचनांग कोटियों (1 Gender (लिंग), (2 Number (वचन), (2 Case (कारक), और (I D C) (और अन्य (30) में....से प्रदर्शित संबंध) में विनिर्दिष्ट होगा। यह द्रष्टव्य है कि

विशिष्ट अभिलक्षण (1 Gender (लिंग) और (IDC) रचनांग में अन्तर्निहित है (अर्थात् वे कोशीय प्रविष्टि (Brüder (भाई) C) के मिश्र प्रतीक C के अंग हैं), और (2 Number (वचन) और (2 Case (कारक) व्याकरणिक नियमों द्वारा दिए गए हैं।

संभवतः, विशिष्ट अभिलक्षण [2 Number (वचन)] संज्ञाओं पर प्रयुक्त प्रसंगनिरपेक्ष नियम द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, [27] और विशिष्ट अभिलक्षण [2 Case (कारक)] ऐसे नियम द्वारा प्रस्तुत किया जाता है जो वाक्य विन्यास के आधार उपघटक का अंग न हो कर रचनांतरणात्मक अंश का अंग है (देखिए, अध्याय 2, नोट 35)। यदि ऐसा है तो इन अभिलक्षणों में केवल [2 Number (वचन)] पूर्वान्त्य प्रतीक का अभिलक्षण होगा और जिस के स्थान पर कोशीय नियम से Brüder (भाई) आ जाएगा, और [2 Case (कारक)] को छोड़कर सभी आधार नियम से प्रजनित अन्त्य शृंखला में मिलेगा। प्रसंगवश यह भी दृष्टव्य है कि विनिर्देशन [1DC] एक समधिकता नियम द्वारा प्रस्तुत किया जाए जो इस स्थिति में स्वनप्रक्रियात्मक और अन्य कोशीय अभिलक्षणों को संभाल लेगा। निर्वचन स्वनप्रक्रियात्मक घटक का एक नियम (30) पर प्रयुक्त होगा और Brüder (भाई) रूप मिलेगा। यह नियम बताएगा कि किसी रचनांग में जहाँ कोटियाँ [2 Number (वचन)] [1DC] साथ-साथ प्रयुक्त होती हैं, स्वर अग्रेस्वर हो जाता है। (एक पृथक् नियम जो कि पर्याप्त सामान्य है यह निर्दिष्ट करेगा कि / (V) n / के बाद प्रत्यय लगेगा कि यदि कोटि [3 case (कारक)] भी उससे सम्बद्ध है)।

संक्षेप में, पूर्व विकसित वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों का सिद्धान्त पारंपरिक रूपावलीय विवेचन को प्रत्यक्षतः समाविष्ट करता है। रूपावली व्यवस्था केवल अभिलक्षण व्यवस्था के रूप में वर्णित होती है, और प्रत्येक अभिलक्षण (अथवा) कदाचित्) कोई सौपानिक संस्थिति रूपावली व्यवस्था को परिभाषित करने वाले प्रत्येक आयाम के अनुरूप होते हैं। तब निर्वचनात्मक स्वनप्रक्रियात्मक नियम-कुछ पर्याप्त विशिष्ट कुछ पर्याप्त सामान्य—कोशीय प्रविष्टि की स्वनप्रक्रियात्मक मैट्रिक्स से युक्त होते हैं और अंत में एक स्वनात्मक मैट्रिक्स देते हैं। जहाँ ये अभिलक्षण पूर्णतया स्वतंत्र नहीं हैं (जैसे उदाहरण के लिए, यदि रूपावली-प्र रूप लिंग पर आधारित है) अथवा जहाँ वे रचनांग के अन्य पक्षों द्वारा अंशतः निर्धारित होते हैं. पूर्वविवेचित भांति के समधिकता नियम प्रयुक्त होते हैं।

आधुनिक भाषाविज्ञान की विशेष विश्लेषण पद्धति पारंपरिक उपागम से, जिसे हमने अपने शब्दों में अभी पुनः कथित किया है, भिन्न है। पारंपरिक कोटियों (हमारे अभिलक्षणों) के स्थान पर, यह उपागम रूपिम स्थानापन्न करती है। इस

प्रकार (30) में Brüder (भाई) पूर्णतया संगत "एकांश तथा-विन्यास" व्याकरण में (31) के समान कदाचित् निरूपित किया जाएगा :

(31) Beüder⁀DC_1⁀Masculine⁀Plural⁀Genitive
(भाई) (पुल्लिग) (बहुवचन) (सम्बंधकारक)

जहाँ इनमें प्रत्येक तत्व एक एकाकी रुपिम माना जाता है और DC एक प्रकार का "वर्ग चिह्नक" है [28]। तब वे नियम दिए जाएँगे (31) को स्वनिमों के अनुक्रम में परिवर्तित कर देंगे।

(31) जैसे निरूपण पुनर्लेखी नियमों अथवा रचनांतरणों पर आश्रित व्याकरण के लिए भौंडे और भद्दे रहेंगे। इसके अनेक कारण हैं। एक बात तो यह है कि इन "रूपिमों" में से अनेक स्वनात्म दृष्टि से रूपबद्ध नहीं होते हैं और इसलिए, विशेष प्रसंगों में, उन्हें शून्य तत्व मानना होगा। प्रत्येक ऐसे अवसर पर एक विशिष्ट प्रसंग सापेक्ष नियम अवश्य देना होगा जो यह बताएगा कि विवेच्य रूपिम स्वनात्म दृष्टि से शून्य है। किन्तु यह विस्तृत नियम-समुच्चय पूर्णतया व्यर्थ है और वैकल्पिक रूपावलीय विश्लेषण के द्वारा सरलता से परिहार योग्य है। इस प्रकार रूपावलीय विश्लेषण (30) और उसी के रूपिमीय विश्लेषण (31) के लिए दिए नियमों की तुलना करें। (31) की स्थिति में हमें प्रथमतः यह नियम प्रयुक्त करना होगा जो बताएगा कि जहाँ विवेच्य भाषांश संज्ञा है वहाँ स्वर प्रसंग—DC_1.... Plural (बहुवचन)....में अग्रित होता है जब विवेच्य भाषांश में अभिलक्षण [DC_1] और [2 Number (वचन)] हों। किन्तु रूपिमीय विश्लेषण में हमें अतिरिक्त नियम देने होंगे जो यह दिखाएँगे कि (31) जैसे प्रसंग में सभी चारों रूपसाधक रूपिम स्वनात्म दृष्टि से शून्य हैं। अभिलक्षण विश्लेषण (30) में हमें कोई ऐसा नियम देना ही नहीं होता है कि कुछ अभिलक्षण स्वनात्मतः अभिव्यक्त हैं, और यह ऐसा ही जैसा हम इस तथ्य के लिए कोई नियम नहीं देते हैं कि [+ N] अथवा NP(संप) स्वनात्मतः अनभिव्यक्त रहता है।[29]

अधिक सामान्यतया, रूपसाधक व्यवस्थाओं का प्रायः आदेशपरक स्वभाव, और यह तथ्य कि (जैसा कि उदाहरण में) रूपसाधक कोटियों का प्रभाव अंशतः पूर्णतः, आंतरिक हो सकता है, (31) जैसे निरूपणों पर प्रयुक्त करने के लिए नियम बनाते समय, बोझिल और भद्दे नियम बना देते हैं। किन्तु आदेश और आंतरिक आपरिवर्तन रूपवलीय निरूपण/व्यवस्थापन में कोई विशेष कठिनाई नहीं डालते हैं। इसी प्रकार, रूपिमीय निरूपणों के साथ, अनेक व्याकरणिक नियमों में असंगत (व्यर्थ के) रुपिमों की ओर संदर्भित करना पड़ता है। उदाहरण के लिए (31) के संबंध में स्वर के अग्रीकरण के नियम को रूपिम Masculine (पुल्लिग) को संदर्भित करना

होगा और यही अन्विति-नियमों के साथ सधान्य स्थिति है। किन्तु रूपावली निरूपण ये तत्व, अन्त्य-शृंखला के अंश न होने के कारण, संगत नियमों में इनके उल्लेख मात्र की आवश्यकता नहीं है। अंत में, यह द्रष्टव्य है कि रूपिमों का क्रम प्रायः मनमाना ही होता है जबकि इस दोष का रूपावलीय विवेचन में, जहाँ अभिलक्षण क्रमित नहीं रहते हैं, परिहार होता है।

पारंपरिक रूपावलीय व्यवस्थापना का रूपिमीय अनुक्रमों में आधुनिक वर्णनवादी भाषा विज्ञानकों द्वारा किए पुनर्विश्लेषण का मुझे कोई भी अपेक्षाकृत लाभ नहीं दिखाई पड़ता है। अतएव यह एक कुमंत्रित सैद्धान्तिक व्यवस्थापन प्रतीत होता है।

अपने विवेचन के ढांचे में—अभिलक्षणों के शब्दों में रूपावलीय विश्लेषण अथवा अनुक्रमिक रूपिमीय विश्लेषण—दोनों ही उपलब्ध हैं और जो भी वाक्य-विन्यासीय अथवा स्वनप्रक्रियात्मक व्यवस्था के कुछ पक्षों का इष्टतम और सर्वाधिक सामान्य कथन दे सकेगा उसे प्रयुक्त किया जा सकेगा। ऐसा लगता है कि रूपसाधक व्यवस्था में, रूपावली विश्लेषण के अनेक लाभ हैं और उसे अधिक पसन्द करना चाहिए यद्यपि ऐसे अवसर भी मिलेंगे जहाँ कुछ समझौता करना होगा।[30] इससे अधिक निश्चित कहना कठिन है क्योंकि रूपसाधक व्यवस्थाओं के सूक्ष्म और सिद्धान्त पुष्ट वर्णन देने के अत्यन्त कम प्रयास हुए हैं और जो हुए हैं उन में से कदाचित् ही यहाँ विवेच्य सैद्धान्तिक प्रश्नों पर प्रकाश डाल पाए हैं।[31]

अगर हम यह मान लें कि रूपावलीय समाधान ही सही समाधान हैं, तो हमें रचनांतरण-घटकों में नियम देने होंगे जो कोशीय एकांश की अभिलक्षण मैट्रिक्स को परिवर्तित और परिवर्धित कर सकें। उदाहरण के लिए कारक का अभिलक्षण (या कारक के अभिलक्षण) सामान्यतया उन नियमों से निर्दिष्ट हों जो अनेक रचनांतरण नियमों के प्रयुक्त हो जाने के बाद लगें (देखिए अध्याय 2, टिप्पणी 35) इसी प्रकार अन्विति के नियम स्पष्टतया रचनांतरण घटक के अंग बनते हैं (इस सम्बन्ध में तुलना कीजिए, पोस्टल, 1964 a, पृ० 43 और आगे) और ये नियम पदबंध चिह्नकों में वे विशिष्ट अभिलक्षण जोड़ते हैं जो विशेष रचनांगों में प्रयुक्त होते हैं और उनकी स्वनप्रक्रियात्मक मैट्रिक्सों को अधिकृत करते हैं। (30) के सम्बन्ध में, उदाहरणार्थ, व्याकरण में अन्विति-नियम अवश्यमेव होने चाहिए जो [Article (आर्टिकल] में विशेष्य संज्ञा के [Gender (लिंग] [Number (वचन] और [Case (कारक] के सभी अभिलक्षण-वैशिष्टयों को निर्दिष्ट करते हों। इस प्रकार एक ऐसा नियम बनना चाहिए जो इस रूप का हो सकता है :

(32)
$$\underset{\text{(आर्टिकल)}}{\text{Article}} \rightarrow \left\{ \begin{array}{l} \alpha \text{ Gender (लिंग)} \\ \beta \text{ Number (वचन)} \\ \gamma \text{ Case (कारक)} \end{array} \right\} / \ldots \left\{ \begin{array}{ll} +\text{N} & \text{(संज्ञा)} \\ \alpha \text{ Gender} & \text{(लिंग)} \\ \beta \text{ Number} & \text{(वचन)} \\ \gamma \text{ Case} & \text{(कारक)} \end{array} \right\},$$

जहाँ Article (आर्टिकल)........N (सं) एक NP (संप) है।

इस नियम की व्याख्या यह की जाती है कि यह बलपूर्वक कहना है कि (X, Article (आर्टिकल), Y, N,Z) में विश्लेषणीय शृंखला में जहाँ द्वितीय + तृतीय + चतुर्थ तत्वों से NP (संप) बनता है, द्वितीय तत्व के कोटि [α Gender (लिंग)], [β Number(वचन)] और [γCase(कारक)] में निर्दिष्ट किया जाता है यदि चतुर्थ तत्व इन कोटियों का है, और [α, β, γ,] चर (परिवर्त) है और पूर्ण संख्याएँ उनकी परास में हैं। यह नियम इस प्रकार स्थापित करता है कि आर्टिकल संज्ञा के साथ, लिंग, वचन, और विभक्ति के विषय में अन्विति रखता है, विशेषतया, नियम (32)। यदि (30) में अभिलक्षण [I Gender (लिंग)], [2 Number (वचन)], [2 Case (कारक)] है तो रचनांग निश्चायक को निर्दिष्ट करता है।[32] यह रचनांग, इस प्रकार कोटिबद्ध होकर, स्वनप्रक्रिया के नियमों से /der/ में रूपांतरित हो जाएगा।

नियम (32) सामान्य प्रकार का एक रचनांतरण नियम है। अन्तर केवल यह है कि यह विशिष्ट अभिलक्षणों, न कि केवल अ-कोशीय रचनांगों को, प्रस्तुत करता है। इस प्रकार, अभिलक्षणों की भूमिका रचनांगों और रचनांतरण नियमों की सक्रिया की दृष्टि से सच्ची कोटियों के बीच की है और यह बिल्कुल स्वाभाविक है। रचनांतरणों के सिद्धान्त को इस प्रकार विस्तारित करने में कि वह (32) ऐसे पारम्परिक अन्विति-नियमों को उपयुक्त रूपायन देने वाले नियमों के व्यवस्थापन की गुंजाइश रखे, कोई कठिनाई नहीं है। अभिलक्षणों को रचनांगों के अवयव-तत्व मानते हुए रचनांतरण नियम, वस्तुतः अन्त्य प्रतीकों को कुछ सीमित रीति से पुनर्लेखित करते हैं।

रूपात्मक दृष्टि से (32) जैसे अन्विति-नियम स्वनप्रक्रियात्मक घटक के समीकरण नियमों के अत्यन्त सदृश हैं। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी में (और अनेक अन्य भाषाओं में) नासिक्य ध्वनियाँ स्पर्श के पूर्व वैषम्यहीन (उदासीन) हो जाती हैं और इस प्रकार शब्द lump, lint, link, send, ring आदि प्रविष्टि में /liNP/,/liNt/,/liNk/, /seNd/,/riNg/ से निरूपित होंगे, जहाँ /N/[+ Nasal] और अन्य प्रतीक भी स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षणों के कुछ समुच्चयों के संक्षिप्तरूप हैं। नासिक्य परवर्ती-व्यंजन के साथ उदात्तता और दृढ़ता के अभिलक्षणों की दृष्टि में समीकृत हो जाता है, और इस प्रकार हमें यह नियम मिलता है :

$$(33)\quad \underset{\text{नासिक्य}}{[\text{Nasal}]} \rightarrow \begin{bmatrix} \alpha \ \text{grave उदात्त} \\ \beta \ \text{compact दृढ़} \end{bmatrix} / \!-\! \begin{Bmatrix} +\text{Consonantal (व्यंजन)} \\ \alpha \ \text{grave (उदात्त)} \\ \beta \ \text{Compact (दृढ़)} \end{Bmatrix}$$

और इसकी व्याख्या (32) के समान ही होती है ।[33] इस प्रकार (33) यह स्थापित करता है कि अभिलक्षण [α grave(उदात्त] और [β compact(दृढ़] इस[+ nasal (नासिक्य] में जोड़े जाते हैं जो [α grave (उदात्त] [β Compact (दृढ़] व्यंजन के पूर्व आता है, जहाँ α β की परास (+, −) पर है । दूसरे शब्दों में यह कहता है कि नासिक्य ओष्ठ्य के पूर्व/m/, दन्त्य के पूर्व/n/, कोमलतालव्य के पूर्व/η/(जहाँ कुछ स्थितियों में संघर्ष व्यंजन लुप्त हो जाता है और/siη#/आदि रूप मिलते हैं) हो जाता है (जहाँ मैंने (33) के अपेक्षित प्रसंग के पूरे-पूरे कथन नहीं दिए हैं) ।

नियम (32) के सम्बन्ध में, जोडे हुए अभिलक्षण, प्रकटतया, केवल वे अभिलक्षण हैं जो अकोशीय एकांश निश्चायक से सम्बद्ध हैं (किन्तु, देखिए, टिप्पणी 32) । अन्य अन्विति नियम पूर्व विद्यमान अभिलक्षण मैट्रिक्स का विस्तार करते हैं—उदाहरणार्थ, वह नियम जो संज्ञा के अभिलक्षणों को विशेषक विशेषण के लिए विनिर्दिष्ट करता है । विशेषण की, एक कोशीय एकांश होने के कारण, अपनी स्वतंत्र अभिलक्षण मैट्रिक्स है जो अन्विति नियम द्वारा विस्तार प्राप्त करती है । दो स्थिति में विशेषण विशेष्य पूर्व स्थान पर एक रचनांतरण नियम द्वारा प्राप्त होता है और उसके अभिलक्षणों के अन्तर्गत उसके अन्तर्निष्ठ अभिलक्षण (जो कोशीय प्रविष्टि में दिए जा चुके हैं) और कोशीय नियम द्वारा स्थापनापन्न मिश्र प्रतीक से सम्बद्ध अभिलक्षण आते हैं ।

ऐसा लगता है कि रूपसाधक व्यवस्थाओं के वर्णन का पारस्परिक उपागम सहजतः उस ढाँचे में रूपायित किया जा सकता है जिसकी हमने स्थापन की है । इसके अतिरिक्त, यही रूपसाधक व्यवस्थाओं की व्याख्या की सर्वाधिक रीति दिखायी पड़ रही है ।

शब्द साधक रूप प्रक्रिया की इससे कहीं अधिक झंझटी समस्याओं को लेने के पूर्व, हम कुछ अतिरिक्त समस्याओं का उल्लेख करना चाहेंगे, जो तब उठती हैं जब हम रूपसाधक अभिलक्षणों पर अधिक विस्तार से विचार करते हैं । हम एक कोशीय एकांश को रचनप्रक्रियात्मक, आर्थी और वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों का एक समुच्चय मानते रहे हैं । जब कोशीय एकांश पदबंध-चिह्नक में अन्तः प्रविष्टि किया जाता है तो उसे कुछ अन्य अभिलक्षण भी मिल जाते हैं जो कोश में अन्तर्निष्ठ नहीं हैं । इस प्रकार यदि हम अध्याय 2, § 3 में वर्णित कोशीय अन्तः प्रविष्टि की पद्धति को अपनाते हैं, तो प्रासंगिक अभिलक्षण कोशीय प्रविष्टि में पहले से दिए अभिलक्षणों के साथ जोड़े जा सकते हैं, इसके अतिरिक्त [α Number (वचन] जैसे

अभिलक्षरण, जैसे कि हम देख चुके हैं पदबंध-चिह्नक में अन्तर्निष्ठ है न कि कोशीय एकांश में और तभी रचनांग का अंग बनते हैं जब वह पदबंध-चिह्नक में अन्तः प्रविष्ट होते हैं। इसके अतिरिक्त, कारक-आयाम से सम्बद्ध अभिलक्षरण निश्चय ही रचनांग में कुछ बाद वाले रचनांतरणों द्वारा जोड़े जाते हैं (चूँकि कारक प्रायः बहिस्तलीय संरचना के पक्ष पर निर्भर रहता है, न कि गहन संरचना के–किन्तु तुलना कीजिए अध्याय 2, टिप्पणी 35) और कुछ अभिलक्षरण जो कि संज्ञा में अन्तर्निष्ठ है (जैसे कि लिंग) क्रियाओं और विशेषणों में केवल रचनांतरणों द्वारा निर्दिष्ट होते हैं। हम यह मान कर चलते रहे हैं कि ये विविध संक्रियाएँ केवल रचनांग को घटित करने वाले अभिलक्षरणों के समुच्चय का विस्तार करती हैं। किन्तु अनेक समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं यदि हम इस अभिग्रह को निरन्तर एक निष्ठता से मानते रहें।

हमने अनेक स्थानों पर (अध्याय 3, टिप्पण 1 और 13, और पृष्ठ 139 और तदनंतर) इसका उल्लेख किया है कि लोपन ऐसे होने चाहिए जो पुनर्लभ्य हों, और यह सुझाव दिया है कि यह प्रतिबंध, जिसे हम "उद्घर्षण रचनांतरण" कहते हैं उससे सम्बद्ध निम्नलिखित रूढ़ि द्वारा निरूपित किया जा सकता है: उद्घर्षण रचनांतरण अपने मुख्य विश्लेषण के पद X से अपने ही मुख्य विश्लेषण के पद Y को तभी उद्घर्षित कर सकते हैं जब X और Y सर्वांगसम हों कोशीय एकांशों में "सर्वांगसमता" का तात्पर्य अभिलक्षरण रचना का सुदृढ़ एक-सा होना है।

कुछ स्थितियों में इस निर्णय के उचित परिणाम होते हैं। उदाहरणार्थ (पृ० 140 पर) विवेचित सम्बन्धवाची रचनांतरण पर विचार करें। जिस प्रकार "I saw the [# the man was clever #] boy" (मैंने लड़का [व्यक्ति चतुर था] देखा) शृंखला का व्यापकीकृत पदबध-चिह्नक किसी भी सुरचित बाह्य संरचना की अन्तर्निहित गहन संरचना नहीं है और इस कारण किसी भी वाक्य के लिए आर्थी निर्वचन प्रस्तुत नहीं करती है। (देखिए, पृष्ठ 132-133) अतएव "I saw the [# the boys were clever #] boy (मैंने लड़का [लड़के चतुर थे) देखा] का सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक किसी भी वाक्य के मूल में नहीं है। यह इस कारण है कि तत्व boys (लड़के) अभिलक्षरण [+Plural बहुवचन] से युक्त) तत्व boy (लड़का) अभिलक्षरण [−Plural (बहुवचन)] से युक्त) के साथ सर्वांगसम नहीं है और यह इसी प्रकार है जिस प्रकार तत्व man (व्यक्ति) तत्व boy (लड़का) के साथ सर्वांगसम नहीं है। अतएव इन दोनों में से किसी भी उदाहरण में सम्बन्धवाची रचनांतरण प्रयुक्त नहीं हो सकता है।

किन्तु सर्वत्र इतनी सरल स्थिति नहीं मिलती है। उन नियमों पर विचार किया जाए जो नाना प्रकार की तुलनात्मक रचनाएँ देते हैं, और विशेषतः

निम्नलिखित प्रकार के वाक्यों की व्याख्या करते हैं :

(34) John is more clever than Bill (जॉन बिल से अधिक चतुर है।)

इस उदाहरण में पूर्व रूढ़ियों को अपनाते हुए (35) में दी आधारभूत गहन संरचना से वाक्य रचित है।

(35)
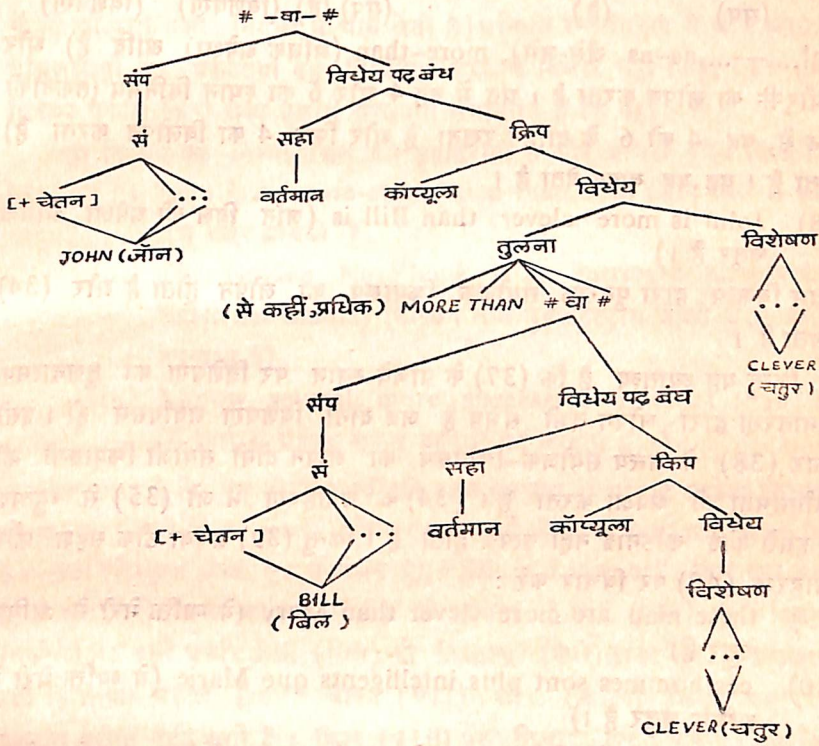
(35) के कोशीय रचनांगों के अभिलक्षण स्फुट रीति से नहीं दिए गए हैं, बल्कि संस्थिति....द्वारा सूचित किए गए हैं। पूर्व वर्णित रीति से (34) को (35) से व्युत्पन्न करने में, रचनांतरण नियम सर्वप्रथम सर्वाधिक गहनतम आधायित आधार पदबंध चिह्नक "Bill is clever (बिल चतुर है)" प्रयुक्त होंगे। इसके बाद वे पूर्ण संस्थिति (35) पर प्रयुक्त होते हैं जिस की इस दशा में (अनेक परिष्कारों को छोड़ कर) निम्नलिखित अंत्य शृंखला है।

(36) John is more than [#Bill is clever #] clever [जॉन कहीं अधिक (बिल चतुर है) चतुर है]

तुलनात्मक रचनांतरण, जो अब प्रयुक्त होगा, एक उद्घर्षक संक्रिया के रूप में

निरूपित हो सकता है जो आधात्री वाक्य के विश्लेषण को आधायित वाक्य के तद्रूप विशेषण को लुप्त करने में प्रयुक्त करता है[34]।

इस प्रकार वह निम्नलिखित रूप की शृंखला पर प्रयुक्त होता है :

(37) NP (संप) [1] — is (है) [2] — ..... [3] —#NP is–Adjective# (संप) (है) (विशेषण) [4, 5] –Adjective (विशेषण) [6]

(जहाँ....—....as–as जैसे-जसे), more–than (अधिक अपेक्षा) आदि है) और 5 और# का लोपन करता है। अंत में वह 4 और 6 का स्थान विनिमय (तकनीकी दृष्टि से, वह 4 को 6 के दाहिने रखता है और फिर 4 का विलोपन करता है) करता है। वह यह वाक्य देता है।

(38) John is more clever than Bill is (जॉन बिल की अपेक्षा अधिक चतुर है।)

अंतिम विकल्प द्वारा पुनरुक्त संयोजक क्रियारूप का लोपन होता है और (34) मिलता है ।

किन्तु यह ध्यातव्य है कि (37) के पाँचवे स्थान पर विशेषण का तुलनात्मक रचनांतरण द्वारा लोपन तभी संभव है जब दोनों विशेषण सर्वांगसम हों। इसी प्रकार (38) के अन्त्य संयोजक–क्रियारूप का लोपन दोनों संयोजी क्रियारूपों की सर्वांगसमता की अपेक्षा करता है। (34) के उदाहरण में जो (35) से व्युत्पन्न हैं, इससे कोई कठिनाई नहीं उत्पन्न होती है। किन्तु (39) अथवा ठीक सदृश फ्रेंच उदाहरण (40) पर विचार करें :

(39) these man are more clever than Mary (ये व्यक्ति मेरी से अधिक चतुर हैं)

(40) ces hommes sont plus intelligents que Marie (ये व्यक्ति मेरी से अधिक चतुर हैं।)

(39) के उदाहरण में, विशेषण का लोपन सीधा सादा है किन्तु हमारी लोपन-रूढ़ियों में ऐसा होना चाहिए कि संयोजी-क्रियारूप का लोपन न हो सके क्योंकि आधायित वाक्य में उसके अभिलक्षण [—Plural] (बहुवचन) हैं जब कि आधात्री [—Plural] (बहुवचन) हैं। इसके अतिरिक्त (40) के उदाहरण में आधायित वाक्य के विश्लेषण के लोपन को अवरुद्ध करना है क्योंकि वह आधात्री वाक्य के विश्लेषण से लिंग-वचन में भिन्न हैं।

इन पर्यवेक्षणों से यह संकेत मिलता है कि रचनांग को कुछ अन्तर्निष्ठ और कुछ रचनांतरण से प्राप्त अभिलक्षणों का समुच्चय मात्र मानना और पदबंध चिह्नक में अन्त: प्रवेश का परिणाम मानना सही नहीं होगा। विशेषत:, ऊपर दिए उदाहरणों से ऐसा लगता है कि अन्विति रचनांतरणों से जोड़े अभिलक्षण रचनांगों

के उस अर्थ में अंग नहीं होते हैं जिस प्रकार वे जो उस के अन्तर्निष्ठ हैं या वे जो पदबंध-चिह्नक में प्रविष्ट होने पर ग्रहण किए जाते हैं। इस प्रकार, संबंधवाची रचनांतरण में, संज्ञा का बहुवचनत्व (यह वह अभिलक्षण है जो संज्ञा रूप पदबंध-चिह्नक में प्रविष्ट होने पर ग्रहण करता है) एक ऐसा अभिलक्षण है जिस पर, यह निर्धारण करने के लिए कि वह अन्य संज्ञा रूप से सर्वांगसम है या नहीं,जैसा कि अभी देखा है, विचार किया जाता है किन्तु, विशेषणों और संयोजी क्रियारूपों में (क्रियाओं में भी जो इसी प्रकार नियमों में भाग लेती हैं) अन्विति रचनांतरण से जोड़े रूपसाधक अभिलक्षणों पर प्रकटतया यह निर्धारण करने में विचार नहीं किया जाता है कि विवेच्य एकांश किसी अन्य एकांश सुदृढ़तया सर्वांगसम है कि नहीं। [35]

इस निष्कर्ष को निम्नलिखित जैसे उदाहरणों से और अधिक पुष्टि मिलती है :

(41) (i) John is a more clever man than Bill (जॉन बिल से अधिक एक चतुर आदमी है)

(ii) The **Golden Note book** is an intricate a novel as **Tristram Shandy** (गोल्डन नोट बुक ट्रिस्ट्राम शैण्डी जैसा एक गूढ़ उपन्यास है)

(iii) I know several more successful lawyers than Bill (मैं बिल से अधिक सफल वकीलों को जानता हूँ।)

यह स्पष्ट है कि इन तीनों वाक्यों की गहन संरचना में आधार पदबंध चिह्नक हैं जो क्रमशः "Bill is a man" (बिल एक आदमी है), "Tristram Shandy is a novel (ट्रिस्ट्राम शैण्डी एक उपन्यास है), "Bill is a lawyer" (बिल एक वकील है) के मूल में है। इस प्रकार (41iii) की व्यंजना है Bill (बिल) एक lawyer (वकील) है; इसी प्रकार Bill (बिल) को "Mary" (मेरी) द्वारा (41i) विस्थापित नहीं किया जा सकता है। [36] वाक्य (41i) और (41ii) किसी प्रकार की समस्या प्रस्तुत नहीं करते हैं। किन्तु (41ii) पर विचार करें। रचनांतरण नियम वस्तुतः व्यवस्थापित हो चुके हैं और यह स्पष्ट है कि हम आधारभूत संरचना में "Successful" (सफल) और a lawyer (एक वकील) का "Bill" (बिल) के विधेयांश में लोपन कर रहे हैं। किन्तु "lawyer" (वकील) का लोपन, विशेषतः, पूर्व विवेचित सर्वांगसमता निर्धारक के भीतर ही किया जा सकता है और शृंखला जिस के साथ इस की तुलना की जा रही है "a lawyer" (एक वकील) नहीं है बल्कि उसका बहुवचनीकृत रूप "lawyers" (वकीलों) [37] है जो आधार शृंखला "I know several [#S#] lawyers" (मैं अनेक वकीलों को जानता हूं) से प्राप्त हुआ है। अतएव यहाँ एक ऐसा उदाहरण है जहाँ बहुवचनत्व संज्ञाओं का भेदक

गुण-धर्म नहीं माना गया है जबकि पूर्व विवेचित संबंध वाचीकरण में ऐसा माना गया था और बहुवचन के अभिलक्षण का अंतर लोपन संक्रिया को अवरुद्ध करने के लिए पर्याप्त था। यह निर्णायक अन्तर प्रकटतया यह है कि इस उदाहरण में विवेच्य संज्ञा पदबंध विधेय स्थान पर है इस कारण उस का वचन निर्धारण अन्तर्निष्ठतया न होकर (जैसा संबंधवाचीकरण में हुआ था।) अन्विति रचनांतरण द्वारा होता है। इस प्रकार हमें ये वाक्य "They are a lawyer" (वे एक वकील है), "Bill is several lawyers" (बिल अनेक वकील है) नहीं मिल सकते हैं और इस तरह के तथ्य यह प्रदर्शित करते हैं कि विधेयान्तर्गत नाभिकों को अवश्यमेव वचन की दृष्टि से निरपेक्ष होना चाहिए। अतएव "I know several **lawyers**" (मैं अनेक वकीलों को जानता हूँ) और "Bill is a **lawyer**" (बिल एक वकील है) के रेखांकित संज्ञापदबंधों का वचन की दृष्टि से संघर्ष "ces hommes sont **intelligents**" (ये आदमी चतुर हैं) और "Marie est **intelligente**" (मेरी चतुर है) के रेखांकित विशेषणों के लिंगवचन विषयक संघर्ष के समतुल्य है (देखिए (40)। दोनों उदाहरणों में, ये संघर्षी अभिलक्षण अन्विति रचनांतरणों द्वारा प्रस्तुत किए होते हैं।

इन उदाहरणों से दो निष्कर्ष निकलते हैं। प्रथमत:, कोशीय रचनांगों में रचनांतरण द्वारा प्रविष्ट अभिलक्षणों पर निर्धारण करते समय विचार नहीं किया जाता है जब लोपन स्वीकृत है। दूसरे शब्दों में रचनांग को अभिलक्षणों के दो समुच्चयों के रूप में मानना चाहिए—एक समुच्चय के अन्तर्गत वे अभिलक्षण आते हैं जो कोशीय समुच्चय रचनांतरणों से प्राप्त अभिलक्षणों का है। पूर्ववर्णित रीति से केवल प्रथम प्रविष्टि अथवा कोशीय अन्त: प्रविष्ट के स्थान में अन्तर्निष्ठ है, और दूसरा समुच्चय लोपन योग्यता के निर्धारण में विचारित होता है। द्वितीयत:, लोपन, योग्यता के निर्धारण में सर्वांगसमता की नहीं बल्कि परिच्छेदक अभिलक्षण सिद्धान्त (देखिए अध्याय 2, § 2.3.2) के अर्थ में अभेदत्व की अपेक्षा है इस प्रकार, "I know several lawyers" (मैं अनेक वकीलों को जानता हूँ)—"Bill is a lawyer" (बिल एक वकील है) के उदाहरण पर पुन: विचार करें। परवर्ती वाक्य का विधेयान्तर्गत-नामिक आधार संरचना में एक वचन नहीं है : बल्कि वह वचन की दृष्टि से ठीक उसी प्रकार अविनिर्दिष्ट है जिस प्रकार रचनांग King, find, lamp आदि के कोशीय निरूपणों में उच्चारण स्थान की दृष्टि से नासिक्य अविनिर्दिष्ट है। अतएव वह "I know several lawyers" (मैं अनेक वकीलों को जानता हूँ) के तदनुरूप नामिक तत्व के साथ सर्वांगसम नहीं है; बल्कि वह उससे अभिन्न है और उदाहरण से ऐसा इंगित मिलता है कि यह लोपन को प्रयुक्त कर देने के लिए पर्याप्त है[38]।

यह उल्लेखनीय है कि रचनांगों को इस विश्लेषण का, जिसमें अभिलक्षणों के समुच्चय युग्म की स्थापना की गई है, व्याकरण के नियमों में किसी प्रकार वास्तविक वर्णन और उल्लेख आवश्यक नहीं है क्योंकि वह प्रकटतया व्याकरण के रूप से संबद्ध सामान्य रूढ़ि द्वारा निर्धारित होता है। दूसरे शब्दों में, उसे एक भाषा–सार्वभौम के रूप में विचार करने के लिए हम परीक्षणात्मक रूप से प्रस्तावित करते हैं यद्यपि यह मानना होगा कि बहुत ही हलके साक्ष्य पर हम ऐसा कर रहे हैं (किन्तु (देखिए अध्याय 2, टिप्पण 2)। यदि यह प्रस्ताव सही है तो रचनांगों का विश्लेषण जिसका हमने सुझाव दिया है उद्घर्षण रचनांतरणों की कार्यकारिता का एक सामान्य निर्धारक रहेगा। अभी प्रस्तावित किया प्रस्ताव का ऊपर से ठीक लगने वाला विकल्प केवल यही है कि रचनांतरण नियमों के पूर्व प्रस्तावित प्रयोगक्रम की सामान्य स्थिति का पुनरीक्षण किया जाए। यह प्रसंभाव्य होगा, यह मैं नहीं जानता; किन्तु कम से कम अभी विवेचित प्रस्ताव स्पष्टतया प्राथमिकता पा सकता है।

संक्षेप करते हुए,हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हुए से लगते हैं कि लोपन में अभेदत्व की; न कि सर्वांगसमता की अपेक्षा है और अभेदत्व निर्धारित करने में रचनांग के केवल उन अभिलक्षणों पर ध्यान देना है जो या तो कोशीय प्रविष्टि या वाक्य में अन्तःप्रविष्ट के स्थान की दृष्टि से अन्तर्निष्ठ है। रूपात्मक दृष्टि से हम यह कह सकते हैं कि रचनांग को दो अभिलक्षण–समुच्चय से युक्त मानना चाहिए–एक समुच्चय 'अन्तर्निष्ठ' अभिलक्षणों का है जो कोशीय प्रविष्टि अथवा वाक्य स्थान से सम्बद्ध है, और दूसरा समुच्चय रचनांतरणों द्वारा आग्रत "अन्तर्निष्ठेतर" अभिलक्षणों का है। अब उद्घर्षण संक्रियाओं का सामान्य सिद्धान्त इस प्रकार है– **मुख्य विश्लेषण का पद X मुख्यविश्लेषण के ही पद Y के उद्घर्षण में प्रयुक्त किया जा सकता है यदि रचनांग X का अन्तर्निष्ठ–अंश रचनांग Y के अन्तर्निष्ठ अंश से अभिन्न हो** किन्तु यह ध्यातव्य है कि यह अत्यंत स्वाभाविक निष्कर्ष है। इस निर्धारण को अभिप्रेरित करने वाली मूल अन्तः प्रज्ञा यह भी है कि लोपन,किसी न किसी अर्थ में पुनर्लभ्य होने चाहिए, और रचनांग के अन्तर्निष्ठेतर अभिलक्षण ठीक-ठीक वही हैं जो प्रसंग से निर्धारित होते हैं और इस कारण लोपन पश्चात् भी पुनर्लभ्य है। इसी प्रकार, संक्रिया को अभेदत्व पर, न कि सर्वांगसमता पर, आधारित करना स्वाभाविक है क्योंकि आधारभूत संरचनाओं (जैसे विधेय भाग में वचन) में अविनिर्दिष्ट अभिलक्षण भी वाक्य निर्वचन में कोई स्वतंत्र योगदान नहीं देते हैं (क्योंकि वे तत्वतः समधिकता नियमों द्वारा जोड़े जाते हैं) और वस्तुतः प्रसंग का ही प्रतिबिम्ब हैं। इस प्रकार वे इस अर्थ में पुनर्लभ्य हैं कि प्रसंग जो उन्हें निर्धारित करता है विवेच्य एकांश के लोपन के बाद भी शृंखला में विद्यमान रहता है।

अतएव ऊपर रेखांकित निर्धारक "लोपन की पुनर्लभ्यता" के पर्याप्त अर्थ रूपायित करता है।

तुलनात्मक रचनांतरणों से सम्बद्ध प्रश्नों के अन्तिम समुच्चय पर अब विचार किया जा सकता है। मान लें अध्याय 2, § 3 में प्रस्तावित कोशीय अन्तः प्रविष्टि की रीति को अपनाए और उसे अभिन्नता पर न कि अध्याय 2, के § 4.3 के प्रस्तावों पर आधारित करें। तो पदबन्ध-चिह्नक (35) में विशेषण clever (चतुर) की प्रत्येक घटन में पश्च चेतन (अर्थात् [+ [+ Animate]—]) जैसे अभिलक्षण आधार घटक के चयनात्मक नियमों द्वारा जुड़े हुए मिलेंगे (इस स्थिति में, अध्याय 2 का (57XV) इस अध्याय के (13) के रूप में संशोधित किया जा चुका है)। किन्तु हमें स्पष्टतया "John is heavier than this rock" (जॉन इस चट्टान से भारी है) जैसे वाक्यों को बनने देना चाहिए और इस उदाहरण में heavy (भारी) का आधात्री-वाक्य में अभिलक्षण [post-Animate (पश्च-चेतन)] है और (35) के तदनुरूप पदबंध-चिह्नक के आधायित वाक्य में (यह पदबंध चिह्नक (35) से सर्वांगसम होगा केवल इस भेद के कि (35) में clever (चतुर) की प्रत्येक उपलब्धि heavy (भारी) से विस्थापित होगी; और अभिलक्षण [+ Animate चेतन]...., से युक्त Bill(बिल,) rock (चट्टान) से संलग्न अभिलक्षण [+ Animate चेतन] ...के साथ the rock (चट्टान) द्वारा विस्थापित होगा)। अतएव, जब हम तुलनात्मक रचनांतरण प्रयुक्त करते समय heavy (भारी) की दोनों उपलब्धियों की तुलना करते हैं तो वे अभिलक्षण रचना में भिन्न दिखाई पड़ते हैं—एक में अभिलक्षण [post-Animate](पश्च-चेतन) है तो दूसरे में [post-Inanimate](पश्च-अचेतन)/ वर्तमान स्थिति में, अभिलक्षण-रचना का यह अन्तर अभिलक्षण सिद्धान्त के तकनीकी अर्थ में एक दूसरे से दोनों एकांशों को भिन्न नहीं करता है, क्योंकि ऐसी स्थिति नहीं है कि किसी अभिलक्षण [F] की दृष्टि से एक [+F] से चिह्नित है और दूसरा [−F] से चिह्नित हो। इसके अतिरिक्त विशेषण के इन प्रसंगगत अभिलक्षणों को पिछले अनुच्छेद के अर्थ में अन्तर्निष्ठेतर मानना अधिक स्वाभाविक होगा; इसलिए लोपन अनुमति प्राप्त है।

फिर भी उदाहरणों का एक वर्ग ऐसा है जो यह संकेत करता है कि कुछ उदाहरणों में दोनों रचनांगों की [post-Animate] (पश्च-चेतन) ऐसे अभिलक्षणों की दृष्टि से, रचना का अन्तर लोपन को अवरुद्ध करने में पर्याप्त होता है। निम्नलिखित जैसे वाक्यों पर विचार करें :

(42) (i) John is as sad as the book he read yesterday (जॉन पुस्तक के समान दुखी है, जिसे उसने कल पढ़ा)

(ii) he exploits his employees more than oppurtunity to

please (वह अपने नौकरों को प्रसन्न करने से कहीं अधिक शोषण करता है)

(iii) is Brazil as independent as the continuum hypothesis ?
(क्या ब्राजील अखंडतम कल्पना जैसा स्वतंत्र है ?)

स्पष्टतया, ये विचलन वाक्य हैं और वर्णनात्मतया पर्याप्त व्याकरण में इन्हें अवश्य चिह्नित होना चाहिए। प्रत्येक स्थिति में; लोपन-प्राप्त एकांश चयनात्मक अभिलक्षणों के सम्बन्ध में तुलनीय एकांशों से भिन्न होता है। इस प्रकार, sad (दुख) (42i) के मातृक-वाक्य में [post-Animate] (पश्च-चेतन) है और आधायित वाक्य में [post-Animate] (पश्च-अचेतन) है, और लोपन रोकता है। उन उदाहरणों में अकेला विकल्प यह मानना होगा कि (42) के प्रत्येक उदाहरण में दो समनामीय कोशीय प्रविष्टियाँ कार्य में आ रही हैं[39]। किन्तु इस प्रकार के उदाहरणों को प्रस्तुत करते समय हम समनामता की समस्याओं और धूमिलता से आवृत अर्थ-परास की समस्याओं में पड़ जाते हैं और उनसे वर्तमान में कोई भी निष्कर्ष नहीं निकला जा सकता है।

2.3 शब्द साधक प्रक्रियाएँ

किसी भी प्रकार के प्रजनक-व्याकरण (अर्थात् स्पष्टकारी व्याकरण) में शब्द साधक प्रक्रियाएँ रूपसाधक प्रक्रियाओं की तुलना में अधिक समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। यह इस कारण है कि वे प्रकारात्मक रूप से छुटपुट हैं और अर्थ-उत्पादक हैं। हम अनेक **उदाहरणों** पर संक्षेप में विचार करेंगे किन्तु उठने वाली समस्याओं के समाधान करने का कोई संतोषजनक रीति न निकाल पाएँगे।

जहाँ शब्दसाधक प्रक्रियाएँ उत्पादक हैं वहाँ वस्तुत: कोई गम्भीर कठिनाई नहीं है। उदाहरण के लिए "their destruction of the property...." (उनकी सम्पत्ति का विनाश),"their refusal to participate...." (उनकी सम्मिलित होने की अस्वीकृत) जैसे वाक्यों को बनाने वाले नामिक-रचनांतरणों पर विचार करें। स्पष्टतया destruction (विनाश), refusal (अस्वीकृति) आगे शब्द-शब्द कोश में इस रूप से प्रविष्ट नहीं किए जाएँगे। बल्कि, destroy (विनाश करना) और refuse (अस्वीकृत करना) शब्द कोश में ऐसे अभिलक्षण-निर्देश के साथ प्रविष्ट किए जाएँगे जो (परवर्ती स्वनप्रक्रियात्मक नियमों द्वारा) गृहीत स्वनात्मरूप को, नामिकीकृत वाक्यों में आने पर, निर्धारित करेंगे। Ś द्वारा अधिकृत संस्थिति "they destroy the property"(वेसम्पत्ति का विनाश करते हैं)रखने वाले सामान्यीकृत पदबंध-चिह्नक के व्युत्पादन को उचित सोपान पर नाभिक-रचनांतरण प्रयुक्त होगा[40] और अंततोगत्वा पदबंध-चिह्नक (43) बनेगा जहाँ व्यर्थ का विस्तार दिया गया है[41] और जहाँ

$F_1....F_m$, $G_1....$, G_n विनिर्दिष्ट अभिलक्षण के लिए हैं। यह कदापि स्पष्ट नहीं है कि destruction (विनाश) और refusal (अस्वीकृति) को संज्ञा के समान "their destruction of the property....." (उनकी सम्पत्ति का विनाश), "their refusal to come...." (उनके आने की अस्वीकृति) में माना जाए (यद्यपि "their refusal surprised me" (उनकी अस्वीकृति ने मुझे विस्मित किया) में जो अंशत: "they refuse" (वे अस्वीकार करते हैं) की आधार श्रृंखला से व्युत्पन्न है refusal (अस्वीकृति) विकल्पतया पूरा-पूरा नामिकीकृत विधेय-पदबंध संज्ञा स्थान

(43)
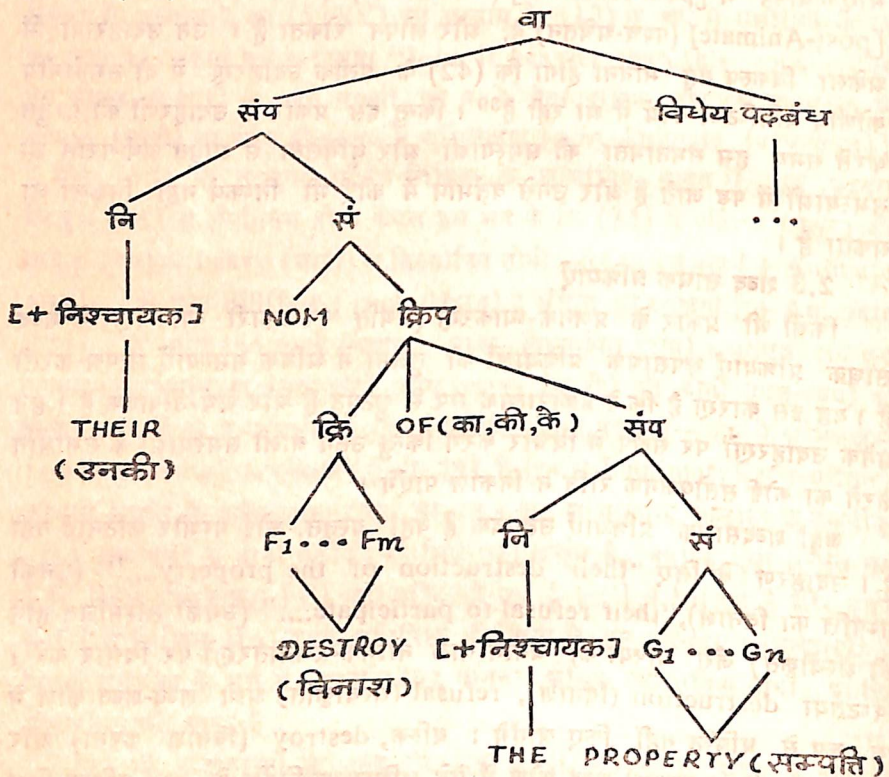
पर स्थिति मानना पड़ेगा। किसी भी दशा में, स्वनप्रक्रियात्मक नियम यह निर्धारित करेगा कि nom destroy (विनाश करना) से विनाश destruction और nom refuse (अस्वीकार करना) से refusal (अस्वीकृति) बन जाता है।[42] उचित प्रभाव के लिए निस्संदेह इन नियमों को कोशीय प्रविष्टियों में एकांशों से सहचरित अन्तर्निष्ठ अभिलक्षणों की अर्थात् ये एकांश nom के किस रूप को लें इसका निर्धारण करने वाले अभिलक्षणों की व्याख्या करनी होगी। इन उदाहरणों में,

प्रस्तावित रूपरेखा वाक्यीय प्रजनक नियमों और आर्थी तथ्य स्वनप्रक्रियात्मक व्याख्या के नियमों को व्यवस्थापित करने के लिए बहुत काफी है।

प्रसंगवश इस पर भी विचार लेना चाहिए कि इन कथनों के प्रकाश में हमें अध्याय 2, उदाहरण (1) "sincerity may frighten John" (ईमानदारी जॉन को भयतीत कर सकती है) के वर्णन में जो उस अध्याय के पूरे विवेचन का आधार रहा है, परिवर्तन करना चाहिए। वस्तुत: sincerity (ईमानदारी) निश्चयत: शब्द समूह में नहीं रखा जाएगा यद्यपि sincere (ईमानदार) रहेगा। क्योंकि sincerity (ईमानदारी) रचनांतरण से रचित है और उसी प्रकार "सदोष-विधेय" है जिस प्रकार "their refusal surprised me" (उनकी अस्वीकृति ने मुझे विस्मित किया) अथवा "the refusal surprised me" (अस्वीकृति ने मुझे विस्मित किया) में refusal (अस्वीकृति) एक "सदोष विधेय" है अर्थात् एक ऐसा रचनांतरण नियम है "John is sincere (of manner)" [जॉन (व्यवहार में) ईमानदार है।] जैसे 'NP-is-Adjective" [संप–विशेषण–है] रचनाओं पर प्रयुक्त होता है और "John's sincerity (of manner)" [जॉन का (व्यवहार की) ईमानदारी] जैसे नामिक-रचनांतरणों को देता है जहाँ "refusal (to come)" (आने की) अस्वीकृति) के समान "sincerity (of manner)" ईमानदारी (व्यवहार की) संज्ञा माना जा सकता है। पदबंध sincerity (ईमानदारी) पूर्ण संज्ञा-पदबंध के रूप में (इस प्रकार जिसका वर्णन यहाँ नहीं दिया जाएगा) आता है जब आधार-भूत वाक्य "NP–is-sincere" [संप. ईमानदार–है] का निर्दिष्ट कर्ता और मातृ का वाक्य जिसमें वह आधायित है बिना अनिश्चित आर्टिकल के हो। विवरण छोड़ते हुए, यह स्पष्ट है कि जैसा कि हमने पहले माना है उससे ठीक विपरीत, sincerity (ईमानदारी) अध्याय 2 के (1) में कोशीय नियम द्वारा प्रस्तुत नहीं होता है और इस कारण वस्तुत: वह अत्यंत सरल वाक्य भी जटिल आधार के रचनांतरण विषयक विकास का परिणाम है।

किन्तु अर्ध उत्पादक प्रक्रियाओं के उदाहरणों पर विचार करें अर्थात् horror, (भय), horrid (भयंकर), horrify (डराना); terror (आतंक), (* terrid) (*आतंकित), terrify (आतंकित करना), candor (निष्पक्ष), candid (प्रकाशमय), (*candify) (*पागना) अथवा telegram (टेलीग्राम), phonograph (फोनोग्राम), gramophone (ग्रामोफोन), आदि, अथवा इस कार्य के लिए अध्याय 2 उदाहरण (1) के frighten (भयभीत करना) जैसे शब्दों की शब्द सिद्धि पर विचार करें। इन उदाहरणों में उस भाँति के किसी शब्द सिद्धि व्युत्पादक सामान्यता के नियम नहीं है जिस प्रकार sincerity (ईमानदारी), destruction (विनाश) आदि में मिले हैं। अतएव ऐसा लगता है कि इन एकांशों को सीधे शब्दसमूह में दिया जाए। किन्तु

यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण निष्कर्ष है चूँकि दोनों आर्थी और स्वनप्रक्रियात्मक व्याख्याओं के दृष्टिकोण से स्पष्टतया इन शब्दों की निरूपित आंतरिक संरचना स्थापित करना महत्वपूर्ण है उनके अर्थ स्पष्टतया उनके रूपिमों के अन्तर्निष्ट आर्थी गुण-धर्मों द्वारा कुछ सीमा तक (अथवा सीमित मात्रा में)पूर्वसूच्य है और यह दिखाना सरल है कि इन एकांशों पर आंतरिक संरचना निर्दिष्ट करना चाहिए, यदि स्वनप्रक्रियात्मक नियमों को उनके स्वनात्म निरूपण रचित करने में उचिततया प्रयुक्त होना है (देखिए-अंग्रेजी के लिए रचनांतरण चक्र पर विवेचन-हॉले और चॉम्स्की, 1960; चॉम्स्की 1962b, चॉम्स्की और मिलर, 1963 : और, विस्तार के लिए हॉले और चॉम्स्की 1968)।

यह उभयतः पाश उदाहरणों के एक बड़े वर्ग में प्रकारात्मक रूप से मिलता है जिनमें उत्पादकता विभिन्न कोटियों की है और यह बिल्कुल स्पष्ट नहीं है कि इसका हल क्या और कैसे निकाला जाए अथवा वस्तुतः क्या कोई ऐसा तदर्थ हलों के अतिरिक्त भी कोई हल है जो पाया भी जा सकता है।[43] कदाचित् इन रिक्तताओं को कम से कम कुछ स्थितियों में आकस्मिक मानना पड़ेगा और व्याकरण में ऐसे सामान्य नियमों का प्रावधान करना होगा जो वास्तविक और अघटित दोनों प्रकार के उदाहरणों को स्वीकार करें। विकल्पतः, शब्दसमूह के सिद्धान्त में कुछ ऐसा विस्तार करना होगा कि कुछ "आंतरिक संगठन" पूर्ववर्णित सामान्य कोशीय नियम के सरल प्रयोग के स्थान पर आ सकें। इस प्रकार telegraph, (टेलीग्राफ), horrify (डराना), frighten (भयभीत करना) को शब्दसमूह में इस प्रकार प्रविष्ट करना होगा :

(44) (i) (tele⁀stem$_1$, [F$_1$,....])

(ii) (stem$_2$⁀ify, [G$_1$,....])

(iii) (stem$_3$⁀en, [H$_1$,....])

और ये एकांश सामान्य कोशीय नियम द्वारा शृंखला में प्रविष्ट होंगे। इसके अतिरिक्त शब्द समूह ये प्रविष्टियाँ भी होंगी :

(45) (i) (graph, [+Stem$_1$....]) (प्रातिपदिक$_1$)

(ii) (horr, [+Stem$_2$.....]) (प्रातिपदिक$_2$)

(iii) (fright,[+N, +Stem$_3$....]) (सं+प्रातिपदिक$_3$)

और ये शृंखलाओं में समाविष्ट होंगे जो (44) द्वारा चयन प्राप्त एकांशों की पूर्वान्त्य शृंखलाओं में पूर्ववर्ती समाविष्टि द्वारा रचित हुई है। रूप प्रक्रिया की दृष्टि से जटिल रूपों में शब्द समूह के भीतर आधार शब्द सिद्धि के ऐसे विस्तारों के अनेक तल होंगे।

किन्तु, वह नियम जो (45) के एकांशों द्वारा $stem_1$ (प्रातिपदिक$_1$) जैसी कोटियों को विस्थापित करता है, बड़ी सावधानी से बनाया जाना चाहिए। इन विस्थापनों पर प्रसंगगत प्रतिबंध लगे रहते हैं (जिनको निर्दिष्ट करना अत्यावश्यक है) क्योंकि ये प्रक्रियाएँ केवल सीमान्त रूप से उत्पादक हैं इस प्रकार $stem_1$ (प्रातिपदिक$_1$) प्रसंग tele–में graph(ग्राफ) scope(स्कोप),phone(फोन) द्वारा विस्थापित होता है, किन्तु प्रसंग phone–(फोन) में scope (स्कोप) अथवा phone (फोन) द्वारा नहीं। यही बात अन्य उदाहरणों में सही है। अधिक गम्भीरता से, शब्द समूह के भीतर के आधार शब्द सिद्धि के ये विस्तार सामान्यतया विश्लेषणीय एकांश की अभिलक्षण रचना पर भी निर्भर होते हैं। इस प्रकार $stem_3$ (प्रातिपदिक$_3$) केवल–en में fright (भयंकर) के रूप में पुनर्लिखित किया जाता है जब (44iii) के अभिलक्षण H_1, H_2.....यह दिखाते हैं कि वह शुद्ध सकर्मक हैं, इत्यादि। दूसरे शब्दों में इस तथ्य का प्राविधान अवश्य होना चाहिए कि frighten (भयभीत करना) उस प्रकार की जैसे redden (लाल करना), soften (नरम करना) आदि क्रिया नहीं है और यह तभी हो सकता है जब हम (44) की केवल अंशत: निर्दिष्ट कोशीय प्रविष्टियों की अभिलक्षण रचना और साथ ही (45) के एकांशों की जो (44) की प्रविष्टियों में आने वाली कोटियों को विस्थापित करते हैं, अभिलक्षण रचना का ध्यान रखें। ठीक-ठीक ये नियम किस प्रकार व्यवस्थापित हों, यह मुझे स्पष्ट नहीं है। प्रतिबंधों को पूरा-पूरा निर्धारित करना (44) और (45) के अभिलक्षण-वैशिष्टयों द्वारा हो सकता है और तब हम इस पर विश्वास करेंगे कि कोशीय नियम का पुन: प्रयोग एकांशों को समुचित स्थान पर अन्त: प्रविष्ट कर सकेगा। विकल्पत:, आधार शब्द सिद्धि में इन विस्तारों को प्रभावकारी बनाने के लिए शब्द समूह में प्रसंगसापेक्ष पुनर्लेखी नियमों की व्यवस्था करना बेहतर होगा। प्रथम विकल्प निश्चयत: वरीयता प्राप्त है क्योंकि उससे शब्दसमूह की संरचना पर कोई अन्तर नहीं आता है। इस विकल्प में शब्दसमूह केवल प्रविष्टियों की सूची होगा और कोशीय नियम (अब पुन: प्रयोज्य) ही कोशीय प्रविष्टियों से सम्बद्ध नियम होगा। किन्तु मैं नहीं जानता कि विस्तार से प्रयास करने पर क्या यह उपागम प्रसंभाव्य होगा या नहीं।

उन उदाहरणों में, जिनकी अभी विवेचना की है आधार शब्द सिद्धि विस्तारित करने की जो कोई भी रीति लें, हमें प्रतीकों के एक अनुक्रम के अधिकृत करने वाला एक मिश्र प्रतीक लेना होगा। भाषाई सिद्धांत की बहुत काफी समृद्धि और तदनुसार इस विस्तृत व्याख्या के महत्व और रुचित के ह्रास के साथ-साथ प्रकटतया कोई अनुभवाश्रित अभिप्रेरण नहीं है जिसके कारण मिश्र प्रतीकों को कोशीय कोटियों के स्तर के ऊपर स्थापित किया जाए। कोशीय कोटियों में मिश्र प्रतीकों को सीमित करने का तात्पर्य यह होता है कि कोई भी मिश्र प्रतीक कोटीय घटक के भीतर शाखी

संस्थिति को अधिकृत नहीं कर पाएगा। फिर भी, अब हमें इसके कुछ साक्ष्य मिले हैं कि शब्द के भीतर मिश्र प्रतीक के द्वारा अधिकृत सांस्थिति में शाखन स्वीकार करना पड़ेगा।[44]

ऐसे उदाहरणों के प्रकाश में हमें (पृ० 108–109 में दी) इस अपेक्षा को शिथिल करना होगा कि मिश्र प्रतीक के अधिकार क्षेत्र में शाखन स्वीकार्य नहीं है। यह निर्धारक केवल शब्द से ऊपर स्तरों पर सही लगता है। इस आपरिवर्तन के साथ, मिश्र प्रतीकों के कोशीय कोटियों में पूर्व वर्णित निर्धारक को बनाए रखना होगा।

वैकल्पिक विश्लेषण इन उदाहरणों में से अनेक के लिए मिल जाता है। frighten (भयभीत करना) जैसे शब्दों में, एक आधारभूत प्रेरणार्थक रचना द्वारा रचनांतरण-विश्लेषण का वाक्यीय औचित्य निकाल सकता है और तब "it frightens John" (यह जॉन को भयभीत करती है) शृंखला "it makes John afraid" (इससे जॉन भयभीत होता है) की आधारभूत संरचना से व्युत्पन्न माना जा सकेगा और वह स्वयं अमूर्त संरचना "it makes S" (यह S बनाता है) से जहां S "John is afraid"(जॉन भयभीत होता है) को अधिकृत करता है, व्युत्पन्न है। इस प्रकार विशेषण शब्दसमूह में दो वर्गों में बांटे जाएँगे–एक वे जो रचनांतरण के पश्चात् के हैं, और दूसरे वे जिन में रचनांतरण प्रयुक्त नहीं हुआ है। इस प्रकार afraid (भयभीत), red (लाल), soft (कोमल) प्रथम कोटि के हैं; जब कि happy (प्रसन्न), green (हरा), tender (सुकुमार) दूसरी कोटि के हैं। इसी प्रकार हम wizen (विच्छिन्न करना), chasten (संयत करना) आदि का विश्लेषण इसी प्रकार के विश्लेषण के आधार पर कर सकते हैं और वहाँ आधारभूत विश्लेषण को कोशीयतः एक ऐसा मानना होगा जिस पर रचनांतरण प्रक्रिया प्रयुक्त होती है। chasten (संयत करना) के उदाहरण में आधारभूत रूप को कोशीयतः समनामी विशेषण से पृथक करना होगा जो उस वर्ग का है जिस पर रचनांतरण प्रक्रिया प्रयुक्त नहीं होती है)। इस प्रकार का विश्लेषण अनेक अन्य रूपों पर जैसे enrage (क्रुद्ध करना), clarify (स्पष्ट करना) आदि क्रियाओं पर विस्तारित किया जा सकता है। यह विश्लेषण अध्याय 2, टिप्पण 15 में विवेचित drop, (गिरना), grow (उगाना) जैसे शब्दों की व्याख्या के लिए भी विस्तारित किया जा सकता है, जहाँ यह देखा गया था कि अकर्मक रूप आधारभूत सकर्मक द्वारा व्युत्पन्न नहीं हो सकते हैं। एक सामान्य "प्रेरणार्थक" "रचनांतरण" "he dropped the ball, (उसने गेंद गिराई), "he grows corn" (वह अन्न उगाता है) आदि का व्युत्पादन "he caused S" (उसने कार्य S किया) रूप वाले आधार भूत संरचना से कर सकता है जहाँ S' "the ball drops" (गेंद गिरती है), "corn grows" (अन्न उगता

है) इत्यादि की आधारभूत संरचना है। अनेक वाक्यीय युक्तियाँ एक सामान्य 'प्रेरणार्थक' संक्रिया के पक्ष में इस प्रकार के और अन्य उदाहरणों को व्याख्यायित करने के लिए दिए जा सकते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि एकांशों को कोशीयत: उन संक्रियाओं के शब्दों में, जो उन पर प्रयुक्त होती हैं, निर्दिष्ट करना चाहिए। यह विशेषत: स्वनप्रक्रियात्मक नियमों की विचारणा से स्पष्ट है किन्तु वाक्यविन्यासीय प्रक्रियाओं में भी कोई कम सत्य नहीं है। वस्तुत: कोशीय संरचना का अधिकांश स्वनप्रक्रियात्मक और वाक्यविन्यासीय नियमों की व्यवस्था द्वारा प्राप्त वर्गीकरण मात्र है। इसके अतिरिक्त पोस्टल ने सुझाव दिया है कि प्रत्येक नियम R के सम्बन्ध में कोशीय एकांशों का एक विश्लेषण होना चाहिए जिसमें यह स्पष्ट रहे कि कौन एकांश नियम R में अवश्य आते हैं, कौन एकांश नियम R में आ सकते हैं और कौन एकांश नियम R में नहीं आते हैं, और इस अभिग्रह के परिणामों पर उन्होंने कुछ गवेषणा की है।

शब्दसाधक रूपप्रक्रिया की समस्याओं के समान समस्याएँ शब्द स्तर के ऊपर के स्तर में भी मिलती हैं। उदाहरण के लिए "take for granted" (तथ्य रूप में मान लेना) जैसे पदबधों पर, जो कि अंग्रेजी में बहुलता से मिलते हैं, विचार करें। आर्थी और वितरणात्मक दृष्टिकोण से यह पदबंध एकल कोशीय एकांश लगता है और इस कारण उसे इस रूप में अपने वाक्यविन्यासीय और आर्थी अभिलक्षणों के अनन्य समुच्चय के साथ शब्द समूह में प्रविष्ट होना चाहिए। इस के विपरीत, रचनांतरणों और रूपप्रक्रियात्मक प्रक्रियाओं के प्रति उस का व्यवहार स्पष्टतय: यदि दिखाता है कि वह क्रिया–पूरक रचना की तरह की रचना है। हमें फिर एक कोशीय एकांश मिला जो आंतरिक संरचना की दृष्टि से समृद्ध है। "take offense at" (रोष करना) जैसे पदबंध में समस्या और भी कठिन हो जाती है। यहाँ भी वितरणात्मक और आर्थी विचारणाएँ यह सुझाती हैं कि यह एक कोशीय एकांश है, किन्तु कुछ रचनांतरण इस पदबंध में इस प्रकार लगते हैं मानो "offense" (अपराध) सामान्य संज्ञा पदबंध हो (देखिए "I didn't think that any offense would be taken at that remark" (मैं नहीं समझा कि उस टिप्पणी पर किसी प्रकार की भावनाओं पर आघात हुआ होगा) क्रिया⁀पार्टिकल रचनाएँ भी नाना प्रकार की संबद्ध समस्याएँ उत्पन्न करती है। कुछ सीमा तक पार्टिकल पर्याप्त स्वतंत्र "क्रिया विशेषणात्मक" तत्व है जैसे "I brought the book" (मैं पुस्तक लाया) (in, out, up, down)" आदि में किन्तु प्राय: क्रिया⁀पार्टिकल रचना (वितरणात्मक और आर्थी दृष्टि से) एक अनन्य कोशीय एकांश है (जैसे "look up" (खोज करना), "bring off" (सफल बनाना), "look over" (उपेक्षा करना) किन्तु

सभी उदाहरणों में वाक्यविन्यासीय संरचना परिचित रचनांतरण नियमों की प्रयोग संभावना की दृष्टि से प्रकटतया सर्वांगसम है। वर्तमान में मैं इस सामान्य प्रश्न के सम्पूर्णतया संतोषजनक हल देने का कोई मार्ग नहीं देख पा रहा हूँ।[45]

क्रिया⁀पार्टिकल रचनाओं को, जैसे "look up (the record)" (रिकार्ड की खोज करो), "bring in (the book)" (पुस्तक का) निर्णय दो) आदि को, अध्याय 2, § 2.3.4 में विवेचित नितान्त भिन्न रचनाओं से निश्चयत: संभ्रमित नहीं करना चाहिए। वहाँ हमने यह देखा था कि कुछ क्रियाएँ कुछ क्रियाविशेषणरूपों से घनिष्ठ रचना में हैं (उदाहरणार्थ, "decide on the boat" (नाव पर निर्णय किया) (नाव के बारे में निश्चित करना के अर्थ में) और वे उन क्रिया विशेषणात्मक रचनाओं से नितान्त भिन्न हैं जिनमें क्रिया और क्रिया विशेषण में शिथिल साहचर्य है (जैसे "decide on the boat" (नाव पर निर्णय किया) नाव में बैठकर निश्चय करना के अर्थ में)। इन घनिष्ठ रचनांगों में, पार्टिकल का चयन प्राय: संकीर्णतया अथवा अनन्यतया क्रिया के चयन से अनुबंधित रहता है (उदाहरणार्थ "argue with X about Y") (X से Y पर तर्क करना) अतएव decide, (निर्णय), argue, (तर्क) जैसे शब्दों की कोशीय प्रविष्टि में हों यह अवश्य सूचित करना चाहिए कि वे कुछ विशेष पार्टिकल लेते हैं (अन्य नहीं) और वास्तव में ऐसा अंग्रेजी शब्दकोश में सामान्यतया मिलता है। यह सूचना अनेक रीतियों से दी जा सकती है। एक सभावना यह है कि क्रिया-विशेषणरूप को स्वतंत्रतया विकसित किया जाय और क्रिया में प्रसंगगत अभिलक्षण विनिर्दिष्ट किए जाएँ (उदाहरणार्थ decide (निर्णय करना) के साथ प्रसंगत अभिलक्षण [–on⁀NP] संप. argue⁀(तर्क) के साथ प्रसंगत अभिलक्षण [–with⁀NP⁀about⁀NP] (सहित⁀सं सम्बन्ध में⁀संप दिया जाए)। यदि अध्याय 2, § 4.3 में वर्णित कोई भी कोशीय अन्त:प्रविष्ट की पद्धति प्रयोग में लाई जाती है तो विवेच्य क्रियाएँ केवल स्वीकृत स्थानों में अन्त: प्रविष्ट किया जाएगा और प्राप्त पदबंध चिह्नक आगामी नियमों के लिए उपेक्षित संरचना रखेगा। एक दूसरी संभावना यह है कि क्रियाविशेषण रूपों को स्वतंत्रतया विकसित करें किन्तु कोशीय प्रविष्ट को telescope (टेलिस्कोप), take for granted (तथ्य रूप में मान लेना) आदि की तरह रचनांगों के अनुक्रम के रूप में दें इस प्रकार हमारी प्रविष्टियाँ होगी—decide (निर्णय) #on (पर), argue (तर्क) (#about) (सम्बन्ध में) (#with) (सहित) आदि। इन कोशीय प्रविष्टियों से यह चरित उद्घर्षण रचनांतरण होगा जो स्वतंत्रतया प्रजनित पूर्वसर्गीय पदबंधों के स्वतंत्रतया प्रजनित पार्टिकलों को कोशीय प्रविष्टियों के पार्टिकलों को लोपित करने में प्रयुक्त

होगा । इस विकल्प में सुरचित गहन संरचनाओं में सही अन्त: प्रविष्ट की गारंटी के लिए रचनांतरणों के निस्पंदी प्रभाव पर भरोसा करते हैं और एक बार फिर हम सफल कोशीय अन्त: प्रविष्ट के पश्चात् सही रूप से रचित पदबंध चिह्नकों को व्युत्पन्न करते हैं । एक तीसरी संभावना भी है और वह यह है कि प्रस्तावित रीति से कोशीय एकांशों को प्रविष्ट किया जाए और पूर्वसर्ग स्थान में उसी तत्व द्वारा क्रिया विशेषण–रूपों को व्युत्पन्न किया जाए तब कोशीय प्रविष्ट के पार्टिकलों को स्थानापत्ति रचनांतरणों द्वारा वितरित किया जाएँ, फिर भी वही पदबंध चिह्नक प्राप्त होगा । इसके अतिरिक्त भी कुछ संभावनाएँ हैं ।

संयोगवश यही विकल्प क्रिया⁀पार्टिकल रचनाओं में भी उपलब्ध हैं । किन्तु इस स्थिति में कोशीय प्रविष्ट और सहचरित संक्रियाओं से परिणामित पदबंध-

चिह्नक क्रिया⁀क्रिया–विशेषण रचनाओं के परिणामों से भिन्न होने चाहिए । क्योंकि परवर्ती नियम दोनों स्थितियों में भिन्न–भिन्न प्रकार से प्रयुक्त होते हैं ।

इन विकल्पों में किसी के चुनने के आधार के प्रति सम्प्रति मैं आश्वस्त नहीं हूँ, जब तक अधिक स्पष्ट कसोटियां न निकलें, ये विकल्प तत्वत: केवल आंकनिक परिवर्त माने जा सकते हैं ।

स्पष्टतया, यह विवेचन किसी भी प्रकार उन विवेच्य विषयों की जटिलता अथवा विविधता का सर्वांगीण विवेचन नहीं बन सकता है जो अब तक व्यवस्थाबद्ध और स्पष्टकारी व्याकरण में बँध नहीं पा रहे है । यह संभव है कि हम लोग सीमान्त स्थितियों के एक छोर को ही छू पा रहे हैं और यह स्वाभाविक भाषा जैसी जटिल व्यवस्था में, जहाँ महत्वपूर्ण व्यवस्थापन संभव नहीं हो पा रहा है, स्वाभाविक ही है । फिर भी, पूर्ण विश्वास के साथ यह निष्कर्ष निकालना भी जल्दबाज़ी है और यदि यह अन्ततोगत्वा ठीक ही निकला तो भी इस क्षेत्र में जो उप-नियमितताएँ है उन्हें निकालने की समस्या का सामना करना चाहिए । हर स्थिति में, जिन प्रश्नों पर हमने विचार किया है, किसी भी गम्भीर रीति से इन पर किसी स्पष्टकारी व्याकरणिक सिद्धान्त के ढाँचे के भीतर उपागमन द्वारा प्रकाश नहीं डाला गया है । वर्तमान में सामग्री के वर्गीकरणात्मक विन्यास मात्र के परे हम नहीं जा सकते हैं । ये परिसीमाएँ क्या अन्तर्गुणीय हैं अथवा क्या गहनतर विश्लेषण इन कठिनाइयों में से कुछ के उद्घाटन करने में सफल हो जाएगा, यह अभी एक खुला प्रश्न है ।

टिप्पणियाँ

अध्याय 1

1. इस रूप में पारम्परिक मानसवाद को स्वीकार करने का यह तात्पर्य नहीं है कि हम ब्लूमफील्ड के 'मानसवाद' बनाम 'यांत्रिकवाद' के द्विधा विभाजन को मान रहे हैं। मानसवादी भाषा-विज्ञान केवल सैद्धांतिक भाषाविज्ञान है जो सामर्थ्य के निर्धारण के लिए निष्पादन को आधार-सामग्री के रूप में (अन्य आधार सामग्री, जैसे, अंतर्निरीक्षण द्वारा प्राप्त सामग्री के साथ) प्रयुक्त करता है, और सामर्थ्य को अन्वेषण का मुख्य विषय मानता है। इस पारम्परिक अर्थ में मानसवादी को अधीत मानसिक यथार्थता के लिए किसी संभव शरीर प्रक्रियात्मक आधार के पूर्वानुमान की आवश्यकता नहीं है। विशेष रूप से इस बात से इन्कार करने की उसे आवश्यकता नहीं है कि कोई ऐसा आधार है। बल्कि कोई भी यह अनुमान लगा सकता है कि मानसवादी अध्ययन ही अन्ततोगत्वा तंत्रिका-शरीरप्रक्रियात्मक कार्यविधि के अन्वेषण के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होंगे क्योंकि ऐसी क्रियाविधि द्वारा, अवश्यत: प्रदर्शित गुणधर्मों को और ऐसी क्रिया-विधि द्वारा निष्पन्न प्रकार्यों को अमूर्तता के साथ निर्धारित करने से केवल इन्हीं का संबंध है।

   वस्तुत: मानसवाद बनाम प्रति-मानसवाद का विवाद-विषय प्रकटतया लक्ष्यों और रुचियों से संबद्ध है न कि सत्य और मिथ्या अथवा सार्थकता और निरर्थकता के प्रश्नों से। इस प्राय: व्यर्थ के वाद विवाद में कम से कम तीन विचार्य बिन्दु हैं—(क) द्वैतवाद—क्या निष्पादन के मूलाधार नियम पदार्थेतर माध्यम से निरूपित होते हैं? (ख) व्यवहारवाद—क्या निष्पादन की आधार-सामग्री भाषा-विज्ञान के रुचि क्षेत्र को नि:शेष कर देती है अथवा अन्य तथ्यों में भी उसकी रुचि है विशेषत: उनसे जिनका सबंध व्यवहार के मूलाधार गहन व्यवस्थाओं से है?; (ग) अंतर्निरीक्षणवाद—क्या हमें इन आधारभूत व्यवस्थाओं के गुणधर्मों को निश्चित करने के प्रयास में अंतर्निरीक्षणात्मक आधार-सामग्री का भी उपयोग करना चाहिए? यह द्वैतवादी स्थिति ही थी जिसके विरोध में ब्लूमफील्ड ने बिना बात घोर निन्दा की है। व्यवहारवादी स्थिति कोई विवाद का विषय नहीं रहा है। वह केवल सिद्धांत और व्याख्या में रुचि के अभाव का व्यंजक है। उदाहरणार्थ, सैपीर (Sapir) की मानसवादी स्वनप्रक्रिया पर जो स्वन-प्रक्रियात्मक तत्त्वों की किसी अमूर्त व्यवस्था की मनोवैज्ञानिक यथार्थता के संबंध में सूचक की अनुक्रियाओं और टीका-टिप्पणियों को महत्वपूर्ण साक्ष्य मानती है, ट्वाडेल (Twaddell) द्वारा की समीक्षा (1935) में यह स्पष्ट है। ट्वाडेल की दृष्टि से इस परिश्रम में कोई विशेष बल नहीं है क्योंकि उसकी रुचि का विषय तो स्वयं व्यवहार है, "जो पहले से ही भाषा के अध्येता के पास उपलब्ध है यद्यपि कुछ कम सकेन्द्रित रूप में"। वैशिष्ट्य की दृष्टि से, भाषाई सिद्धान्त में रुचि का अभाव इस प्रस्ताव में अभिव्यक्त होता है कि पद 'सिद्धान्त" केवल "आधारसामग्री के सारांश" के लिए ही सीमित रखा जाए (जैसा कि ट्वाडेल के शोधपत्र में, अथवा, अभी हाल का कोई उदाहरण लेना हो तो डिक्सन, 1963 में, यद्यपि डिक्सन में 'सिद्धान्तों' का विवेचन पर्याप्त अस्पष्ट है और इस कारण उससे अन्य व्याख्याओं

की भी संभावनाएँ हैं जो उसके मस्तिष्क में रही होंगी)। कदाचित् सिद्धान्त में इस रुचि का अभाव, सामान्य अर्थ में, कुछ विचारों से (जैसे, सुदृढ़ संक्रियावादिता अथवा पक्का सत्यापन वाद) संवर्धित हुआ था जिन पर विज्ञान के प्रत्यक्षवादी दर्शन में संक्षेप से विचार हुआ था किन्तु जिसे 1930 से प्रारम्भ दशक के पूर्वार्ध में तुरंत अस्वीकृत कर दिया गया था। किसी भी स्थिति में प्रश्न (b) कोई विशेष समस्या नहीं खड़ी करता है। प्रश्न (c) तभी उठता है जब (b) के व्यवहारवादी सीमितताओं को कोई अस्वीकृत करे। प्रणालीगत शुद्धता के आधार पर यह मानना कि सूचक के स्वयं (प्रायः भाषाविद् के) अन्तः निरीक्षणात्मक निर्णयों पर कोई विशेष ध्यान नहीं देना चाहिए कम से कम इस समय भाषा के अध्ययन को पूर्णतया निष्फलता की स्थिति पर पहुँचा देता है। यह कल्पना करना बहुत कठिन है कि इस संबंध में क्या-क्या तर्क दिए जा सकते हैं। इस पर हम बाद में विचार करेंगे। और अधिक विवेचन के लिए, देखिए केट्स (Katz) (1964 C)।

2. इसका हाल में कई यूरोपीय भाषाविदों द्वारा (जैसे डिक्सन (Dixon). 1963; उह्लेनबेक 1963, 1964) खंडन किया गया है। किन्तु ये पारम्परिक व्याकरण के प्रति अपनी संशयवादिता के लिए कोई कारण नहीं बताते हैं। वर्तमान उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर केवल यही दिखाई पड़ता है कि अधिकतर पारम्परिक दृष्टिकोण यथासम्भव मूलतः सही हैं और नए दृष्टिकोणों का जो उनके स्थान पर सुझाए गए हैं, बिन्दुमात्र भी औचित्य नहीं है। उदाहरण के लिए, उह्लेनबेक के इस प्रस्ताव को लें कि "the man saw the boy" (आदमी ने लड़के को देखा) का अवयव विश्लेषण [the man saw (आदमी ने देखा)] [the boy (लड़का)] है। इस प्रस्ताव का अनुमानतः यह तात्पर्य भी है कि [the man put (आदमी ने रखा)], [it into the box (इसे सन्दूक में)], [the man aimed (आदमी ने लक्षित किया)] [it at John (जॉन पर)], [the man persuaded (आदमी ने समझाया)] [Bill that it was unlikely (बिल कि यह असम्भव था)] आदि वाक्यों में यहाँ दिखाए गए अवयव हैं। अवयव संरचना के निर्धारण के लिए अनेक प्रासंगिक तर्क हैं। मेरी जानकारी में, वे इस प्रस्ताव के विरोध में निरपवाद पारम्परिक विश्लेषण का समर्थन करते हैं, इस प्रस्ताव के पक्ष में केवल एक तर्क प्रस्तुत किया जाता है और वह यह है कि वह 'शुद्ध भाषावैज्ञानिक विश्लेषण" का परिणाम है (विचार कीजिए–उह्लेनबैक (1964) और वहाँ दिया विवेचन)। जहाँतक पारंपरिक व्याकरण के प्रति डिक्सन की आपत्ति का संबन्ध है, (इस शुद्ध किन्तु अप्रासगिक पर्यवेक्षण कि वे व्याकरण "व्यवसायी भाषाविदों द्वारा बहुत दिनों से निकम्मे ठहरा दिए गए हैं", के अलावा) इसके पास न तो दूसरा विकल्प है और न तर्क, और इस प्रकार यहाँ कोई विचार करने योग्य वस्तु नहीं है।

3. इसके अतिरिक्त, हमें ऐसा लगता है कि वाक्-प्रत्यक्षण का भी सर्वाधिक अच्छी रीति से इस ढाँचे में अध्ययन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, देखिए हाले और स्ट्रैवेन्स (1962).

4. इस भाँति की उपयोगी धारणा को निर्धारित करने वाले परीक्षण कई स्थानों पर वर्णित किए गए हैं–उदाहरणार्थ, मिलर और इजर्ड (1963)।

5. ये लक्षण-वर्णन भी उतने ही अस्पष्ट हैं और उनसे संबद्ध धारणाएँ भी उतनी ही दुरूह हैं। धारणा "उत्पन्न होने की संभावना" अथवा "प्रसंभावना" कभी-कभी अन्यों की तुलना में अधिक "वस्तुनिष्ठ" और पूर्वतया अधिक सुपरिभाषित इस अभिग्रह पर मानी गई है कि धारणा

"वाक्य प्रसंभाव्यता" अथवा "वाक्य-प्ररूप प्रसंभाव्यता" का कुछ स्पष्ट अर्थ तो है। वस्तुतः ये परवर्ती धारणाएँ तभी वस्तुनिष्ठ और पूर्वतया स्पष्ट होती हैं जब प्रसंभाव्यता सापेक्षिक वारंवारता के प्राक्कलन पर आधारित हो और वाक्य-प्ररूप का कुछ इस प्रकार "शब्द अथवा रूपिम वर्ग का अनुक्रम" अर्थ हो। (इसके अतिरिक्त, यदि इस धारणा को सार्थक होना ही है तो ये वर्ग बहुत ही छोटे होने चाहिए और इसके तत्वों को पारस्परिक रूप से प्रतिस्थापन योग्य होना चाहिए, अन्यथा अस्वीकार्य और अव्याकरणिक वाक्य भी उतने ही "संभव" और स्वीकार्य हो जाएँगे जितने कि व्याकरणिक।) किन्तु इस स्थिति में यद्यपि "वाक्य (प्ररूप) की प्रसंभाव्यता" स्पष्ट और सुपरिभाषित है, तथापि यह नितान्त निरुपयोगी धारणा है, क्योंकि लगभग सभी (अन्तः प्रज्ञात्मक अर्थ में) अधिकतया स्वीकार्य वाक्यों की प्रसंभाव्यताएँ अनुभवाश्रितता के दृष्टिकोण से शून्य से अभिन्न होंगी और वे उन वाक्य-प्ररूप के अंग होंगी जिनकी प्रसंभाव्यताएँ अनुभवाश्रितता की दृष्टि से शून्य से अभिन्न हैं। इस प्रकार स्वीकार्य और व्याकरण संमत वाक्य (अथवा वाक्य-प्ररूप) अन्य की अपेक्षा में, इस शब्द के किसी भी वस्तुनिष्ट अर्थ में, अधिक "संभव" नहीं हैं। यह तब भी सही रहता है जब हम "संभावना" पर विचार न कर "अमुक परिस्थिति में सापेक्षिक संभावना" पर विचार करते हैं, यदि "परिस्थितियाँ" पर्यवेक्षणीय भौतिक गुणधर्मों के शब्दों में निर्दिष्ट हों और मानसवादी रचना न हो। यह उल्लेखनीय है कि वे ही भाषाविद् जो वाक्यों के वास्तविक परिस्थितियों में प्रयोग के पूर्णतः वस्तुनिष्ठ अध्ययन की बातें करते हैं: स्वयं वस्तुतः उदाहरण देते समय "परिस्थितियों" को पूर्णतया मानसवादी शब्दों में ही निरपवाद वर्णिन करते हैं। उदाहरण के लिए देखिए डिक्सन (Dixon) (1963, पृष्ठ 10) जहाँ किताब के एकमात्र उदाहरण में उस वाक्य को परिस्थिति "ब्रिटिश संस्कृति" से अर्थ प्राप्त करने का वर्णन है। ब्रिटिश संस्कृति को एक 'परिस्थति' बताना स्वयं एक कोटिगत त्रुटि है; इसके अतिरिक्त उसे पर्यवेक्षित व्यवहार से निष्कर्षण द्वारा पैटर्न मानना और इस कारण शुद्ध भौतिक शब्दों में वस्तुनिष्ठता के साथ वर्णनीय मानना नृतत्वशास्त्रीय अनुसंधान से जो आशा की जाती है उसकी पूरी भ्रांति का सूचक है। अधिक विवेचन के लिए देखिए, कैट्स-फोडर (1964)।

6. यह सत्य हो सकता है इसका इंगित अनेक (इस समय, वस्तुतः अपरीक्षित) पर्यवेक्षणों से मिलता हो। उदाहरण के लिए, चॉम्की और मिलर (1963, पृ० 286) में निम्नलिखित उदाहरण दिया गया है: "any one who feels that if so many more students whom we haven't actually admitted are sitting in on the course than ones we have that the room had to be changed, then probably auditors will have to be excluded, is likely to agree that the curriculum needs revision." (कोई पाठ्यक्रम के परिवर्तन की आवश्यकता पर सहमत होगा जो अनुभव करता है कि वास्तविक प्रवेश दिए गए छात्रों से कहीं अधिक छात्र अनेक बार पाठ्यक्रम में हैं, और हमें कमरा बदल देना होगा तभी संभवतः श्रोताओं को अलग करना पड़ेगा) इस वाक्य के भीतर छह नीड़ित (कुछ अन्य आश्रित रचनाओं के अतिरिक्त जो नीड़न से परे जाती हैं) आश्रित रचनाएँ हैं जिनमें आत्म आधायन नहीं है। इस वाक्य को अभिनंदनीय शैली का नमूना तो नहीं कहेंगे किन्तु पर्याप्त मात्रा में यह समझ में आता है और स्वीकार्यता की मापनी में अत्यंत नीचे नहीं है। किन्तु तुलना करने पर दो या तीन मात्रा जो आत्म-आधायन स्वीकार्यता को बुरी तरह गड़बड़ा देता है। यह तथ्य अध्ययन-योग्य है चूंकि

(iv) से संवद्ध एक सकारात्मक परिणाम, जैसा उल्लेख किया जा चुका है, स्मृति संघटना विषयक प्राप्त निष्कर्ष की पुष्टि करेगा जो कि पूरी तरह स्पष्ट नहीं है।

7. इसका कभी-कभी दावा किया गया है कि परंपरागत समानाधिकृत संरचनाएँ अवश्यत: दक्षिण-पुनरावर्ती (Yngve, 1960) अथवा वाम-पुनरावर्ती (हर्मन, 1963, पृ. 613 नियम 3 i) होती हैं। ये निष्कर्ष मुझे समान रूप से अस्वीकार हैं। हर्मन महोदय की मान्यता कि "a tall, young. handsome, intelligent man" (एक लम्बा, युवा, सुन्दर, बुद्धिमान मनुष्य) में संरचना [[[[tall, young, (लम्बा, युवा)] handsome (सुन्दर)] intelligent बुद्धिमान)] [man (मनुष्य)] है, उतनी ही औचित्यपूर्ण है जितनी कि संरचना [tall लम्बा, [young युवा [handsome सुन्दर [intelligent man बुद्धिमान मनुष्य]]]] से संवद्ध मान्यता। वस्तुत: किसी भी आंतरिक संरचना के लिए कोई व्याकरणिक अभिप्रेरणा नहीं है; और जैसाकि अभी मैंने बताया है, यह अभिग्रह कि कोई ऐसी संरचना नहीं है स्वीकार्यता के आधार पर भी, स्मृति-संघटना से संवद्ध अत्यधिक शक्तिहीन और संभव अभिग्रहों के साथ, समार्थित है। यह उल्लेखनीय है कि ऐसी स्थितियाँ भी मिलती हैं जहाँ अन्य और संरचना भी औचित्य युक्त हो सकती है (जैसे [intelligent बुद्धिमान) [[young [men युवा पुरुष]] अथवा, कदाचित् [YOUNG युवा [intelligent young man बुद्धिमान युवा पुरुष]] [young युवा)] पर वैषम्यपरक बलाघात के साथ)), किन्तु प्रश्न केवल इतना है कि क्या यह सदैव आवश्यक है।

यही तब लागू होता है यदि हम "all the young, old, and middle aged voters" (सभी युवा, वृद्ध और मध्य आयु के मतदाता) जैसे पदबंधों में उपलब्ध विभिन्न प्रकार की विशेषण-विशेष्य रचना पर विचार करें (इन विविध प्रकार के विशेषक-संबंधों के रोचक विवेचन के लिए देखिए औनंन (Ornan), 1964)। इस उदाहरण में भी न तो संरचना [[young. old (युवा, वृद्ध)] and middleaged (और मध्य आयु)] और न संरचना [young (युवा)] [old and middle-aged वृद्ध और मध्य आयु)] का कोई औचित्य है।

इसी प्रकार Yngve के साथ मानना अवश्यमेव असंभव है कि पदबन्ध 'John, Mary and their two children (जॉन मेरी और उनके दो बच्चे)] में संरचना [[John (जॉन) [Mary (मेरी)] [and their two children और उनके दो वच्चे]] है और इस प्रकार "John" (जॉन)] "Mary and their two children (मेरी और उनके दो बच्चे)] के साथ समानाधिकृत है, जहाँ "Mary" and their two children" (मेरी और उनके दो वच्चे)] का विश्लेषण दो समानाधिकृत भाषाशों "Mary" (मेरी) "their two children" (उनके दो वच्चे)] में किया गया है। यह सामान्य ज्ञान के ठीक विपरीत है। यह पुन: ध्यातव्य है कि संयोजन द्वारा यह संरचना हो सकती है (जैसे, "John, as well as Mary and her child" (जॉन साथ ही मेरी और उसका बच्चा) किन्तु निश्चयत: यह दावा करना कि यह संरचना अवश्यमेव होगी गलत है।

इन स्थलों पर भी विदित वाक्य-विन्यासीय, आर्थी, स्वनात्मक और प्रात्यक्षिक विचारणाएँ इस पारंपरिक दृष्टिकोण के समर्थन में एकोन्मुखी होती हैं कि ये रचनाएँ प्ररूपत: समानाधिकृत (बहुशाखी) हैं। यह भी द्रष्टव्य है कि यह एक दुर्बलतम अभिग्रह है। प्रमाण देने का भार उस पर पड़ता है जो इससे परे अतिरिक्त संरचना का दावा करता है। अवयव-

संरचना के निर्देशन के औचित्य सिद्ध करने के लिए अनेक रीतियाँ हैं। उदाहरणार्थ, "all (none) of the blue, green, red, and (or) yellow pennant (नीला, हरा, लाल और (या) पीला ध्वज सभी (कोई नहीं) जैसे पदबंध में यदि कोई यह युक्ति रखे कि "blue, green, red" (नीला, हरा, लाल) एक संरचक है (अर्थात् संरचना वाम-प्रशाखी है) अथवा "green, red and (or) yellow" (हरा, लाल और (या) पीला) "एक संरचक है (अर्थात्, संरचना दक्षिण-प्रशाखी है) तो उसे यह प्रदर्शित करना होगा कि ये विश्लेषण किसी व्याकरणिक नियम के लिए अपेक्षित हैं, अभ्युपगमित मध्यवर्ती पदबन्धों की आर्थी व्याख्या है, वे स्वनात्म सीमारेखाओं को परिभाषित करते हैं, विश्लेषण के प्रात्यक्षिक आधार हैं, या इसी प्रकार के अन्य कथन। ये सभी दावे इस उदाहरण में हैं और अन्य यहाँ उल्लिखित उदाहरणों में गलत हैं। इस प्रकार "Young, old and middle aged voters" (युवा, वृद्ध और मध्य आयु के मतदाता) "old and middle aged" (वृद्ध और मध्य आयु) और "none of the blue, green, red or yellow pennant (नीला, हरा, लाल या पीले ध्वजों में से करने कोई नहीं) में "Green, red, or yellow" (हरा, लाल या पीला) अथवा "John, Mary and their two children (जॉन मेरी और उनके दो बच्चे में) "Mary and their two children" (मेरी और उनके दो बच्चे) को कोई आर्थी व्याख्या नहीं दी जा सकती है; स्वनात्म नियम स्पष्टतया ऐसे संरचक-विश्लेषण को वहिर्गत करते हैं; कोई व्याकरणिक नियम ऐसे नहीं है जो इन विश्लेषणों की अपेक्षा करते हों; कोई प्रात्यक्षिक अथवा अन्य युक्तियाँ इनके समर्थन में नहीं हैं। अतएव पारंपरिक विश्लेषण पर आपत्ति उठाने और जैसा इन उदाहरणों में हुआ है अतिरिक्त मध्यवर्ती कोटि-करण पर बार-बार बल देने को कोई पुष्ट आधार दिखाई नहीं पड़ता है।

8. Yngve (1960 और अनेक अन्य शोधपत्र) ने (4) जैसे कुछ पर्यवेक्षणों को व्याख्यायित करने के लिए एक अन्य सिद्धांत प्रस्तावित किया है। स्मृति-परिसीमा के स्पष्टत: प्रतिबंध के परे, उसका सिद्धान्त यह भी मान कर चलता है कि प्रजनन का क्रम उत्पादन के क्रम से सर्वथा अभिन्न है-अर्थात् वक्ता और श्रोता "ऊपर से नीचे" के क्रम में वाक्य उत्पन्न करते हैं (वे सर्वप्रथम प्रमुख संरचनाओं को निश्चित करते हैं, फिर उनकी उपसंरचनाओं. इत्य दि को, और प्रक्रिया के पूरे अन्त में ही कोशीय भाषांशों के चयन को लेते हैं)। इस अत्यधिक प्रतिबंध युक्त अतिरिक्त अभिग्रह में पूर्वोल्लिखित इष्टतम प्रात्यक्षिक युक्ति की रचना करना संभव नहीं है, और बाम-प्रशाखन और बहुप्रशाखन तथा नीड़न और आत्म-आधायन Yngve की दृष्टि से "गहनता" प्रदान करते हैं और इस कारण अस्वीकार्य हैं। इस प्राक्कल्पना के समर्थन में यह आवश्यक होगा कि हम दिखाएँ कि (a) इसमें प्रारंभिक विश्वास्यता है, और (b) वाम प्रशाखन और बहुप्रशाखन वस्तुत: उसी प्रकार अस्वीकार्यता उत्पन्न करते हैं जिस प्रकार नीड़न और आत्म-आधायन। जहाँ तक (a) का संबंध है, मैं इस अभिग्रह की किंचित्मात्र विश्वास्यता नहीं देखता हूँ कि वक्ता सदैव वाक्य-प्ररूप का चयन करे तब उपकोटियों का निर्धारण करे, इत्यादि, और अंतिम सोपान में जाकर यह निश्चित करे कि वह क्या कहने जा रहा है; अथवा श्रोता विना अपवाद सदैव सभी उच्च स्तरी निश्चयों को उससे निम्न स्तर के विश्लेषण के पूर्व अवश्य करे। जहाँ तक (b) का संबंध है, प्राक्कल्पना के समर्थन में कोई साक्ष्य नहीं है। Yngve द्वारा दिए गए सभी उदाहरणों में नीड़न और आत्म-आधायन है और अतएव प्राक्कल्पना से वे असंबद्ध हैं, क्योंकि इस उदाहरण में अस्वीकार्यता सीमितता के अभिग्रह मात्र से निश्चित

हो जाती है और वक्ता एवं श्रोता के "ऊपर से नीचे" वाले अतिरिक्त अभिग्रह की कोई अपेक्षा नहीं है। इसके अतिरिक्त प्रावकल्पना इस पर्यवेक्षण (4 iii) से बाधित होती है कि वहु समानाधिकृत संरचनाएँ देखिए, टिप्पण 7) सर्वाधिक स्वीकार्य हैं (न कि सबसे कम स्वीकार्य जैसाकि पूर्व-कथित है) और वाम-प्रशाखी संरचनाएँ समान "गहनता" के अर्थ में) की नीड़ित संरचनाओं की अपेक्षा स्वीकार्य हैं। यह इस व्याख्या में भी असफल है कि प्ररूप (4 iv) के उदाहरण (जैसे 2 i) "गहनता" में अत्यधिक निम्न होते हुए भी, क्यों अस्वीकार्य बने रहते हैं।

किंतु Yngve ने इन शोधपत्रों में एक महत्वपूर्ण तथ्य दिखाया है कि कुछ रचनांतरणों का प्रयोग नीड़न कम करने में, और इस प्रकार प्रात्यक्षिक भार कम करने में, किया जा सकता है। व्याकरणों में रचनांतरण नियम क्यों रखे जाएँ इसके समर्थन में यह एक रोचक युक्ति संसूचित करना है। इस युक्ति को कुछ अतिरिक्त भार मिलर और चाम्की (1963, भाग 2) के रचनांतरण व्याकरणों से सम्बद्ध निष्पादन माडेलों के विवेचन से भी मिलता है।

9. यह जान कर आश्चर्य होता है कि इस सत्यता को भी अभी हाल में चुनौती दी गई है। देखिए डिक्सन (1963)। फिर भी, ऐसा लगता है कि जब डिक्सन इससे इन्कार करते हैं कि भाषा में अनन्त अनेक वाक्य होते हैं, तब वे 'अनन्त' शब्द का किसी विशेष और कदाचित् अस्पष्ट अर्थ में प्रयोग कर रहे हैं। इस प्रकार उसी (पृष्ठ 83) पर जहाँ वे इस कथन पर कि "भाषा में अनन्त संख्या के वाक्य होते हैं" आपत्ति उठाते हैं, वहीं वे कहते हैं कि ' हम स्पष्टतया यह कहने में असमर्थ हैं कि कोई ऐसी निश्चित संख्या N है कि वाक्य में N उपवाक्य से अधिक उपवाक्य नहीं हो सकते" (अर्थात् वे स्वीकार करते हैं कि भाषा असीम है)। यह या तो बहुत मोटा अपने ही कथन का विरोध है, या उनके मस्तिष्क में "अनन्त" शब्द का कोई नया अर्थ था। उनके कथन के ऊपर अतिरिक्त विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की (1966)।

10. शब्दावली की बात यदि छोड़ दें तो मैं यहाँ केट्स और पोस्टल (1964) के विवेचन का अनुसरण कर रहा हूँ। विशेषत: मैं निरंतर यह मान रहा हूँ कि आर्थी घटक तत्वत: वैसा है जैसा कि वहाँ (केट्स और पोस्टल: 1964) वर्णित है और स्वनप्रक्रियात्मक घटक तत्वत: वैसा है जैसा कि चॉम्स्की. हाले, लेकाफ, (1956); हाले (1959a, 1959b, 1962a,); चॉम्स्की (1962b); चॉम्स्की और मिलर (1963); हाले और चॉम्स्की (1960; 1968) में वर्णित है।

11. मैं निरंतर यह मान कर चल रहा हूँ कि वाक्यविन्यासी घटक के अन्तर्गत शब्द-समूह आता है और प्रत्येक कोशीय एकांश कोश में अपने अन्तर्निष्ठ आर्थी अभिलक्षणों द्वारा, चाहे वे जो हों, निर्दिष्ट होता है। मैं इस विषय पर अगले अध्याय में पुन: विचार करूँगा।

12. "गहना संरचना" और "वाह्य संरचना" शब्दों के स्थान पर हम्बोल्ट द्वारा प्रयुक्त धारणाएँ- वाक्य का "आंतरिक रूप" और वाक्य का "वाह्यरूप" प्रयुक्त कर सकते हैं। यद्यपि मुझे ऐसा लगता है कि "गहन संरचना" और 'वाह्य संरचना", जिस अर्थ में उनका प्रयोग यहाँ हो रहा है, हम्बोल्ट के "आंतरिक रूप" और "वाह्य रूप" से क्रमश: वाक्य के प्रसंग में अति निकटतया मिलते हैं, तथापि मैंने पाठ्यीय निर्वचन के प्रश्न से बचने के लिए अधिक निरपेक्ष शब्दावली को अपनाया है। "गहन व्याकरण" और 'बहिस्तलीय व्याकरण" लगभग यहाँ प्रयुक्त किए अर्थ में ही आधुनिक दर्शन में प्रयुक्त हुए हैं (देखिए विटगेन्स्टीन द्वारा स्थापित "Tiefengrammatik" (गहन व्याकरण) और "Oberflachen grammatik" बहिस्तलीय व्याकरण का अन्तर: 1953 पृ० 168)। हॉकेट (Hockett) ने भी वर्गीकरणात्मक

भाषा विज्ञान की अपर्याप्तता पर विवेचन करते हुए इसी प्रकार की शब्दावली प्रयुक्त की है। (हाकेट, 1958 अध्याय 29)। पोस्टल ने इन्हीं धारणाओं के लिए "आधारभूत संरचना" और "वहिस्तलीय संरचना" (superficial structure) का प्रयोग किया है (पोस्टल, 1964 b)।

गहन और वाह्य संरचना का अन्तर, जिस अर्थ में ये शब्द यहाँ प्रयुक्त किए गए हैं, अत्यंत स्पष्टतया से पोर्ट-रायल व्याकरण में (लेन्सिलो) तथा अन्य 1660) प्रस्तुत किया गया है। कुछ अधिक विवेचन और संदर्भों के लिए देखिए चॉम्स्की (1964, पृ० 15–16, 1966)। दार्शनिक विवेचन में, यह दिखाने के प्रयास में प्रायः प्रस्तुत किया जाता है कि किस प्रकार व्याकरणिक मिथ्या-साद्दश्य से कुछ दार्शनिक स्थितियाँ आ जाती हैं और कुछ अभिव्यक्तियों की वाह्य संरचना की, गलती से ऊपरी तौर से समान लगने वाले अन्य वाक्यों पर ही उपयोज्य साधनों द्वारा, अर्थपरक निर्वचन कर दिया जाता है। टॉमस रीड (Thomos Reid, 1785) दार्शनिक त्रुटियों का एक सामान्य कारण इस तथ्य में मानते हैं कि–

"सभी भाषाओं में कुछ पदबंध ऐसे होते हैं जिनका स्पष्टतया भिन्न अर्थ होता है; जबकि साथ-साथ, उनकी संरचना में कुछ ऐसा हो सकता है जो व्याकरण के साद्दश्य और दर्शन के सिद्धांतों में मेल नहीं खाता····। इस प्रकार हम वेदना के अनुभव करने की बात करते हैं मानो वेदना अनुभूति से कोई पृथक् वस्तु हो। हम ये कहते हैं कि वेदना हो रही है, चली गई है, इस स्थान से हटकर दूसरे स्थान पर हो रही है आदि। ये पदबंध ऐसों के साथ प्रयुक्त होते हैं जो इस अर्थ में इनका प्रयोग करते हैं और यह अर्थ न अस्पष्ट और न मिथ्या है। किन्तु दार्शनिक उनका अभिस्रावन करता है, उनको उनके प्राथमिक सिद्धांतों तक पहुँचाता है और उनसे वह अर्थ निकालता है जो कभी भी माना नहीं गया था, और इस प्रकार कल्पना करता है कि उसने एक ग्राम्य दोष निकाल लिया (पृ० 167–68)"

अधिक सामान्यतया वह विचारों के सिद्धांत की इस बात की आलोचना करता है कि वह उस "प्रचलित अर्थ" से विचलित हैं जिसमें "किसी वस्तु का विचार करना उस वस्तु के संबंध में सोचने से अधिक नहीं है" (पृ० 105)। किंतु दार्शनिक विचार को 'वह पदार्थ या वस्तु जिसका मस्तिष्क विचार-विवेचन करता है' (पृ० 105) मानते हैं किसी को विचार रखने का अर्थ होता है मन में कोई प्रतिमा, चित्र निरूपण जो विचार का अव्यवहित विषय है। इससे यह निकलता है विचार के दो विषय होते हैं बिचार जो कि मस्तिष्क में हो और उससे निरुपित वस्तु। इस निष्कर्ष से, जैसा कि रीड सोचते हैं, विचारों के पारंपरिक सिद्धांत की अनर्गलताएँ प्रकट होती हैं। इन अनर्गलताओं का एक स्रोत तो "मन की संक्रियाओं और इन संक्रियाओं के पदार्थों के बीच का प्रभेद······यद्यपि यह प्रभेद ग्रामीण से भी परिचित है और सभी भाषाओं की संरचना में प्राप्त है······(पृ० 110) इस विषय में दार्शनिकों की असफलता है। उल्लेखनीय है कि 'विचार रखने' के दो अर्थ डेकार्टे द्वारा 'मेडिटेशनस्' (1641, पृ० 138) की भूमिका में पृथक्–पृथक् माने गए हैं। रीड का भाषाई पर्यवेक्षण पर्याप्त पहले डू मार्से (Du Marsais) द्वारा मरणोपरान्त प्रकाशित ग्रन्थ में 1769; निम्नलिखित अनुच्छेद के रूप में (पृ० 179–180), दिखाया गया है।

Ainsi, comme nous avons dit j'ai un livre, j'ai un diamant, j'ai une montre, nous disons par imitation, j'ai la fievre, j'ai

envie, j'ai peur, j'ai un doute, j'ai pitie, j'ai une idee etc. Mais i,vre, diamant, montre sont autant de noms d' objects re'els qui existent inde' pendamment de notre man ere de penser; au lieu que sante', fie'vre, peur, doute, envie, ne sont que des termes metaphysiques qui ne disignent que des mani'eres d' etres considare's par des points de vue particuliers de l'esprit.

Dans cet exemple, j'ai une montre, j'ai est une expression qui doit e'tre prise dans le sens propre; mais dans j'ai une idee, j'ai n'est dit que par une imitation. C'est une expression emprunte'e. J'ai üne ide'e, c'est-a'-dire, je pense, je concois de telle ou telle manie're. J'ai envie c'est-a'-dire, je desire, j'ai la volonte', c' est-a'-dire, je vewx cte,

Ainsi, ide'e, eoncept, imagination, ne marquent point d' objects, re'els, et encore moins des e'tres sensibles qüe l'on puisse unir l'un avec l'autre.

(यदि हम कहते हैं 'मेरी पुस्तक है, मरी हीरा है, मेरी घड़ी है' तो हम अनुकरण के आधार पर ही कहते हैं । तथा "मुझे बुखार है, मुझे सदेह है, मुझे डर है, मुझे दया है तथा मेरी इच्छा है' आदि वाक्यों में पुस्तक, हीरा, घड़ी वास्तविक वस्तुएँ हैं जिनका हमारे विचार से पृथक् अस्तित्व भी है, परन्तु बुखार डर, सदेह, इच्छा आदि तात्विक पद हैं जिनका विषय मस्तिष्क की विशेष विचारणा से युक्त रहने की विधि से सम्बन्धित है ।

'मेरा हीरा है' इस वाक्य में मेरा है' शब्दों का वास्तविक अर्थ लेना होगा, किन्तु 'मेरी इच्छा है' इस वाक्य में मेरी है' शब्दों का अर्थ केवल अनुकरण से लेना पड़ता है ।

अभी हाल के सालों में यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि दर्शन के लक्ष्य वस्तुत: (राईल, 1931) "पुनरावर्ती कुरचनाओं के भाषाई प्रयोगों और अनर्गल सिद्धांतों में स्रोतों की खोज में ' सुदृढ़तया सीमित रहने चाहिए ।

13. ये वर्णन पूर्णतया सही नहीं है । वस्तुत: (10) के वाक्यीय पूरक को अधिक उपयुक्तता के साथ पूर्वसर्गीय पदबन्ध (देखिए अध्याय 3) में आधायित मानना चाहिए: और, जैसा पीटर रोजनबाम ने दिखाया है, (11) के वाक्यीय पूरक को "expect" (अपेक्षा करना) के कर्म पदबंध में आधायित मानना चाहिए । इसके अतिरिक्त (10) और (11) के क्रिया सहायकों पर किया विचार गलत है, और कर्मवाच्य रचनांतरण अंकित करने के अन्य आपरिवर्तन हैं जिस पर हम अगले अध्याय में विचार करेंगे ।

14 यह स्पष्ट लगता है कि अनेक बच्चे प्रथम या द्वितीय भाषा पर्याप्त सफलता के साथ सीख लेते हैं यद्यपि उन्हें सिखाने की कोई विशेष सावधानी नहीं की गई है और उनकी प्रगति पर भी कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया है । यह भी स्पष्ट प्रतीत होता है कि पर्यवेक्षित वास्तविक भाषण का अधिकांश खण्डों और नानाविध विचलन प्राप्त अभिव्यक्तियों मे पूर्ण है । इस प्रकार यों लगता है कि बच्चे में एक ऐसे प्रजनन व्याकरण को 'आविष्कृत' करने की योग्यता होनी चाहिए जो सुरचितता की परिभाषा देता है और जो वाक्यों को निर्वचन समनुदेशित करता

है यद्यपि सिद्धांत रचना के इस कार्य में आधार रूप प्रयुक्त प्राथमिक भाषाई सामग्री, स्वयं–रचित सिद्धांत के दृष्टिकोण से, अनेक प्रकार से न्यूनतापूर्ण है। सामान्यतः इस पारंपरिक दृष्टिकोण में सत्यता का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है कि "प्रत्येक व्यक्ति को वार्तालाप में जो कष्ट मिलता है..और क्या सोचता है उसे समझना नहीं है बल्कि अपने विचारों को चिह्नों और शब्दों से पृथक् करना है जो प्राय: उनसे मिलते नहीं है" कार्डेमॉय (Cordemoy, (1667) और इससे वाक्–प्रत्यक्षण के लिए प्रस्तुत समस्या भाषा सीखने वाले के लिए कई गुणी बढ़ी-चढ़ी हो जाती है।

15. उदाहरण के लिए रसेल (1940, पृष्ठ 33 "तार्किक दृष्टि से व्यक्तिवाचक नाम दिक्काल के किसी भी संतत अंश में समनुदेशित किया जा सकता है") यदि हम उसको "तर्कदृष्टि से व्यक्तिवाचक नाम" की धारणा को अनुभवाश्रित प्राक्कल्पना से युक्त मानें। इस रूप से व्याख्या देने पर रसेल निस्संदेह एक मनोवैज्ञानिक सत्यता कह रहे हैं। दूसरी तरह से व्याख्या देने पर वे "व्यक्तिवाचक नाम" की अनभिप्रेरित परिभाषा दे रहे हैं। नामों और अन्य "वस्तु शब्दों" के लिए यह कोई तर्कमूलक अपेक्षा नहीं है कि वे दिक्काल संततता अथवा अन्य गेस्टाल्ट गुणताओं के निर्धारक को अवश्यमेव पूरा करें; और यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि वे (नाम और अन्य "वस्तु शब्द") ऊपर से ऐसा करते हुए दिखाई देते हैं जब अभिहित वस्तुएँ ऐसी ही होती हैं जो वस्तुतः प्रत्यक्ष हों (उदाहरणार्थ,-यह शब्द United States के लिए सही नहीं है-इसी प्रकार, यह कुछ अधिक अमूर्त और प्रकार्यात्मक दृष्टि से परिभाषित धारणाओं, जैसे "barrier" (अवरोध) के लिए सही नहीं है)। इस प्रकार प्राकृतिक भाषाओं में "LIMB" (अंग) जैसे शब्दों को आभासी अनस्तित्व के लिए कोई तार्किक आधार नहीं है जो LIMB (अंग) से इस बात को छोड़ कर समान है कि वह कुत्ते की चारों टाँगों को समेकित करने वाला एकल पदार्थ है, और परिणामतः "Its LIMB is brown" (उसका अंग भूरा है) जैसे "its head is brown" (उसका सिर भूरा है) का अर्थ यह होगा कि वह पदार्थ जिसमें चारों टाँगें समेकित हैं, भूरा है। इसी प्रकार इसका कोई प्रागनुभव कारण नहीं है कि प्राकृतिक भाषा में "HERD (झुण्ड)" शब्द क्यों नहीं है, जो समूहार्थी "HERD" झुंड से इस बात को छोड़ कर समान होता कि वह एक एकल बिखरे हुए पदार्थ के लिए प्रयुक्त होता और उसी की गायें एक अंश होती, और तब "a cow lost a leg" (गाय की टाँग नष्ट हो गई) की ध्वनि होती कि "the HERD lost a leg" (झुण्ड की टाँग नष्ट हो गई) इत्यादि।

16. इस प्रकार अरस्तू (De Anima, 403b) के लिए "घर का सारतत्त्व इस प्रकार के सूत्र में समनुदेशित है हवा, बरसात और गरमी द्वारा विनष्ट होने से बचाने वाला आश्रय "यद्यपि" भौतिक शास्त्री इसे पत्थर–ईंट–इमारती लकड़ी के शब्दों में वर्णन करता"। ऐसी परिभाषाओं पर रोचक टिप्पणियों के लिए देखिए–फुट (1961) केट्स (1964 d)।

17. "समुचित प्रक्रिया" से हमारा अर्थ उस प्रक्रिया से है जो भाषेतर सूचना से संबद्ध नहीं है–अर्थात्, जो "विश्वकोशीय ज्ञान" समाविष्ट नहीं करती। विवेचन के लिए देखिए बार-हिलेल (1960)। यादृच्छिक भाषाओं के बीच अनुवाद के लिए 'समुचित प्रक्रिया' की संभावना सत्तात्मक सार्वभौमों की पर्याप्तता पर निर्भर रहती है। वस्तुतः, यद्यपि यह विश्वास करने का पर्याप्त कारण है कि भाषाएँ महत्त्वपूर्ण सीमा तक एक ही साँचे से गढ़ी गई हैं तथापि यह मानने का कोई कारण नहीं है कि अनुवाद की "समुचित प्रक्रिया" सामान्यतया संभव है।

18. वस्तुतः G_j देने पर संरचनात्मक वर्णनों के समुच्चय को प्रत्येक S_i से f द्वारा समनुदेशित होना चाहिए (और प्रत्येक संरचनात्मक वर्णन को ठीक-ठीक एक S_i से समनुदेशित होना चाहिए)

और Gj की दृष्टि से वाक्य Si के निर्वचन की प्रत्येक रीति के लिए पृथक् वर्णन होना चाहिए। इस प्रकार असंदिग्ध वाक्य का एक ही संरचनात्मक वर्णन होना चाहिए, एक द्विधा संदिग्ध वाक्य के दो संरचनात्मक वर्णन होने चाहिए, इत्यादि। हम मान कर चलते हैं कि प्रतिचित्रण प्रभावकारी हैं–अर्थात् वाक्यों के संरचना–वर्णनों और व्याकरणों के गणन के लिए और (इसमें निरंतर ऐसा हो यह काम स्पष्ट है) सभी स्थितियों में f और m के मानों के निर्धारण के लिए कोई एक कलन विधि है।

19. स्पष्टतया, भाषा-अधिगम के वास्तविक सिद्धांत की रचना के लिए, कोई ऐसे अन्य अत्यंत गंभीर प्रश्नों का सामना करना आवश्यक होगा जिनका, उदाहरणार्थ, समुचित प्राक्कल्पना के क्रमिक विकास से, संगत प्राक्कल्पना पता लगाने की प्रविधि के सरलीकरण से, और भाषा के आधार रूप को भलीभाँति सीखने के बाद भी निरंतर भाषा-संरचना के विश्लेषण की गंभीरता और भाषाई कौशल एवं ज्ञान के निरंतर संचय से संबंध है। जिसका मैं वर्णन कर रहा हूँ वह आदर्श-अवस्था है जिसमें सही व्याकरण के उपार्जन के क्षण मात्र पर विचार किया जाता है। इन अतिरिक्त विचारणाओं की प्रस्तुति सामान्य विवेचन को अनेक रीति से प्रभावित कर सकता है। उदाहरणार्थ, कुछ सीमित किंतु फिर भी वास्तविक रीति से, पूर्व निर्धारक (i)–(v) स्वयं गहनतर अन्तर्जात संरचना के आधार पर संभवतः विकसित हो सकते हैं और यह प्राथमिक भाषाई सामग्री और उसे प्रस्तुत करने की रीति और क्रम पर अंशतः निर्भर होता है। इसके अतिरिक्त यह भी सच हो ही सकता है कि क्रमिक तथा अधिक विस्तारपूर्ण और उच्चतया संरचित समाकृतियों की श्रेणियाँ (परिपाकावस्थाओं के अनुरूप किंतु कदाचित् अंशतः भाषोपार्जन के पूर्वतर सोपानों द्वारा रूप में स्वतः निर्धारित) भाषोपार्जन के क्रमिक सोपानों की सामग्री पर अनुप्रयुक्त होती हैं।

20. यह देखना ज्ञानवर्धक होगा कि किस प्रकार आधुनिक संरचनात्मक भाषाविज्ञान ने इन निर्धारकों को पूरा करने का प्रयत्न किया है। वह यह मान कर चलता है कि सही प्राक्कल्पना (व्याकरण) को पता लगाने की प्रविधि को विवेच्य सामग्री के (जो तब प्राथमिक भाषाई सामग्री बन जाती है जब वह कदाचित् उन आर्थी सूचनाओं के कुछ प्रकारों से परिपूरित होती है जिनकी विवेच्य समस्या के संबंध में यथार्थ सार्थकता कभी भी स्पष्ट नहीं हो पाई है) एकांशों के क्रमिक विखण्डन और वर्गीकरण की प्रक्रियाओं पर आधारित होना चाहिए। व्याकरण अन्वेषण की प्रक्रिया पर इस अत्यधिक सबल माँग की क्षति–पूर्ति के लिए यह आवश्यक था कि वर्णनात्मक पर्याप्तता को स्थितियों के बड़े परास में उपेक्षित किया जाए। वस्तुतः आधुनिक भाषा विज्ञान के प्रणालीगत विवेचन विचारणाओं (ii)–(iv) पर बहुत ही कम ध्यान देते हैं (यद्यपि उनके संबंध कुछ निष्कर्षों की ध्वनि अवश्य करते हैं) और लगभग पूर्णतया वर्गीकरण और विखण्डन के क्रमिक रचनात्मक प्रक्रियाओं के विकास पर ध्यान संकेन्द्रित रखते हैं। विवेचन के लिए देखिए लीज़ (1957), चॉम्स्की (1964)।

21. इस बिन्दु की कुछ ऐतिहासिक रोचकता भी है। वस्तुतः, जैसाकि टीकाकारों से सामान्यतया देखा गया है, अन्तर्जात विचारों के सिद्धांत के लॉक द्वारा खंडन के प्रयास अधिकतः इस कारण दूषित हो गए हैं कि उन्होंने हम लोगों द्वारा अभी विवेचित अन्तर पर ध्यान नहीं दिया यद्यपि यह डेकार्टे को स्पष्ट था (और बाद में लिब्नीत्स द्वारा लाक में 'ऐसे' की समालोचना में इस पर पुनः बल दिया गया था)। देखिए § 8

22. देखिए टिप्पणी 19.। एक वास्तविक उपार्जन माडेल के पास प्राक्कल्पनाएँ ढूँढने की विशेष

विधि अवश्य होनी चाहिए। उदाहरणार्थ मान लीजिए कि विशेष विधि केवल उन व्याकरणों पर विचार करने की है जिनका भाषा-अधिगम के प्रक्रम में प्रत्येक सोपान पर निश्चित मान (मूल्यांकन माप (v) के शब्दों में) से अधिक मान है। तो महत्त्वपूर्ण भाषाई सिद्धात से यह अपेक्षा की जाएगी कि प्राथमिक भाषाई सामग्री D दिए जाने पर, D से संगत व्याकरणों का वर्ग मान के शब्दों में पर्याप्त तथा प्रकीर्ण हो ताकि D से संगत व्याकरणों के वर्ग और उच्च मानीय व्याकरणों के वर्ग का उभयनिष्ठ अंश पर्याप्त छोटा हो। केवल तभी भाषा-अधिगम वस्तुतः हो सकता है।

23. देखिए टिप्पणी 10 में सूचित सन्दर्भ।

24. निस्संदेह व्याख्यात्मक सिद्धांत को औचित्य-युक्त सिद्ध करने के प्रयत्नों की विफलता विविध रीति से व्याख्यात हो सकती है। वह यह निर्दिष्ट कर सकती है कि सिद्धांत गलत है अथवा उसके परिणाम गलत रीति से निर्धारित हुए हैं—विशेषतः यह कि वर्णनात्मक पर्याप्तता के लिए परीक्षित व्याकरण सर्वाधिक उच्चमान वाला नहीं है। चूँकि किसी भी समुचित मूल्यांकन माप को एक व्यवस्थाबद्ध माप होना चाहिए, और चूँकि भाषा एक सुदृढ़तया परस्पर संबद्ध व्यवस्था है, दूसरी (परवर्ती) संभावना की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। संक्षेप में, भाषाई सिद्धांत का औचित्य किसी भी सत्तात्मक और अन्तुच्छ अनुभवाश्रित प्राक्कल्पना के औचित्य से संबद्ध समस्याओं का परिहार नहीं कर सकता है।

25. वस्तुतः, यह स्पष्ट नहीं है कि क्यूने की स्थिति को किसी वास्तविक अर्थ में अनुभवाश्रित माना जाए या नहीं। इस प्रकार वह यह प्रस्ताव करता है कि अन्तर्जात गुणता-आकाश में एक लाल गेंद एक हरे गेंद की अपेक्षा लाल रूमाल से कम दूरी पर हो सकता है और इस कारण न केवल दूरता का पूर्वानुभवीय लक्षणनिरूपण उपलब्ध है, बल्कि इसका विविध दृष्टियों में दूरता में अन्तर्जात विश्लेषण भी उपलब्ध है। इसके विपरीत, इन थोड़े से टिप्पणों के आधार पर कोई यह अर्थ निकाल सकता है कि क्यूने "गेंद" जैसी धारणाओं को अन्तर्जात विचार मानते हैं और इस प्रकार अन्तर्जातता का आप्यन्तिक रूप अपनाते है; कम से कम, यह देखना कठिन है कि उल्लिखित प्रस्ताव इससे कहाँ भिन्न है। ऐसे अनुभवेतरवादी निर्वचन की अधिक पुष्टि के लिए क्यूने द्वारा पुनर्बलन सिद्धांत का नितांत त्याग बताया जा सकता है।

दुर्भाग्यवश, जो अनुभववादी दृष्टिकोण माने जाते हैं वे ऐसी अनिश्चित रीति से सामान्यतया व्यवस्थापित किए जाते हैं कि उनका किसी निश्चितता के साथ निर्वचन करना अथवा उनका विश्लेषण अथवा मूल्यांकन करना लगभग असंभव हो जाता है। कदाचित् एक आत्यंतिक उदाहरण भाषा कैसे सीखी जाती है और प्रयुक्त होती है इस संबंध में स्किनर द्वारा दिया गया वर्णन है (स्किनर, 1957)। केवल दो ही सामंजस्यपूर्ण निर्वचन हो सकते हैं जो इसका वर्णन देते हैं। यदि हम "उद्दीपन" 'पुनर्बलन" "अनुबंधन" आदि शब्दों का निर्वचन उन अर्थों में करें जो प्रयोगात्मक मनोविज्ञान में उन्हें दिया गया है तो यह वर्णन तथ्य के इतने स्थूलतया और स्पष्टतया विपरीत है कि विवेचन करना व्यर्थ है। विकल्पतः, यदि हम इन पदों का, प्रयोगात्मक मनोविज्ञान में प्रयुक्त (तत्त्वतः समानार्थी) पदों के रूपकात्मक विस्तरणों के शब्दों में, निर्वचन करते हैं तो जो कुछ प्रस्तावित किया जा रहा है वह एक मानसवादी वर्णन है और पारंपरिक वर्णनों से केवल इस बात में भिन्न है कि बहुत से अन्तर अवश्यतः अस्पष्ट हो गए हैं क्योंकि पारंपरिक मानसवादी धारणाओं के पुनर्कथन के लिए समुचित पदावली का अभाव रहा है। तब यह निरंतर दावा करना विशेष उलझन पैदा करता है कि यह पुनर्कथन किसी प्रकार,

पारंपरिक मानसवाद में प्रयुक्त रीति से, अधिक "वैज्ञानिक" है।

26. यह अनुप्रयोग कदाचित् "पुनर्बलन" द्वारा मध्यांतरित है यद्यपि अनेक समकालीन व्यवहारवादी इस पद को इतनी शिथिलित रीति से प्रयुक्त करते हैं कि पुनर्बलन का निर्देशन प्रस्तावित ज्ञानोपार्जन–वर्णन में कुछ नयी बात नहीं जोड़ता है। उदाहरणार्थ, क्यूने (1960, पृष्ठ 82–83) का सुझाव है कि "दूरस्थ परोक्ष मूल्यों" के स्थान पर "अनुरूपता के प्रति कुछ आधारभूत पूर्वाभिरुचि आ सकती है और अनुक्रिया का समाज द्वारा किए पुनर्बलन के अंतर्गत 'उस समर्थनकारी प्रयोग के अतिरिक्त नहीं है जिसका बच्चे के प्रयासों से सादृश्य पुरस्कार मात्र है"। जैसाकि क्यूने ने ठीक ही कहा है कि "यह पुनः स्किनर की योजना के पर्याप्त समशील है, क्योंकि उसने पुरस्कारों का गणन नहीं किया है" (यह स्किनर की योजना के प्रायः खोखलेपन के सहायक कारकों में एक है)। इस प्रस्ताव का परिणाम यह है "पुनर्बलन" का अकेला प्रकार्य बच्चे को साधुप्रयोग के विषय में सूचना देना हैं : इस प्रकार "पुनर्बलन सिद्धांत" का अनुभवाश्रित दावा यह होगा कि भाषा का अधिगम सामग्री की अनुपस्थिति में नहीं हो सकता है। वस्तुतः, स्किनर का "पुनर्बलन" का संप्रत्यय प्रकटतया इसमें दुर्वल है क्योंकि वे इसकी भी अपेक्षा नहीं मानते कि "पुनर्बलन करने वाला उद्दीपन" अनुक्रिया करने वाली जीवी से टकराए; इसकी आशा की जाए या कल्पना की जाए यही पर्याप्त है (इस विषय पर महत्त्वपूर्ण उदाहरणों के संकलन के लिए देखिए चॉम्स्की, 1959b)।

27. इन यांत्रिकियों को, जैसा इस समय विदित है, तात्विक होना आवश्यक नहीं है। देखिए. उदाहरणार्थ, लेटिविन और अन्य (1959), ह्यूबल और वीज़ल (1962), फ़िस्काफ़ और गोल्डस्टेन (1963)। इस कृति ने यह प्रदर्शित किया है कि ग्राही तंत्र अथवा निम्न प्रान्तःस्था-केन्द्रों में परिधीय प्रक्रमन उद्दीपनों की ऐसा जटिल विश्लेषण दे सकता है जो, पुनश्चः, जीव के जीवन-काल में विशिष्टसा और व्यवहार–पेटर्नों के साथ भलीभाँति सहसम्बद्ध होता है। इस प्रकार ऐसा लगता है कि परिधीय प्रक्रमन असंरचित और परमाणुपरक ढाँचे में वर्णित किया जाता है जो कि अनुभववादियों के चिन्तन में पूर्वग्रहीत है।

28. यहां मैं लैंग्ले के अनुवाद से, जिसने इस उद्धरण का गलत अनुवाद किया है, हट रहा हूँ। फ्रेंच मूल में इस प्रकार था"

J'e demeure d'accord que nous apprenons les idées et les véritées innées, soit en prenant garde á leur source, soit en les v'erifiant par l' experience. Ainsi je ne saurois admettre cette proposition, tout ce qu'on apprend n'est pas inne'. Les vérutés des nodmbres sont en nous, et on ne laisse pas de les apprendre, soit en les tirant de leur source lorsq'on les apprend par raison démonstrative (ce qui fait voir qu'elles sont innées) soit en les éprouvant dans les exemples comme font les arithméticien vulgaires.....'

(मैं इस बात से सहमत हूँ कि हम जन्मजात विचार तथा सिद्धांतों को उनके मूल स्रोतों पर विचार करते हुए अथवा उनको अनुभव से प्रमाणित करते हुए सीखते हैं।

मैं इस विचार से सहमत नहीं हूँ कि 'जो कुछ हम सीखते हैं, वह जन्मजात नहीं हैं।' संख्याओं के सिद्धान्त जन्मजात हैं, फिर भी हम उन्हें सीखते रहते हैं। उन्हें निर्देशक मूल अभि-

प्राय की पद्धति से स्रोत से खोजते हैं जिससे स्पष्ट है कि वे जन्मजात हैं। जिस प्रकार सामान्य गणितज्ञ प्रमाणों को उदाहरणों द्वारा प्रस्तुत करता है, ठीक उसी प्रकार उनका प्रमाण उदाहरणों से स्पष्ट करते हुए सीखते हैं)।

29. इन प्रश्नों पर हम्बोल्ट के दृष्टिकोण को उदाहृत करने वाले उद्धरणों और अतिरिक्त विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की (1964)।

30. वर्गीकरणात्मक भाषाविज्ञान का यह पर्याप्त सही निर्वचन है यह सर्वथा स्पष्ट नहीं हैं। एक बात तो यह है कि संरचनात्मक भाषाविज्ञान भाषाप्रयोग के "सृजनात्मक" पक्ष से विरलतया ही संबंध रखता है जो तर्कवादी भाषा-वैज्ञानिक सिद्धांत में प्रमुख विषय रहा है। दूसरे शब्दों में, नए और पहले कभी न सुने हुए वाक्यों के-अर्थात्, भाषा के प्रसामान्य प्रयोग के-उत्पादन और निर्वचन की ओर ध्यान नहीं दिया है। इस प्रकार यह सुझाव कि संनिहित अवयव विश्लेषण के विविध सिद्धांतों का प्रजनक पदबंध संरचना व्याकरणों के रूप में निर्वचन किया जा सकता है (जैसा. चॉम्सकी, 1956, 1962 a अथवा पोस्टल, 1964 a)। इन सिद्धांतों को विकसित करने वाले भाषा विज्ञानियों के स्पष्ट कथनों से और बहुत कर उनके अभिप्रायों से निश्चयत: परे चला जाता है। अतएव वर्णनात्मक पर्याप्तता की केन्द्रीय समस्या संरचनात्मक भाषाविज्ञान में वस्तुतः उठाई ही नहीं गई है। दूसरे बहुत से "नव-ब्लूमफील्डवादी" भाषाविज्ञानी, जो टिप्पणी 1 के निर्वचन (b) के ब्लूमफील्ड संमत व्यवहारवाद को, स्वीकार करते हैं (और फ़र्थ के अनुयायी और "नव-फर्थवादी" और अन्य) इस प्रकार वर्णनात्मक पर्याप्तता से अपना संबंध स्पष्टतया अस्वीकार चुके हैं और व्याकरणिक वर्णन को, कम से कम सिद्धांत रूप. प्राथमिक भाषाई सामग्री के संगठन मात्र में सीमित करते हैं)। अन्य विद्वानों का यह विश्वास है कि व्याकरण को कम से कम वक्ता की "आदतों" अथवा स्ववृत्तियों" का वर्णन करना चाहिए यद्यपि भाषा प्रयोग किस अर्थ में आदत अथवा स्ववृत्ति का विषय माना जा सकता है यह संतोषजनक रीति से कभी भी स्पष्ट नहीं हुआ है। यदि संक्षेप में कहें तो पद 'आदत' अथवा "स्ववृत्ति" का कोई स्पष्ट अर्थ नहीं है जिसके अनुसार भाषा को "आदतों की संरचना" अथवा "स्ववृत्तियों की व्यवस्था" के रूप में वर्णित करना सही हो सके।

31. भाषोपार्जन के दिए तथ्यों का कारण बताने में उनकी अपेक्षाकृत सफलता के अतिरिक्त यही एक दिशा है जिसमें ऐसे विकल्पनों की तुलना संगत है। किंतु इस विचारणा से प्रकटतया कोई ऐसी सूचना नहीं मिलती है जिसका वैकल्पिक सिद्धातों के चयन पर कोई विशेष प्रभाव हो।

सामान्यतया, यह ध्यातव्य है कि एक आत्यांतिक रूप से विशेषीकृत निवेश-निर्गम संबध अवश्यमेव एक जटिल और उच्चतया संरचनायुक्त युक्ति की पूर्वकल्पना नहीं करता है। चाहे मन के संबंध में हमारा अभिग्रह यह हो कि उसके अन्तर्गत रचनांतरणात्मक व्याकरण के लिए समाकृतियां है अथवा उसके अन्तर्गत याहच्छिक साहचर्यों के बनाने या आगमनात्मक अथवा वर्गीकरणात्मक संक्रियाओं के विशेष प्रकारों को कार्यान्वित करने के लिए यांत्रिकी है, प्रकटतया मस्तिष्क के संबंध में न तो जानकारी है और न इन प्राक्कल्पनों को समर्थित करने में प्रयोग-योग्य विश्वास्य भौतिकी व्यवस्थाओं में इंजीनियरी-विषयक अन्तर्दृष्टि है। इसी प्रकार, इस साधारण अभिग्रह का कोई औचित्य नहीं है कि तर्कवादी और अनुभववादी दृष्टिकोणों के बीच असममित है क्योंकि तर्कवादी दृष्टिकोण में प्रश्न निरुत्तर है और यह दिखाया नहीं जाता है कि किस प्रकार अभ्युपगमित आन्तरिक संरचना उठती है। अनुभववादी दृष्टिकोण भी इसी प्रश्न के प्रति चुपचाप है। वर्तमात में, इस का कोई बेहतर वर्णन नहीं है कि किस प्रकार

अनुभवाश्रित सामग्री-प्रक्रमन-संक्रियाएँ प्रजाति में, अंतर्जात संरचना के रूप में विकसित हुई हैं या किस प्रकार तर्कवादी समाकृतियाँ जीवियों की संरचना के उद्‌विकास-परक प्रक्रमों अथवा अन्य निर्धारण करने वाले तथ्यों द्वारा उठी हैं। और न मानवेतर प्रजातियों की तुलना अनुभव-वादियों के तर्क को सहायता पहुँचाती है। इसके विपरीत, प्रत्येक ज्ञात प्रजाति की अत्यधिक विशेषीकृत प्रज्ञानात्मक क्षमताएँ हैं। यह पर्यवेक्षण महत्त्वपूर्ण है कि तुलनात्मक मनोविज्ञान ज्ञान और व्यवहार के अनुभवाश्रित अभिग्रहों पर लक्षणतया नहीं बढ़ा है और इन अभिग्रहों की कोई पुष्टि नहीं करता है।

32. यह विश्वास करना सकारण है कि भाषोपार्जन व्यवस्था मानसिक विकास की "क्रान्तिक अवधि" में ही पूर्णतया प्रकार्यात्मक हो सकती है, अथवा, अधिक विशिष्टतया, उसके विविध परिपाकात्मक सोपानों (देखिए टिप्पणी 19) में क्रांतिक अवधियाँ होती हैं। इस प्रश्न से संबद्ध महत्त्वपूर्ण और सूचनात्मक समीक्षा के लिए देखिए लेनेबर्ग (Lenneberg, प्रकाश्य)। मानव भाषा की प्रकृति पर जीवविज्ञानतः दिए नियामकों की समस्या के अनेक अन्य पक्ष यहां और लेनेबर्ग (1960) में दिए गए हैं।

यह द्रष्टव्य है कि हम निस्संदेह यह नहीं ध्वनित करते कि भाषापार्जन के प्रकार्य भौतिक मस्तिष्क अथवा अमूर्त मन के पूर्णतया पृथक् अवयवों द्वारा नहीं पूरे किए जाते हैं। यह उसी प्रकार है जैसे प्रत्यक्षण में विश्लेषणकारी यांत्रिकी के अध्ययन करते समय (देखिए, सदरलैंड, 1959, 1964)। यह ध्वनित नहीं होता है कि पूर्ण प्रात्यक्षिक व्यवस्था के प्रभिन्न और पृथक् अवयव हैं। वस्तुतः, भाषोपार्जन और भाषा-प्रयोग के गुणधर्मों से प्रज्ञान के अन्य पक्ष किस सीमा तक सहभागिता करते हैं और मन के समृद्धतर और अधिक व्यापक सिद्धांत को इस रीति से विकसित करने के कैसे प्रयत्न हों इसका निर्धारण करना मनोविज्ञान की एक महत्त्वपूर्ण समस्या है।

33. यह एक विचित्र तथ्य है कि अनुभववाद साधारणतया "वैज्ञानिक" दर्शन जैसा माना जाता है। वस्तुतः, ज्ञानोपार्जन के विषय में अनुभववादी उपागम की कुछ हठधर्मिता पूर्ण और प्रागनुभव-परक प्रकृति है जिसका तर्कवादी उपागम में बहुलतया अभाव है। भाषोपार्जन के विशिष्ट उदाहरण में अनुभववादी उपागम अपनी खोज इस समस्या के साथ प्रारंभ करता है कि कुछ यादृच्छिकतया चुनी सामग्री-प्रक्रम यांत्रिकी (जैसे, साहचर्य के सिद्धांत, वर्गीकरणात्मक प्रक्रियाएँ) ही भाषोपार्जन युक्ति को उपलब्ध हैं। तब वह इन प्रक्रियाओं के सामग्री पर हुए अनुप्रयोग की यद्यपि बिना यह दिखाए कि इस अनुप्रयोग का परिणाम स्वतंत्रतया वर्णनात्मतया पर्याप्त रूप से प्रदर्शित व्याकरणों के अनुरूप हैं, खोज करता है। हठधर्मिता न करने वाला अनुभववादी विकल्प इस पर्यवेक्षण से प्रारंभ होगा कि भाषोपार्जन के अध्ययन में हमें प्रस्तुत प्राथमिक सामग्री के विषय में कुछ सूचनाएँ और परिणामतः उत्पन्न व्याकरण मिलते हैं और हमारे सामने समस्या इस निवेश-निर्गम संबंध में मध्यस्थ युक्ति की संरचना निर्धारित करने की है (यही बात अधिक सामान्य समस्या के लिए भी सही है जिसकी भाषोपार्जन एक विशिष्ट स्थिति है)। इस युक्ति की आंतरिक संरचना के विषय में, अनुभववादी अथवा अन्यथा, किसी विशिष्ट अभिग्रहों के आधार नहीं हैं। किसी भी पूर्व-संकल्पना के बिना आगे बढ़ने पर, हम स्वभावतः निर्गम में एकरूपताओं (रूपात्मक और सत्तात्मक सार्वभौमों) के अध्ययन की ओर मुड़ते हैं जिसको हमें युक्ति की संरचना से जोड़ना चाहिए (अथवा, यदि यह दिखाया जा सकता है इसे हम निवेश की एकरूपताओं के साथ संबद्ध कर सकते हैं और यह विकल्प रोचक स्थितियों में कदाचित् ही

गंभीर विकल्प होता है)। यह प्रभावत: तर्कवादियों का उपागम रहा है और यह देखना कठिन है कि इसके क्या विकल्प हैं यदि मानसिक प्रक्रमों की प्रकृति के संबंध में हठधर्मितापूर्ण पूर्वमान्यताएँ निरस्त कर दी जाएँ।

34. अर्थात् वह सिद्धांत को पृष्ठ 31 के निर्धारक (i) – (iv) को पूरा करना है। हम इसके आगे यह मानेंगे, बिना किसी अतिरिक्त टिप्पण के, कि विवेचनागत प्रत्येक भाषाई सिद्धांत इन निर्धारकों को पूरा करने का प्रयत्न करता है।

35. पिछले कुछ सालों में व्याकरण के अति सरल सिद्धांतों के रूपात्मक गुणधर्मों की पर्याप्त खोज हो चुकी है। अधिकांश में, वह दुर्बल प्रजनक क्षमता में सीमित रहा है यद्यपि प्रबल प्रजनक क्षमता वाले भी कुछ परिणाम रहे हैं (विशेषत: वे जो § 2 में निर्दिष्ट किए गए हैं)। परवर्ती स्पष्टतया अत्यधिक रोचक धारणा रही है किंतु इसका अध्ययन बहुत ही कठिन रहा है। इस कार्य के सर्वेक्षणों के लिए देखिए—चॉम्स्की (1963), चॉम्स्की और शुड्जनवर्गर, (1963)।

36. देखिए पोस्टल (1962 b, 1964 a, 1964 c) न तो प्रसंग निरपेक्ष व्याकरण का सिद्धांत और न परिमित–स्थिति व्याकरण का सिद्धांत गणितीय गवेषणा के लिए आविष्कृत प्रत्येक की है। प्रत्येक रूपात्मक दृष्टि से सुष्ठु अभिप्रेरित है और प्रत्येक को भाषाविज्ञान के अतिरिक्त स्वतंत्र रुचि है और प्रत्येक वस्तुत: भाषा विज्ञानियों द्वारा व्यापक भाषा सिद्धांत के रूप में प्रस्तावित किया जा चुका है। वस्तुत:, जैसाकि पोस्टल (1964 a) ने दिखाया है, लगभग प्रत्येक सिद्धांत जिस पर हाल के सालों में ध्यान गया है, प्रसंगनिरपेक्ष व्याकरण के ढाँचे में भी आता है। जैसा कि हम आगे चलकर देखेंगे, प्रसंगनिरपेक्ष व्याकरण के सिद्धांत का एक विशेष रूप प्रकटतया रचनांतरण व्याकरण के सामान्य सिद्धांत के भीतर महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

37. यह संभावना प्रागनुभव पूरी तरह निरस्त नहीं की जा सकती है किंतु वस्तुत:, निश्चिततया ऐसा है नहीं। विशिष्टत: ऐसा लगता है कि जब रचनांतरणात्मक व्याकरण का सिद्धांत समुचित या व्यवस्थापित होता है, कोई भी ऐसा व्याकरण रूपात्मक निर्धारकों को पूरा किए नहीं रह सकता है जो उसे पुनरावर्ती समुच्चयों की गणना में प्रतिबंधित करता है। देखिए, आधार नियमों पर निर्धारक, और अध्याय 3 टिप्पणी 1 और अध्याय 3 और अध्याय § 2.2 जहाँ लोपन रचनांतरणों के निर्धारकों का अतिरिक्त विवेचन है।

———

अध्याय 2

1. विस्तार में, (2) में निरंतर पदावली और सत्ता दोनों के विषय में विवेचन के लिए कुछ स्थान है, और, विशिष्टतया (2ii) की स्थिति में वैकल्पिक रूढ़ियों और निर्णयों का अनुप्रयोग किया गया है। फिर भी, मैं सोचता हूँ कि केन्द्रिय तथ्य पर्याप्त स्पष्ट हैं और तत्वत: प्राय: अधिकांश के विषय में प्रबल सहमति है। वर्तमान के लिए, इन्हें केवल व्याकरणिक सिद्धांत द्वारा वर्णनीय तथ्य मानता हुआ, मैं इन पर्यवेक्षणों की पर्याप्तता के विषय में (विस्तार को छोड़कर) अतिरिक्त प्रश्न नहीं उठाऊँगा।

2. भाषा के सिद्धांत को अपने सैद्धांतिक पदों (जैसे, "स्वनिय" "रूपिम" "रचनांतरण" "संज्ञा-पदबंध" "कर्त्ता" आदि) के पारस्परिक संबंधों के विषय में तात्विक-नियमों का अवश्य वर्णन करना चाहिए और संप्रत्ययों की इस व्यवस्था को अन्तत: संभावी अनुभवात्मक घटना चक्रों (प्राथमिक भाषाई सामग्री) से संबद्ध करना चाहिए। चॉस्की (1957) और अन्यत्र विवेचित तर्कों के कारण मुझे ऐसा लगता है कि सभी सार्थक संरचनात्मक धारणाओं को पूर्व परिभाषित धारणा "प्रजनक व्याकरण" के शब्दों में लक्षित करना ही होगा (जब कि संरचनात्मक व्याकरण सामान्यतया यह मानता रहा है कि "व्याकरण" की धारणा पूर्व परिभाषित धारणाओं, जैसे "स्वनिम्" "रूपिम" आदि के शब्दों में विकसित और और व्याख्यात होनी चाहिए)। अर्थात्, मैं यह मान रहा हूँ कि परिभाषा की जाने योग्य आधार भूत धारणा यह है G उस भाषा का अत्यधिक उच्च मान-वाला व्याकरण है जिस की प्राथमिक भाषाई सामग्री D एक नमूना है "जहां D सिद्धात की आदिम धारणाओं के शब्दों में निरुपित हैं; भाषा के स्वनिम, रूपिम, रचनांतरण आदि इस प्रकार वे तत्व हैं जो G द्वारा निर्धारित व्युत्पादनों और निरूपणों में निर्विशिष्ट योगदान देते हैं। यदि ऐसा है तो आंशिक प्रजनक व्याकरण भाषा रूप के सिद्धांत के मूल्यांकन के लिए महत्वपूर्ण एक मात्र अनुभवाश्रित सामग्री देता है। इसलिए वर्तमान के लिए अपेक्षाकृत बहुत कम भाषाओं के व्याकरणिक वर्णनों से ही ऐसा साक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। यह विशिष्टतया गड़बड़ करने वाला नहीं है। महत्वपूर्ण तो यह है कि ऐसे अभिग्रहों को उपलब्ध साक्ष्यों से समर्थन मिले और वे पर्याप्त स्पष्टतया के साथ व्यवस्थापित हो सकें ताकि नये अथया संशोधित प्रजनक व्याकरणों का उनकी शुद्धता के साथ, भाषाई अध्ययन की गहराई और परास बढ़ने के साथ, महत्वपूर्ण संबंध रहे। संक्षेप में, हम्बोल्ट के निम्नलिखित निष्कर्ष को जो कि उन्होंने श्लेगेल को 1822 में लिखे पत्र में (लित्समन, 1908, पृ० 84) दिये थे हमें स्वीकार करना चाहिए, dass jede grammatisehe Discussion nur dann wahrhaften wissenschaftlichen Gewinn bringt, wenn sie so durchgefiihrt wird, als lage in ihr allein der gane zweck, und wenn man jede, noch so rohe sprache selbst, gerade mit derselben Sorgfalt behandelt also Griechisch und Latien isch." (जब व्याकरण पर वैज्ञानिक विचार विमर्श किया जाता है, तब वह वैज्ञानिक महत्त्व प्राप्त करता है। उस समय ऐसा किया जाता है, मानो उसी विचार विमर्श में मेरा पूरा पुरुषार्थ विद्यमान हो, तथा यदि प्रत्येक भाषा का अध्ययन इस गम्भीरता के साथ किया जाता है, तो मानो वह भाषा ग्रीक अथवा लैटिन भाषा है।)

भाषाओं का बड़े परास में अध्ययन ही इस प्राक्कल्पना के मूल्यांकन करने की रीति हो सकती है कि कोई रूपात्मक निर्धारक एक भाषाई सार्वभौम है। देखने पर यहां विरोधाभाष लगता है किंतु एक अकेली भाषा की भीतरी विचारणाएँ इस निष्कर्ष के सार्थक समर्थन दे सकती हैं कि विवेच्य विशिष्ट भाषा के सिद्धांत पर (उसके व्याकरण पर) न कि सामान्य भाषाई सिद्धांत पर जिस पर वह विशिष्ट व्याकरण आधारित है, कुछ रूपात्मक गुणधर्म अध्यासित करना चाहिए। वर्णनात्मक अथवा व्याख्यात्मक पर्याप्तता का अध्ययन ऐसे निष्कर्ष पर पहुँचा सकता है; इसके अतिरिक्त, अन्यथा सुसमर्थित व्याकरण-सिद्धांत के ढाँचे के भीतर कुछ निर्धारकों को व्यवस्थापित करने की कठिनाई और असंभावना कुछ साक्ष्य देती है कि, यथार्थता में ये व्याकरणिक नियमों की प्रयोगयोग्यता पर सामान्य निर्धारक हैं न कि स्वयं व्याकरणिक नियमों की व्यवस्था में अभिव्यक्ति योग्य भाषा विशेष के पक्ष हैं। इस प्रकार के अनेक उदाहरण बाद में दिये जाएँगे ।

सामान्यतया, यह आशा करनी चाहिए कि गहन संरचना से संबद्ध वर्णन ही भाषाई सार्वभौमों के प्रस्तावों के लिए गंभीर अर्थ रखते हैं। चूँकि ऐसे वर्णन विरल हैं कोई भी ऐसा प्रस्ताव संकट पूर्ण होगा किंतु ये वर्णन स्पष्टतया संकटपूर्ण होने के कारण कम रोचक या कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं।

3. एक दुर्बल यद्यपि पर्याप्त निर्धारक चॉम्स्की (1955, अध्याय 6) में दिया गया है। एक उससे सबल किंतु सुष्ठु-अभिप्रेरित निर्धारक पोस्टल(1964 a) द्वारा प्रस्तुत किया गया था। इस प्रश्न के कुछ पक्षों पर चॉम्स्की और मिलर(1963, § 4) और चॉम्स्की(1963 § 3) में विवेचित हैं।

4. कुछ विवेचन के लिए पृष्ठ 16 पर उल्लिखित संदर्भों को तथा अन्य अनेकों को देखिए ? पदबंध संरचना व्याकरण की अपर्याप्तताओं के इन प्रदर्शनों पर कोई आपत्ति नहीं उठाई गयी है यद्यपि पदावली सम-अभिधानों के कारण कुछ संभ्रम उत्पन्न हुए हैं। इसका सर्वाधिक आत्यंतिक उदाहरण हर्मन(1963) में मिलता है। जहाँ "पदबंध संरचना के पक्ष में" इस उपशीर्षक से एक शोध लेख में पदबंध संरचना व्याकरण के विपक्ष में अनेक, मानक तर्क अनुमोदन के साथ पुनरावृत किये गये हैं। यह विचित्र परिस्थिति केवल इस कारण उत्पन्न हुई है कि लेखक ने "पदबंध संरचना" पद को ऐसा पुनः परिभाषित किया है कि इस विषय के प्रचुर साहित्य में सर्वत्र अनुप्रयुक्त "पदवंध संरचना व्याकरण" पद कहीं अधिक समृद्धतर व्यवस्था को निर्दिष्ट करता है (विशेषतः, वह ऐसी व्यवस्था को निर्दिष्ट करता है जहाँ पदबध संरचना व्याकरण के अर्थ में कोटीय प्रतीकों के स्थान पर, हमें युग्म $(\alpha . \varphi)$ मिलते हैं जहाँ α कोटीय प्रतीक हैं और φ रचनांतरण, प्रासंगिक प्रतिबंध आदि को सांकेतित करने में प्रयुक्त सूचनांक समुच्चय है)। अर्थात्, हमने प्रभावतः पदबंध संरचना व्याकरण के विपक्ष के तर्कों को, "पदबंध संरचना व्याकरण" पद को उन विशिष्ट व्यवस्थाओं में सीमित करने के विरोध में दिया है जो पहले "पदबंध संरचना व्याकरण" के रूप में परिभाषित किया जाता रहा है। यह पदावली विषयक प्रस्ताव व्याकरण के वर्गीकरणात्मक सिद्धांत की पर्याप्तता जैसी सारभूत समस्या को छूता तक नहीं है। जिसके लिए (सामान्य अर्थ में) पदबंध संरचना व्याकरण एक मॉडेल है। वर्गीकरणात्मक व्याकरणिक सिद्धांत के लिए मॉडेल रूप पदबंध संरचना व्याकरण की तात्विक पर्याप्तता का (विच्छिन्न अवयवों से संबद्ध समस्याओं के संभव किंतु अप्रासंगिक अपवाद के साथ-देखिए चॉम्स्की,

1957, पोस्टल, 1964 a) अत्यंत विश्वासोत्पादक रीति से पोस्टल ने प्रदर्शन किया है और मेरी जानकारी से हर्मन या अन्य किसी के द्वारा भी उस पर आपत्ति नहीं उठाई गई है। इस संबंध में जो समस्या हर्मन ने उठायी है वह यह है कि क्या "पदबंध संरचना व्याकरण" पद वर्गीकरणात्मक मॉडेलों तक ही सीमित रखा जाए या इससे भी अधिक विस्तृत अर्थ में प्रयुक्त किया जाए और यह पदावली विषयक प्रश्न कोई विशेष महत्त्व का नहीं है। पदावली विषयक सम-अभिधानता का सामान्य पाठक पर वही प्रभाव, नितांत मिथ्या रूप से, पड़ता है कि पदबंध संरचना व्याकरण (सामान्य प्रचलित अर्थ में) के सिद्धांत की भाषाई पर्याप्तता के संबंध में कुछ विवाद है।

संभाव्य संभ्रम का एक अतिरिक्त स्रोत, इस शोध पत्र के संबंध में, यह है कि वहाँ प्रस्तुत व्याकरण का पदबंध संरचना व्याकरण के रूप में निर्वचन करने की एक रीति है; वह यह है कि प्रत्येक मिश्र तत्व (∮.φ) को एक एकल. अविश्लेषणीय कोटि प्रतीक माना जाए। इस निर्वचन में हमारे सामने पदबंध संरचना व्याकरण की समुचित मूल्यांकन प्रक्रिया के लिए एक नया प्रस्ताव है–प्रस्ताव जो इस तथ्य द्वारा तुरंत खंडित हो जाता है कि इस निर्वचन में अब उच्चतम मान वाले व्याकरण के पदबंध चिह्नक द्वारा इस संरचनात्मक वर्णन विना अपवाद के गलत होता है। उदाहरणार्थ, John saw bill, did Tom see you (जॉन, ने बिल को देखा, क्या टॉम ने आपको देखा) में तीन तत्व John, Bill, Tom (जॉन, बिल, टॉम) तीन प्रभिन्न और पूर्णतया असंबद्ध कोटियों के अन्तर्गत आते हैं और कोई भी सर्वनिष्ठ कोटि इनके बीच में नहीं है। इस प्रकार हमारे सामने निम्नलिखित विकल्प हैं: हम शोध पत्र का यह निर्वचन करें कि वह पदबंध संरचना व्याकरणों के लिए नया मूल्यांकन माप प्रस्तुत कर रहा है और इस स्थिति में उसका वर्णनात्मक पर्याप्तता के आधार पर तुरंत खंडन कर दिया जाता है, अथवा यह निर्वचन करें कि वह "पदबंध संरचना व्याकरण" पद को पूर्णतया नये अर्थ में प्रयुक्त करने का प्रस्ताव करता है और इस स्थिति में उसका पदबंध संरचना व्याकरण की पर्याप्तता के प्रश्न पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। कुछ अतिरिक्त विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की(1966 a) जहां रचनांतरण व्याकरण की इन और अन्य आलोचनाओं पर, जिनमें कुछ वास्तविक हैं और कुछ आभासी हैं, विचार किया जाएगा।

5. यह अभिग्रह चॉम्स्की(1955) में ,रचनांतरण व्याकरण के आधार पर किये विवेचन (अध्याय 7) में, और मेरी जानकारी में रचनांतरण व्याकरण के सभी परवर्ती अनुभवाश्रित अध्ययनों में किया गया है। रचनांतरणात्मक नियमों की दशा में एक इसी प्रकार का अभिग्रह मैंथ्यूस(1964, परिशिष्ट A ∮ 2) में दिया गया है। आनुक्रमिक व्याकरणों के रूपात्मक गुणधर्मों का अध्ययन गिन्सवर्ग और राइस(1962) और शेंमीर (1961) द्वारा किया गया है–ये प्रसंगनिरपेक्ष व्याकरण है जहां अनुक्रमिक गुणधर्म, इसके अतिरिक्त, अन्तर्निष्ठ (अध्याय 3 टिप्पणी 6 के अर्थ में) हैं न कि बहिर्निष्ठ जैसा कि यहाँ (कम से कम प्रसंगसापेक्ष स्थिति में) पूर्वानुमानित किया गया है।

6. जैसा कि पहले दिखाया गया है, इन पदों के प्रयोग के संबंध में भिन्न रूढ़ियाँ और कुछ सारपूर्ण वैमत्य भी है। इस प्रकार यदि हम नियम (5) को और तदनुरूपतया, पदबंधचिह्नक (3) को ऐसा परिवर्तित करना चाहते हैं कि मुख्य कोटि S को वह sincerity (ईमानदारी) (NP) और may frighten the boy (VP) (लड़के को भयभीत कर सकती है) में द्विधा

विश्लेषित कर सके, तो (VP), (11) में परिभाषित किये अर्थ में वाक्य का "का–विधेय" हो जाएगा। प्रकार्यात्मक धारणाओं की इन सुझाई हुई परिभाषाओं के सुधार के लिए § 2.3.4 के अंतिम अनुच्छेद को देखिए।

7. इसके अतिरिक्त हम यह मान सकते हैं कि इस स्थिति में Y और Z अनन्य हैं–दूसरे शब्दों में X में B का केवल एक घटन है। परिभाषा को इस प्रकार सामान्यीकृत किया जा सकता है कि वह उस स्थिति को भी समाविष्ट कर सके जिसमें इसका उल्लंघन होता है, किंतु यह तर्कसंगत समता है कि आधार नियमों की व्यवस्था पर अनन्यता का निर्धारक अध्यारोपित किया जाए।

8. उल्लेखनीय है कि यथार्थ परिभाषाओं के लिए "घटन" "अधिकृति" आदि धारणाओं से सूक्ष्म विनिर्देशन की अपेक्षा होती है। इससे सिद्धांत की कठिनाई नहीं उठती है और अनौपचारिक विवेचन की पूरी अवधि में मैं इन प्रश्नों का परिहार ही करता रहूँगा। यहां प्रयुक्त अधिकांश धारणांओं की सूक्ष्म परिभाषाएँ, उनके घटनों के ध्यान में रखते हुए, चॉम्स्की (1955) में मिल सकती हैं।

9. कोई यह प्रश्न उठा सकता है कि क्या M को कोशीय कोटि का मना जाए अथवा क्या विकल्पत: नियम M→may, can.. ...को समुच्चय (5 I) में अन्तर्गत न किया जाए। इस प्रभेद का महत्त्व आगे चलकर विवेचित किया जाएगा। यह किसी भी प्रकार केवल एक पदावली विषयक प्रश्न नहीं है। इस प्रकार, उदाहरणार्थं, केशीय और अकेशीय कोटियों के बीच प्रभेद से संबद्ध सामान्य रूढ़ियों को स्थापित करने की आशा की जा सकती है। संभावनाओं के संगत परास को उदाहृत करने के लिए मैं केवल दो विचारणाओं को प्रस्तुत कर रहा हूँ। संयोजन का सामान्य नियम स्थूलत: इस प्रकार होगा यदि XZY और XZ'Y ऐसी दो शृंखलाएँ हैं कि कुछ कोटि A के लिए Z एक A है और Z' एक A है, तो हम शृंखला XZ and ZY बना सकते हैं Z and Z' एक A है (देखिए चॉम्स्की 1957, § 5.2 और कहीं अधिक दूरगामी अध्ययन के लिए ग्ली लिटमैन, (1961)। किंतु स्पष्टतया A को एक विशेष प्रकार की कोटि होना चाहिए, वस्तुत:. संभावनाओं के वास्तविक परास को लक्षित करने के समीप पहुँचते हैं यदि हम A को मुख्य कोटियों में सीमित रखें। इस कसौटी से M को एक कोशीय कोटि होना चाहिए।

दूसरे, उन स्वप्नप्रक्रियात्मक नियमों पर विचार करें जो रचनांतरण चक्र द्वारा अंग्रेजी में बलाघात को समानुदेशित करते हैं (देखिए, चॉम्स्की, हाले और लुकाफ़, 1956, हाले और चॉम्स्की 1960, चॉम्स्की और मिलर, 1963)। ये नियम कुछ कोटियों के अन्तर्गत आने वाली शृंखलाओं में एक स्थिर रीति से बलाघात समानुदेशित करते हैं। यदि पूर्णरूप से विचार किया जाए, विवेच्य कोटियाँ अभी-वर्णित अर्थ में मुख्य कोटियां लगती हैं। विशिष्टतया, अकेशीय रचनांग, कोटियों के तत्व (जैसे, आर्टिकिल आदि) बलाघातहीन होते हैं। इस कसौटी से, कोई यह चाहेगा कि M एक अकोशीय कोटि हो, यद्यपि यहां भी स्थिति अस्पष्ट ही है, देखिए may–may का सुप्रसिद्ध वैषम्य John may try (उसे अनुमति दी जाती है) और John may try (यह संभव है)।

10. कुछ लोगों ने यह तर्क दिया है कि विवेच्य प्रभिन्नता का कोई भी संबंध अंग्रेजी के नियमों से नहीं है, किंतु यह केवल प्रयोग की बारंबारता आदि पर निर्भर है। ऐसे विश्लेषण के लिए जो दुर्लभ्य कठिनाईयां प्रतीत होती थी, वे उठाई गई हैं और बार–बार उन्हें दोहराया गया है, और मैं इस संभावना पर और अधिक विवेचन करने में कोई अर्थ नही देखता हूँ जब तक कि हम

सर्वाधिक अविश्वास्य दृष्टिकोण की प्रतिपादक इन आपत्तियों के निरसन के प्रयत्न न करें। देखिए अध्याय 2 § 2।

11. ऐसी उपकोटिकरण के लिए संभव वाक्य-विन्यासीय आधार के, कुछ सीमित मात्रा में समर्थनकारी साक्ष्य के साथ, कुछ विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की (1955 अध्याय 4), अंशत: चॉम्स्की (1961) और मिलर और चॉम्स्की (1963) में संक्षेपित। इन और अन्य विवेचनों की समीक्षा केट्स (1964 a) भी दी गई है। मैं सोचता हूँ कि केट्स की मुख्य आलोचनाएँ सही हैं किंतु उनका समाधान किया जा सकता है यदि हम प्रस्तावों के क्षेत्र को उतने तक ही सीमित रखें जिसका यहाँ विवेचन हो रहा है अर्थात् स्वतंत्रतया और चित्ययुक्त प्रजनक व्याकरण के ढाँचे में कोशीय कोटियों के उपकोटिकरण के प्रश्न तक ही सीमित रखें।

12. इस (रचनांतरण पूर्व) व्याकरण के वाक्य-विन्यासीय घटक में कोटि-प्रतीकों के सूचनांक अन्विति के (और, सामान्यतया, जिन्हें हैरिस, 1951 दीर्घघटक कहते हैं उनके) सूचक होते थे न कि उपकोटिकरण और चयनात्मक प्रतिबन्धों के। ये युक्तियाँ तब अनावश्यक हो जाती हैं जब हम व्याकरणिक रचनांतरणों को प्रस्तुत करने लगते हैं। इस संबंध में पोस्टल (1964 a) में विवेचन को देखिए।

13. मैथ्यूस ने सामने आई कठिनाईयों को दूर करने के लिए कोटि-प्रतीकों को सूचनांक-बद्ध करने की एक प्रविधि खोज निकाली थी और इसको उसने COMIT-प्रक्रमन व्यवस्था की, जिसे उसने वी. (Yngve) के सहयोग में विकसित किया था, मुख्य युक्तियों को एक प्रविधि के रूप में बाद में स्वीकार किया था। इसी प्रकार की कठिनाईयाँ स्वतंत्र रूप से आर. स्टाकवेल. टी० एंडरसन. और पी. शैख्टर द्वारा में पाई गई थी और उन्होंने कुछ भिन्न रीति से इनके लिए सुझाव दिये हैं (देखिए, स्टाकवेल और शैख्टर, 1962, शैख्टर 1962)। ई० बाख ने भी इस प्रश्न को कुछ भिन्न रीति से निपटाया है (बाख, 1964)। वह विधि जिसका विस्तार मैं बाद में करूँगा इन प्रस्तावों के विविध अभिलक्षणों को समाविष्ट करती है किंतु कुछ दृष्टि से भिन्न है। पदबंध संरचना व्याकरण के इस दोष को दूर करने की समस्या स्पष्टतया बहुत अधिक अनिर्णीत हैं और बहुत अधिक अध्ययन की अपेक्षा करती है। यद्यपि यह दोष बहुत पहले ही देख लिया गया था किंतु पिछले अनेक वर्षों में प्रकाशित अधिकांश कार्यों में इसे दूर करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया।

14. इस प्रकार (s) अभिलक्षणों के इस समुच्चय [+consenantal (व्यंजन), −vocalic (स्वरात्मक), −voiced (सघोष), +continuant (प्रवाही), +strident (अनुदात्त), का संक्षेपण −grave (उदात्त), और m समुच्चय [+consonantal] (व्यंजन) −vocalic (स्वरात्मक), +nasal (नासिक्य), +voiced (सघोष), +grave] (उदात्त), का संक्षेपण है। नियम (18) [+conitunant] (प्रवाही), के रूप में निर्विशिष्ट खण्ड पर (अतएव (s) पर भी −[+voiced (सघोष) (अतएव प्रसंग [−m] से निर्विशिष्ट प्रसंग में, प्रयुक्त करता है और जिस पर प्रयुक्त हो रहा है उसे संघोष खंड में, (यदि शेष सभी अभिलक्षण पूर्ववत हों) परिवर्तित करता है (अतएव) (s) खण्ड (z) में परिवर्तित होता है जोकि [+consenantal (व्यंजन), −vocalic (स्वरात्मक), +voiced (सघोष), +continant (प्रवाही), +strident [अनुदात्त], −grave [उदात्त], है।

मैं अब से स्वप्नप्रक्रियात्मक स्तर पर प्रचलित रूढ़ि का अर्थात् अभिलक्षणों के अन्तर्गत समुच्चयों को बड़े कोष्ठक द्वारा सूचित करनेका. अनुपालन करूँगा।

15. किन्तु यह द्रष्टव्य है कि स्वनप्रक्रियात्मक मैट्रिक्स विनिर्दिष्ट स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षणों का समुच्चय मात्र माना जा सकता है। यदि हम प्रत्येक विनिर्दिष्ट अभिलक्षण को एक पूर्ण संज्ञा से सूचकांकित करें और पूर्ण संख्या मैट्रिक्स में उस अभिलक्षण के स्तंभ संख्या के अनुरूप हो। इस प्रकार, रचनांग bee (मधुमक्खी) के द्विस्तरीय मैट्रिक्स के अन्तर्गत ये अभिलक्षण होंगे : [+ व्यंजन$_1$ (consonantal$_1$),–स्वरात्मक$_1$ (vocalic$_1$),–प्रवाही$_1$ (Continuant$_1$). . . .,–व्यंजन$_2$ (consonantal$_2$),+ स्वरात्मक$_2$ (vocalic$_2$),–उदात्त$_2$ (grave$_2$). . . .] अब केशीय प्रविष्टि को अभिलक्षणों का कुछ स्वनप्रक्रियात्मक और कुछ वाक्य विन्यासीय–समुच्चय मात्र माना जा सकता है। निःसंदेह, एक पूर्ण व्याकरण में कोशीय प्रविष्टि के भीतर एक परिभाषा भी होनी चाहिए और यह विश्वास्पत: तर्क दिया जा सकता है (देखिए केट्स और फोडर,-1963) कि यह भी अभिलक्षणों के समुच्चय से युक्त है (वस्तुत:, केट्स-फोडर की परिभाषाएँ शुद्ध समुच्चय नहीं हैं, किन्तु ऐसा नहीं लगता है कि उनके द्वारा अध्यारोपित अतिरिक्त संरचना उनके सिद्धान्त में कोई भूमिका निभाते हैं)। तो, हम कोशीय प्रविष्टि को अभिलक्षणों का एक समुच्चय मात्र मानते हैं। इन अभिलक्षणों में कुछ वाक्यविन्यासीय हैं, कुछ स्वनप्रक्रियात्मक हैं और कुछ आर्थी।

किन्तु, अधिकतर व्याख्या की सरलता के लिए, हम इस पद्धति को नहीं स्वीकार करेंगे बल्कि कोशीय प्रविष्टि को मैट्रिक्स-मिश्र प्रतीक शून्य के रूप में पाठ्य (टेक्सट) में मानेंगे।

यदि हम कोशीय प्रविष्टि को अभिलक्षणों का समुच्चय मानते हैं तो वे एकांश जो ध्वनि, अर्थ और वाक्यविन्यासीय प्रकार्यता में समान हैं, शब्द समूह में एक दूसरे में से संम्बद्ध नहीं रहेंगे। उदाहरणार्थ, the boy grew (लड़का बढ़ा) या corn grows (अन्न उगता है) का अकर्मक grow (आना) वाक्य he grows corn (वह अन्न उगाता है) के सकर्मक grow (उगाना) दोनों की दो पृथक कोशीय प्रविष्टियां होंगी यद्यप्रि दोनों के बीच में अर्थ-सम्बन्ध है चूँकि अकर्मक संरचनाओं से सकर्मक संरचनाओं को उत्पन्न करने की प्रकटतया कोई रीति नहीं है जैसा कि "the window broke", (खिड़की टूटी) "some one broke the window" (किसी ने खिड़की तोड़ी) में। देखिए पृष्ठ 184। यही बात "the price dropped", (मूल्य गिरे) "he dropped the ball", (उसने गेंद गिराई) "he dropped that silly pretense" (उसने उस मूर्ख बहाने को छोड़ा) आदि में drop (गिरना) के लिए अथवा पृष्ठ 115 में विवेचित उदाहरण में command (आज्ञा) के लिए और अनेक विविध प्रकार के असंख्य उदाहरणों के संबंध में सही है। विकल्पत: ऐसी सम्बद्धता कोशीय प्रविष्टि को अभिलक्षणों के बूलीय प्रकार्य मानने से भी अभिव्यक्त हो सकती है। यद्युपि यह संभव है कि कोशीय संरचना के सिद्धान्त का ऐसा आपरिवर्तन आवश्यक है, यह तथ्य और नियम की ऐसी अनेक समस्याएँ उठाता है जिसका कोई भी उत्तर मेरे पास नहीं है और मैं, इसलिए, विषय व्याख्या, बिना उसे विकसित किए, जारी रख रहा हूँ।

16. ब्लूमफील्ड की इस मान्यता को ध्यान में रखना चाहिए कि शब्दसमूह भाषा की आधारभूत अनियमितताओं की सूची है (1933, पृष्ठ 274)। यह बिन्दु स्वीट (1913, पृष्ठ 31) द्वारा उठाया गया है जो यह मानते हैं कि "व्याकरण भाषा के सामान्य तथ्यों पर और शब्द विज्ञान भाषा के विशेष तथ्यों पर विचार करता है।"

17. अधिक समान्यतया स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियम, जो ऐसे अभिलक्षणों को, जैसे अंग्रेजी में स्वरों का घोषत्व अथवा उच्च अग्रस्वरों का अवर्तुलत्व, निर्धारित करता है, सदृश वाक्य-

विन्यासीय और आर्थी समधिकता नियमों द्वारा परिपूरित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, समधिकता नियम इन विविध प्रकार के अभिलक्षणों को बता सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि यह पारंपरिक दृष्टिकोण कि वाक्यविन्यासीय कोटिकरण अंशत: आर्थी दृष्टि से निर्धारित होता है गंभीरता से समर्थित होता है तो वाक्यविन्यासीय नियमों को आर्थी नियमों द्वारा निर्धारित करने वाले समधिकता नियम द्वारा अभिव्यक्त किया जा सकता है। हम इस समधिकता नियमों के प्रश्न पर § 6 में पुन: विचार करेंगे।

प्रसंगवश यह उल्लेखनीय है कि नियम (20) (और वस्तुत: वे सभी नियम जो वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों में आंशिक सोपानक्रम स्थापित करते हैं) समधिकता नियम माने जा सकते हैं न कि आधार के नियम। ऐसे निर्णय के विविध परिणाम होगें जिस पर हम § 4.3 विचार करेंगे।

18. (A की दृष्टि से) स्थानीय रचनांतरण के द्वारा ऐसा रचनांतरण मानता हूं जो एकल कोटि प्रतीक A के द्वारा अधिकृत उपश्रृंखला ही को प्रभावित करता है। इस प्रकार स्वनक्रिया के रचनांतरण चक्र के सभी नियम इस अर्थ में स्थानीय हैं। यह आशंका सकारण है कि आधार के पुनर्लेखी नियमों के बीच कुछ स्थानीय रचनांतरणों को अन्तर्गुम्फित करना उपयुक्त हो सकता है। इस प्रकार, अनुसर्ग निर्धारित संज्ञा से मुक्त पूर्वसर्गीय पदबंध सामान्यतया इन तत्वों के चयन की दृष्टि से प्रतिबंधित है और ये प्रतिबंध स्थानीय रचनांतरणों द्वारा इस प्रकार कथित किए जा सकते हैं कि पूर्वसर्ग और संज्ञा कुछ प्रतिबंधित रीतियों से पुनर्लिखित किए जा सकते हैं जब वे स्थान-क्रिया विश्लेषण रूप और समय-क्रियाविश्लेषण रूप जैसे कोटि-प्रतीकों द्वारा अधिकृत हो। वस्तुत: प्रसंग निरपेक्ष व्याकरण के सिद्धान्त का एक नए विस्तार पर विचार किया जा सकता है जो उन नियमों को भी स्वीकार करता है जो पुनर्लेखन को स्थानीय रचनांतरणों द्वारा (अर्थात् अधिकार करने वाली कोटि के प्रतीक के शब्दों में) प्रतिबंधित करता है। यह प्रसंगसापेक्ष व्याकरणों में किए प्रसंग निरपेक्ष व्याकरण के पर्याप्त प्रचलित अधीत-विस्तार के अतिरिक्त हैं जो उन नियमों को स्वीकार करता है जो पुनर्लेखन को सन्निहित प्रतीकों के शब्दों में प्रतिबंधित करता है।

पूर्ववर्ती अनुच्छेद के उदाहरण में एक ऐसा रचनांतरण मिलता है जो प्रतीक A की दृष्टि से स्थानीय (A, इस स्थिति में, किसी प्रकार का क्रियाविशेषण रूप है) है, और, इसके अतिरिक्त A द्वारा अव्यवहित रीति से अधिकृत कोशीय कोटि B द्वारा अधिकृत स्थान में श्रृंखला को रचित करता है। इस प्रकार के रचनांतरण को हम सुदृढ़तया स्थानीय कह सकते हैं इस अत्यधिक विशिष्ट परिभाषा को एक मात्र अभिप्रेरणा यह है कि स्थानीय रचनांतरणों के अनेक उदाहरण जो हमारे मन में आते हैं इस प्रतिबन्धित निर्धारक को भी पूरा करते हैं (उदाहरणार्थ, पर्याप्त समान्यतया से, नामिकीकरण रचनांतरण जो "I persuaded John of N S" (मैंने जॉन को NS समझाया) जहाँ S आधारभूत "I am serious (मैं गम्भीर हूँ)" श्रृंखला को अधिकृत करता है, के आधारभूत रूप से "I persuaded John of my seriousness) (मैंने जॉन को अपनी गम्भीरता समझाई)" जैसा रूप देता है, और रचनांतरण इस श्रृंखला के रचनांतर को कोशीय कोटि सं. (N) के स्थान पर विद्यमान इसी प्रतीक से विस्थापित करता है जो उस कोटि प्रतीक NP (संप) से अव्यवहृत रूप से अधिकृत है जिसकी दृष्टि से रचनांतरण स्थानीय है।

19. यह द्रष्टव्य है कि एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया जाता है जब हम यह मानते हैं कि संज्ञा उपकोटि-

करण प्रसंग से निरपेक्ष है और कर्त्ता-क्रिया-कर्म के चयनात्मक प्रतिबंध पूर्णतया उन नियमों से दिए जाते हैं जो पूर्वतर चयन किए संज्ञा-उपकोटियों के शब्दों में क्रियाओं का उपकोटिकरण निर्धारित करते हैं। हम इस विषय पर § 4·2 में विचार करेंगे।

20. यह निर्णय, और अन्य अनेक निर्णय, पुस्तक में बाद में किंचित आपरिवर्तित किए जाएँगे।

21. विषय व्याख्या की वर्तमान स्थिति में इस नियम में प्रतीक S' की प्रास्थिति अव्याख्यात है। वाक्यविन्यासीय घटक का सिद्धान्त जैसे आगे चलकर विस्तृत होगा, यह वाक्य के रचनांतर के स्थान को प्रदर्शित करेगा।

22. यह प्रेक्षणीय है कि (36) में "like (तरह) विधेय-नामिक" जैसी उक्ति एक एकल प्रतीक है और विशिष्ट वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण के लिए है।

एक सावधान पाठक यह देखेगा कि जिस प्रकार से ये नियम व्यवस्थापित किए गए हैं, कोशीय एकांश कोशीय नियम द्वारा गलत स्थान पर अतः प्रविष्ट हो सकते हैं। हम इस प्रश्न पर § 3 में विचार करेंगे और इस समय इस पर चर्चा नहीं करेंगे, नहीं तो विषयव्याख्या अधिक बोझिल हो जाएगी। वस्तुतः, एक प्रावधान विश्लेषण (40) और (41) को विस्तार में संशोधित करेगा।

23. पिछले टिप्पणी का एक प्रकट अपवाद क्रियाओं का घटमान रूप be+ing के चयन के शब्दों में उपकोटिकरण है। सुदृढ़ उपकोटिकरण से सम्बद्ध सुझाए गए सामान्यीकरण को बनाए रखने के लिए, हमें यह दावा करना होगा कि own (स्वामित्व करना), know (जानना) understand (समझना) जैसी क्रियाएँ (अन्य सभी क्रियाओं के साथ) स्वतंत्रता घटमान रूप से सहित अथवा रहित घटित होती हैं, किन्तु घटमान रूप अनिवार्य रचनांतरण द्वारा विलोपन प्राप्त करता है जब वह इन क्रियाओं के पूर्व आता है (यह विचित्रता एक अभिलक्षण से चिह्नित होगी जो इन रूपों के लिए कोशीय प्रविष्टियों का अंग बनती है)। किन्तु वस्तुतः इस अभिग्रह का प्रबल कारण है और यह बर्बारा हाल द्वारा दिखाया भी गया है। इस प्रकार क्रिया-सहायक के प्रत्येक तत्व के साथ विशिष्ट क्रियाविश्लेषण रूप सहचरित होते हैं जो इस क्रिया सहायक के साथ सहघटित हो सकते हैं (या, वर्तमान-काल में, अवश्यमेव सहघटित होते हैं), और घटमान के विशिष्ट क्रियाविशेषण रूप क्रिया own, understand, know आदि के साथ घटित होते हैं (देखिए, "I know the answer" (मैं उत्तर जानता हूं) के साथ-साथ "I know the answer right now" (मैं ठीक अब से उत्तर जानता हूँ) यद्यपि ऐसे रूप जैसे "I eat the apple right now" (मैं ठीक अभी सेव खाता हूँ) "I eat the apple" (मैं सेव खाता हूँ) बहिर्गत कर दिए जाते हैं (पश्चवर्ती उदाहरण में अपवाद हो सकता है यदि उसे "जातिगत" माना जाए और तब वस्तुतः उसे "डमी" क्रियाविशेषण रूप के लोपन से संबंध माना जाएगा)।

24. यथार्थतः, ऐसी स्थिति है नहीं चूंकि हमने "वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण" की इस प्रकार परिभाषा दी है (देखिए, पृष्ठ 76 और तदनंतर)। वस्तुतः, नियमों के समुच्चय से (जिसका (20)-(21) नमूना है) सम्बद्ध अभिलक्षण ही हैं जो चयनात्मक वर्गीकरण का निर्धारण करते हैं। विशिष्ट कोशीय एकांशों के अनन्य वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण, जिनको (20)-(21) जैसे सामान्य नियमों से प्रस्तुत नहीं किया गया है किन्तु केवल कोशीय प्रविष्टियों में सूचीबद्य किए गए हैं, क्रिया के उप-वर्गीकरण में कोई भूमिका नहीं निभाते हैं।

25. द्रष्टव्य है कि ये विकल्प सूक्ष्मतः समतुल्य नहीं हैं। इस प्रकार उदाहरणार्थ, उल्लिखित तीनों में

केवल एक, जिसका हम प्रयोग कर रहे हैं, चारों के मुक्त प्रयोग को स्वीकार करता है, जैसा कि समाकृति (44) में है। इसके विपरीत स्वनप्रक्रियात्मक घटक के रचनांतरण नियमों के व्यवस्थापन के लिए नामांकित कोष्टकों का प्रयोग उपयुक्त है। याहच्छिक पर्वों पर मिश्र प्रतीकों का प्रयोग (जैसा कि हर्मन, 1963 देखिए टिप्पणी 4) रचनांतरण व्याकरण का वह रूप देता है जो विश्लेषणीयता के बूलीय निर्धारकों के शब्दों में, जैसे कि प्रजनक व्याकरण के अधुनातन कार्यों में दिए व्यस्थापन की तुलना में किन्ही दृष्टियों से समृद्ध और किन्हीं दृष्टियों से हीन है। देखिए, कुछ विवेचन के लिए चॉम्स्की (1966)।

26. व्यक्तिवाची संज्ञाओं के नि:संदेह अ–नियामक संबंधवाची (और, सीमांत स्थिति में, अ-नियामक संबंध वाचियों से व्युत्पन्न विशेषण विशेषक, जैसे, clever Hans (चतुर हेन्स) अथवा "Old Tom" (वृद्ध टोम) होते हैं। किन्तु यद्यपि नियामक संबंधवाची निर्धारिक व्यवस्था के अन्तर्गत आते हैं, यह मानने के कई तर्क हैं कि अनियामक संबंधवाची, इसके विपरीत, पूर्ण नामिक-पदबंध के पूरक हैं (और, कुछ स्थितियों में, पूरे वाक्य के पूरक हैं–जैसे, "I found John likable, which surprised me very much" (मुझे जॉन रुचिकर लगा, जिससे मैं अधिक विस्मित हुआ)"। द्रष्टव्य है कि विशेषण–विशेषक नियामक अथवा अनियामक दोनों संबंध वाचियों में व्युत्पन्न हो सकते हैं (उदाहरणार्थ, वाक्य "the industrious Chinese dominate the economy of South Asia east" (औद्योगिक चीन का दक्षिण-पूर्व एशिया की अर्थव्यवस्था पर आधिपत्य है) की संदिग्धता। वह विषय पोर्ट-रायल "लाजिक" (अर्नाल्ड और अन्य, 1662) में और अभी के कार्यों में (येस्पर्सन 1924, अध्याय 8) में विवेचित हुआ है।

यह भी द्रष्टव्य है कि व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ जाति वाचक संज्ञाओं के रूप में भी कुछ प्रतिबंधित रीतियों से प्रयुक्त हो सकती हैं (जैसे, "this cannot be the England that I know and love", (यह इंग्लैण्ड नहीं हो सकता है, जिसको मैं जानता हूँ और प्रेम करता हूं), "I once read novel by a different John Smith") (मैंने एक वार अन्य एक जॉन स्मिथ का उपन्यास पढ़ा)"। कुछ इस प्रकार की उक्तियाँ अनियामक संबंधवाची संज्ञाओं से रचनांतरण द्वारा व्युत्पन्न हो सकती हैं, अन्य इसका इंगित देती है कि शब्दसमूह में समधिकता नियम की आवश्यकता होगी जो जातिवाची संज्ञाओं के कुछ अभिलक्षणों को व्यक्तिवाची संज्ञाओं में समनुदेशित करेगा।

27. हम पुन: कहते हैं कि हम इससे इन्कार नहीं कर रहे हैं कि (54) जैसे पदबंधों पर कोई निर्वचन कभी-कभी अध्यारोपित किया जा सकता है। औचित्य की समस्या के विवेचन के लिए § 2.3 1 के प्रारंभ को और पाद टिप्पणी 11 के संदर्भों को देखिए।

द्रष्टव्य है कि विशिष्टतया "John died in England" (जॉन इंग्लैण्ड में मरा) में स्थान-क्रियाविशेषण रूप का क्रिया के साथ का संबंध "John stayed in England" (जॉन इंग्लैंड में रुका)" से भिन्न है, ("John lived in England" (जॉन इंग्लैण्ड में रहा) वस्तुत: दोनों रचनाओं का संदिग्धार्थी प्रतिनिधि है क्योंकि उसका निर्वचन "John resided in England" (जॉन इंग्लैंड में रहा) के रूप में जो कि "John stayed in England" (जॉन इंग्लैंड में रुका)' (नियम 52iii) द्वारा प्रस्तुत क्रियारूप पूरक के साथ) संरचना की दृष्टि से सदृश है, किया जा सकता है, अथवा उसका निर्वचन "in England, John really lived" (इंग्लैण्ड में, जॉन वास्तव में रहा) अथवा "in England, John

remained alive" (इंग्लैण्ड में जॉन जीवित रहा)" के रूप में, जहां (52ii) द्वारा प्रस्तुत क्रिया पदबंध पूरक से आगत स्थान क्रियाविशेषण रूप, किया जा सकता है–देखिए, "John will surely die on the continent, but he may live in England" (जॉन महाद्वीप पर अवश्य मरेगा किन्तु वह इंग्लैंड में रह सकता है)" "live in England," (इंग्लैण्ड में रहना) और "die in England" (इंग्लैण्ड में मरना) के बीच का संरचनाअन्तर इस तथ्य के (रैल्फ लांग द्वारा उल्लिखित) मूल में है कि "England is lived in by many people" (अनेक व्यक्तियों द्वारा इंग्लैण्ड में रहा जाता है) कहीं अधिक स्वाभाविक है "England is died in by many people" की तुलना में –वस्तुतः यह टिप्पण तभी सच है जब "live in (में रहना)" का यहां "reside in (में रहना)" अथवा "in habit" (रहना, वास करना) हो। देखिए, पृष्ठ 100, ऐसे "अर्धकर्मवाच्यों" के अतिरिक्त विवेचन के लिए।

28. इस टिप्पणी के सुप्रसिद्ध सीमान्तक अपवाद हैं (जैसे, "a good time was had by all" (सभी के पास अच्छा समय था)" अथवा "recourse was had to a new plan" (उपचार के लिए नवीन योजना थी) और यह भी स्पष्ट है कि कथन "स्वतंत्रतया रीतिवाची क्रिया विशेषण रूप लेते हैं" और स्पष्टीकरण (देखिए, लीज़, 1960 a, पृष्ठ 26) की अपेक्षा करता है और यही वह अंतर करता है जो क्रिया को गुणान्वित करने वाले क्रियाविशेषण रूपों और उन रूपों में है जिनके लिए कर्ता को वे गुणान्वित करते हैं यह कहना अधिक उचित है। (पश्चवर्ती के उदाहरण के रूप में" John married Mary with no great enthusiasm" (जॉन ने मेरी के साथ विवाह अधिक उत्साह के साथ नहीं किया)" को लें जिसका स्थूलतया अर्थ है, "John was not very enthusiastic about marrying Mary" (जॉन मेरी से विवाह करने में अधिक उत्साही नहीं था) और अतएव "John, cleverly, stayed away yesterday" (जॉन चतुराई से कल रुका) में कर्ता के क्रियाविशेषणात्मक विशेषक के समान, न कि "John laid his plans cleverly" (जॉन ने अपनी योजनाएँ चतुराई से बनाईं)' में क्रिया के क्रियाविशेषणात्मक विशेषक के समान, कार्यभूमिका करता है। देखिए आस्टन (1956) ऐसे उदाहरणों में कुछ विवेचन के लिए फिर भी, पुस्तक में टिप्पणियों की तात्विक यथार्थता के सम्बन्ध में हमें कुछ संदेह नहीं हैं।

यह ध्यातव्य है कि व्याकरण के सामान्य नियम अपवादों के अस्तित्व से अवैध नहीं हो जाते हैं। इस प्रकार व्याकरण में क्रियाओं के भूतकाल बनाने के नियमों को इन आधारों पर बहिर्गत नहीं किया जा सकता है कि अनेक क्रियाएँ अनियमित हैं, और न कर्मवाच्यीकरण से रीतिवाची क्रियाविशेषण रूपों को सम्बद्ध करने वाला सामान्यीकरण इस तथ्य के कारण अवैध किया जा सकता है कि इस सामान्यीकरण से विरोध करने वाले कुछ एकांशों को, यदि ऐसा हो सके तो, सूचीबद्ध ही किया जाता है। भूतकाल अथवा कर्मवाच्यीकरण की स्थिति में सामान्यीकरण अवैधीकृत ("आंतरिक औचित्य" के अर्थ में–देखिए, अध्याय 1, § 4) तभी होता है जब उच्चतया मानयुक्त व्याकरण रचित किया जा सके जिसमें ऐसा न होता हो। इसी कारण विचित्रताओं और अपवादों का (जिनका प्राकृतिक भाषाओं की जटिलतापूर्ण व्यवस्था में विरलतया ही अभाव होता है) अविष्करण समान्यतया इतना अधिक निष्फल होता है और उसका विवेच्य भाषा की व्याकरणिक संरचना के अध्ययन में इतना महत्वहीन होता है, जब तक कि निस्संदेह यह गहनतर सामान्यीकरण का आविष्कार करता है।

यह भी उल्लेखनीय है कि अन्य अनेक क्रियाविशेषण रूपों के समान अनेक रीतिवाची क्रियाविशेषण रूप कर्ता के विलोपन से युक्त वाक्य रचनांतर है। इस प्रकार क्रियाविशेषण रूप "with great enthusiasm" (अधिक उत्साह के साथ) से युक्त "John gave the lecture with great enthusiasm" (जॉन ने भाषण बड़े उत्साह के साथ दिया) वाक्य के मूलाधार में आधार श्रृंखला "John has great enthusiasm" (जॉन अधिक उत्साही है) हैं (द्रष्टव्य है कि with (सहित से) सामान्यतया "have" (रखना) का रचनांतर है। जिसके पुनरावृत संप (NP) John का विलोपन सामान्य नियम से हो चुका है। (देखिए, अध्याय 3 और अध्याय 4, § 2.2)। (इसी प्रकार, स्थानवाची कियाविशेषण रूप कम से कम वे जो क्रि.प. (VP) के पूरक हैं) कभी-कभी अथवा कदाचित् सदैव वाक्य रचनान्तर माना जा सकता है (इस कारण, उदाहरणार्थ, "I read the book in England" (मैंने इंग्लैण्ड में पुस्तक पढ़ी) एक ऐसे आधारभूत संरचना से व्युत्पन्न होता है जो बहुत अधिक "I read the book while (I was) in England" मैंने पुस्तक पढ़ी जब मैं इग्लैंड में था) की आधारभूत संरचना से सदृश है। क्रिया विशेषण रूप एक समृद्ध किन्तु अभी तक अपेक्षाकृत न खोजी हुई व्यवस्था है, और, इस कारण जो कुछ भी उनके सम्बद्ध में कहा जाता है नितांत परीक्षणात्मक होता है।

29. विकल्पत:, हम इस निर्धारक को छोड़ सकते हैं और पहली रूढ़ि में इस प्रकार विस्तार करते हैं कि कोशीय कोटि A के विश्लेषण में प्रस्तुत मिश्र प्रतीक के अर्न्तगत न केवल अभिलक्षण (+A) आता है, बल्कि A से इतर अन्य कोशीय कोटि B के लिए भी (–B) अभिलक्षण आता है। इस रूढ़ि के अनुसार किसी शब्द की जो दो कोशीय कोटियों के लिए विनिर्दिष्ट है, दो पृथक कोशीय प्रविष्टियाँ होनी चाहिए और यह शब्द समूह की संरचना के सम्बद्ध में अनुतरित प्रश्न उठाती है। प्रसंग सापेक्ष उपकोटिकरण नियमों द्वारा प्रस्तुत अभिलक्षणों के लिए हमारी अंकन व्यवस्था के दोष को दूर करने का लाभ इसे मिलेगा। इस प्रकार, व्याकरण (57) में अभिलक्षण (—) व्यक्तिवाची संज्ञा और अर्कमक क्रिया- दोनों को अभिहित करता है (इसी कारण नियम (57xi) में अभिलक्षण (+N) का उल्लेख करना पड़ा था)। इससे कठिनाई पैदा हो सकती है यदि कोई कोशीय एकांश संज्ञा और क्रिया दोनों हो क्योंकि वह संज्ञा के रूप में व्यक्ति-इतर हो सकता है किन्तु क्रिया के रूप में सकर्मक, अथवा क्रिया के रूप में सकर्मक हो सकता है किन्तु संज्ञा के रूप में व्यक्तिवाची। यदि इस टिप्पणी के प्रस्ताव को स्वीकार किया जाए तो समस्या नहीं उठ सकती है। विकल्पत: ऐसे अभिलक्षणों का अधिक जटिल अंकन-पद्धति द्वारा अभिहित करना आवश्यक होगा और यह अंकन न केवल विवेच्य सांचें को अपितु उसे अधिकृत करने वाले प्रतीक को भी दिखाएगा.

कोशीय एकाश अनेक कोटीय स्थानों पर आए इसे स्वीकार करने का कोई कारण हो सकता है (यह या तो अनेक कोशीय कोटियों की दृष्टि से सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट करने के द्वारा अथवा इन कोटियों की दृष्टि से पूर्णतया अविनिर्दिष्ट छोड़ देने के द्वारा होता है) उदाहरणार्थ "proof" (प्रमाण) "desire" (इच्छा), "belief" (विश्वास) आदि शब्दों के साथ। मान लीजिए कि इनके साथ यह विनिर्देशन हुआ है कि ये विविध रूप के वाक्यीय पूरक लेते हैं, किन्तु केवल संज्ञा अथवा क्रिया स्थान पर ही प्रविष्ट हो सकते हैं। तब कोशीय अत: प्रविष्टि नियम उन्हें या तो साँचे.....N thatS.... या सांचे.... V that S.... में क्रमश: संज्ञा अथवा क्रिया स्थान में स्थापित करेगा। अतएव पहले को दूसरे से रचनांतरण द्वारा व्युत्पन्न करना आवश्यक नहीं

होगा जैसा कि उदाहरणार्थ....proving that S (सिद्ध करना कि S)....की स्थिति में आवश्यक है। ऐसे विश्लेषण में 'John's proof that S" (जॉन का प्रमाण कि S) आधारभूत संरचना "John has a proof that S" (जॉन के पास प्रमाण है कि S) से रचनांतरणों से जो 'John's Book" (जॉन की पुस्तक) को "John has a book" (जॉन के पास पुस्तक हैं) से व्युत्पन्न करते हैं, व्युत्पन्न होगा। कोई "John has a proof that S" (जॉन के पास प्रमाण है कि)' को "John proves that S" (जॉन सिद्ध करता है कि S) से कदाचित अन्ततः जैसे "John takes a walk" (जॉन घूमता है) का सम्बद्ध John walk" (जॉन के घूमने से है) भी सम्बद्ध कर सकता है, किन्तु यह एक दूसरी ही बात है।

इस विवेचन के सम्वन्ध में अनन्य शुद्धतया कोशीय अभिलक्षणों जैसे, (58), (59) में (कर्म विलोपन) अभिलक्षण से सम्बद्ध सामान्य प्रभिन्न निर्धारक स्थापित करना भी आवश्यक है। इस प्रश्न के विवेचन के लिए, जो कि अत्यन्त कठिन हो जाता है यदि ये अभिलक्षण स्वनप्रक्रिया घटक से सम्बद्ध हों, देखिए, हाले और चॉम्सकी (1968)।

30. यह निरंतर माना गया है कि ये सम्बन्ध सह-घटन की किसी धारणा के शब्दों में परिभाषित किए जा सकते हैं, किन्तु यह मुझे विविध स्थानों पर प्रस्तुत कारणों से संदेह पूर्ण लगता है। (उदाहरणार्थ वार हिलेले 1954; और चाम्स्की 1964)। यह देखें कि यहां पर सुझाए व्याकरणिक संवद्ध अथवा प्रकार्य की परिभाषाएँ वाक्यविन्यास के आधार को ही निर्दिष्ट करती है, न कि वास्तविक वाक्यों के, बहुत ही सरल वाक्यों को छोड़कर वहिस्तलीय संरचनाओं को वास्तविक वाक्य जैसे, (7), पृष्ठ 70) के सार्थक व्याकरणिक सम्बद्ध वे हैं जो इस वाक्य के आधार (गहन संरचना) में परिभाषित है।

31. मैं सरलता के लिए इन्हें अरूपात्मक रीति से, न कि पूर्व विकसित अंकन पद्धति का प्रयोग करते हुए, दे रहा हूँ। अंकन पद्धति के इस परिवर्तन से कोई तात्विक अन्तर नहीं पड़ा है।

32. उदाहरण के लिए, यदि हम सार्वत्रिक कोटियों और प्रकार्यों की परिभाषाओं को अपनाते ताकि वे "In England is where I met him" (इंग्लैन्ड में जहाँ मैं उससे मिला) जैसे वाक्यों में जो यह दिखाने के लिए प्रयुक्त होते हैं नामिक-पदबंध भी कर्ता के स्थान पर आ सकते हैं, ये प्रस्ताव पूर्णतया असफल हो जाएंगे। किन्तु यह वाक्य स्पष्टतया रचनांतरणात्मक रीति से व्युत्पन्न हैं। यह कहना बिल्कुल सही होगा कि "in England is where I met him" (इंगलैंड में जहाँ मैं उससे मिला") वाक्य में "in Enland" (इंगलैंड में) कर्ता है यदि हम व्याकरणिक सम्बद्ध को "का-कर्ता" अर्थात् (N,P,S) (संप, S) को व्युत्पन्न पदवंध चिन्हक (वहिस्तलीय संरचना) तक विस्तरित करते हैं। किन्तु आधार रूप में "in England" (इंग्लेंड में) एक स्थान वाची क्रियाविशेषण रूप है जो विधेय पदबंध "met him in England" (उससे इंगलैंड में मिला) में आख्यात पदबंध meet him [उससे मिलने] से सहचरित है और वाक्य का निर्वचन इस आधारभूत गहन संरचना में परिभाषित व्याकरणिक मम्बधों के अनुसार होगा।

'का-कर्ता जैसी प्रकार्यात्मक धारणाओ का वहिस्तलीय संरचनाओं तक का यह वस्तरण पूर्णतया सीधा-सादा काम नहीं है। इस प्रकार आधार संरचनाओं में एकल कोटि द्वारा अन्यवहित रूप से अधिकृत किसी भी संरचना में NP जैसी कोटि का एक से अधिक घटन प्रकटतया कदापि नहीं हो सकता है, (देखिए टिप्पणी 77), और इन धारणाओं की हमारी परिभाषाएँ इस तथ्य पर आधारित है। किन्तु यह वहिस्तलीय संरचनाओं के लिए सत्य नहीं है। "this book I

really enjoyed" (इस पुस्तक में वास्तव में मैंने आनन्द लिया) वाक्य में "this book" इस पुस्तक और "I" (मैं) दोनों द्वारा अव्यवहृत रूप से अधिकृत NP संप हैं तो, प्रकटतया, बहिस्तलीय संरचनाओं द्वारा परिभाषित व्याकरणिक सम्बन्धों के निर्धारण में कम महत्वपूर्ण है (इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं), यद्यपि गहन संरचनाओं में व्याकरणिक सम्बन्धों के निर्धारण में उसकी कोई भूमिका प्रतीत नहीं होती है। परिणामतः, बहिस्तलीय धारणाओं के लिए कुछ भिन्न परिभाषाएँ चाहिए।

इसका सुझाव दिया जा सकता है कि वर्ण्य-टिप्पण बहिस्तलीय संरचना का मूलभूत व्याकरणिक सम्बन्ध है और यह (स्थूलतया) को गहन संरचना के मूलतात्विक उद्देश्य, विधे सम्बन्ध के अनुरूप है। इस प्रकार बहिस्तलीय संरचना में S से अव्यवहृत रूप से अधिकृत सबसे बाएँ NP को वाक्य-कान्वर्ण्य और शेष शृंखला को वाक्य का टिप्पण परिभाषित कर सकते हैं। प्रायः, 'वर्ण्य' और 'कर्ता' निस्सन्देह संपाती होते हैं किन्तु विवेचित उदाहरणों में ऐसा नहीं है। इस प्रस्ताव का जो विश्वास लगता है, सुझाव मुझे पाल किपर्स्की द्वारा दिया गया था। इसको बिविध रीति से परिष्कृत किया जा सकता है, उदाहरणार्थ, वाक्य के 'वर्ण्य' को सबसे बाएँ NP द्वारा परिभाषित किया जाए जो बहिस्तलीय संरचना में अव्यवहृत रूप से S के द्वारा अधिकृत है और जो इसके अतिरिक्त एक मुख्य कोटि है—यह खण्डित वाक्य "it was John who I saw" (यह जॉन था जिसे मैंने देखा) [मैं John (जॉन) को 'वर्ण्य' बनाएगा]। अन्य त्ररिष्करण और विस्तषण भी मेरे मन में आ रहे हैं किन्तु यहाँ और अधिक इस प्रश्न पर मैं चर्चा नहीं करना चाहूँगा।

33. यह अत्यन्त फलदायक और महत्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि उतनी ही पुरानी है जितना की वाक्य विन्यासीय सिद्धान्त; यह पर्याप्त स्पष्ट तथा पोर्ट रॉयल के Grammaire generale it raisonnel कार्य में विकसित हुई थी (देखिए, चॉम्स्की 1964 § 1.10; और विवेचन के लिए 1966)। तत्वतः यही विचार आधुनिक भाषा विज्ञान में हैरिस द्वारा प्रतिपादित किया गया। यद्यपि उन्होंने ठीक इन्ही शब्दों में विवेचन नहीं किया है (देखिए, 1952, 1954, 1957)। रचनान्तरण प्रजनक व्याकरण के ढाँचे के भीतर इस धारणा के इससे अधिक बिवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की (1957) और इस अभिग्रह पर आधारित आर्थी निर्वचन के सत्तात्मक सिद्धान्त के प्रति लगे उपायों के लिए देखिए, केट्स और फोडर (1963) और केट्स और पोस्टल (1964)।

34. करीकि प्रस्ताव इतने रूपरेखात्मक हैं कि उनसे एक सामान्य दृष्टिकोण से अधिक निकालना असम्भव है। शाउम्यान और सोवोलेवा की स्थिति कहीं अधिक स्पष्टत से निश्चित है, किन्तु यह कई निश्चायक दृष्टि से यह दोष पूर्ण है। देखिए, हाल (1965) इस उपागम के विश्लेषण के लिये यह सम्भव है कि "स्तरणात्मक व्याकरण" की भी समान स्थिति हो किन्तु इस सिद्धान्त के प्रकाशित सन्दर्भ (जैसे, ग्लीसन, 1964) किसी भी निष्कर्ष पाने के लिए अत्यधिक अस्पष्ट है।

35. उदाहरण के लिए द्रष्टव्य है कि कारण बहिस्तलीय संरचना में न कि गहन संरचना में संज्ञा के स्थान द्वारा प्रायः निर्धारित हो यद्यपि शैलीगत स्थान विपर्ययों द्वारा दी बहिस्तलीथ संरचनाएँ कारक को प्रभावित नहीं करती है। अंग्रेजी में भी, जिसकी रूप साधन व्यवस्था समृद्ध नहीं है, यह देखा जा सकता है। उदाहरण "he was struck by a bullet", "he is easy to please" "he frightens easily" (वह गोली से आहत हुआ, उसे प्रसन्न करना सरल है, वह आसानी से भयभीत करता है) वाक्यों में सर्वनाम प्रत्येक स्थिति में "तार्किक कर्म" है अर्थात् आधार भूत गहन संरचनाओं में क्रमशः strike, please, frighten (आहत करना, प्रसन्न करना, भयभीत करना) क्रियाओं का प्रत्यक्ष-कर्म है। फिर भी, रूप he वह है न कि

him (उस)। किन्तु जिन शैलीगत विपर्ययों की हम अभी चर्चा कर रहे थे इस प्रकार के रूप देंगे–"him I really alike" (उसे मैं वास्तव में पसन्द करता हूँ), "him I would definitely try not to antagonize". (उसे मैंने निश्चित रूप से शक्तिहीन न होने की कोशिश की)। जिन भाषाओं में रूप साधन समृद्ध है, यह घटवाचक जो विपर्ययों की इन प्रक्रियाओं के परिधीय स्वरूप को उदाहृत करता है, कहीं अधिक स्पष्ट है।

पारम्परिक भाषायी सिद्धान्त में रूप साधन, संदिग्धता, और शब्द क्रम के ऊपर कुछ सीमा तक विवेचन हुआ है। देखिए चॉम्स्की (1966) कुछ सन्दर्भों के लिए।

अध्याय 3

1. इन उदाहरणों में विवेच्य समस्या से असंगत कुछ विस्तार छोड़ दिया गया है। हम यहाँ प्रत्येक कोशीय एकांश को अभिलक्षणों के मिश्र रूप के रूप में मानते हैं जो उसकी कोशीय प्रविष्टि में है और समधिकता नियमों द्वारा प्रविष्ट किए गए हैं। डमी(मूक) प्रतीक $\triangle$ का प्रयोग उन विविध अविनिर्दिष्ट तत्वों पर विस्तारित किया गया है जो अनिवार्य रचनांतरणों द्वारा लोपन प्राप्त करेंगे। वस्तुत: इस अपेक्षा के यथेष्ट कारण हैं कि व्याकरण में केवल 'पुनर्लभ्य लोपन' ही स्वीकृत किए जाने चाहिए। इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न के विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की 1964, § 2.2। हम इस अध्याय के अन्त में और अध्याय 4, § 2.2 में इस पर पुन: विचार करेंगे।

   (3) में रचनांग nom उन अनेक में से एक है जो क्रियासहायक के कालप्रकारक स्थान में समनुदेशित किए जा सकते हैं और जो नामिकीकरण (for–to, possessive–ing आदि) के रूप को निर्धारित करते हैं।
2. निम्नलिखित सामान्य ढाँचे में रचनांतरण-चिह्नक और पदबन्ध-चिह्नक दोनों के लिए इसके विस्तार की चॉम्स्की(1955) द्वारा कार्य परिणति की गई हैं। भाषायी सिद्धान्त निरूपण के स्तरों की सार्वत्रिक व्यवस्था देता है। प्रत्येक स्तर L मूल पूर्णाङ्कों (न्यूनतम तत्व, जैसे प्रतीकावली) के एक समुच्चय पर आधारित व्यवस्था है, सहसंयोजन की संक्रिया है जो यादृच्छिक परिमित दीर्घता के मूल पूर्णाङ्कों की शृंखला का निर्माण करती है (सभी शब्द और धारणाएँ सहसंयोजनक मूलक बीजगणित के सिद्धान्त से लिए गए हैं–देखिए, जैसे, रोजनब्लूम, 1950); विविध सम्बन्ध हैं L-चिन्हक से अभिहित मूल पूर्णाङ्कों की शृंखलाओं (अथवा शृंखला समुच्चय) का वर्ग; L-चिन्हकों का L′ चिन्हकों में प्रतिचित्रण जहाँ L′ अगला नीचा स्तर है (इसका प्रकार स्तर सोपानक्रम में विन्यास प्राप्त हैं।) विशेषत:, पदबंध संरचना P स्तर और रचनांतरणों के T स्तर पर अभी अरूपात्मक रीति से वर्णित अर्थ में P चिन्हक और T चिन्हक हैं। इस प्रकार एक रूप ढांचे में भाषायी स्तर (स्वनात्मक, स्वनप्रक्रियात्मक, शब्द, रूपरचनात्मक, पदबन्ध-संरचना, रचनांतरण संरचना) का सोपान क्रम है। विस्तार के लिए देखिए चॉम्स्की(1955)। T-चिन्हक के विवेचन के लिए देखिए कैट्स और पोस्टल(1964)।
3. नकारात्मक के विवेचन के लिए देखिए क्लीमा(1964), कैट्स(1964b) प्रश्नार्थकों और आज्ञार्थकों की रचना और इनके चिन्हकों के आर्थी निर्वचन के लिए कैट्स और पोस्टल(1964) में विवेचन किया गया है। हॉकेट(1961) में यह प्रस्ताव किया गया था कि कर्मवाच्य रचनांतरण आधारभूत

रूप में स्थित चिन्हक पर सप्रतिबन्ध हो किन्तु कोई भी समर्थनकारी तर्क उसके लिए नहीं दिया गया जो कि उस शोध लेख के प्रसंग में नव-अंकन पद्धति के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

द्रष्टव्य है कि कर्मवाच्य रचनांतरण का अनिवार्य के रूप में पुनर्व्यवस्थापन, आधारभूत श्रृंखला में वैकल्पिक चिन्हक के चयन की तुलना में, उस सिद्धान्त से निरपेक्ष है जिसका हमने अभी उद्धरण दिया है क्योंकि कर्मवाच्यीय चिह्नक का, प्रश्नार्थक, नकारार्थक और आज्ञार्थक चिन्हक से भिन्न कोई स्वतन्त्र आर्थी निर्वचन नहीं है। इसके अतिरिक्त अध्याय 2 के § 4·4 में उल्लिखित किया गया है कि कर्मवाच्य जैसे रचनांतरणों को शुद्धतय शैलीगत विपर्यय सक्रियाओं से भिन्न करने के सबल कारण हैं। इन पर्यवेक्षणों से सुझाव मिलता है कि हम उस अधिक सामान्य निर्धारक को व्यवस्थापित करने का प्रयत्न करेंगे जिसका अभी उद्धृत सिद्धान्त-नियम स्वयं एक परिणाम हैं, अर्थात्, सभी "शैलीगतेतर रचनांतरण" स्थिर, सार्वत्रिक और भाषा निरपेक्ष समुच्चय से प्राप्त वैकल्पिक चिन्हकों द्वारा संकेतवद्ध होते हैं। यह प्रयत्न धारणा "शैलीगतेतर रचनांतरण" के गहनतर विश्लेषण का पूर्वानुमान करता है, और यह जो अब तक दिया गया है उससे अधिक गहरा होना चाहिए।

4. इस प्रश्न पर सर्वथा प्रकाश डालने वाले विवेचन और अन्य अनेक के लिए जिन पर यहाँ विचार किया गया है, देखिए, फ़िलमोर(1963) और फ्रेजर(1963)।
5. ये दोनों पर्यवेक्षण फ़िलमोर(1963) के कारण सम्भव हो पाए हैं।
6. नियमों के क्रम-बंध के सम्बन्ध में वहिर्निष्ठ क्रम जो कि नियमों के स्पष्ट क्रम-बंध से अध्यारोपित हैं और अन्तर्निष्ठ क्रम में, जो कि नियम किस प्रकार व्यवस्थापित होते हैं इसका परिणाम मात्र है, अन्तर बनाए रखना चाहिए। इस प्रकार यदि नियम R_1 प्रतीक A को प्रस्तुत करता है और R_2 प्रतीक A का विश्लेषण करता है तो R_1 और R_2 के बीच एक अन्तर्निष्ठ क्रम है, किन्तु यहाँ वहिर्निष्ठ नियम हो ऐसा आवश्यक नहीं है। इसी प्रकार, यदि कोई रचनांतरण T_1 किसी संरचना पर, जो कि केवल T_2 अनुप्रयोग से रचित हुआ है, प्रयुक्त होता है तो अन्तर्निष्ठ क्रम T_1T_2 है। वर्गीकरणात्मक भाषा विज्ञान वहिर्निष्ठ क्रम बंध को स्वीकार नहीं करता है किन्तु अन्तर्निष्ठ क्रमबंध की प्रास्थिति में वह स्पष्ट नहीं है। प्रजनक व्याकरण साधारणतया दोनों की अपेक्षा करता है। इस और कुछ विवेचन के लिए देखिए, चॉम्स्की(1964)।
7. यहाँ हम केवल आधायन-रचनांतरणों पर विचार कर रहे हैं किन्तु विविध सामान्यीकृत रचनांतरणों तक, जो समानाधिकरण रचनाओं (जैसे, संयोजन) को रचित करते हैं, अपने विवेचन को विस्तरित रखना चाहिए। इनसे संबद्ध कुछ समस्याएँ हैं किन्तु मैं इसमें विश्वास करता हूँ कि वे समानाधिकृत तत्त्वों को, जो तदनंतर आपरिवर्तित और एकल रचनांतरणों से उपयुक्त तथा परस्पर सम्वद्ध होते हैं, प्रस्तुत करने वाले नियम-समाकृतियों को (चॉम्स्की और मिलर, 1963 पृष्ठ 298 चॉम्स्की और शुत्सन वर्गर, 1963 पृष्ठ 133 के अर्थ में) स्वीकार करने से वर्तमान योजना में सरलता से समाविष्ट किए जा सकते हैं। यदि अध्याय 2, टिप्पणी 9 के सुझाव कार्य योग्य हैं तो इन नियम-समाकृतियों को व्याकरण में कथित करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। बल्कि, एक सामान्य रूढ़ि द्वारा हम ऐसी समाकृति को प्रत्येक मुख्य कोटि के साथ सहचरित कर सकते हैं। सामानाधिकरण का यह उपागम बाढ़ में विवेचनीय रचनांतरणों के निस्पन्दी प्रभाव पर अत्यधिक निर्भर हैं। इस प्रकार जहाँ कहीं हमें समानाधिकरण मिलता है कोई कोटि आधातृ वाक्य में n वार सामानाधिकृत होता है और युग्मित वाक्यों के n घटन आधार नियमों से स्वतन्त्रतया प्रजनित होते हैं।

8. प्रसंगवश द्रष्टव्य है कि हम अब कोटि प्रतीकों के समुच्चय से पूरक को निरस्त कर सकते हैं। इस बिन्दु पर हम "पूरक" को पृष्ठ 64–65 में बताई रीति से प्रकार्यात्मक धारणा के रूप में (सूक्ष्मता, अनेक प्रकार्यात्मक धारणाओं के सामूहिक शब्द के रूप में) परिभाषित कर सकते हैं।
9. जैसी स्थिति है, यह दावा मुझे कुछ अधिक सबल लगता है यद्यपि आर्थी निर्वचन के एक अर्थ में यह सत्य है। उदाहरणार्थ, यह स्पष्ट लगता है कि बहिस्तलीय संरचनाओं में "परिमाणकों" का क्रम आर्थी निर्वचन में कभी-कभी महत्त्वपूर्ण होता है। इस प्रकार, अनेक वक्ताओं के लिए, विशेषत: मुझे ये दोनों वाक्य "every one in the room knows at least two languages" (कमरे में प्रत्येक व्यक्ति कम से कम दो भाषाएँ जानता है) और "at least two languages are known by everyone in the room" (कम से कम दो भाषाएँ कमरे के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा जानी जाती हैं) सामानार्थ नहीं लगते हैं। फिर भी, हम यह मान सकते हैं कि ऐसे उदाहरणों में, दोनों निर्वचन प्रच्छन्न हैं (जैसाकि आर्थी निर्वचन के लिए संगत सभी पक्षों में दो वाक्यों की गहन संरचनाओं की सर्वांगसमता के द्वारा प्रदर्शित हो) और विरोधी निर्वचनों का कारण एक बाहरी कारक-बहिस्तलीय संरचनाओं से परिमाणकों के क्रम से सम्बद्ध सर्वोपरि स्थिति विचारणा है जो गहनस्तरीय संरचनाओं द्वारा प्रदत्त कुछ प्रच्छन्न निर्वचनों को नि:स्पन्दित करना है। इस दृष्टिकोण के समर्थन में यह दिखाया जा सकता है कि अन्य वाक्य जो इनसे व्युत्पन्न होते हैं (जैसे "there are two languages that everyone in the room knows)" (दो भाषाएँ हैं जिनको कमरे का प्रत्येक व्यक्ति जानता है) कोई भी निर्वचन ले लेते हैं और इससे यह सूचित होता है कि ये निर्वचन निरन्तर प्रच्छन्न रूप से बने रहे होंगे। कुछ अन्य उदाहरण भी हैं जो लगभग इसी प्रकार का संकेत करते हैं। उदाहरण के लिए ग्राईस का सुझाव है कि संयोजन में ध्वनित समयगत क्रम को वाक्यबंध का अभिलक्षण माना चाहिए न कि "और" के अर्थ का एक अंश, और याकोब्सन ने भी वाक्यबंध के "मूर्त" अभिलक्षण का विवेचन किया है और वे अभिलक्षण बहिस्तलीय संरचना के समयगत क्रम और महत्ता के क्रम के बीच के सम्बन्धों से युक्त हैं। इसी प्रसंग में अध्याय 2, टिप्पणी 32 में उल्लिखित 'वर्ण्य-टिप्पण' धारणा भी संगत है। अर्थ पर व्याकरणिक रचनांतरणों के प्रभाव पर पोर्ट-रायल लाजिक के टिप्पणों के कुछ सन्दर्भों के लिए देखए, चॉम्स्की(1966)।
10. रचनांतरण घटक का प्रकार्य कोशीय एकांशों और वाक्य संरचनाओं के लिए वितरण पर प्रतिबंधों को अभिव्यक्त करना है।
11. रूपात्मक विवरण में हमारा सुझाव इस प्रकार होगा। मान लीजिए कि प्रतीक A पदबंध चिन्हक K में XBY जो (जहाँ B एक प्रतीक है) अव्यवहित रूप से अधिकृत करता है अर्थात् $A \rightarrow XBY$ इस पदबंध चिन्हक को प्रजनित करने में प्रयुक्त कोटीय नियमों में से एक था। तो (AB) पदबंध चिन्हक K की एक शाखा बनता है। इसके अतिरिक्त यदि B का यह घटन अव्यवहित रूप से ZCW (जहाँ C एक प्रतीक है) को अधिकृत करता है, ताकि (B, C) एक शाखा है तो (A, B, C) भी एक शाखा हो जाती है, इत्यादि। अब मान लीजिए कि $(A_1 \cdots A_n)$ आधार नियमों द्वारा रचित सामान्यीकृत पदबंध-चिन्हक की एक शाखा है और $A_1 = A_n$ तो ऐसा अवश्य होना चाहिए कि किसी i के लिए, $1 \angle i \angle n, A_i = S$ दूसरे शब्दों में, नई गहन संरचनाएँ रचित करने की एकमात्र रीति अन्य पदबंध चिन्हकों में आरम्भिक प्रतिज्ञप्तियों को तकनीकी दृष्टि से, आधार पदबंध चिन्हकों को अंत: प्रविष्ट करना हो। यह किसी भी प्रकार पद-बंध संरचना व्याकरण का तर्कत: आवश्यक अभिलक्षण नहीं है।

द्रष्टव्य है कि समानाधिकरण (देखिए, टिप्पणी 7) की आधारभूत समाकृतियाँ अपरिमित प्रजनक क्षमता भी देती है, किन्तु यहाँ भी सच्चा पुनरावर्ती गुण धर्म प्रकटतया समाकृति $S \rightarrow S \;\; S \;\; \cdots \;\; S$ में सीमित है अतएव वह "प्रतिज्ञप्ति" प्रस्तुत करने वाले नियमों में ही सीमित रह जाता है।

यह व्यवस्थापन कुछ सीमान्तीय से घटना चक्रों को (जैसे, "very; very, · · · · very Adjective") (अधिक, अधिक · · अधिक विशेषण) और कुछ अधिक महत्वपूर्ण घटना-चक्रों को (जैसे, क्रियाविशेषण रूपों और विविध प्रकार के मध्यसमावेशी तत्वों को, जिनकी प्रास्थिति सामान्यतया स्पष्ट नहीं है, बार-बार दोहराने की सम्भावना) अव्याख्या छोड़ देता है। क्रिया विशेषणात्मक अनुक्रमों के ऊपर कुछ विवेचन के लिए देखिए मेथ्यूस(1961)।

12. देखिए पृष्ठ 113–114। कुछ विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की(1964) § 1.0 और (1966)।

13. प्रसंगवश दृष्टव्य है कि यह सर्वांगसमता के निर्धारक को व्याकरण में कभी भी कथित नहीं करना चाहिए, चूंकि यह व्याकरणों की क्रिया कारिता की सामान्य स्थिति थी। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि (जैसा कि लीज़ 1960a द्वारा दिखाया गया है) निर्धारक शृंखलाओं को सर्वांगसमता नहीं है बल्कि संरचनाओं की पूर्ण सर्वांगसमता जहाँ सर्वांगसमता–निर्धारक रचनान्तरणों में सम्मुख आता है। किन्तु विश्लेषणयीता के शब्दों में संरचनाओं की सर्वांगसमता को परिभाषित करने के लिए परिमाणकों का उपयोग आवश्यक होता है; वस्तुत: यही अकेली स्थिति हो सकती है जिसमें परिमाणक संरचनात्मक विश्लेषणों में आते हैं जो रचनान्तरणों को परिभाषित करते हैं। व्याकरणों से सर्वांगसमता के निर्धारक को निकालते हुए हम संरचनात्मक विश्लेषणों को, जो विश्लेषणीयता के बूलीय निर्धारकों के रूप में रचनान्तरणों को सूक्ष्मत: परिभाषित करते हैं, व्यवस्थापित करने में समर्थ होते हैं इस प्रकार रचनान्तरणात्मक व्याकरण के सिद्धान्त के बल को अत्यधिक प्रतिबन्धित करते हैं।

14. विवेचन के लिए देखिए, मिलर और चॉम्स्की (1963): श्लेसिनर (1964): मिलर और इसर्ड (1964): और अध्याय 1, § 2 में सारांश।

15. अध्याय 2 के § 2.3.1 और अध्याय 4 के § .1 देखिए। इस प्रश्न के और वाक्य विज्ञान की अर्थ विज्ञान पर आश्रितता के प्रश्न के गम्भीर विवेचन के लिए हमें सार्वत्रिक अर्थविज्ञान के सिद्धाँत के, अर्थात्, आर्थी निरूपण की प्रकृति के वर्णन के, विकास की प्रतीक्षा करनी होगी। यद्यपि इन प्रश्नों से सम्बद्ध विभिन्न स्थितियाँ बड़े विश्वास और अधिकार के साथ सामने प्रस्तुत की गई हैं किन्तु इन क्षेत्रों के परस्पर सम्बन्ध पर मात्र गम्भीर कार्य जो मेरी जानकारी में है वह है केट्स, फोडर और पोस्टल का (देखिए, संदर्भग्रन्थ सूची; जो अन्य दावे किए गए हैं उनके लिए चॉम्स्की (1957) और अन्य अनेक प्रकाशन देखिए)। वर्तमान में तो मैं अपने एक दृष्टिकोण को अपरि–वर्तित करने का कोई कारण नहीं देखता हूँ (वे चॉम्स्की (1957) और अन्यत्र अभिव्यक्त किए गए हैं) कि यद्यपि स्पष्टतया आर्थी विचारणाएं सामान्य भाषायी सिद्धान्त की रचना के लिए आवश्यकता है अर्थात्, स्पष्टतया वाक्य विज्ञान के सिद्धान्त को इस प्रकार बनाना चाहिए कि विशिष्ट भाषाओं के लिए प्रदर्शित वाक्य विन्यासीय संरचनाएं आर्थी निर्वचनों का समर्थन करती हैं) तथापि वर्तमान में यह दिखाने की कोई रीति नहीं है कि आर्थी विचारणाएं व्याकरण के वाक्य विन्यासीय और स्वनप्रक्रियात्मक घटकों के चयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और आर्थी अभिलक्षण (इस पर वे किसी महत्वपूर्ण अर्थ में) वाक्य विन्यासीय अथवा स्वनप्रक्रियात्मक नियमों

की क्रियाकारिता से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं) किस प्रकार आर्थी विचारणाएं ऐसी व्यवस्थाओं के लिए मूल्यांकन-प्रक्रिया का योगदान कर सकती है अथवा जिन आधारों पर वे चुनी गई हैं उस प्राथमिक भाषायी सामग्री में कुछ को दे सकती हैं। इसे प्रदर्शित करने के कोई गम्भीर प्रस्ताव नहीं किए गए हैं। कुछ अतिरिक्त सम्बद्ध विवेचन के लिए अध्याय 1, § 6 और अध्याय 4, § 1 देखिए।

16 इस अपरिवर्तन के कुछ विवरण फ्रेजर के द्वारा प्राप्त किए गए हैं। व्युत्पन्न अवयव संरचना के सिद्धान्त की जटिलता जिस सीमा तक स्थान विनिमयों की उपस्थिति पर निर्भर है, यह चॉम्स्की (1955, अध्याय 8) में दिए इन धारणाओं के विश्लेषण से उदाहरणार्थ पर्याप्त स्पष्ट है।

17. द्रष्टव्य है कि इस स्थिति में मुख्य विश्लेषण का तीसरा पद दृढ़तापूर्वक लोपित नहीं होता है बल्कि, यह पद अभिलक्षण [± मानव] को छोड़कर सर्वत्र लोपित होता है और उस स्थिति में परवर्ती नियमों से स्वन प्रक्रियात्मक रूप (who, which, या that) लेता है यह प्रायः उनके लिए सही है जिन्हें हम यहा उद्धर्षक संक्रियाएं कहते हैं।

18. स्वाभाविक आंकनिक निर्णय यह होगा कि पूर्णांक 1 और 2 को हम क्रमशः प्रथम और द्वितीय पुरुष में सीमित रखें।

अध्याय 4

1. यह नियम पुनर्लेखी नियम अथवा स्थानापत्ति रचनान्तरण (देखिए, अध्याय 2, § 4.3) है यहां यह हमारा विषय नहीं है: विषय व्याख्या की सुविधा के लिए हम इसे स्थानापत्ति रचनान्तरण ही मानेंगे।

2. इस दृढ़ भ्रान्त धारणा को बचाने के लिए, यह फिरबल पूर्वक कहना चाहिए कि "व्याकरणिकता" यहां एक तकनीकी शब्द के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है और इससे यह ध्वनित नहीं होता है कि 'विचलित वाक्य" विधि निर्माण के प्रतिकूल हैं और "बिना प्रकार्य के' अथवा 'नियम विरुद्ध" है। ठीक इसके विपरीत प्रजनक ध्याकरण के विवेचनों में, जैसा कि बार-बार बल दिया गया है और उदाहृत हुआ है, सही है। विवेचन के लिए चॉम्स्की (1961) और अन्य अनेक संदर्भ देखिए। यह प्रश्न कि क्या व्याकरण को च्युतवाक्य प्रजनित करने चाहिए शुद्धतया पदावली विषयक प्रश्न है और इसका "प्रजनन करना" के तकनीकी अर्थ से अधिक से अधिक कुछ भी अर्थ नहीं है। वर्णनात्मक रूप से पर्याप्त व्याकरण को प्रत्येक शृंखला के साथ एक संरचनात्मक वर्णन समनुदेशित करना चाहिए जो कि सुदृढ़ सुरचितता से उनकी च्युति की रीति को प्रदर्शित करता है (यदि ऐसी कोई सुरचितता है तो)। एक स्वाभाविक पदावली विषयक निर्णय यह कहना होगा कि व्याकरण प्रत्यक्षतया भाषा को प्रजनित करता है जिसके अन्तर्गत वे ही वाक्य आते हैं जो किसी भी दशा में अपने संरचनात्मक वर्णनों से च्युत नहीं होते हैं (जैसे, (3))। व्याकरण शेष सभी शृंखलाओं को (जैसे (1), (2) को) उनके संरचनात्मक वर्णनों के साथ व्युत्पादन की दृष्टि से प्रजनित करता है। ये संरचनात्मक वर्णन व्युत्पादन तथा प्रजनित वाक्यों से विचलित होने की रीति और मात्रा दिखाते हैं। निर्वचन विचलित वाक्यों पर किस प्रकार अध्यरोपित किए जाए इसका निर्धारण करने वाले सिद्धान्त नियम सार्वत्रिक हो सकते हैं (जिनका चॉम्स्की, 1955, 1961; मिलर और चॉम्स्की, 1963; और यहां पुनः सुझाव दिया गया था) अथवा भाषा सापेक्ष हो

सकते हैं (जैसा कि केट्स 1964 a में सुझाव दिया गया था)। वह एक सार पूर्ण प्रश्न है किन्तु इन धारणाओं से सम्बन्ध अन्य अनेक प्रश्न, जिन पर विवाद होता रहा है, पदावली विषयक निर्णयों से ही सम्बद्ध है।

3. ध्यातव्य है कि चयनात्मक नियम, जैसा कि पहले दिखा चुके हैं, वे नियम हैं जो क्रियाओं और विशेषणों को सामान्यीकृत पदबन्ध चिन्हकों में विविध स्थानों पर आने वाले संज्ञाओं के अन्तर्निष्ठ वाक्य-विन्यासीय अभिलक्षणों के आधार पर अन्त: प्रविष्ट होते हैं। किन्तु संज्ञाओं के अन्तर्निष्ठ वाक्यविन्यासीय अभिलक्षणों के निर्दिष्ट करने वाले सभी नियम चयनात्मक नियम नहीं हैं: विशेषत: (4) के निर्माण में उल्लंघन करने वाले नियम ऐसे अभिलक्षण से युक्त हैं किन्तु ये चयनात्मक नियम नहीं है।

4. कोटि [+ [+अमूर्त]....—....[+चेतन]] की अनेक क्रियाओं में ing से युक्त विशेषणात्मक रूप नहीं होते हैं, किन्तु इनमें अनिवार्यतया ing के रूपान्तर के रूप में अन्य प्रत्यय लगते दिखाई पड़ते हैं (bothersome दु:खदायी, scary भयानक, impressive चित्ताकर्षक) क्रमश; (bothering कष्ट देना, scaring भयावह, impressing प्रभावित करना) के लिए)।

5. ये उदाहरण उन संभावनाओं के परास को पूर्णतया नि:शेष करना प्रारम्भ नहीं करते हैं जिन पर च्युतवाक्यों के निर्वचन के पूर्ण अध्ययन में अवश्य विचार करना चाहिए: पहले तो वे क्रम-विपर्यय को शैलीगत युक्ति के रूप में उदाहृत नहीं करते हैं (देखिए—कुछ विवेचन के लिए अध्याय 2, §, 4.4)। व्याकरणिकता से विचलन का विवेचन, जो यहाँ किया गया है; इस घटनाचक्र में कोई अन्तर्दृष्टि नहीं देता है। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित पंक्तियों पर विचार करें: Me up at does/out of the floor/quietly Stare, a poisoned mouse/still who alive/is asking what/have i done that/You wouldn't have." (मुझ पर करो फर्श के बाहर, चुपचाप निहारना, एक जहरीला चूहा, अब भी जीवित, पूछ क्या रहा है। क्या मैं वह कर चुका, तुम्हारे पास नहीं होगा।) (ई. ई. कमिंग्स)। यह किंचिन्मात्र कठिनाई अथवा निवर्चन की संदिग्धता प्रस्तुत नहीं करता है, और यह निश्चयत: प्रश्न बाह्य होगा यदि हम इसे प्रजनित करने में उल्लंघित व्याकरण नियमों के प्रकार या संख्या के शब्दों में विचलन मात्रा को समनुदेशित करने का प्रयत्न करें।

6. द्रष्टव्य है कि पहले दिया हुआ व्यवस्थापन पश्चवर्ती स्थिति में संदिग्धता दे रहा है जो कि अभी कथित रूढ़ि द्वारा ही दूर हो सकता है।

7. हम प्रभावत: इस रूढ़ि का अनुपालन कर रहे हैं कि e=[e,·····] जहाँ e एक शून्य तत्व है। द्रष्टव्य है कि मिश्र प्रतीक में अभिलक्षण क्रमहीन होते हैं। जैसा कि इस विवेचन में अन्यत्र कहा है, मै नितांत सूक्ष्म वर्णन प्रस्तुत करने अथवा इन परिभाषाओं को उनके सरलतम और सर्वाधिक सामान्य रूप देने का कोई प्रयत्न यहां नहीं करूँगा।

8. इस प्रकार X शून्य है यदि [α] शून्य है। Y शून्य है यदि β शून्य है।

9. यह कठिनाई वस्तुत: नहीं उत्पन्न होगी यदि हमें अंग्रेजी के क्रिया पश्चवर्ती विशेषणों का कुछ भिन्न विश्लेषण देना होता है और क्रियाओं के वाक्यीय—पूरकों से युक्त आधार भूत शृंखलाओं से उन्हें व्युत्पन्न करना होता। कुछ स्थितियों में, यह निस्संदेह सही है (जैसे, "John seems

sad", (जॉन दुखी प्रतीत होता है) जो कि आधार शृंखला "John is sad"(जॉन दुखी है) से युक्त आधारभूत संरचना से 'John seems to be sad" (जॉन दुखी होता हुआ प्रतीत होता है) और तदनंतर अन्य रचनांतरणों द्वारा "John seems sad" (जॉन दुखी प्रतीत होता हैं) बना है–इसी प्रकार, "become" (होना) की स्थिति में यह विश्लेषण सु–अभिप्रेरित है विशेषत: इस कारण कि वह कर्मवाच्यीकरण से "become" (होना) को बहिर्गत करने का आधार दे सकता है) और यह भी सही होगा यदि उसे अनेक अथवा सभी ऐसी स्थितियों में विस्तारित किया जाएं। इन रूपों में से कुछ के व्युत्पादन के लिए दिए कुछ अन्य प्रस्तावों के लिए, देखिए, जीअरर (1964)।

यह उल्लेखनीय है कि समाकृति (9) के विवेचन में W अथवा V पर अध्यारोपित निर्धारक कदाचित रचनांतरणों के सिद्धान्तों में आवश्यक है, यद्यपि यह समस्या कभी भी स्पष्टतया विवेचित नहीं हुई है।

10. मैं टामस वेवर और पीटर रोज़नबाम का ऋणी हूँ जिन्होंने इस प्रश्न से सम्बद्ध अनेक रोचक और सुझाव भरे टिप्पण दिए हैं।

11. ऐसी अनेक अथवा सभी स्थितियों में "सामान्य" की धारणा महत्वपूर्ण रीति से सम्बद्ध है (इस पर्यवेक्षण का संकेत मुझे बरबरा हाल से मिला था) अतएव कोई यह दिखाना चाहेगा कि "सामान्य" के आर्थी प्रभाव का एक अंश अन्य प्रकार के अर्थगत संघर्षों को निरस्त कर देगा। प्रसंगवश द्रष्टव्य है कि (15) के वाक्यों में प्रत्येक की गहन संरचना में sincerity ईमानदारी) को मुख्य क्रिया frighten (भयभीत करना) का प्रत्यक्ष–कर्म (एक अभिनिर्दिष्ट कर्ता के साथ) मानने वाली शृंखला से युक्त है।

12. इन प्रश्नों में रुचि रखने का प्रारम्भ हम्बोल्ट (1836) में देखा जा सकता है, उसके प्रतिनिधि–उद्धरणों के लिए देखिए चामस्की (1964)। अधिक सम्बद्ध वर्णनात्मक कार्य के लिए उलमन (1959) देखिए। कुछ मनोवैज्ञानिक अध्ययन भी संगत हैं जो एक भाषाई एकांश को किंचित सम्बद्ध एकांशों के प्रसंग में रखने का प्रयत्न करते हैं, जैसे लूरिया और विनोग्रेदोवा (Luria and Vinogradova) (1959) और "घटकीय विश्लेषण" के अधिक प्रचलित कार्य।

13. यद्यपि (19i) के वाक्य समीपतम समानोक्ति हैं, फिर भी यह किसी भी रीति से सत्य नहीं है कि हैरिस (1957), हीज़ (1961) और अन्य से विवेचित प्रकार का "सहघटन संबंध" इन दोनों के बीच है। इस प्रकार pompous (आत्माभिमानी) नितांत स्वाभाविकता से a friend (एक मित्र) द्वारा "I regard John as" (मैं जॉन को ऐसा समझता हूँ) विस्थापित हो सकता है, किन्तु "John strikes as...."(जॉन ऐसा लगता है) में ऐसा नही हो सकता है (इस पर्यवेक्षण के लिए में केट्स का आभारी हूँ)। तो यह स्पष्ट है कि regard (समझना) और strike (लगना) का अर्थ—सामीप्य संबंध (विशेषत: कर्ता-क्रिया-कर्म संबंधों के विपर्यय से संबद्ध) वितरणात्मक प्रतिबंधों की तदनुरूप साम्यता को निर्धारित नहीं करता है। दूसरे शब्दों में प्रासंगिक अभिलक्षणों से संबद्ध नियम आर्थी गुणधर्मों से अंशत: स्वतंत्र हो सकते हैं। ऐसे उदाहरण को ध्यान में रखना होगा यदि बहुधा प्रचलित किंतु इस क्षण, पूर्णतया नि:सार) इस दावे को कुछ बल देने का प्रयत्न किया जाए कि आर्थी विचारणाएं किसी न किसी प्रकार वाक्य-विन्यासीय संरचना अथवा वितरणात्मक गुणाधर्मों को निर्धारित करते हैं।

(19i) के विवेचन में मैं यह मानता रहा हूँ कि strikes (लगता है) का कर्ता गहनस्तरीय सरंचना में John (जॉन) है, किंतु यह द्रष्टव्य है कि यह कदापि स्पष्ट नहीं है। एक विकल्प यह होगा कि आधारभूत संरचना को it⁀s trikes me (ऐसा⁀मुझे लगता है) माना जाए

जहां it⁀s (यह⁀s) एक NP है और S आधारभूत संरचना "John is pompous" (जॉन आत्माभिमानी है) को अधिकृत करता है। अनिवार्य रचनान्तरण आधारभूत संरचना को "it strikes me that John is pompous" (मुझे ऐसा लगता है कि जॉन आत्माभिमानी है) बनाएगा, और एक अन्य वैकल्पिक रचनांतरण 'John strikes me as pompous' (जॉन मुझे आत्माभिमानी लगता है) यह रूप देगा। (19i) का कोशीय एकांश strike (लगना) अपने सुदृढ़ उपकोटिकरण अभिलक्षण की दृष्टि से "it struck me blind" (यह मुझे अन्धा लगा) के स्वनात्मत: सर्वांगसम एकांश से अत्यन्त भिन्न होगा, जबकि दोनों' 'he struck me (वह मुझे लगा) "he struck at outlandish pose' (उसका गँवारू रूप लगा) आदि में विद्यमान strike (लगाना) से सुदृढ़ उपकोटिकरण की दृष्टि से भिन्न हैं (देखिए, अध्याय 2, टिप्पणी 15)। यदि इस विश्लेषण को वाक्य विन्यासीय आधार पर युक्ति युक्त किया जा सकता है, तो गहन संरचनाएं पुस्तक में स्वीकृत आर्थी निर्वचन के लिए कुछ और अधिक उपयुक्त होगी जैसाकि अनेक व्यक्तियों ने देखा है, (19 i) के युग्मित उदाहरणों के बीच अन्य संगत वाक्य विन्यासीय अन्तर भी हैं। उदाहरण के लिए "John strikes me as pompous" (जॉन मुझे आत्माभिमानी लगता है) "his remarks impress me as unintelligible" (उसकी टिप्पणियां मुझे दुरूह लगीं) जैसे वाक्यों का कर्म वाच्य नहीं होता है, यद्यपि "I regard John as pompous" (मैं जॉन को आत्माभिमानी मानता हूं), it struck me blind (यह मुझे अन्धा लगा) आदि का शुमुक्ततया कर्मवाच्यीकरण होता है।

(19 iii) के सम्बन्ध में हैरिस ने सुझाव दिया है (1952, पृष्ठ 24-25) कि अर्थ सम्बन्ध वितरणात्मक आधार पर अभिव्यक्त करना सम्भव हो सकता है किन्तु उनके सुझाव कि किस प्रकार यह सम्भव है उस बिन्दु तक विकसित नहीं हुए हैं जहां उनके गुण दोषों का मूल्यांकन किया जा सके।

द्रष्टव्य है कि यहां उल्लिखित समस्याओं का केवल पदावली-विषयक समाधान नहीं हो सकता है। इस प्रकार हम (19) से संबद्ध तथ्यों को "आर्थी कर्ता" "आर्थी कर्म" और भांति-भांति के "अर्थिमों" जैसी नई धारणाओं के शब्दों में भली भाँति कह सकते हैं, किन्तु पदावली के ऐसे नव-सर्जनों का इन उदाहरणों द्वारा उठाए गंभीर प्रश्नों के स्पष्टीकरण की ओर कोई योगदान नहीं हो सकता हैं।

14. अध्याय 2, टिप्पणी 15 में जैसा दिखाया है, परिच्छेदक-अभिलक्षण मैट्रिक्स अमूर्त स्वनप्रक्रियात्मक अभिलक्षणों के समुच्चय को निरूपित करने की एक रीति भर है और इस कारण एक कोशीय प्रविष्टि (एक रचनांग) को अभिलक्षणों के समुच्चय के रूप में, इस विवेचन में अरूपीयत: सुझाई रीति से उन पर परिभाषित अतिरिक्त संरचना के साथ, देखा जा सकता है।

15. चयनात्मक अभिलक्षणों की दृष्टि से विकल्प (iv) सु–अभिप्रेरित है। देखिए टिप्पणी 20।

यह कहना कि अभिलक्षण सकारात्मक (नकारात्मक) रूप से विनिर्दिष्ट है इस कहने के बराबर है कि वह + (क्रमश:, −) से चिह्नित है। यह द्रष्टव्य है कि ये अथवा इनसे सदृश रूढ़ियाँ एक अन्तर स्थापित करती हैं जो चिह्नित/अचिह्नत प्रभेद के, जो प्राय: अभिलक्षणों और कोटियों के संबंध में विवेचित हुआ है, समकक्ष है, यद्यपि यह नितान्त अनिर्णीत है।

16. "Sincerity frightens" (ईमानदारी भयभीत होती है) जैसे उदाहरण निस्संदेह मिल सकते हैं किंतु ये "sincerity frightens (ईमानदारी भयभीत होती है) अविनिर्दिष्ट-कर्म" आदि के रचनांतर के रूप में मिलते हैं। इसकी सम्भावनाएँ वस्तुत बहुत ही सीमित है–

उदाहरणार्थं, "his sincerity was frightening" (उसकी ईमानदारी भयभीत हो रही थी) कोई भी संदिग्धार्थी नहीं मानेगा। यह द्रष्टव्य है "frighten" (भयभीत होना) की कोटि के शब्द बहिस्तलीय संरचना में अत्यन्त स्वाभाविकतया अकर्मक दिखाई पड़ते हैं, जैसे, "John frightens easily" (जॉन सरलता से भयभीत होता है) में (यह वस्तुतः इससे अधिक सामान्य है, देखिए "the book reads easily" (पुस्तक आसानी से पढ़ी जाती है। आदि)। किन्तु यह यहाँ अप्रासंगिक है। ऐसी स्थिति में "व्याकरणिक कर्त्ता" "तार्किक कर्म" है—अर्थात्, गहन संरचना "अविनिर्दिष्ट..कर्त्ता frightens John easily" (जॉन को आसानी से भयभीत करता है) का प्रत्यक्ष कर्म है। प्राय: अनिवार्य रीतिवाची क्रिया विशेषण रूप इन स्थितियों में यह इंगित करता है कि कोई कर्मवाच्य रचनान्तरण को भी युक्त करने वाला सामान्यीकरण ढूंढ़ सकता है।

17. पश्चवर्ती केवल च्युत वाक्य के रूप निर्वचन—योग्य होगा।

18. कोई इसकी ताथ्यिक सच्चाई. विशेषत: {[−गणनीय], ±अमूर्त]} की स्थिति में, चुनौती दे सकता है। मैं यह मानता रहा हूँ कि अभिलक्षण {[−गणनीय], [+अमूर्त]}, virtue, (भलाई), justice (न्याय) जैसी शुद्ध भाव वाची संज्ञाओं को लक्षित करते हैं; जबकि लक्षण {[−गणनीय], [−अमूर्त]} water, (पानी) dirt (गन्दगी) जैसी राशि वाली संज्ञाओं को करते हैं। किन्तु अचेतन गणनीय संज्ञाओं का एक उपविभाजन है जो इसके अनुरूप लगता है और वह है table, (मेज), mountain (पर्वत) आदि का [+मूर्त] और problem, (समस्या), effort (प्रयास) आदि का [−मूर्त] अन्तर। अगर ऐसा हो जाता है कि अभिलक्षण [±मूर्त] और (±अमूर्त) (−चेतन) और (−गणनीय) के क्रमश: उप-अभिलक्षण) अभिज्ञात होते हैं तो अभिलक्षण [अमूर्त] [+गणनीय] कीं दृष्टि से व्यभिचरित —वर्गीकृत होगा न कि सोपान क्रमिक। किन्तु इस प्रश्न का समाधान कहीं अधिक अनुभवाश्रित अध्ययन के बिना सरल नहीं है।

19. ऐसी रूढ़ि की अभीष्टता पॉल पोस्टल द्वारा दिखाई गई थी।

20. द्रष्टव्य कि यदि शब्द समूह में हमें स्पष्टतया सकारात्मक रूप से विनिर्दिष्ट न कि नकरात्मक रूप से विनिर्दिष्ट चयनात्मक अभिलक्षणों को सूची बद्ध करना होता तो तो इस रूढ़ि को चयनात्मक अभिलक्षणों तक विस्तरित करना होता। इस प्रकार हमें, उदाहरणार्थ "run" (दौड़ना) के लिए "मानव कर्त्ता लेता है" और "चेतन कर्त्ता लेता है" इनके अनुरूप दोनों अभिलक्षणों को सूची बद्ध न करना होता। ऐसी रूढ़ि, प्रभावत: चयनात्मक अभिलक्षण को स्वयं एक प्रश्न के मिश्र प्रतीक के रूप में स्वयं मानता।

21. सदा की भाँति, कुछ अपवाद हैं जो पृथक विवरण की अपेक्षा करते हैं। स्मरण कीजिए कि हमने by⁀passive (कर्म वाच्य⁀द्वारा)(जहाँ passive (कर्मवाच्य) एक डमी अन्त्य प्रतीक है और सार्वत्रिक मूक (डमी) प्रतीक △ द्वारा। वस्तुतः विस्थापनीय है) पद बन्ध को रीतिवाची क्रियाविशेषण के रूप में मानने के कुछ तर्क दिए थे। अतएव केवल कर्मवाच्य में घटित होने वाली क्रिया इस नियम का अपवाद होगी (जैसे "he is said to be a rather decent fellow" (वह एक उपयुक्त साथी कहा जाता है) अथवा, कदाचित "he was shorn of all dignity" (वह सभी प्रकार की गरिमा से वंचित था) जैसे रूप।

22. स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियम भी कुछ सार्वत्रिक नियामकों से प्रतिबन्धित है और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सभी अभिलक्षणों के लिए ये नियामक यहाँ उदाहृत विवेचन से कहीं

अधिक परे जाते हैं। जैसेकि ये व्यवस्थापित किए गए हैं, ये सामान्य रूढ़ियों की (अर्थात् "मानव भाषा" की सामान्य परिभाषा के पक्षों की) भूमिका निभाते हैं जिस पर विशिष्ट व्याकरणों की विनिर्दिष्टता को न्यूनीकृत करने में भरोसा किया जा सकता है।

23. देखिए, हाले (1959a, 1959b), 1961, 1962a, 1964। देखिए अध्याय 1 §§ 6,7 में और वहाँ दिए सन्दर्भों में मूल्यांकन प्रक्रिया और व्याख्यात्मक पर्याप्ता के विवेचन। द्रष्टव्य है कि "स्वनप्रक्रियात्मक दृष्टि से स्वीकार्य (अर्थात् "आकस्मिक" बनाम "व्यवस्थाबद्ध" रिक्तता) धारणा की हाले की परिभाषा वही इंगित करती है जो अध्याय 1 में "रूपात्मक" न कि "सत्तात्मक" भाषाई सार्वभौम कहा गया है, यद्यपि, निस्सन्देह यहाँ अन्वेषण योग्य सत्तात्मक नियामक है।

24. "आकस्मिक रिक्तताओं" के सम्भव उदाहरणों के रूप में हम क्रिया X के अनस्तित्व को दिखा सकते हैं जो पशुवाची प्रत्यक्ष—कर्म ले और उसका अन्यथा वही अर्थ हो जो सकर्मक "grow" (उगाना) का है. ताकि "he X's dogs" का अर्थ "he grows corn" (वह अन्न उगाता है) के समानान्तर हो। ("raise" (उठाना) दोनों अर्थों में आता हुआ लगता है); अथवा उस शब्द की अनुपस्थिति जिसका पौधों के साथ वैसा ही सम्बन्ध है जैसा "लाश" का पशुओं के साथ (यह उदाहरण टी० जी० बेवर द्वारा सुझाया गया था)।

25. इस प्रकार हम जर्मन में कारक—कोटि को चार मान-वाला मान सकते हैं, लिंग को तीन मान-वाला और वचन को दो मान वाला और सभी संज्ञाओं को रूपावली वर्गों के एक बहुमानीय आयाम में क्रमबद्ध मान सकते हैं। कदाचित यह अभीष्टतम विश्लेषण नहीं है और इन 'आयामों' के साथ-साथ अन्य संरचना को भी अध्यारोपित करते हैं। इन कोटियों के भाषारिपेक्ष लक्षण-निरूपण देने के प्रयत्न सम्भव हो सकते हैं। ये महत्वपूर्ण विषय हैं और इनके लिए अधिक अध्ययन की आवश्यकता है जोकि इस विवेचन की सीमा के बाहर है। मैं इसलिए इन निदर्शन-रूप उदाहरणों में केवल असंरचित वर्णन पर विचार करूंगा।

26. केवल विषय को समझाने के लिए हम पारम्परिक प्रस्तुतीकरण के क्रम में पूर्णांकों को ले रहे हैं और तब [1 लिंग] पुलिंग है, [2 वचन] बहुवचन है, [2 कारक] सम्बन्ध (षष्ठी) है और संज्ञा Bruder (भाई) रूपावली वर्ग में के "आयाम" में वर्ग 1 में समनुदेशित है। द्रष्टव्य है कि हम निरन्तर यह मानते रहे हैं कि अभिलक्षण "द्विध्रुवी" है—अर्थात् वे अपने प्रयोज्यता-क्षेत्र को दो पूर्णतया पृथक् वर्गों में बाँट लेते हैं। इसके लिए कोई तार्किक अपेक्षा नहीं थी। स्वनप्रक्रिया से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि परिच्छेदक अभिलक्षण, वस्तुतः अपने स्वन-प्रक्रियात्मक प्रकार्य में सर्वोत्तम द्विध्रुवी माने गए हैं (देखिए, जैसे, हाले, 1957) यद्यपि स्पष्टतया रचनात्मक प्रकार्य में सदा ऐसा नहीं रहा है। इस प्रकार अभिलक्षण 'बलाघात' की स्थिति में, हम अंग्रेजी में पाँच या अधिक मात्रा-कोटि सरलता से पाते हैं और विस्तृत वर्णन देने वाले व्याकरण में अन्य स्वनात्मक अभिलक्षण भी बहु-मानीय माने जा सकते हैं। यह माना गया है (देखिए याकोब्सन, 1936) कि कारक जैसे "आयाम" द्विध्रुवी अभिलक्षणों के सोपान क्रम से विश्लेषित किए जा सकते हैं (स्वनप्रक्रियात्मक परिच्छेदक अभिलक्षणों के समान), किन्तु हम इस प्रश्न पर यहाँ विचार नहीं करेंगे।

27. अर्थात्, संज्ञाओं को विकसित करने वाला कोटीय नियम $N \rightarrow \triangle$ (देखिए पृष्ठ 118) न होकर $N \rightarrow [\triangle, \alpha$ वचन] होगा ($\alpha = +$ या $-$ अंग्रेजी या जर्मन के लिए, यद्यपि अन्य व्यवस्थाओं के लिए देखिए टिप्पणी 25 अधिक मान अथवा एक पृथक् मान-संगठन माना जा सकता है)।

28. वस्तुत: एकांश-और-विन्यास प्रकार के वर्णनवादी व्याकरणों में पश्चवर्ती को छोड़ा जा सकता है, क्योंकि उसका एक मात्र प्रकार्य कुछ सामान्यता "रूपिम स्वानिमी" नियमों में प्रस्तुत करना है और चूंकि ये व्याकरण, वस्तुत:, इस प्रकार से रचे गए हैं कि सर्वाधिक तात्विक सामान्य नियमों को छोड़कर सभी की सम्भावना को बहिर्गत कर दिया गया है। विवेचन के लिए देखिए चॉम्स्की (1964, पृष्ठ 31 और तन्दनन्तर)।
29. रूप साधन व्यवस्थाओं के रूपिमीय विश्लेषण का यह दोष, जो कि अत्यन्त गम्भीर है, व्यवहार रूप में मॉरिस हाले द्वारा मुझे बताया गया था।
30. (30) में प्रस्तुत विश्लेषण का एक विकल्प कोशीय एकांश, जैसे, Bruder (भाई) को प्रतिपादिक+अंत्यप्रत्यय का संयोग मानना हो सकता है और अंत्यप्रत्यय को रूपावली कोटियों के अन्तर्गत माना जा सकता है।
31. पिछले कुछ सालों में; रूसी और लेत्वियन स्वनप्रक्रिया के रचनान्तरण-चक्र के अत्यन्त गहन और लाभदायक अध्ययन हुए हैं (सन्दर्भों के लिए देखिए चॉम्स्की, 1964, टिप्पणी 6, पृष्ठ 14)। इस व्यवस्था के अन्तर्गत आने वाले नियम पदबन्ध-चिन्हकों पर अनुप्रयुक्त होते हैं और परिणामत: उनका व्यवस्थापन यहां विवेचनीय प्रश्नों के उत्तरों पर अत्यधिक निर्भर रहेगा। अभी तक कोई गम्भीर गवेषणा इस बात की नहीं की गई है कि रचनान्तरण चक्र किस प्रकार अभिलक्षण व्यवस्था और (30) जैसे पदबन्ध-चिन्हकों पर प्रयुक्त होता है। जब यह स्पष्टीकृत हो जाएगा तब रूप साधन व्यवस्थाओं के रूपिमीय बनाम रूपावलीय निरूपण के प्रश्न से संबद्ध स्वनप्रक्रियात्मक साक्ष्य को प्रस्तुत करना सम्भव होगा। वर्तमान के लिए, अनुभवाश्रित साक्ष्य यह संकेत देता है कि स्वनप्रक्रिया में रचनान्तरणात्मक चक्र का क्रमबन्ध पूर्णतया कोटियों से, न कि अभिलक्षणों, निर्धारित होता है (यद्यपि निस्सन्देह कुछ नियमों को वाक्य विन्यासीय अभिलक्षणों के शब्दों में अनुप्रयोग में ही सीमित रखना होता है)। इसके अतिरिक्त यह सर्वाधिक स्वाभाविक अभिग्रह है यदि हम अभिलक्षणों को वस्तुत: अंत्य प्रतीक (रचनांग) से मुक्त मानें।
32. यह रचनांग वस्तुत: अभिलक्षण [+निश्चित] से युक्त अतएव एक वि-प्रजनित मिश्र प्रतीक माना जा सकता है जो नियम द्वारा पूर्ण मिश्र प्रतीक [+निश्चित, α लिंग, β वचन, γ विभक्ति] में विस्तरित होता है। इस अभिग्रह के कुछ समर्थन के लिए देखिए टिप्पणी 38)।
33. रचनान्तरण बलाघात चक्र के विकसन में चॉम्स्की, हाले और लुकाफ (1956) और हाले एवं चॉम्स्की (1960) में अभिलक्षण विनिर्देशनों पर चरांकों का प्रयोग किया गया है। समीकरण के सम्बन्ध में प्रयुक्त करने का विचार हाले (1962 b) से मिला है। टी० जी० बेवर ने दिखाया है कि 'विचलन' (जैसे, Ablaut) (अवश्रुति) अभिलक्षण से संबद्ध विभिन्न प्रकार के रचनान्तरों के वर्णन में भी यही युक्ति काम में लाई जा सकती है। देखिए बेवर(1963), बेवर और लेंगनडोअन(1963)।
34. देखिए लीज़(1961) और स्मिथ(1961)। जब दो विशेषण कुछ विशेष रीति से युग्मित किए जाते हैं जिसे अभी बहुत ही कम समझा गया है, तो रचनान्तरण भिन्न होने पर भी अवरुद्ध नहीं होता है। इस प्रकार हमारे पास ऐसे रूप "this is taller than that is wide" (उस चौड़े से यह अधिक लम्बा है) मिलते हैं। देखिए, हैरिस(1957), पृष्ठ 314.
35. द्रष्टव्य है कि इस विवेचन से उभड़ता हुआ प्रभेद टिप्पणी 30 में संसूचित प्रभेद का सम्पाती नहीं है।

यह एक रोचक विषय है कि (40) जैसे उदाहरणों की यथार्थता को चुनौती दी गई है। फ्रेंच के प्राचीनतम वर्णनात्मक अध्ययनों में से एक में, वाजेला (1647, पृष्ठ 461, 462) मानते हैं कि ऐसी कथन-शैली "पूर्णतया बुरी" न "पूर्णतया अच्छी" होती है और इसका सुझाव देते हैं कि जब विशेषण के पुलिंग और स्त्रीलिंग रूप भिन्न हों तो ऐसा प्रयोग नहीं करना चाहिए। इस प्रकार पुरुष किसी महिला से बोलते समय 'आपसे अधिक सुन्दर हूँ' (je suis plus beau que vous) न कहे बल्कि अपेक्षाकृत (नियमित भाषण के लिए) समानोक्ति je suis plus beau que vous n'etes belle 'मैं आपसे अधिक सुन्दर हूँ' कहे यद्यपि उसके लिए यह कहना भी ठीक ही होता je suis plus riche que vous (आपसे अधिक धनवान हूँ)।

36. ब्रेंडोन क्वाल्स द्वारा मुझे संसूचित यह तथ्य तुलनात्मकों के विश्लेषण के लिए अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न करता है। विशेषतः, यदि (41 iii) जैसे वाक्य "I know several lawyers (who are) more successful than Bill" (मैं अनेक वकीलों को जानता हूँ (जो) बिल से अधिक सफल हैं) से "who are" (जो हैं) लोपन के बाद संज्ञाविशेषण विपर्यय द्वारा (ऐसा अत्यन्त विश्वास्य लगता है) व्युत्पन्न होते हैं। तो हमें निम्नलिखित जैसे तथ्यों की किसी न किसी प्रकार व्याख्या करनी होगी : "I know a more clever man than Mary" (मैं मेरी से अधिक चतुर व्यक्ति को जानता हूँ) अथवा "I have never seen a heavier book than this rock" (मैंने इस चट्टान से भारी पुस्तक कभी नहीं देखी है) की असम्भावना यद्यपि इनके अभिगृहीत स्रोत "I know a man (who is) more clever than Mary" (मैं एक आदमी को जानता हूँ (जो) मेरी से अधिक चतुर है) "I have never seen a book (which is) heavier than this rook" (मैंने पुस्तक कभी नहीं देखी है जो इस चट्टान से भारी है) पूर्णतया ठीक है, यह तथ्य कि वाक्य "I have never read a more intricate poem than Tristram Shandy" (मैंने ट्रिस्ट्राम शैण्डी से अधिक गूढ़ कविता कभी नहीं पढ़ी है) की यह ध्वनि है कि Tristram Shandy एक कविता है, जबकि वाक्य "Ihave never read a poem (which is) more intricate than Tristram Shandy" (मैंने कविता कभी नहीं पढ़ी है (जो) ट्रिस्ट्राम शैण्डी से अधिक गूढ़ (है) जो कि इस दृष्टिकोण में स्रोत माना जाता है, कि ध्वनि यह नहीं होती है कि Tristram Shandy एक कविता है।

इसके अतिरिक्त, जैसा कि इस विवेचन में निरन्तर रहा है, मैं इस पर बल देना चाहूँगा कि रचनांतरण नियमों की ऐसी एतदर्थ व्यवस्था के व्यवस्थापन में कोई विशेष कठिनाई नहीं है, जिसमें अभीष्ट गुणधर्म हों। बल्कि, समस्या पिछले अनुच्छेदों में दिए घटनाचक्रों जैसों के लिए कुछ व्याख्या देने की है।

37. इस स्थिति में बहुवचनीकृत अनिश्चित अर्टिकिल का लोपन स्वयं भूत है।

38 लोपनों की पुनर्लभ्यता के सामान्य निर्धारक के अन्य प्रकटमान उल्लंघन का वर्णन इसी प्रकार की विचारणाएँ करती हैं। जैसा कि प्राय: देखा गया है सम्बन्धवाची का सर्वांगसमता-निर्धारक का सम्बन्ध संज्ञा से ही होता है न कि लोपित नामिक पद-बंध के निर्धारक शब्द से। इस प्रकार "I have a [⫲ the friend is from Fngland ⫲] friend" [मेरा एक (इंगलैण्ड निवासी मित्र) मित्र है] से सम्बन्ध वाची के द्वारा "I have a friend (who is) from England" [मेरा एक मित्र है (जो) इंग्लैण्ड निवासी (है)]प्रसामान्य रीति से बन सकता है।

लोपित नाभिक पदबंध "the friend" (मित्र) है और समस्या आर्टिकिल के लोपन की है जो कि उस आर्टकिल से भिन्न है जो सम्बन्धवाचा रचनांतरण द्वारा उदघर्षण के लिए प्रयुक्त किया जाता है। आधायित वाक्य "a friend is from England" (इंग्लैंड निवासी एक मित्र) नहीं हो सकता है, जिस स्थिति में समस्या उठेगी ही नहीं, क्योंकि आर्टिकिल से निश्चित होने का गुणधर्म में इस स्थान में स्वयंभूत है। किन्तु इस तथ्य की निश्चितता अनिवार्य है यह संसूचित करता है कि आधार भूत पदबंध-चिह्नक में आर्टकिल निश्चिता के लिए अविनिर्दिष्ट छोड़ दिया जाता है और "समधिकता नियम" द्वारा (अनिवार्य रचनांतरण में) जोड़ा जाता है। यदि यह सही विश्लेषण है तो अभी स्थापित सिद्धान्त-नियम आर्टिकिल का लोपन स्वीकार्य है क्योंकि अपने आधार भूत रूप में वह आधात् वाक्य के नामिक पदबंध के आर्टिकिल से अभिन्न है।

द्रष्टव्य है कि यह निर्णय आर्टिकलों के अभिलक्षण विश्लेषण की अपेक्षा करता है और उसमें [± निश्चित] एक वाक्यविन्यासीय अभिलक्षण माना जाता है।

39. द्रष्टव्य है कि यद्यपि उदाहरणार्थ sad (दुखी) को शब्दसमूह में "पश्च–चेतनता" के लिए चिह्नित होना आवश्यक नहीं है (यदि हम यह निर्णय लेते हैं कि यहाँ समनामता का प्रश्न नहीं है) तथापि उस पर (—चेतन) के विभिन्न उप–अभिलक्षणों के अनुरूप प्रासंगिक अभिलक्षण समनुदेशित किए जा सकते हैं और फलस्वरूप "the pencil is sad (पैंसिल दुखी है) "the book was sad" (पुस्तक दुखी थी) के सदृश निर्वचन पाने में असमर्थ है, जैसे वाक्यों को च्युतवाक्य के रूप में लक्षित किया जा सकता है। यह विषय विवेच्य प्रश्न के लिए अप्रासंगिक है यद्यपि यह विभिन्न प्रकार की महत्वपूर्ण समस्याओं को उठाता है।

40. हमने बहुत कुछ अतिसरलीकृत कर दिया है। इस प्रकार इस स्थिति में अवयव आधार पदबंध चिन्हक में कुछ नामिकीकरण रूपिम क्रिया सहायक के प्राक्-पक्ष के अंश के स्थान में हो सकते हैं।

41. ये रचनाएं अनेक दृष्टि से रोचक हैं। देखिए, लीज़ (1960 a, पृष्ठ 64 और तदनंतर), चाम्स्की (1964, पृष्ठ 47 और तदनंतर) और केटॅस् एवं पोस्टल (1964, पृष्ठ 120 और तदनंतर) विवेचन के लिए।

42 यहां भी हम यह प्रश्न उठा सकते हैं कि क्या नामिकीकरण तत्व को रूपिम nom अथवा $F_1, \ldots F_m$ में से कोई एक अभिलक्षण (इस स्थिति में, यह एक रचनांतरण से जोड़ा हुआ अभिलक्षण है) के रूप में निरूपित करें।

43. तत्वत: इसी प्रकार की एक व्यवस्था का विस्तृत अध्ययन, अर्थात् समाप्त संज्ञाओं की रचना, लीज़ (1960 a, अध्याय 4 और परिशिष्ट) में प्रस्तुत किया गया है। अब देखिए जिमर (1964) भी।

44. देखिए टिप्पणी 30 भी। कदाचित इस रूढ़ि को धारणा "शब्द" की सामान्य परिभाषा के अंग के रूप में पुनर्भाषित करना सम्भव होगा। अर्थात्, कोई ऐसे सामान्य नियम को व्यक्त करने का प्रयत्न कर सकता है जो कोशीय कोटियों के शब्दों शब्द सीमाओं के विभाजन को और मिश्र प्रतीकों के कार्य क्षेत्र के भीतर प्रशाखन को निर्धारित करता है यह संभावना पाल पोस्टल के कुछ पर्यवेक्षणों से संसूचित हुई थी और इस पर और अधिक खोज करनी चाहिए।

45. इसी से सम्बद्ध समस्याओं का एक वर्ग हैरिस (1957) § 4, 5) द्वारा अपने "रचनांतरण–आभासों" के विवेचन में संक्षिप्तया परीक्षित हुआ है। बोलिंजर ने अपने विविध शोधपत्रों में (उदाहरणार्थ, बोलिंजर, 1961) ऐसे उत्पादनाभासी प्रक्रियाओं के उदाहरण सूची बद्ध किए है जिन्हें बहुत ही कम समझा गया है। ऐसी सूचियां केवल उन क्षेत्रों को जहां भाषा के सभी

वर्तमान ज्ञान सिद्धांत कोई सारभूत अर्न्तदृष्टि देने में असफल रहे हैं और वे बिना कठिनाई से अनेक रीति से विस्तारित किए जा सकते हैं। बोलिजर का सुझाव है कि उसके उदाहरण व्याकरण के एक वैकल्पिक सिद्धान्त का समर्थन कर रहे हैं किन्तु मुझे ऐसा लगता है कि यह पूर्णतया असमर्थित निष्कर्ष हैं और इसके कारण मैं अन्यत्र विवेचित कर चुका हूं (विशेषत:, चाम्सकी 1964, पृष्ठ 54)।

———

लेखकों के नामों का देवनागरी रूप

संदर्भ ग्रन्थ सूची का अनुवाद नहीं किया गया है क्योंकि संदर्भ के लिए रोमन अक्षर ही उपयुक्त थे। किन्तु मूल पुस्तक में जहाँ-जहाँ लेखकों के नाम आए हैं, वहाँ उनका देवनागरी रूप दिया गया है। अतएव संदर्भ ग्रन्थ सूची के अवलोकन के पूर्व पाठक को इस सूची में देवनागरी रूप के द्वारा रोमनाक्षरी रूप प्राप्त कर लेना चाहिए।

अरस्तु	Aristotle
आर्नल्ड	Arnauld
आस्टिन	Austin
उल्मान	Ullmann
उह्लेनबैक	Uhlenbeck
ओर्नन	Ornan
कडवर्थ	Cudworth
करी	Curry
कार्डेमाय	Cordemoy
केंटस	Katz
क्यूने	Quine
क्लीमा	Klima
ग्रास	Gross
गिन्सबर्ग	Ginsburg
ग्रीनबर्ग	Greenberg
ग्लीटमैन	Gleitman
ग्लीसन	Gleason
चॉम्स्की	Chomsky
ज़िमर	Zimmer
ज़ीएरर	Zierer
ट्वाडेल	Twaddell
डिक्सन	Dixon
डिडरो	Diderot
डू मार्सें	Du Marsais
डेकार्टे	Descartes
पॉल	Paul
पेश्कोव्स्की	Peshkovskii
पोस्टल	Postal
फ़िलमोर	Fillmore
फूट	Foot
फोडर	Fodor
फ्रिश्काफ़	Frishkopf
फ्रेज़र	Fraser
बाख़	Bach
बार-हिलेल	Bar-Hillel
बिएटी	Beattie
ब्रिलैण्ड	Breland
बेवर	Bever
बोलिंजर	Bolinger
ब्रेंडोन क्वाल्स	Brandon Qualls
ब्लॉक	Bloch
ब्लूम फील्ड	Bloomfield
मिलर	Miller
मैथ्यूस	Matthews
याकोब्सन	Jakobson
येस्पर्सन	Jespersen
रसेल	Russell
राइल	Ryle
रिशलिंग	Reichling
रीड	Reid
रोज़नब्लूम	Rosenbloom
लिब्नीत्स	Leibniz
लीज़	Lees
लीट्ज़मैन	Leitzmann
लुकाफ़	Lukoff
लूरिया	Luria
लेटविन	Lettvin
लेनेबर्ग	Lenneberg

लेन्सिलो	Lancelot	स्वीट	Sweet
लेम्मन	Lemmon	हम्बोल्ट	Humboldt
विटगेन्स्टीन	Wittgenstein	हर्बर्ट ऑन शेरबरी	Herbert of Cherbury
वाजेला	Vaugelas	हर्मन	Harman
विल्सन	Wilson	हल	Hull
शाउम्यान	Saumjan	हाकेट	Hockett
शेमीर	Shamir	हाल	Hall
शैंक्टर	Schachter	हाले	Halle
श्लेसिन्जर	Schlesinger	हिज़	Hiz
सदरलैंण्ड	Sutherland	ह्यूबल	Hubel
सेहलिन	Sahlin	ह्यूम	Hume
स्किनर	Skinner	हेल्ड	Held
स्टीवेन्स	Stevens	हैरिस	Harris
स्मिथ	Smith		

———

ग्रन्थ सूची

Aristotle, **De Anima.** Translated by J. A. Smith. In R. McKeon (ed.), **The Basic Works of Aristotle.** New York: Random House, 1941.

Arnauld, A., and P. Nicole (1662). **La Logique, ou l'art de penser.**

Austin, J. L. (1956). "A plea for excuses." **Proceedings of the Aristotelian Society.** Reprinted in J. O. Ürmson and G. J. Warnock (eds.), **Philosophical Papers of J. L. Austin.** London: Oxford University Press, 1961.

Bach, E. (1964). "Subcategories in transformational grammars." In H. Lunt (ed.), **Proceedings of the Ninth International Congress of Linguists.** The Hague: Mouton & Co.

Bar-Hillel, Y. (1954). "Logical syntax and semantics." **Language,** 30, pp. 230–237.

——— (1960). "The present status of automatic translation of languages." In F. L. Alt (ed.), **Advances in Computers,** Vol. I, pp. 91-163. New York: Academic Press.

———, A. Kasher, and E. Shamir (1963). **Measures of Syntactic Complexity.** Report for U. S. Office of Naval Research, Information Systems Branch. Jerusalem.

Beattie, J. (1788). **Theory of Language.** London.

Bever, T. G. (1963). "The e-o Ablaut in Old English." **Quarterly Progress Report,** No. 69, Research Laboratory of Electronics, M.I.T., pp. 203–207.

———, and T. Langendoen (1963). "The reciprocating cycle of the Indo-European e-o Ablaut." **Quarterly Progress Report,** No. 69, Research Laboratory of Electronics, M.I.T., pp. 202–203.

———, and P. Rosenbaum (forthcoming). **Two Studies on Syntax and Semantics.** Bedford, Mass.: Mitre Corporation Technical Reports.

Bloch, B. (1950). "Studies in colloquial Japanese IV: Phonemics." **Language,** 26, pp. 86-125. Reprinted in M. Joos (ed.), **Readings in Linguistics.** Washington, 1957.

Bloomfield, L. (1933). **Language.** New York: Holt.

Bloomfield, M. (1963). "A grammatical approach to personification allegory." **Modern Philology, 60,** pp. 161–171.

Bolinger, D. L. (1961). "Syntactic blends and other matters." **Language, 37,** pp. 366–381.

Breland, K., and M. Breland (1961). "The misbehavior of organisms." **American Psychologist, 16,** pp. 681–684.

Chomsky, N. (1951) **Morphophonemics of Modern Hebrew.** Unpublished Master's thesis, University of Pennsylvania.

——— (1955). **The Logical Structure of Linguistic Theory.** Mimeographed, M.I.T. Library, Cambridge, Mass.

——— (1956). "Three models for the description of language." **I.R.E. Transactions on Information Theory,** Vol. IT-2, pp. 113–124. Reprinted, with corrections, in R.D. Luce, R. Bush, and E. Galanter (eds.), **Readings in Mathematical Psychology,** Vol. II. New York: Wiley, 1965.

——— (1957). **Syntactic Structures.** The Hague: Mouton & Co.

——— (1959a). "On certain formal properties of grammars," **Information and Control, 2,** pp. 137–167. Reprinted in R. D. Luce, R. Bush, and E. Galanter (eds.), **Readings in Mathematical Psychology,** Vol. II. New York: Wiley, 1965.

——— (1959b). Review of Skinner (1957). **Language, 35,** pp. 26–58. Reprinted in Fodor and Katz (1964).

——— (1961). "Some methodological remarks on generative grammar" **Word, 17,** pp. 219–239. Reprinted in part in Fodor and Katz (1964).

——— (1962a). "A transformational approach to syntax." In A. A. Hill (ed.), **Proceedings of the 1958 Conference on Problems of Linguistic Analysis in English,** pp. 124–148. Austin, Texas. Reprinted in Fodor and Katz (1964).

——— (1962b). "Explanatory models in linguistics." In E. Nagel, P Suppes, and A. Tarski, **Logic, Methodology and Philosophy of Science.** Stanford, California : Stanford University Press,

——— (1963). "Formal properties of grammars." In R. D. Luce, R. Bush, and E. Galanter (eds.), **Handbook of Mathematical Psychology,** Vol. II, pp. 323–418. New York: Wiley.

——— (1964). **Current Issues in Linguistic Theory.** The Hague: Mouton & Co. A slightly earlier version appears in Fodor and Katz (1964). This is a revised and expanded version of a paper presented to the session "The logical basis of linguistic theory," at the Ninth International Congress of Linguists, Cambridge, Mass., 1962. It appears under the title of the session in H. Lunt (ed.), **Proceedings** of the Congress. The Hague: Mouton & Co., 1964.

——— (1965a). "Topics in the theory of generative grammar." In T.A. Sebeok (ed.). **Current Trends in Linguistics.** Vol. III. 1-60 **Linguistic Theory.** The Hague: Mouton & Co.

——— (1966b). "Cartesian Linguistics." New York : Harper & Row.

———, M. Halle, and F. Lukoff (1956). "On accent and juncture in English." In M. Halle. H. Lunt, and H. MacLean (eds.), **For Roman Jakobson** pp. 65-80. The Hague : Mouton & Co.

———, and G. A. Miller (1963). "Introduction to the formal analysis of natural languages." In R. D. Luce, R. Bush, and E. Galanter (ed.), **Handbook of Mathematical Psychology,** Vol. II, pp. 269-322. New York: Wiley.

———, and M. P. Schutzenberger (1963). "The algebraic theory of contex-free languages." In P. Braffort and D. Hirschberg (eds.), **Computer Programming and Formal Systems,** pp. 119-161, **Studies in Logic Series.** Amsterdam: North-Holland.

Cordemoy, G. de (1667). **A Philosophical Discourse Concerning Speech.** The English translation is dated 1668.

Cudworth, R. (1731). **A Treatise Concerning Eternal and Immutable Morality.** Edited by E. Chandler.

Curry, H.B. (1061). "Some logical aspects of grammatical structure." In R. Jakobson (ed.), **Structure of Language and Its Mathematical Aspects, Proceedings of the Twelfth Symposium in Applied Mathematics,** pp. 56-68. Providence, R.I.: American Mathematical Society.

Descartes, R. (1641). **Meditations.**

——— (1647). "Notes directed against a certain programme." Both works by Descartes translated by E. S. Haldane and G. T. Ross in **The Philosophical Works of Descartes,** Vol. I. New York: Dover, 1955.

Diderot, D. (1751). **Lettre sur les Sourds et Muets.** Page references are to J. Assezat (ed.), **Oeuvers Completes de Diderot,** Vol. I (1875). Paris: Garnier Freres.

Dixon, R. W. (1963). **Linguistic Science and Logic.** The Hague: Mouton & Co.

Du Marsais, C. Ch. (1729). **Les veritables principes de la grammaire.** On the dating of this manuscript, see Sahlin (1928), p. ix.

——— (1769). **Logique et principes de grammaire.**

Fillmore, C. J. (1963). "The position of embedding transformations in a grammar." **Word, 19,** pp. 201-231.

Fodor, J. A., and J. J. Katz (eds.) (1964). **The Structure of Language: Readings in the Philosophy of Language.** Englewood Cliffs, N. J.: Prentice-Hall.

Foot, P. (1961). "Goodness and choice." **Proceedings of the Aristotelian Society,** Supplementary Volume **35,** pp. 45-80.

Fraser, B. (1963). "The position of conjoining transformations in a grammar." Mimeographed. Bedford, Mass.: Mitre Corporation.

——— (forthcoming). "On the notion 'derived constituent structure.' **Proceedings of the 1964 Magdeburg Symposium: Zeichen und System der Sprache.**

Frishkopf, L. S., and M. H. Goldstein (1963). "Responses to acoustic stimuli from single units in the eighth nerve of the bullfrog." **Journal of the Acoustical Society of America, 35**, pp. 1219–1228.

Ginsburg, S., and H. G Rice (1962). "Two families of languages related to ALGOL." **Journal of the Association for Computing Machinery, 10**, pp. 350–371.

Gleason, H. A. (1961). **Introduction to Descriptive Linguistics**, second edition. New York: Holt, Rinehart & Winston.

——— (1964). "The organization of language: a stratificational view." In C. I. J. M. Stuart (ed.), **Report of the Fifteenth Annual Round Table Meeting on Linguistics and Language Studies**, pp. 75–95. Washington, D. C.: Georgetown University Press.

Greenberg. J. H. (1963). "Some universals of grammar with particular reference to the order of meaningful elements." In J. H. Greenberg (ed.). **Universals of Language**, pp. 58–90. Cambridge: M. I. T. Press.

Gleitman, L. (1961). "Conjunction with **and**," **Transformations and Discourse Analysis Projects**, No. 40, mimeographed. Philadelphia: University of Pennsylvania.

Gross, M. (1964). "On the equivalence of models of language used in the fields of mechanical translation and information retrieval." **Information Storage and Retrieval, 2**, pp. 43–57.

Hall, B. (1964). Review of Saumjan and Soboleva (1963). **Language 40**, pp. 397–410.

Halle, M. (1957). "In defense of the number two." In E Pulgram (ed.), **Studies Presented to Joshua Whatmough**. The Hague: Mouton & Co.

——— (1959a). "Questions of linguistics." **Nuovo Cimento, 13**, pp. 494–517.

——— (1959b). **The Sound Pattern of Russian.** The Hague: Mouton & Co.

——— (1961). "On the role of the simplicity in linguistic description." In R. Jakobson (ed.), **Structure of Language and Its Mathematical Aspects, Proceedings of the Twelfth Symposium in Applied Mathematics**, pp. 89–94. Providence, R. I.: American Mathematical Society.

——— (1962a). "Phonology in generative grammar." **Word, 18,** pp. 54-72. Reprinted in Fodor and Katz (1964).

——— (1962b). "A descriptive convention for treating assimilation and dissimilation." **Quarterly Progress Report,** No. 66, Research Laboratory of Electronics, M.I.T., pp. 295-295.

——— (1964). "On the bases of phonology." In Fodor and Katz (1964).

———, and N. Chomsky (1960). "The morphophonemics of English." **Quarterly Progress Report,** No. 58, Research Laboratory of Eletronics, M.I.T., pp. 275-281.

——— (1961). **The Sound Pattern of English.** New York : Harper & Row.

———, and K. Stevens (1962). "Speech recognition : a model and a program for research." **I.R.E. Transactions in Information Theory**. Vol. IT-8, pp. 155-159. Reprinted in Fodor and Katz (1964).

Harman, G. H. (1963). "Generative grammars without transformational rules : a defense of phrase structure." **Language, 39,** pp. 597-616.

Harris, Z. S. (1951). **Methods in Structural Linguistics.** Chicago : University of Chicago Press.

———(1952). "Discourse analysis." **Language, 28,** pp. 18-23.

——— (1954). "Distributional structure." **Word, 10,** pp. 146-162.

——— (1957). "Co-occurence and transformation in linguistic structure." **Language, 33,** pp. 293-340.

Held, R., and S. J. Freedman (1963). "Plasticity in human sensorimotor control." **Science, 142,** pp 455-462.

———, and A. Hein (1963), "Movement-produced stimulation in the development of visually guided behavior." **Journal of Comparative and Physiological Psychology**, **56,** pp. 872-876.

Herbert of Cherbury (1624). **De Veritate.** Translated by M.H. Carre (1937). University of Bristol Studies, No. 6.

Hiz, H. (1961). "Congramaticality, batteries of transformations and grammatical categories." In R. Jakobson (ed.) **Structure of Language and Its Mathematical aspects, Proceedings of the Twelfth Symposium in Applied Mathematics,** pp. 43-50. Providence, R. I. : American Mathematical society.

Hockett, C. F. (1958). **A Course in Modern Linguistics.** New York : Macmillan.

——— (1961). "Linguistic elements and their relations." **Language, 37,** pp 29-53.

Hubel, D. H., and T. N. Wiesel (1962). "Receptive fields, binocular interaction and functional architecture in the cat's visual cortex." **Journal of Physiology, 160,** pp. 106-154.

Hull, C. L., (1943). **Principles of Behavior.** New York : Appleton-Century Crofts.

Humboldt, W. von. (1836). **Uber die Verschiedenheit des Menschlichen Sprachbaues** Berlin.

Hume. D. (1748). **An Enquiry Concerning Human Understanding.**

Jakobson, R. (1936). "Beitrag zur allegmeinen Kasusulehre." **Travaux du Cercle Linguistique de Prague, 6,** pp. 240–288.

Jespersen. O. (1924). **Philosophy of Grammar.** London . Allen & Unwin.

Katz, J. J. (1964a). "Semi-sentences." In Fodor and Katz (1964).

——— (1964b). "Analyticity and contradiction in natural language." in Fodor and Katz (1964).

———(1964c)."Mentalism in linguistics." **Language, 40,**pp. 124–137.

———(1964d). "Semantic theory and the meaning of 'good.'" **Journal of Philosophy.**

———(forthcoming). "Innate ideas."

———, and J. A. Fodor. "The structure of a semantic theory." **Language, 39,** pp. 170–210. Reprinted in Fodor & Katz (1964).

———, and J. A. Fodor (1964). "A reply to Dixon's A trend in semantics." **Linguistics, 3,**. pp. 19–29.

———, and P. Postal (1964). **An Integrated Theory of Linguistic Descriptions.** Cambridge, Mass. : M.I.T. Press.

Klima, E.S. (1964). "Negation in English." In Fodor and Katz (1964).

Lancelot, C., A. Arnauld, **et al.** (1660). **Grammaire generale et raisonnce.**

Lees, R. B. (1957). Review of Chomsky (1957). **Language, 33,** pp. 375-407.

———(1960a). **The Grammar of English Nominalizations.** The Hague : Mouton & Co.

———(1960b). "A multiply ambiguous adjectival construction in English." **Language, 36,** pp. 207–221.

———(1961). "Grammatical analysis of the English comparative construction." **Word, 17,** pp. 171–185.

———, and E. S. Klima (1963). "Rules for English pronominalization," **Language, 39,** pp. 17–28.

Leibniz, G. W. **New Essays Concerning Human Understanding.** Translated by A. G. Langley. LaSalle, Ill.: Open Court 1949.

Leitzmann, A. (1908). **Briefwechsel zwischen** W. **von** Humboldt und **A W. Schlegel.** Halle : Niemeyer.

Lemmon, W. B., and G. H. Patterson (1964). "Depth perception in sheep." **Science, 145,** p. 835.

Lenneberg, E. (1960). "Language, evolution, and purposive behavior." In S. Diamond (ed.), **Culture in History : Essays in Honor of Paul Radin.** New York : Columbia University Press. Reprinted in a revised and extended version under the title "The capacity for language acquisition" in Fodor and Katz (1964).

———(in preparation). **The Biological Bases of Language.**

Lettvin, J. Y., H. R. Maturana, W. S. McCulloch, and W. H. Pitts (1959). "What the frog's eye tells the frog's brain." **Proceedings of the I.R.E.**, 47, pp. 1940-1951.

Luria. A. R , and O S. Vinogradova (1959). "An objective investigation of the dynamics of semantic system." **British Journal of Psychology**, 50, pp. 89-105.

Matthews, G. H. (1964). **Hidatsa Syntax.** The Hague : Mouton & Co.

Matthews. P.H. (1961)- "Transformational grammar."**Archivum Linguisticum**, **13**, pp. 196-209.

Miller, G. A., and N. Chomsky (1963). "Finitary models of language users." In R. D. Luce, R. Bush, and E. Galanter (eds.), **Handbook of Mathematical Psychology**, Vol. II, Ch. 13, pp. 419-492. New York: Wiley.

———, E. Galanter, and K. H. Pribram (1960). **Plans and the structure of Behavior.** New York : Henry Holt.

———, and S. Isard (1963). "Some perceptual consequences of linguistic rules." **Journal of Verbal Learning and Verbal Behavior**, 2, No. 3, pp. 217-228.

———, and S. Isard (1964). "Free recall of self-embedded English sentences." **Information and Control**, 7, pp. 292-303.

———, and D. A Norman (1964). **Research on the Use of Formal Language in the Behavioral Sciences.** Semi-annual Technical Report, Department of Defense, Advanced Research Projects Agency, January-June 1964. pp. 10-11. Cambridge: Harvard University, Center for Cognitive Studies.

———, and M. Stein(1963). **Grammarama.** Scientific Report No. CS-2, December, Cambridge : Harvard University, Center for Cognitive Studies.

Ornan, U. (1964). **Nominal Compounds in Modern Literary Hebrew.** Unpublished doctoral dissertation, Jerusalem, Hebrew University.

Paul, H. (1886). **Prinzipien der Sprachgeschichte**, second edition. Translated into English by H. A. Strong. London : Longmans, Green & Co., 1891.

Peshkovskii, A. M. (1956). **Russkii Sintaksis v Nauchnom Osveshchenii.** Moscow.

Postal, P. M. (1962a). **Some Syntactic Rules in Mohawk.** Unpublished doctoral dissertation, New Haven, Yale University.

——(1962b). "On the limitations of context-free phrase-structure description." **Quarterly Progress Report** No. 64, Research Laboratory of Electronics, M. I T., pp. 231–238.

——(1964a), **Constituent Structure : A Study of Contemporary Models of Syntactic Description.** The Hague : Mouton & Co.

——(1964b). "Underlying and superficial linguistic structure." **Harvard Educational Review**, 34, pp, 246–266.

——(1964c). "Limitations of phrase structure grammars." In Fodor and Katz (1964).

Quine, W. V. (1960). **Word and Object.** Cambridge, Mass.: M.I.T. Press and New York: Wiley.

Reichling, A. (1961). "Principles and methods of syntax: cryptanalytical formalism." **Lingua, 10**, pp. 1–17.

Reid, T. (1785). **Essays on the Intellectual Powers of Man.** Page references are to the abridged edition by A. D. Woozley, 1941. London: Macmillan and Co.

Rosenbloom, P. (1950). **The Elements of Mathematical Logic**, New York: Dover.

Russell, B. (1940). **An Inquiry into Meaning and Truth.** London: Allen & Unwin.

Ryle, G. (1931). "Systematically misleading expressions." **Proceedings of the Aristotelian Society.** Reprinted in A.G.N. Flew (ed.), **Logic and Language**, first series. Oxford: Blackwell, 1951.

——(1953). "Ordinary language." **Philosophical Review**, 62, pp. 167–186.

Sahlin, G. (1928). **Cesar Chesneau du Marsais et son role dans l' evolution de la grammaire generale.** Paris; Presses Universitaires.

Saumjan, S. K., and P. A. Soboleva (1963). **Applikativnaja porozdajuscaja model' i iscislenie transformacij v russkom jazyke.** Moscow: Izdatel'stvo Akademii Nauk SSSR.

Schachter, P. (1962). Review: R. B. Lees, "Grammar of English nominalizations." **International Journal of American Linguistics**, 28, pp. 134–145.

Schlesinger, I. (1964). **The Influence of Sentence Structure on the Reading Process.** Unpublished doctoral dissertation. Jerusalem, Hebrew University.

Shamir, E. (1961). "On sequential grammars." Technical Report No. 7, O.N.R. Information Systems Branch, November 1961. To appear in **Zeitschrift fur Phonetik, Sprachwissenschaft and Kommunikationsforschung.**

Skinner, B. F. (1957). **Verbal Behavior.** New York: Appleton-Century-Crofts.

Smith, C. S. (1961). "A class of complex modifiers in English.' **Language**, 37, pp. 342–365.

Stockwell, R., and P. Schachter (1962). "Rules for a segment of English syntax." Mimeographed, Los Angeles, University of California.

Sutherland, N. S. (1959). "Stimulus analyzing mechanisms." **Mechanization of Thought Processes**, Vol. II, National Physical Laboratory Symposium No. 10, London.

———(1964). "Visual discrimination in animals." **British Medical Bulletin**, 20 pp. 54–59.

Sweet, H. (1913). **Collected Papers,** arranged by H. C. Wyld. Oxford: Clarendon Press.

Twaddell, W. F. (1935). **On Defining the Phoneme. Language Monograph No. 16.** Reprinted in part in M. Joos (ed.), **Reading in Linguistics.** Washington: 1957.

Uhlenbeck, E. M. (1963). "An appraisal of transformation theory." **Lingua, 12**, pp. 1–18.

———(1964). Discussion in the session "Logical basis of linguistic theory." In H. Lunt (ed), **Proceedings of the Ninth Congress of Linguists**, pp. 981–983. The Hague: Mouton & Co.

Ullmann, S. (1959) **The Principles of Semantics**. Second edition. Glasgow: Jackson, Son & Co.

Vaugelas, C.F. de (1647). **Remarques sur la langue Francaise.** Facsimile edition, Paris: Librairie E. Droz, 1934.

Wilson, J. C. (1926). **Statement and Inference**, Vol. I. Oxford: Clarendon Press.

Wittgenstein, L. (1953). **Philosophical Investigations.** Oxford: Blackwell's.

Yngve, V. (1960). "A model and a hypothesis for language structure." **Proceedings of the American Philosophical Society**, 104, pp. 444–466.

Zierer, E, (1964). Linking verbs and non-linking verbs." **Languaje y Ciencias**, 12, pp. 13–20.

Zimmer, K. E. (1964). **Affixal Negation in English and Other Languages.** Monograph No. 5, Supplement to **Word, 20.**

———

परिशिष्ट

पारिभाषिक शब्दावली

(अंग्रेजी-हिन्दी)

Ablaut अवश्रुति
Absolute निरुपाधि
Abstract अमूर्त
Acceptable स्वीकार्य
Access उपलब्धि
Accidental gap आकस्मिक रिक्तता
Ad hoc एतदर्थ
Adjacent आसन्न
Agent साधक
Agreement Rule अन्विति नियम
Alembic अभिस्रावन
Algorithm कलन-विधि
Alphabet पद
Analogous सादृश्य द्योतक
Animate चेतन
Antonymy set विपरीतार्थी समुच्चय
Approximation सन्निकटन
A priori प्रागनुभव, आनुभवपूर्व
Arrangement rule अन्विति नियम
Artifact प्रत्येककी
Aspect पक्ष
Assign समनुदेशित
Auxilliary क्रिया सहायक
Barrier अवरोध
Base आधार
Base phrase maker आधार पदबंध-चिह्नक
Basic आधार
Basic string आधार श्रृंखला
Branching rule प्रशाखन नियम
Capacity क्षमता
Categorial कोटीय घटक
Categorization कोटिकरण
Category कोटि
Category symbol कोटि प्रतीक
Class marker वर्ग चिह्नक
Cohesion आसंजन
Compactness दृढ़ता
Common जातिवाचक
Competence सामर्थ्य
Complex category मिश्र कोटि
Complex symbol मिश्र प्रतीक
Component घटक
Computation आंतरिक संगठन
Concantenation system श्रृंखला व्यवस्था
Condition निर्धारक
Conditioning अनुबंधन
Configuration संस्थिति
Conformity अनुरूपता
Conjunction समुच्चयन
Consonantal व्यंजन
Constituent sructrure अवयव संरचना व्याकरण
Constitute संविहित
Constraint नियामक
Context free प्रसंग निरपेक्ष
Context sensitive प्रसंग सापेक्ष
Continuance प्रवाही

Continuant प्रवाही
Convention रूढ़ि
Coordinated समानाधिकृत
Copula संयोजक क्रिया रूप
Count गणनीय
Creative सृजनात्मक
Cross व्यभिचरित
Cross-classification व्यभिचरित वर्गीकरण
Crucial निश्चायक
Data Processing सामग्री प्रक्रमनात्मक
Deep गहन
Deep structure गहनस्तलीय संरचना
Defective predicate सदोष विधेय
Definite निश्चायक
Degree मात्रा
Deletion लोपन
Depth गहनता
Depth grammar ग हन व्याकरण
Derivation व्युत्पादन
Derivational शब्द साधक
Descendant पर रूप, वंशज
Designation निर्देशन
Determiner निर्धारण
Deviance विचलन
Direct object प्रत्यक्ष-कर्म
Direction दिशा
Disposition स्ववृत्ति
Distance दूरता
Distraction विकर्षण
Doctrine सिद्धान्त
Dominance अधिकृति
Dominate अधिकारवान
Dominated by अधिकृत
Drift विचलन
Dummy element मूक तत्व, डमी तत्व
Duration अवधि
Elegation सुष्ठता
Elimination निरसन
Ellepsis अध्याहार
Elleptic मध्य लोपी
Emotional संवेगात्मक
Erasure उद्घर्षण
Erzeugen प्रजनन करना
Ethology आचार विज्ञान
Evalution मूल्यांकन
Evolution उद्विकास
Explanatory व्याख्यात्मक
Extracting pattern प्रतिदर्श निष्कर्षण
Extrinsic order वहिर्निष्ठ क्रम
Faculte de language भाषा सामर्थ्य
Faculty ज्ञानशक्ति
False start कुप्रारम्भ
Feasibility शक्यता
Feature अभिलक्षण
Field property क्षेत्र गुणधर्म
Filter निस्पंदक, स्पंदक
Filtering effect निस्पंदी प्रभाव
Flexibility नम्यता
Formal रूपात्मक
Formalisation निबंधन,
Formation व्यवस्थापन
Formative एकक, रचनांग
Formulation व्यवस्थापन
Fragment खण्ड
Frame रूपरेखा
Free word order मुक्त शब्द क्रम
Frequency आवृत्ति
Functional प्रकार्यात्मक
Gap रिक्तता
Generalization सामान्यीकरण
Generalised phrase marker सामान्यीकृत पदबंध चिह्नक
Generate प्रजनन करना
Generation प्रजनन
Generative grammar प्रजनक व्याकरण
Generic जातिगत

Global सार्वभौमिक
Gradient प्रावण्य
Grammatical category व्याकरणिक कोटि
Grammaticalness व्याकरणिकता
Grammatical relation व्याकरणिक सम्बन्ध
Grave उदात्त
Gravity उदात्तता
Homonymous समनामीय
Human मानव
Identical सर्वांगसम
Identifying प्रत्यभिज्ञान
Illustrative उदाहरणात्मक
Immediate constituent सन्निहित अवयव
Implausible अविश्वास्य
Index सूचकांक
Infinite अनन्त
Inflectional process रूपसाधक प्रक्रिया
Inner form आंतरिक रूप
Input निवेश
Input-output निवेश-निर्गम
Insert अन्त:प्रविष्ट
Inserted अन्त:प्रविष्ट
Insertion अन्त:प्रवेश
Intelligence बुद्धि
Interest रुचि
Internalized grammar अन्तरीकृत व्याकरण
Intrinsic order अन्तर्निष्ठ क्रम
Introduce प्रस्तावित करना
Inversion विपर्यय
'Is a' relation अस्ति सम्बन्ध
Item and agreement एकांश तथा विन्यास
Justification औचित्य
Kernel sentence बीज वाक्य
Labeled Bracketing नामांकित कोष्ठन
Langue-Parole भाषा वाक्
Layer तल
Learning अधिगम
Lexical कोशीय
Lexical category कोशीय कोटि
Lexical entries कोशीय प्रविष्टियाँ
Lexicon शब्द समूह
Limitation परिसीमाएँ
Linear रेखीय
Local Maximum स्थानीय महत्तम
Major category प्रमुख कोटि
Major constituent मुख्य अवयव
Manner रीति
Mapped प्रतिचित्रित
Masculine पुल्लिग
Matching मेलायन
Matrix मैट्रिक्स
Matrix structure मैट्रिक्स संरचना
Maximal path उच्चिष्ट पथ
Methodological प्रणालीगत
Middle verb मिडिल क्रिया
Mnemonic tag स्मरणीपयोगी संकेत
Model प्रकारता
Modifier आपरिवर्तन
Morpheme structure rule रूपिम संरचना नियम
Motivation अभिप्रेरण
Multi-valued बहुमाननीय
Nalivism अन्तर्जातता
Natural class स्वाभाविक वर्ग
Near Paraphrase समीपतम समानोक्ति
Net work जाल तन्त्र
Neutralised उदासीन
Node पर्व
Non-stylistic transformation शैलीगतेतर रचनांतरण
Notational आंकनिक
Notion संप्रत्यय

Noun Phrase संज्ञा पद बंध
Null शून्य
Oberflachengrammatik बहिस्तलीय व्याकरण
Obstruent रोधी
Occurence प्राप्ति, घटन
Operate ordered परिचालित
Ordered क्रमबद्ध
Organisation संगठन
Organism जीवी
Outer form बाह्य रूप
Out put निर्गम
Paradigm रूपावली
Paraphrase समानाभिव्यक्ति
Parenthetic मध्य समावेशी
Passive कर्म वाच्य
Perfect घटित
Performance निष्पादन
Permutation क्रम परिवृत्ति, परिवृतियां
Phonological स्वन प्रक्रिया
Phonologically admissible sequence स्वन प्रक्रिया की दृष्टि से स्वीकार्य अनुक्रम
Phonological redundancy rule स्वनप्रक्रियात्मक समधिकता नियम
Phrase structure grammar पदबंध संरचना व्याकरण
Place स्थान
Plausibility विश्वास्यता
Possessive सम्बन्धक
Possible syllable सम्भाव्य अक्षर
Postulated अभ्युपगमित
Potentially संभावी रूप
Predicate विधेय
Predicate nominal विधेय नामिक
Predicate phrase विधेय पद बन्ध
Predilection पूर्वाभिरुचि
Pregmatic क्रिया परक
Preliminary प्रारम्भिकी
Premise आधार वाक्य
Prepositional Phrase पूर्व सर्गीय पद बन्ध
Pre-sentence प्राक्-वाक्य
Pre-terminal string पूर्वान्त्य-शृंखला
Primitive unconditioned reflexes आदिम अननुबंधित परिवर्त
Procedure प्रक्रिया
Process प्रक्रम
Progressive घटमान
Projection rule प्रक्षेप नियम
Proper व्यक्ति वाचक
Proposition प्रतिज्ञप्ति
Pseudo-Passive छद्म कर्मवाच्य
Quilifier गुणक
Quotes Context उद्धृत प्रसंग
Ramification विस्तार
Range परास
Reafferent प्रत्याभिवाही
Recoverable पुनर्लभ्य
Recurssive पुनरावृत्ति
Reduced न्यूनीकृत
Redundancy समधिकता
Reflection प्रतिफलन
Reinforcement पुनर्बलन
Relation सम्बन्ध
Relational सम्बन्धीय
Relevance प्रसंगोचित्य
Remark टिप्पणी
Representation निरूपण
Residual अवशिष्ट
Residue अवशेष
Right recursive दक्षिण पुनरावर्ती
Role कार्यभूमिका
Row पंक्ति
Scattered प्रकीर्ण
Schema समाकृति
Scope क्षेत्र
Selectional restriction चयनात्मक प्रतिबन्ध

Selectional rule चयनात्मक नियम
Sentential वाक्यीय
Sequential आनुक्रमिक
Sequential derivation आनुक्रमिक व्युत्पादन
Set system समुच्चय व्यवस्था
Shift अपसरण
Significant generalization सार्थक सामान्यीकरण
Similarity सादृश्य
Simple सरल
Simultaneous सहकालिक
Species उपजाति
Specification विनिर्देशन
Specify विनिर्दिष्ट
Speculation परिकल्पना
Spelling वर्णाक्षरी
Step by step सोपान
Strictly local सुदृढ़तया स्थानीय
Strict subcategorization rule सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम
Strong generative capacity सबल प्रजनक क्षमता
Structure संरचना
Structure dependent संरचना सापेक्ष
Sub categorization rule उपकोटिकरण नियम
Subject उद्देश्य
Substantive सत्तात्मक
Substantive universal सत्तात्मक सार्वभौम
Suppletion आदेश
Suppletive आदेशपरक
Surface structure बहिस्तलीय संरचना
Syntactic वाक्य विन्यासीय
Syntactic redundancy rule वाक्यविन्यासीय समधिकता नियम
Systematic gap व्यवस्थावद्ध रिक्तता
Tabula rasa चिकना पत्थर
Taxonomic वर्गीकरणात्मक
Tense काल
Tentatively परीक्षणात्मक
Theory of programming सुयोजन के सिद्धान्त
Tiefengrammatik गहन व्याकरण
Transform रचनांतर
Transformational रचनांतरण
Transformational रचनांतरणात्मक
Transformation marker रचनांतरण चिन्हक
Tree-structure वृक्ष-संरचना
Truism सत्यता
Typically प्रकारात्मक रूप
Underlying structure आधारभूत संरचना
Universal सार्वभौम
Unordered क्रमहीन
Unordered set क्रमहीन समुच्चय
Unspecified अविनिर्दिष्ट
Value मान
Valned सर्वाधिकमान युक्त
Variable परिवर्त
Verb phrase क्रिया पदबंध
Visual space दृष्टि-दृक्
Vocalic स्वरात्मक
Voiced सघोष
Weak generative capacity दुर्बल प्रजनक क्षमता
Wiedererzeugung पुन: प्रजनन

———

पारिभाषिक शब्दावली

(हिन्दी-अंग्रेजी)

अंतर्जातता Nalivism
अंतर्निष्ठ क्रम Intrinsic order
अंत:प्रविष्ठ Insert, Inserted
अंत:प्रवेश Insertion
अंतरीकृत व्याकरण Internalized grammar
अधिकारवार Dominate
अधिकृत Dominated by
अधिकृति Dominance
अधिगम Learning
अध्याहार Ellipsis
अनन्त Infinite
अनुबन्धन Conditioning
अनुभवपूर्व A priori
अनुरूपता Conformity
अन्विति नियम Agreement Rule
अपसरण Shift
अभिप्रेरणा Motivation
अभिरुचि Interest
अभिलक्षण Feature
अभिस्रावन Alembic
अभ्युपगमित Postulated
अमूर्त Abstract
अवधि Duration
अवयव संरचना व्याकरण Constituent structure grammar
अवरोध Barrier
अवशिष्ट Residual
अवशेष Residue
अवश्रुति Ablaut
अविनिर्दिष्ट Unspecified
अविश्वास्य Implausible
अस्ति सम्बन्ध 'Is a' relation
आंकनिक Notational
आंतरिक रूप Inner form
आंतरिक संगठन Computation
आकस्मिक रिक्तता Accidental Gap
आचार विज्ञान Ethology
आदिम अननुबन्धित परिवर्त Primitive unconditioned reflexes
आदेश Suppletion
आदेशपरक Suppletive
आधार Base, Basic
आधार पदबंध चिह्नक Base phrase marker
आधारभूत संरचना Underlined structure
आधार वाक्य Premise
आधार शृङ्खला Basic string
आनुक्रमिक Sequential
आनुक्रमिक व्युत्पादन Sequential derivation
आप रिवर्तन Modifier
आवृत्ति Frequency
आसंजन Cohesion
आसन्न Adjacent
उच्चिष्ट पद Maximal path
उद्घर्षण Erasure
उद्देश्य Subject
उद्धृत प्रसंग Quotes context
उद्विकास Evolution
उदात्त Grave

उदात्तता Gravity
उदासीन Neutralised
उदाहरणात्मक Illustrative
उपकोटिकरण नियम Sub-categorization rule
उपजाति Species
उपलब्धि Access
एकक Formative
एकांश तथा विन्यास Item and Arrangement
एतदर्थं Ad hoc
औचित्य Justification
कलन विधि Algorithm
कर्मवाच्य Passive
कार्यभूमिका Role
काल Tense
कुप्रारम्भ False start
कोटीय Category
कोटिकरण Categorization
कोटि प्रतीक Category symbol
कोटीय घटक Categorial
कोशीय Lexical
कोशीय कोटि Lexical category
कोशीय प्रविष्टियां Lexical entries
क्रम परिवृत्ति Permutation
क्रमबद्ध Ordered
क्रमहीन Unordered
क्रमहीन समुच्चय Unordered set
क्रिया पदबंध Verb Phrase
क्रियापरक Pregmatic
क्रिया सहायक Auxiliary
क्षमता Capacity
क्षेत्र Scope
क्षेत्र गुणधर्म Field Property
खण्ड Fragment
गणनीय Count
गहन Deep
गहनता Depth
गहन व्याकरण Deep grammar, Tiefen grammatik
गहनस्तलीय संरचना Deep structure
गुणक Qualifier
ज्ञानशक्ति Faculty
घटक Component
घटन Occurence
घटमान Progressive
घटित Perfect
चयनात्मक नियम Selectional rule
चिकना पत्थर Tabula Rasa
चेतन Animate
छद्म कर्मवाच्य Pseudo-Passive
जातिगत Generic
जातिवाचक Common
जाल तन्त्र Network
जीवी Organism
टिप्पणियां Remarks
डमी तत्व Dummy element
तल Layer
दक्षिण पुनरावर्ती Right Recursive
दिशा Direction
दुर्बल प्रजनक क्षमता Weak generative capacity
दूरता Distance
दृढ़ता Compactness
दृष्टि दृक् Visual space
नम्यता Flexibility
नामांकित कोष्ठन Labeled brackting
निबंधन Formalisation
नियामक Constraint
निरसन Elimination
निरुपाधि Absolute
निरूपण Representation
निर्गम Output
निर्देशन Designation
निर्धारक Condition
निर्धारण Determiner

निवेश Input
निवेश-निर्गम Input-output
निश्चायक Crucial, definite
निष्पादन Performance
निस्पंदक Filter
निस्पंदी प्रभाव Filtering effect
पंक्ति Row
पक्ष Aspect
पद Alphabet
पदबंध संरचना व्याकरण Phrase structure grammar
पर रूप Descendant
परास Range
परिकल्पना Speculative
परिचालित Operate
परिवर्त Variable
परिसीमाएं Limitation
परीक्षणात्मक Tentatively
पर्व Node
पुनर्बलन Reinforcement
पुन.लभ्य Recoverable
पुन: प्रजनन Wiedererzengung
पुनरावृत्ति Recursive
पुल्लिग Masculine
पूर्वसर्गीय पदबंध Prepositional phrase
पूर्वान्त्य शृंखला Pre-terminal string
पूर्वाभिरुचि Predilection
प्रक्रम Process
प्रकारता Model
प्रकार्यात्मक Functional
प्रकारात्मक रूप Typically
प्रक्रिया Procedure
प्रकीर्ण Scattered
प्रक्षेप नियम Projection rule
प्रजनक व्याकरण Generative grammar
प्रजनन Generate
प्रजनन करना Generate, erzeugen
प्रणालीगत Methodological

प्रतिज्ञप्ति Proposition
प्रतिचित्रित Mapped
प्रतिदर्श निष्कर्षण Extracting pattern
प्रतिफलन Reflection
प्रत्यक्ष कर्म Direct Objcct
प्रत्याभिज्ञान Identifying
प्रत्याभिवाही Reaffarent
प्रत्येककी Artifact
प्रमुख कोटि Major category
प्रवाही Continuance. Continuant
प्रशाखन नियम Branching rule
प्रसंग निरपेक्ष Context free
प्रसंग सापेक्ष Context sensitive
प्रसंगोचित्य Relevance
प्रस्तावित करना Introduce
प्राक्-वाक्य Pre-sentence
प्रागनुभव A Priori
प्राप्ति Occurance
प्रारम्भिकी Preliminary
प्रावण्य Gradient
बहिर्निष्ठ क्रम Extrinsic order
बहिस्तलीय व्याकरण Oberflachengrammatik
बहिस्तलीय संरचना Surface structure
बहु माननीय Multi valued
बाह्य रूप Outer form
बीज वाक्य Kernel Sentence
भाषा-वाक् Langue Parole
भाषा सामर्थ्य Faculti de langage
मध्य लोपी Elleptic
मध्य समावेशी Parenthetic
मात्रा Degree
मान Value
मानव Human
मिडिल क्रिया Middle Verb
मिश्र कोटि Complex category
मिश्र प्रतीक Complex symbol
मुक्त शब्द क्रम Free word order

मुख्य अवयव Major constituent
मूक तत्व Dummy element
मूल्यांकन Evaluation
मेलायन Matching
मैट्रिक्स Matrix
मैट्रिक्स संरचना Matrix struture
रचनांग Formative
रचनांतर Transform
रचनांतरण Transformation
रचनांतरण चिन्हक Transformation marker
रचनांतरणात्मक Transformational
रिक्तता Gap
रीति Manner
रूढ़ि Convention
रूपरेखा Frame
रूपसाधक प्रक्रिया Inflectional process
रूपात्मक Formal
रूपावली Paradigm
रूपिम संरचना नियम Morpheme structure rule
रेखीय Linear
रोधी Barrier
लोपन Deletion
वंशज Descendant
वर्ग चिन्हक Class marker
वर्गीकरणात्मक Taxonomic
वर्णाक्षरी Spelling
वाक्य विन्यासीय Syntactic
वाक्यविन्यासीय समधिकता नियम Syntactic redundancy rule
वाक्यीय Sentential
विकर्षण Distraction
विचलन Drift, Deviance
विधेय Predicate
विधेय नामिक Predicate nominal
विधेय पदबन्ध Predicate phrase
विनिर्दिष्ट Specify
विनिर्देशन Specification
विपरीतार्थी समुच्चय Antonymy set
विपर्यय Inversion
विश्वास्य Plausibility
विस्तार Ramification
वृद्धि Intelligence
वृक्ष संरचना Tree-structure
व्यंजन Consonantal
व्यक्तिवाचक Proper
व्यभिचरित Cross
व्यभिचरित वर्गीकरण Cross classification
व्यवस्थापन Formation, Formulation
व्यवस्थाबद्ध रिक्तता Systematic Gap
व्याकरणिक कोटि Grammatical category
व्याकरणिक सम्बन्ध Grammatical relation
व्याकरणिकता Grammaticalness
व्याख्यात्मक Explanatory
व्युत्पादन Derivation
शक्यता Feasibitity
शब्द साधन Derivational
शून्य Null
शैलीगतेतर रचनातरण Non-stylistic transformation
शृंखला व्यवस्थापन Concatenation system
संगठन Organisation
संज्ञा पदबंध Noun Phrase
संनिकटन Approximation
संनिहित अवयव Immediate constituent
संप्रत्यय Notion
संबंध Relation
संबंधक Possessive
संबंधीय Relational
संभावी रूप Potentially
संभाव्य अक्षर Possible syllable

संयोजक क्रियापद Copula
संरचना Structure
संरचना सापेक्ष Structure dependant
संविहित Constituent
संवेगात्मक Emotional
संस्थिति Configuration
सघोष Voiced
सत्तात्मक Substantive
सत्तात्मक सार्वभौम Substantive universal
सत्यता Truism
सदोष विधेय Defective Predicate
सबल प्रजनन क्षमता Strong generative capacity
समधिकता Redundancy
समनामीय Homonymous
समाकृति Schema
समानाधिकृति Coordinated
समानाभिव्यक्ति Paraphrase
समीपतम समानोक्ति Near paraphrase
समुच्चय व्यवस्था Set system
समुच्चयन Conjunction
समुनदेशित Assign
सरल Simple
सर्वांगसम Identical
सर्वाधिकमान युक्त Value
सहकालिक Simultaneous
सादृश्य Analogous, Similarity
साधक Agent
सामग्री प्रक्रमनात्मक Data processing

सामर्थ्य Competence
सामान्यीकरण Generalisation
सामान्यीकृत पदबंध चिह्नक Generalised phrase marker
सार्थक सामान्यीकरण Significant generalized
सार्वभौम Universal
सार्वभौमिक Global
सिद्धान्त Doctrine
सुदृढ़तया स्थानीय Strictly local
सुदृढ़ उपकोटिकरण नियम Strict sub-categorization rule
सुयोजन के सिद्धान्त Theory of Programming
सुष्ठुता Elegance
सूचकांक Index
सृजनात्मक Creative
सोपान Step by step
स्थान Place
स्थानीय महत्तम Local Maximum
स्पंदक Filter
स्मरणोपयोगी संकेत Mnemonic tag
स्वन प्रक्रिया Phonological
स्वन प्रक्रिया की दृष्टि से स्वीकार्य अनुक्रम Phonologically admissible sequence
स्वन प्रक्रियात्मक समधिकता Phonological redundancy
स्वरात्मक Vocalic
स्ववृत्ति Disposition
स्वाभाविक वर्ग Natural class
स्वीकार्य Acceptable

———

शुद्धि-सूची

सामान्य—कुछ ऐसी सामान्य भूलें हैं जिन्हें पाठक स्वयं दूर कर सकते हैं, जैसे, अनुस्वार के शिरोंबिदु या उपरिरेफ़ का छूट या टूट जाना, उद्धरणांत के उपरिचिह्नों का छूट जाना, लघुकोष्ठकों के आदि या अन्त कोष्ठक का छूट जाना। इन्हें सूची में सम्मिलित नहीं किया गया है।

पृष्ठ	पंक्ति	मुद्रित	शुद्ध रूप
2	–7	समाधिकता	समधिकता
6	22	असिद्धांत	सिद्धांत
16	4	विश्वसीय	विश्वसनीय
17	–7	गवेषणा की	गवेषणा के
18	15–16	(उड़ने वाले····हैं)	इसका लोप किया जाए।
18	–16	(उड़ने वाला जहाज घातक होता है)	(जहाज उड़ाना घातक होता है)
18	–6	(मेरे पास····गई)	इसका लोप किया जाए।
25	21	इस वर्ष में	इस अर्थ में
26	–9	लागू है, अथवा	लागू है। अथवा
26	–2	सुमूलबद्ध के रूपात्मक	सुमूलबद्ध रूपात्मक
35–36		T_o T_u आदि में O और u	सर्वत्र T के नीचे हैं, बगल में नहीं।
36	2	T_o^s	T_o^p
36	3	199 b	1959 b
38	–4	घटित प्रकारता पूर्ण,	घटित,
39	15	पाएगा उदाहरण	पाएगा। उदाहरण
47	12	यह मानना-आवश्यक	यह मानना आवश्यक
49	8	पोटल	पोस्टल
51	3	दृष्टव्य	द्रष्टव्य
51	9	facnltede	facnlte de
59	10	S, N, P, V	S, NP, V
59		दिया हुआ आरेख पृ. 63 का है।	पृष्ठ 63 से आरेख लाइए।

60	6	क	का
61	–2	अत्यंत शृंखला	अन्त्य शृंखला
62	2	k>i	k>i
62	2	#Xl_{-1}#	#X_{l-1}#
62	–7	(2i) में दो संरचना	(2i) में दी सूचना
63		दिया हुआ आरेख पृ. 59 का है।	पृष्ठ 59 से आरेख लाइए।
63	–6	आवश्यता	आवश्यकता
63	–3	(संप. सहा. क्रिप.)	(संप. सहा. क्रिप.)
64	–4	औ	और
67	–12	S, Np, Vp	S, NP, VP........
69	18	होती है यह	होती है
69	20	होगा।	होगी।
70		'harvest' का अनुवाद	'फ़सल' करें।
71	–9	लिख सकूँगा	रागबद्ध कर सकूँगा
72	9	में व्याकरणि	में "व्याकरणि-
73	5	सुरक्षित	सुरचित
75	15	स्वप्रक्रियात्मक	स्वनप्रक्रियात्मक
76	–2	स्वप्रक्रियात्मक	स्वनप्रक्रियात्मक
80	5	आदमो	आदि भी
83	–6	जब	अब
84	–15	रूप कोटि	उपकोट
86	–14	S'	S
86	–12	समावृत्ति	समाकृति
88	7	Z,	Z_1
90	10	–कर्ता से	–कर्ता] से
92	11	(4)	(42)
93	16	(6)	(46)
93	17	पंक्ति यों पढ़िए	जहाँ अभिव्यक्ति "X विश्लेषणीय है y_1,....y_n में" का अर्थ है
93	18	X_1—X_n	X_1........X_n
94	4	शिस्टजेन्बेन्ज	शुट्ज़ेनबर्गर

94	4	Schistzenbenges	Schü tzenberger
94	11	(उसने नाव पर निर्णय लिया)	इस का लोप कर दें ।
96	–13	घनिष्टतया	घनिष्ठतया
96	–8	बनाम	इसका लोप कर दें ।
97	–1	रेखाचिह्न	दौड़ कर प्रवेश करना
98	8	रेखाचिह्न	दौड़ कर प्रवेश करना
98	–9	जॉन इंगलैण्ड	जॉन ने इंग्लैड
99	–18	में है),	का है),
100	11	एकारात्मक	प्रकारात्मक
101	12	(52 ii)	(52 iii)
101	15	अनुवाद यों होगा	कोई (अनिर्दिष्टकर्ता) कार्यालय में काम कर रहा है
102	10	पर	का
103	1	घटक एक	घटक का एक
103	57 (iii) में	(NP) (Prep Phrase) (Manner)	(NP) (Prep. Phrase) (Prep. Phrase) (Manner)
103	–10	Duration के नीचे	'अवधि' पढ़िए ।
109	–2	3	30
117	–1	§ .34	§ 2.3.4
118	–8	Boolian	Boolean
121	6	जालतंत्र के	जालतंत्र से
124	–7	चाच्य	वाच्य
124	–1	चनांतर	रचनांतर
129	13	अाघायित	आधायित
134	–9	अध्याय § 24.3	अध्याय 2 § 4.3 में
143	–10	अभिललण	अभिलक्षण
144	5	परिणामहीन	रंगहीन
144	11	dilgence	diligence
145	–7	पंक्ति को इस प्रकार पढ़े	चयनात्मक नियमों के परिपालन न करने से बने हैं । इस प्रकार चाहे जिस प्रकार

			चयनात्मक नियमोंर पविचार करें, इसमें कोई सन्देह नहीं है कि [मानव] जैसे अभि-लक्षरण
146	18	इस में	इस से
146	–10	निर्वचनीयता" निर्वचन	निर्वचनीयता" से (निर्वचन
147	3	व्याकरणिकता की मात्रा	व्याकरणिकता की मात्रा के
147	5	एक	तक
147	16	और अन्य व्याकरण	और अन्य । व्याकरण
150	–8	शून्यतर	शून्येतर
151	8	समीयतम	समीपतम
155	–13	वर्णात्मक	वर्णनात्मक
155	–12	सिद्धांतक	सिद्धांत
158	10	यों पढ़िये	वाक्य के "व्याकरणिक" उद्देश्य और विधेय और उसके "तार्किक" अथवा
158	17	"elastre	"elastrc
159	9	ा	का
159	–15	ंतः	अंतः
159	–13	बीच का । हटाइए	और अंतिम शब्द अंतप्रविष्ट पढ़िए ।
159	–11	अन्त का 1 हटाइए	
160	5	वहाँ	जहाँ
160	6	है तो	है) तो
160	15	$\neq$	#
160	–9	α_i	α_i
160	–8	$[\alpha_1+F_{i+1}]$	$[\alpha_i+F_{i+1}]$
161	9	$\leqslant$	$\leqslant$
162	–13	#	$\neq$
162	–4	(रीति	(रीति)]
163	–7	(S)	(s)
167		( )	[ ]
168	3	Beüder	Brüder

169	1	सधान्य	सामान्य
169	−3, −2	]	)
170–171		अनेक स्थानों पर]	के स्थान पर) होगा।
171	7	तारव्य	तालव्य
172	12	।	1
174	−7	−	+
175	13	an	as
175	−9	(41 ii)	(41 iii)
175	−6	विषेयांश	विधेयांश
176	8	नाभिकों	नामिकों
176	−1	र्याप्त	पर्याप्त
179	−2	नाभिक	नामिक
181	−6	पागना	प्रकाशना
189	−5	सकेन्द्रित	संकेन्द्रित
190	4	दर्शक	दशक
190	−1	पूर्वतया	पूर्णतया
191	18	पृष्ठ 10	पृष्ठ 101
194	4	के अर्थ में) की	के अर्थ में yngve की
203	4	सिद्धांत को·····करना है	सिद्धांत जो·····करता है।
207	16	केशीय	कोशीय
207	−7	may–	mảy–
207	−6	may का	mầy का
208	2	अध्याय 2	अध्याय 1
215	−5	वस्तरण	विस्तरण
215	−4	अन्यवहित	अव्यवहित
216	16	वरिष्करण और विस्तषण	परिष्करण और विस्तरण
216	26	करीकि प्रस्ताव	करी के प्रस्ताव
216	−8	कारण	कारक
217	2	alike	like
217	4	घटवाचक	घटनाचक्र
221	6	अपरिवर्तन	आपरिवर्तन

पिछले एक सौ वर्षों में गणित तथा आकारिक तर्क के क्षेत्रों में अभूत-पूर्व प्रगति हुई है और उसके सहारे भाषा विज्ञान के क्षेत्र में भी अत्यन्त आश्चर्यजनक प्रगति हुई है। इस प्रगति में जिन भाषा वैज्ञानिकों का सर्वोत्कृष्ट योगदान है उनमें नोअम चोम्स्की मूर्धन्य स्थानीय हैं। उनके अनुसंधानों से भाषा के स्वरूप के हमारे ज्ञान में अत्यधिक प्रगति हुई है। इस प्रकार इस पुस्तक का अनुवाद हिन्दी के वाङ्मय की श्रीवृद्धि की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। हमारे भाषा विज्ञान के पाठ्यक्रम में इस ग्रन्थ का प्रयोग एक नयी दिशा का प्रवर्तक हो सकता है।

रमानाथ सहाय, आचार्य केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा।

आवरण मुद्रक : आर. एन. प्रिण्टर्स, जयपुर-3